ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।

श्री तारणतरणस्वामी विरचित—

श्री ममलपाहुड़ या अमलपाहुड़

द्वितीय भाग ।

अनुवादकः—
श्रीमान् जैनधर्मभूषण धर्मदिवाकर ब्रह्मचारी सीतलप्रसादजी

जिसको—

श्री समैया समाज-सागरकी ओरसे

मथुराप्रसाद बजाज सागरकी मारफत सेठ मन्नूलाल जैन—आगासौद (सागर)
ने छपवाकर प्रकाशित किया ।

प्रथमावृत्ति] वीर सम्वत् २४६४ [प्रति १०००

"जैनविजय" प्रिन्टिंग प्रेस-सूरतमें मूलचन्द किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया ।

मूल्य—रु० ३-४-०

भूमिका।

श्री ममलपाहुडका प्रथम भाग १०१५ गाथाओं तक पहले लखनऊमें लिखा गया था। इस वर्ष हिसारमें दूसरा भाग १०१६ गाथाओंसे २२०९ तक पूर्ण किया गया। इस उत्थामें तीन प्रतियोंका सहारा लिया गया है। तीनों प्रतियां सागर (सी० पी०) के भाई मथुराप्रसादजी बजाजके द्वारा प्राप्त हुईं थीं। एक प्रति नवीन लिखित है. दो प्रति प्राचीन व शुद्ध हैं। उन्हीके सहारे मूल पद लिया गया है। इन दोनोंमेंसे एक गुटकेके अन्तमें वाक्य है—इति मय षिपनिक, ममल पाहुडु ग्रंथु जिन तारन तरन विरचित सम उत्पन्निता।

संवत् १६३७ वर्षे चैत्र वदी अमावस्या मंगलवार (लिपिमिती)। दूसरे गुटकेके अंतमें नीचे लिखे वाक्य हैं:—

इति मय षिपनिक ममल पाहुडु ग्रन्थु जिन तारन तरन विरचित सम उत्पन्निता संवत् १६८१ वर्षे आसाढ (   ) १३ बृहस्पति (लिपि मिती)

स्वामीका इतना ही परिचय प्रगट है कि इनका जन्म विक्रम संवत १५०५ अगहन सुदी ७ को पुष्पावतीमें हुआ था। पिता गढ़ासाहजी परवार जातिके सेठ थे। तथा यह टोंक राज्यके सेमरखेड़ीमें व ग्वालियर राज्यके मल्हारगढ़में विशेष ध्यान व सामायिक करते थे तथा उनका समाधिमरण भी मल्हारगढ़में विक्रम संवत १५७२ ज्येष्ठ सुदी ६ को हुआ था। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह दिगम्बर जैन आम्नायके अनुसार मुख्यतासे जैन ग्रन्थोंके ज्ञाता थे व अध्यात्मकी गाढ़ रुचि रखते थे। इनकी रचनाओंमें पद पद पर आत्मापर लक्ष्य दिलाया गया है। इनकी रचना अध्यात्मिक होनेसे यद्यपि पुनरुक्तियें बहुत हैं, तथापि उनका होना अध्यात्म ग्रन्थमें अनिवार्य है।

हम नीचे कुछ गाथाओंको नमूनेके रूपमें बताते हैं जिससे भूमिका पढ़कर पाठकोंको ग्रन्थका महत्व ज्ञात होजावेगा।

(५४) छंद न्यानीय।

निसंक सहावे न्यान पौ, तव आयरना जू।
सल्य संक विलयंतु, सबने न्यानीया तव आयरना जू॥ ११॥

भावार्थ—जब ज्ञान पदमें शंका रहित सम्बन्ध प्रगट होजाता है, मैं शुद्ध ज्ञान स्वरूप हूं यह श्रद्धा शंका रहित होजाती है। तब सर्व शल्य—माया मिथ्या, निदान व सर्व भय व शंकाएं विला जाती हैं ॥ १२ ॥

(५५) शब्द प्रियो ।

सब्द फूक सुइ गमनं, गमनं सुइ अगम गमिय सुइ कर्नं ।

स्फटिक न्यान सुइ कलनं, कलनं अन्मोय कमल निर्वानं ॥ ९४ ॥

भावार्थ—फूंकके द्वारा बजनेवाले बाजोंसे भी शब्द निकलते हैं। जैसे बांसुरी आदिसे कानोंमें जब शब्द आते हैं, तब उनसे इन्द्रियोंसे अगम्य ऐसे आत्माका ज्ञान होता है। तब स्फटिक मणिके समान शुद्ध निर्मल ज्ञानका अनुभव होता है। आत्मानुभवके आनन्दमें मगन होनेसे कमल समान आत्मा शुद्ध हो निर्वाणको प्राप्त कर लेता है। इससे स्वामीने बताया है कि अध्यात्म मननका अभ्यास बाजा बजाकर भी किया जासक्ता है।

(५६) हिययार रमन ।

तं स्थिति रमनह रयन पउ, तं स्थिति सिद्ध सरूप अलष जिन ॥ १९ ॥

तं वाच्छल विनय संजुत्तु भौ, विन्यान न्यान दर्संतु सुयं जिन ॥ २० ॥

भावार्थ—वे सिद्ध भगवान रत्नत्रय पदमें परम दृढतासे रमण कररहे हैं, इससे वे स्थितिकरण अंगके धारी हैं। उनकी स्थिति सिद्ध स्वरूपमें है, वे मन इन्द्रियोंसे अगोचर अलष जिन हैं ॥१९॥ वे सिद्ध भगवान अपने रत्नत्रय स्वरूपमें बड़ी विनय व भक्तिसे लीन हैं। इससे निश्चय वात्सल्य अंगके धारी हैं। वे अपने ज्ञान स्वभावका बड़े भावसे दर्शन कररहे हैं, वे स्वयं जिन हुए हैं। २०॥ इसमें सिद्धोंमें आठ अंग सिद्ध किये हैं।

(६५) ॐ लखनो फूलना ।

सुततह भेयह सस स उत्तु, सब्द सहावे ममल सुनन्तु ।

सब्द असब्द सु समय मओ, सब्द विन्यान विनय संजुत्तु ।
सब्द भेय सुत नन्तानंतु, असब्द साहन विंदंतु ॥ १० ॥

भावार्थ—श्रुतज्ञानमें जीवादि सात तत्वोंका भेद बताया है, शास्त्रके शब्दोंको समझनेसे शुद्ध आत्माका मनन होता है। शब्दोंके द्वारा शब्द रहित आत्माका बोध करना चाहिये। भव्य जीव शब्दोंकी व शब्दोंमे प्रकाशित ज्ञानकी विनय करता है। शब्दोंके द्वारा अनन्तानन्त श्रुतज्ञानका लाभ होता है। निश्चयसे शब्द रहित आत्माका अनुभव ही मुक्तिका साधन जानो ॥ १० ॥

(६९) सिम धुव ।

विषय विलय सुइ उवनं, उवनं सुइ विषय विलय सिय सुवनं ।
सिय सुवनं धुव गमनं, धुव गमन कमल सहियं कर्न ॥ ७ ॥

भावार्थ—इन्द्रिय विषयोंकी चाहका विला जाना सो ही वीतरागताका प्राप्त होना है। वीतरागताका प्रकाश सो ही आपका शुद्ध भावमें परिणमन है। शुद्ध भावमें परिणमन है सो ही ध्रुव आत्मामें आचरण है। स्वरूपमें आचरण है सो ही वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल विकसित होता है ॥ ७५ ॥

(७२) उमाहो फूलना ।

चलिचलहु न हो जिनवरस्वामी अपनडे सेजां, सिंहासन हो सूषम सहियो जै जै जिनेसा ।
तं विंद कमल रस रमनो मिलन सहेसा, जं जिनवर हो उवनो स्वामी मुक्ति प्रवेसा ॥ ७ ॥

भावार्थ—हे जिनेन्द्र भगवान ! क्या आप मेरे साथ अपनी शय्यापर नहीं चलोगे ? अपनी शय्या सिद्ध पर्याय है जिसको पाकर यह आत्मा अनंतकालके लिये परमानन्द सहित विश्राम करता है। वहांपर आत्माके शुद्ध अतीन्द्रिय सूक्ष्म प्रदेशोंका सिंहासन है जो विजयका आसन है, वहीं श्री जिनेन्द्र सिद्ध भगवान विश्राम करते हैं। उस शय्याके पास जानेसे आत्मारूपी कमलके अनुभवसे आत्मीक आनन्दके रसमें मगनता होती है तब आत्मा जिनेन्द्र भगवान होकर मुक्तिमें प्रवेश करता है ॥ ७ ॥

(७३) संसर्ग सोलही ।

पुत्रं पूर्व विशेष उक्त सहजं, सहजोपनीतं बुधैः ।
पुलयं परम सुभाव सुद्ध सुरयं, कम्मं च निर्लूरनं ॥
पुत्रं अर्थति अर्थ अर्थ ममलं, सर्वन्य सार्धं ध्रुवं ।
पुत्रं परम पदं ति अर्थ कमलं, विन्यान न्यानं सुरं ॥ ९ ॥

भावार्थः-गुरु आत्मानुभूतिमें रमण करनेसे सहज ही अपूर्व परमात्म स्वरूपरूपी पुत्रकी उत्पत्ति होगई है, जिस परमात्म स्वरूपका अनुभव बुद्धिमान तत्त्वज्ञानियोंको स्वयं सहजमें होता है, जिसमें परम स्वभाव उज्वलतासे झलक रहा है। वह निर्मल सूर्य समान ही प्रकाशमान है, उसके सर्व कर्म क्षय होगए हैं, यह परमात्मारूपी पुत्र रत्नत्रयमई पदार्थ शुद्ध है, इसको ध्रुव सर्वज्ञ कहते हैं। यह परमात्मारूपी पुत्र परम पदमें रहनेवाला है। रत्नत्रयमई विकसित कमल समान प्रफुल्लित है, यही केवलज्ञानमई मर्म है ॥ ९ ॥

इस सोलहीमें बेटा-बेटी, महतारी, ससुर, साली, भाई आदि शब्द आए हैं, जिनका पंद्रहवीं शताब्दीमें प्रचार था।

(७४) कल्यानक फूलना ।

इसमें पांच कल्याणक निश्चयनयसे घटाए हैं—

जब जिनु गर्भवास अवतरियो, ऊर्ध ध्यान मनु लायो ।
दर्सन न्यान चरन तव धरियो, उव उवन सिधि चितु लायो ॥ १ ॥

भावार्थः—जब श्री जिनेन्द्र भगवान सम्यग्दृष्टी श्रद्धावान भव्य जीवके मनरूपी गर्भके भीतर आकर वास करते हैं तब मनकी एकाग्रता होकर उत्तम धर्मध्यान जग जाता है। उस समय निश्चय सम्यग्दर्शन, निश्चय सम्यग्ज्ञान, निश्चय सम्यक्चारित्र, निश्चय सम्यक् तप चारों ही आराधनाओंका आराधन होजाता है, उस समय प्रकाशमान सिद्धका स्वभाव अनुभवमें आता है ॥ १ ॥

(७७) चित नौटा फूलना।

दर्सन मोहंध सुदिस्टि गलिउरे, आवर्न न्यान विलयंतु।
दर्सन आवर्न न ऊपजेरे, मोह आवरन विमुक्त ॥ १३ ॥

भावार्थः-उनकी आत्माके भीतरसे दर्शन मोहनीय कर्मके उदयसे होनेवाली मिथ्यात्वदृष्टि दूर होगई है। वे अरहन्त क्षायिक सम्यग्दृष्टि हैं। ज्ञानावरण कर्मका भी क्षय होगया है जिससे अनंतज्ञान प्रगट होगया है तथा दर्शनावरण कर्मके नाश होनेसे उनके अनंत-दर्शन प्रगट होगया है। अब दर्शनका आवरण नहीं पड़ेगा। चारित्र मोहका आवरण भी छूट गया है जिससे वे परम वीतराग हैं।

(१०) चतुर्विध संघ।

इसमें सिद्धोंमें साधु संघको सिद्ध किया है।

अषयार जयं जय उवनं, आयरनं उवन अगम गम गमनं।
लोय लोय जय उवनं अनयारं, सुइ समय जयो निर्वानं ॥ ३५ ॥

भावार्थ—अनगार सिद्धकी जय हो या अनगार अर्थात् परमें रमनको जीतनेवाले प्रकाशमान सिद्धकी जय हो। जो यथाख्यात चारित्रके प्रकाशमें इन्द्रिय व मनसे अगोचर अनुभवगम्य आत्मामें चल रहे हैं अर्थात् आत्माका अनुभव कर रहे हैं। जिनके प्रकाशने लोकालोकको जीत लिया है। अनगार है सो ही आत्मा है, सो ही निर्वाण है, उसकी जय हो।

(८२) संजोय मुक्ति पत्रासी।

सुयं सहावे हो सुयं जिनु, सुयं लब्धि संजुत्तु।
षोडसु भावरौ परिनवै, सुइ कलन मुक्ति संपत्तु ॥ २४ ॥

भावार्थ—यह जिन भगवान स्वयं अपने स्वभावमें मगन हैं; स्वयं अनंतज्ञानादि लब्धिके धारी हैं। यह सोलह वाणीके सुवर्ण समान शुद्ध भावमें परिणमन कर रहे हैं। ऐसा ही स्वानुभव कर्ता मुक्तिको पाता है।

(८६) सम्यक्त आठ गुण ।

यहां अरहंतमें संवेगादि आठ गुण सम्यक्तके सिद्ध किये हैं—

अनुकम्पा अन्यान विपक जिनु, न्यान अन्मोय सुरमन जिनु ।

न्यान दिप्ति तं दिष्टि रमन जिनु, तं न्यान दान अनुकम्परयं ॥ ११ ॥

भावार्थ—श्री अरहंतमें अनुकम्पा गुण यह है कि आत्मा पर दया करके सर्व अज्ञानको नाश कर डाला है तथा वे जिनेन्द्र ज्ञानानंदमें ही रमण कर रहे हैं। इन्होंने कर्मोंका मैल हटा दिया है। वे वीतराग भगवान ज्ञान दर्शनमें रमण कर रहे हैं तथा वे दया करके अपनेको ही ज्ञान दान दे रहे हैं या वे भव्य जीवोंको ज्ञानका प्रकाश करते हैं। यही अनुकम्पा भावमें मगनता है। सम्यक्ती व्यवहारसे प्राणीमात्र पर दया करता है। श्री अरहंतके निश्चय दया यह है कि वे आपको व परको ज्ञानका दान करते हैं ॥ ११ ॥

(८८) तप फूलना ।

इसमें निश्चयनयसे अरहन्तमें बारह तप सिद्ध किये हैं।

रस परित्याग तिक्त जिन ऊहं, पर्जय रय रसिय सुयं गलियं।

न्यान विन्यानहविंद रयन जिनु, पर पर्जय रसिय सुयं विलयं ॥ ११ ॥

भावार्थः-श्री जिनेन्द्र भगवान सर्व मोहके त्यागी हैं। इस लिये सर्व पुद्गलमई स्वादके त्यागी हैं। शरीरमें स्नेहरूप रसका स्वाद उनके स्वयं गल गया है व षट्रसोंके स्वादसे विरक्त हैं। श्री जिनेन्द्र आत्माके ज्ञानके स्वादमें रमण कर रहे हैं। पर परिणतिका स्वाद उनके स्वयं गल गया है।

(८९) षट् आवश्यक गुण ।

वस्तुत्वं नन्त नन्त रमन रयन जिनु, बलवीर्य रमं जिन वस्तु वसं ।

वस्तुत्वं अर्थ जिन अर्थति अर्थह, सम अर्थ सुयं परमार्थ पयं ॥

तं ममल रमन सुह सिद्धि जयं ॥ ४ ॥

भावार्थ—श्री अरहंत परमात्मामें वस्तुत्व स्वभाव है, जिसमें अनंतानंत गुण स्वरूप रत्नत्रय धर्ममें वे रमण करते हैं। श्री

जिनेन्द्र भगवान वस्तुत्व गुणके कारण आत्माके अनंत वीर्यमें रमण करते हैं। वस्तुत्व धर्म यह है कि श्री जिनेन्द्र भी एक पदार्थ हैं और वे रत्नत्रयमई एक भावमें रमण करते हैं, वही स्वयं ममता मई पदार्थ है। तथा वे स्वयं परमात्मपद रूप हैं। वे शुद्ध भावमें रमण करते हुए स्वयं सिद्ध गतिको चले जाते हैं॥ ४ ॥

छंद नं० ९३, ९४ में अरहंतके ३४ अतिशय आठ प्रातिहार्य बहुत उत्तम प्रकारसे अध्यात्म रूपसे बताये हैं तथा छंद नं० ९६ में सिद्ध पचीसीमें सिद्धोंकी महिमा गाई है।

(१५) श्रेणी वधाओ।

कौन स्रेनि न्यान दर्स स्रेनि कौन, कौन स्रेनि दानु लब्धि स्रेनि कौन।
सुभाइ स्रेनि न्यान उवन स्रेनि दर्स, अनंत स्रेनि दानु सहज दिपि लब्धि॥

भावार्थः-प्रश्न-अनन्त ज्ञानका क्या मार्ग है, अनन्त दर्शनका क्या मार्ग है, अनन्त दानका क्या मार्ग है, अनन्त लाभका क्या मार्ग है।

उत्तर-ज्ञानावरणके नाशसे स्वभावका प्रकाश अनंतज्ञानका मार्ग है, दर्शनावरण कर्मके नाशसे स्वभावका उदय अनंतदर्शनका मार्ग है, दानान्तरायके नाशसे अनंत शक्तिका होना अनंत दानका मार्ग है. लाभांतरायके नाशसे सहज स्वभावका प्रगट होना अनन्त लाभका मार्ग है।

(१०४) जनगन बावलो।

जन गन असम समय रे, न्यानी समय सहाइ।
जन गन बन्धमे रे, न्यानी मुक्ति सुभाइ॥ ६॥

भावार्थ—जन समूह परसमयमें या राग द्वेष मोह भावमें रत हैं। ज्ञानी स्वसमयमें या स्वात्माके स्वभावमें रत हैं। साधारण संसारी जीव कर्मबन्धके मार्गमें हैं। ज्ञानी बन्धको काटकर मुक्तिका स्वभाव धारते हैं। ज्ञानी मोक्षमार्गी हैं।

इन थोड़ेसे नमूनोंसे पाठक समझ सकेंगे कि इस ग्रन्थको समभावसे मनन करनेसे शुद्धात्माका भलेप्रकार मनन होगा।

मैं भाई मथुराप्रसादजी समैय्या बजाज सागरका आभारी हूं जिनके साथ मुलाकात होनेसे मुझे श्री तारणतरण स्वामी रचित आध्यात्मिक साहित्यको सूक्ष्म दृष्टिसे मनन करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। ऐसे आध्यात्मीक ग्रन्थोंकी टीका करनेसे मेरी शक्ति व मेरे

समयका बहुत ही अच्छा उपयोग हुआ है। मेरी भावना है कि श्री तारण समाजके नरनारी व सर्व दिगम्बर जैनी व अन्य सर्व श्वेतांबर जैनी व सर्व वैराग्यप्रेमी जनसमूह श्री तारणस्वामीके वाक्योंको पढ़ें व उनका विचार करें। ये वाक्य मोक्षद्वीप पहुंचानेके लिये वास्तवमें तारण हैं या जहाज हैं।

जयवन्तो वर्तो सदा, वाणी शुभ अध्यात्म।
जा प्रसाद ग्रन्थी खुले, आवे सुध अध्यात्म ॥ १ ॥

तारण स्वामी समयके, अर्थ विज्ञ गुणखान।
उनके गुणको याद कर, वन्दूँ तन मन वान ॥ २ ॥

उनके गुण परसादसे, लखा अर्थ मति रूप।
बालबोधमें लिख दिया, समझो भवि तद्रूप ॥ ३ ॥

भूल चूक हो अर्थमें, क्षमा करो बुधवान।
मूल ग्रन्थ लख शोधलो, दयाभाव चित आन ॥ ४ ॥

मङ्गल श्री अरहन्त हैं, मङ्गल सिद्ध महान।
मङ्गल श्री जिन साधु हैं, मङ्गल धर्म प्रधान ॥ ५ ॥

चारों गतिके दुःखको, दूर करन ये चार।
ध्याऊं श्रद्धा धारके, जो पाऊं भवपार ॥ ६ ॥

—ब्रह्मचारी सीतल।

ता० १३-१०-१९३६.

विषय-सूची।

नं०	विषय	गाथाएं	पृष्ठ
(५०)	सहेरा फूलना	१०१६—१०२५	१
(५१)	नन्द आनन्द फूलना	१०२६—१०३८	८
(५२)	द्रिप्ति विधान	१०३९—१०६४	१३
(५३)	सन्यानी मुक्ति पओ	१०६५—१०७५	२३
(५४)	जिनवर उत्तो न्यानीया	१०७६—११०८	२६
(५५)	सब्द प्रियो विधान	११०९—११३३	३५
(५६)	पनविधि बंधाओ	११३४—११४६	४५
(५७)	हितकार श्रेणी	११४७—११८२	५०
(५८)	राछड़ो भवियन फूलना	११८३—११९६	६३
(५९)	दहकार फूलना	११९७—१२०४	६८
(६०)	उत्पन्न साह विधान	१२०५—१२३५	७३
(६१)	जयमाला छन्द	१२३६—१२५०	८३
(६२)	हिययार रमन फूलना	१२५१—१२९३	८८
(६३)	उवन विंद रमन बधाओ	१२९४—१३०२	९८
(६४)	न्याय रमन बधाओ	१३०३—१३१३	१०१
(६५)	ॐ लखनो फूलना	१३१४—१३४७	१०६
(६६)	फाग फूलना	१३४८—१३६०	१२२
(६७)	पदवी फूलना	१३६१—१३७०	१२६
(६८)	न्नत सुवा फूलना	१३७१—१३९४	१३०
(६९)	सिय ध्रुव	१३९५—१४१८	१३९
(७०)	सिग ध्रुव छन्द	१४१९—१४४२	१४७
(७१)	उमाहो फूलना	१४४३—१४५३	१५५
(७२)	मेवाड़ा छन्द	१४५४—१४७७	१६०
(७३)	संसर्ग सोलही	१४७८—१४९३	१६७
(७४)	कल्यानक फूलना	१४९४—१५३५	१७७
(७५)	बड़वाईकी चाल	१५३६—१५४६	१९०
(७६)	फुटकल	१५४७—१५६७	१९५
(७७)	चित नौटा फूलना	१५६८—१५८७	२०२
(७८)	फुटकल	१५८८—१६०७	२०९
(७९)	कलसोंकी	१६०८—१६१४	२१९
(८०)	चतुर्विध संघ	१६१५—१६५८	२२२
(८१)	हियडोरिनी फूलना	१६५९—१६७३	२३६
(८२)	संजोय भक्ति पचीसी	१६७४—१६९८	२४०
(८३)	परमेष्ठी बत्तीसी	१६९९—१७३१	२४८
(८४)	ग्यारह अंग फूलना	१७३२—१७४८	२५९
(८५)	चौदह पूर्व रासा	१७४९—१७६७	२६७
(८६)	सम्यक्त अष्टगुण	१७६८—१७७९	२७४
(८७)	धर्माचरण फूलना	१७८०—१७९२	२७९
(८८)	तप फूलना	१७९३—१८२६	२८७
(८९)	षट् आवश्यक गुण फूलना	१८२७—१८३५	३००

नं०	विषय	गाथाए	पृष्ठ
(९०)	दस सम्यग्दर्शन भेद फू०	१८३६–१८४८	३०४
(९१)	ज्ञानरमन फूलना	१८४९–१८५९	३१२
(९२)	साधु चारित्र फूलना	१८६०–१८७६	३१७
(९३)	अतिशय चौतीस	१८७७–१९१४	३२६
(९४)	अष्ट प्रातिहार्य	१९१५–१९२६	३४५
(९५)	अरहन्त सर्वज्ञ फूलना	१९२७–१९४२	३५१
(९६)	सिद्ध पचीसी	१९४३–१९६७	३५९
(९७)	परमेष्ठी तीसी	१९६७–१९९७	३६९
(९८)	ध्रुव उवन साहसीय अर्क	१९९८–२०२६	३७८
(९९)	पयोगसी अर्क	२०२७–२०३५	३९७
(१००)	जाकी उवन सेज	२०३६–२०४७	४००
(१०१)	जय जय छन्द	२०४८–२०७५	४०३
(१०२)	श्रेणी बधाओ	२०७६–२०९२	४११
(१०३)	तार कमल सेहरा	२०९३–२१२४	४१८
(१०४)	जनगन बावलो फूलना	२१२५–२१३४	४२६
(१०५)	पूर्व जय पूजा	२१३६–२१६३	४३०
(१०६)	मुक्ति पैंतालो	२१६४–२२०९	४३९

शुद्धाशुद्धि पत्र ।

पृ०	ला०	अशुद्ध	शुद्ध
३ मू०	६	सिम	सिय
५ मू०	१६	भक्ति	मुक्ति
७ मू०	६	१५	१०५
८	४	पुण्यवृष्टि	पुष्पवृष्टि
२०	२१	मान	ज्ञान
३९	१	अमाप	प्रकाश
४०	२३	कलके बाजे	फूकके बाजे
४५	१५	विमय	विनय
५८	१०	पूर्ण	चूर्ण
६४	११	मौहह	भौवह
७१	१२	ज्ञानीके	ज्ञानीने
७९	४	कर्म युक्त	कर्म मुक्त
८८	८	समहि	सत्यहि
९८	१४	ग्रहिज	गुहिज
१००	१	आवरन	आचरन
१०१	१६	पिड	पिउ

पृष्ठ	ला०	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	ला०	अशुद्ध	शुद्ध
१०४	१६	आगे चार	अगोचर	१८९	९	प्रबन्ध	प्रवेश
१०६	६	जलवाता है	जलजाता है	१९३	७	दित्यं	दिव्य
,,	१५	निंदा	निद्रा	,,	२२	परमोपकारक	परमौदारिक
,,	१५	होते	नहीं होते	१९४	१०	उत्पत्ति	उन्नति
१०९	७	दिस्नि	दिस्टि	१९५	६	झियार हयारं	हिययार सहयारं
११०	६	मओ	पओ	१९८	१९	भव	भय
११७	२२	आवरनह	आचरनह	२०३	१५	हिजु	रिजु
१४१	१५	समानपना	सकंपपना	२०७	७	आत्मज्ञानियोंके	अनात्मज्ञानियोंके
,,	२२	ध्यान रंजन	जन रंजन	२०८	२२	अल्पज्ञान	आत्मज्ञान
१२८	९	आवरण	आचरन	२०९	३	अज्ञान	आत्मज्ञान
,,	,,	आवरण	आचरण	,,	९	निर्बल	निर्मल
१५३	१२	मुलिन	पुलिन	२१२	५-६	आवरियो	आचरियो
१५७	७	देसा	भेसा	२२४	१५	ठहरने	हरने
,,	१६	मिली	विली	२३०	१३	प्रेमके	समयसार रूप
१६२	१५	तिहुवयो	तिहुव भो	२३१	३	धातुके	ऋण् धातुके
१६७	१९	सास्तुतं	सासुतं	२३५	१८	पतन	यतन
१७२	१६	स्वयं	भय स्वयं	२४२	८	मुक्केउ	भुक्केउ
१७६	२०	साले ही	सोल ही	,,	१७	स्रेवि	स्रेनि
१८०	३	तित्थपर	तित्थयर	२४७	१३	अमुक अंशमें	आयुके अंतमें
,,	,,	उपलधु	उपलद्धु	२४९	९	मुक्त	भुक्त
,,	९	समधु	समत्यु	२५२	१६	उपयोय	उपयोग
१८९	५	अप्रत्त	अप्रमत्त	२६२	१६	भार	सार

पृष्ठ	ला०	अशुद्ध	शुद्ध
२७१	११	शुद्धोपयोय	शुद्धोपयोग
,,	२३	आत्मज्ञान हो	आत्मज्ञान न हो
२७९	१	करना	रखना (६) भक्ति, (७) वात्सल्य
,,	१५	स्थूल	सूक्ष्म
,,	१९	१७७९	१७८०
२९६	९	भाव रहित	भाव सहित
२९९	१२	काम	काय
३०३	५	प्रबल	द्रव्यत्व
,,	१०	स्वानुभव	स्वानुभव
३१३	१३	तरन तरन	तारन तरन
३२१	१५	कोई न	कोई
३२२	३	या	यह
३३१	१३	धलि	धूलि
३४३	३	आठ लक्षण	१००८ लक्षण
३४४	२२	अरहंत आत्माकी	अरहंतकी आत्मा
३४५	६	न सर्वज्ञ	वे सर्वज्ञ
३५७	२	उसीमें	उसी
३५९	२	अगंतु	अनतु
३६१	७	वेम रस	हेय रस
,,	१३	षऊ	पऊ
३६४	१९	ममल	समल
३६७	२२	भिज्ञ	निज
३८१	१७	उस भय	अभय
३८७	२२	निर्बलता	निर्मलता
४०२	४	कट	रह
४२८	१६	बतुन	बचन
४३४	अंतमें रह गया- (अन्मोय कर्न सम सिद्धि सिद्धं) समतामय आनंदमय साधनमें ही सिद्धपदकी सिद्धि होती है।		
४३९	१७	विवासु	निवासु
४४०	१२	समस्थु	समत्थु

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।

श्री तारणतरण स्वामी विरचित–

ममलपाहुड़ या अमलपाहुड़ ।

द्वितीय भाग ।

दोहा–परम निरंजन ज्ञानमय, सिद्ध प्रभू सुखकार ।
भावद्रव्यसे नमन कर, करूं ग्रंथ विस्तार ॥

(५०) सेहरा फूलना गाथा १०१६ से १०२५ तक ।

उव उवनउ उवन उवन उवन उवन मओ ।
उव उवनउ नन्तानन्तु अलष जिन नन्द मओ ॥
तं नन्द आनन्द सनन्द नन्द गम अगम रओ ॥ १ ॥

न्यानीय न्यान उववन्न अगम जिन जिनय जिंनद म सेहरो ।
तं गम्य अगम्य अगम्य उवन जिनय जिन सेहरो ॥
तं गमियो नन्तानन्त ममल जिन सेहरो ।
भय षिपनिक नन्द आनन्द चेय नन्द सेहरो ॥
तं अमिय रमन रस रसिय सहज जिन सेहरो ॥ २ ॥ (आचरी)

जिनवर उत्तउ जिनय जिनेन्द जिनय जिन नन्द मओ ।
तं लब्धि अलब्धि सलब्धि जिनय जिन जिनय सनंद पओ॥
तं न्यान सन्यान सुन्यान विन्यान ममल रस सुक्खरओ ।
न्यानीय सुयं सुववन्न जिनय जिन जिनय जिन सेहरो ॥
गमओ गम्य अगम्य उवन जिनय जिन सेहरो ॥ ३ ॥
तं न्यान लब्धि सुइ लब्धि सुयं सुव सुवन सुयं जिन न्यान पओ ।
तं दंसिउ नंतानंतु सहज जिन लब्धि अलब्धि सुलब्धि मओ ॥
तं दान सुदान सुन्यान सुयं जिन जिनय जिनय जिनंद रओ ।
न्यानीय निलय तं निलय निलय जिन जिनय जिनंद सु सेहरो ॥ ४ ॥ गमओ०
तं लब्धि अलब्धि सुलब्धि जिन जिनय जिनंद सनंद सनंद मओ ।
तं भोय सुभोय अभोय भोय गुन जिनय जिनंद सनंद सनंद मओ ॥
उवभोग सुभोग अभोग भोग रै नंद सनंद जिन सेहरो ।
न्यानीय सुनीय सुनीय सुयं सुइ सहज जिनंद स सेहरो ॥ ५ ॥ गमओ०
नंत वीर्य सुइ लब्धि सुलब्धि सुयं सुइ वीर्य सुनंतानंत पओ ।
सम्मत्त सम्मत्त स उत्तु सु समय सुयं जिन जिनय जिनंद रओ ॥
त चरनह चरिय चरंतु चरन जिन जिनय जिनंद रओ ।
न्यानीय सु निलय जिनंद जिनय जिन सहज जिनंद स सेहरो ॥ ६ ॥ गमओ०
नौ लब्धि उवन उवन सु उवन उवन सु जिनय मओ ।
तं लब्धि अनन्तानन्त सहज सुइ सहज जिनेन्द सनन्द पओ ॥

सुइ नन्द सनन्द आनन्द सुनन्द चेयनन्द सु समय रओ।
न्यानीय सुन्यान अनन्त ममल जिनय जिनेन्द स सेहरो ॥ ७ ॥ गमओ०
संजमु सुइ संजमु सुवन सुवन मुव संजम समय स सुद्ध पओ।
संजम संजम सुनहु सुयं सुइ सुद्ध संसुद्ध सु समय मओ ॥
गति गम्य अगम्य अनन्त सु सुद्ध सुयं सुइ ममल विन्यान स सेहरो ॥ ८ ॥ गमओ०
कषाय अषाय कषाइ जिनय जिन जिनय जिनेन्द पओ।
तं लिंगु अलिंगु सु लिंगु सुइं जिन लिंग सुलिंग सु जिनय पओ ॥
मिथ्यात सहाव सरूव सुयं सइ विलय सयं जिन सुद्ध रओ।
न्यानीय निवासु अवय स नन्तानन्त सुयं जिन सेहरो ॥ ९ ॥ गमओ०
न्यानेन न्यान विन्या सुन्यान सन्यान सु ममल सु ममल पओ।
त सिद्ध सरूव सरूव सयं सुइ रूव अरूव सु मुक्ति पओ ॥
सुइ तारन तरन विवान विवान समय सहाव सहाव रओ।
न्यानीय सुनीय सुनित निलय जिन जिनय सिद्ध जिन सेहरो ॥ १० ॥ गमओ०

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनउ उवन उवन उवन उवन मओ) केवली भगवानके भीतर जो उदयरूप प्रकाशमान गुण थे सो अपने स्वरूपमय होकर उदयरूप होरहे हैं (उव उवनउ नननंतु अलष जिन नंद मओ) वे अनन्तानन्त शक्तिको लिये हुए गुण जिनमें प्रकाशमान हैं ऐसे आनन्दमई श्री जिनेन्द्रभगवान हैं जो इंद्रियों तथा मनके द्वारा ठीक ठीक जाने नहीं जाते, इसलिये अलक्ष्य हैं परन्तु ज्ञानके द्वारा ही जाने जाते हैं (तं नंद आनंद सनंद नंद गम अगम रओ) वे भगवान निजानन्दमें मगन हैं, आनन्दमई भावमें तन्मय हैं, वे अपने आत्मामें लीन हैं अर्थात् जो मन व इंद्रियोंसे जाना नहीं जाता ऐसे अगम्य आत्मामें लीन हैं ॥१॥

(न्यानीय न्यान उववन्न अगम जिन जिनय जिनेन्द स सेहरो) केवलज्ञानीमें केवलज्ञानका प्रकाश है वह ज्ञान अगम अर्थात् अनन्त व अथाह है, वे कर्मोंको जीतनेवाले श्री जिनेन्द्र हैं, व वे ही हमारे लिये सेहरा हैं, या मुकुट शिरोमणि श्रेष्ठ आत्मा परमात्मा हैं (वं गम्य अगम्य अगम्य उवन जिनय जिन सेहरो) वे गम्य अर्थात् इंद्रिय, अगम्य अर्थात् मन इनसे अगम्य अर्थात् जानने योग्य नहीं हैं, ऐसे प्रकाशमान कर्मोंको जीतनेवाले जिन श्रेष्ठ हैं (तं गमियो नंतानंत ममल जिन सेहरो) उन्होंने अनन्तानन्त पदार्थोंको जाना है वे राग द्वेषादि मलसे रहित श्री जिनवर हैं (भय षिपनिक नंद आनंद चेयनंद सेहरो) उन्होंने सर्व भयोंका नाश कर दिया है, वे निर्भय हैं, आनन्दमग्न हैं, चिदानन्द हैं व श्रेष्ठ हैं (तं अमिय रमन रस रसिय सहज जिन सेहरो) वे आनन्दामृतमें रमण करते हैं, वे स्वात्म रसके रसिक हैं, वे सहज स्वभावमें रहनेवाले जिनमुकुट हैं अर्थात् अर्हंत परमात्मा जिनेन्द्र हैं ॥ २ ॥

(जिनवर उत्तउ जिनय जिनेन्द जिनय जिन नंद मओ) श्री जिनेन्द्र भगवानने कहा है कि कर्मोंको जीतनेवाले जिनेन्द्र वीर जिन आनन्दमई हैं (तं लब्धि अलब्धि सुलब्धि जिनय जिन जिनय मनंद पओ) उन अरहन्त भगवान्ने कठिनतासे प्राप्त करने योग्य सच्ची नौ लब्धियोंको प्राप्त कर लिया है, वे ही घातिया कर्मोंको जीतनेवाले जिन आनन्दमई पदमें रहनेवाले हैं (तं न्यान स न्यान सु न्यन व यान ममल रस सुक्ख रओ) वे ही अरहन्त सम्यग्ज्ञानके धारी हैं, वे ही अपने आत्मज्ञानके निर्मल वीतराग रसमई सुखमें लीन हैं (न्यानीय सुयं सुववन्न जिनय जिन जिनय जिन सेहरो) वे स्वयं ज्ञानी हुए हैं, भलेप्रकार स्वरूपमें प्रकाशमान हैं, वे ही जीतनेवाले श्री जिनेन्द्र मुख्य हैं (गमओ गम्य अगम्य उवन जिन जिनय सेहरो) उन अरहन्त भगवानने गम्य अगम्य अर्थात् स्थूल, सूक्ष्म, मूर्तीक, अमूर्तीक सर्व पदार्थोंको जान लिया है, वे ही उदयरूप श्री जिनेंद्र श्रेष्ठ हैं ॥३॥

(तं न्यान लब्धि सुइ लब्धि सुयं सुव सुवन सुयं जिन न्यान पओ) उन अरहन्तने नौ लब्धियोंमेंसे पहली केवलज्ञानकी लब्धिको स्वयं प्राप्त किया है व स्वयं ही ज्ञानावरणके विकारको दूर किया है (शवका अर्थ विकार है शवनका अर्थ दूर करना है) तथा वे वीतरागमई पदमें हैं (तं दर्सिउ नंतानतु सहज जिन लब्धि अलब्धि सु लब्धि मओ) तथा उन्होंने सहज ही स्वभावसे अनन्तानन्त पदार्थोंका दर्शन किया है। इसलिये कठिनतासे प्राप्त करने योग्य केवलदर्शन रूपी दूसरी सुलब्धिको पालिया है (तं दान सुदान सु न्यान सुयं जिन जिनय जिनय जिनेन्द रओ) और प्रभुने अनन्त दानकी तीसरी लब्धिको पाया है। वे स्वयं सम्यग्ज्ञानका दान अपनेको

या भव्यजीवोंको करते हैं। वे वीतराग जिनेन्द्र अपने वीरतापूर्ण जिनेन्द्र पदमें रत हैं (न्यानीय निलय तं निलय निलय जिन जिनय जिनेन्द सु सेहरो) उनका ज्ञानाकार आत्मा ही निवासस्थान है, उसी निज आत्माके भीतर रहनेवाले वे श्री वीतराग प्रभु जिन श्रेष्ठ हैं ॥ ४ ॥

(तं लब्धि अलब्धि सुलब्धि जिन जिनय जिनेन्द सनंद सनंद मओ) श्री अरहन्तने कठिनतासे प्राप्त करनेयोग्य अनन्त लाभकी सुलब्धिको प्राप्त कर लिया है इसीसे वे वीतराग जिन भगवान परमानन्दका लाभ करते हुए आनन्दस्वरूप हैं (तं भोय सुभोय अभोय भोय गुन जिनय जिनेन्द सनंद सनंद मओ) प्रभुने भलेप्रकार भोगनेयोग्य अनंत भोगकी लब्धिको प्राप्त कर लिया है जिससे इन्द्रिय व मनसे न भोगनेयोग्य अतीन्द्रिय भोगके गुणको प्राप्त करके श्री वीतरागी जिनेन्द्र अपने आत्मानन्दके भोगमें मग्न होकर आनन्दमई होरहे हैं (उवभोग सुभोग अभोग भोग रै नंद सनंद जिन सेहरो) श्री अरहंतने भलेप्रकार उपभोग करनेयोग्य अनन्त उपभोग लब्धिको प्राप्त कर लिया है जिससे वे इन्द्रिय व मनसे अतीत अतीन्द्रिय आनन्दके धनका भोग करते हुए आनन्दमई श्री जिन श्रेष्ठ होरहे हैं (रै के अर्थ धनके हैं)। (न्यानीय सुनीय सुनीय सुयं सुइ सहज जिनेंद स सेहरो) हे ज्ञानी जीव ! सुनो, सुनो, वे ही श्री जिनेन्द्र स्वयं अपनी सहज स्वाभाविक शक्तिसे श्री जिन श्रेष्ठ हैं ॥ ५ ॥

(नंत वीर्य सुइ लब्धि सुलब्धि सुयं सुइ वीर्य सु नंतानंत पओ) श्री अरहन्त भगवानने भलेप्रकार प्राप्त करने योग्य अनन्तवीर्य लब्धिको स्वयं प्राप्त किया है जिससे वे स्वयं अनन्तवीर्यके पदमें शोभायमान हैं (सम्मत्त सम्मत्त स उत्तु सु समय सुय जिन जिनय जिनेंद रओ) प्रभुने क्षायिक सम्यग्दर्शनकी लब्धिको प्राप्त किया है। स्वसमय अर्थात् अपने स्वरूपके साक्षात्कारको ही सम्यक्त कहते हैं उसी भावमें श्री वीतराग जिन तन्मय होरहे हैं (तं चरनइ चरिय चरंतु चरन जिन जिनय जिनेंद रओ) श्री अरहन्तने क्षायिक चारित्रकी लब्धिको पाया है जिससे वे स्वरूपाचरणमें चलते रहते हैं अर्थात् अपने वीतराग जितेन्द्रिय स्वभावमें लीन हैं (न्यानीय सु विलय जिनेन्द निनय जिन सहज जिनेन्द स सेहरो) हे ज्ञानीजन ! जिनेन्द्र भगवान अपने ही आधीन रहते हैं वे वीतराग भगवान सहज स्वभावसे ही जिनेन्द्र हैं। वे ही हमारे लिये सेहरा हैं, मुकुट हैं, पूज्य हैं ॥ ६ ॥

(नौ लब्धि उवन उवन सु उवन उवन सु जिनय मओ) इसतरह श्री अरहंतमें नौ लब्धियोंका प्रकाश भलेप्रकार झलक जाता है। वे श्री जिनेन्द्र वीतराग स्वरूपमें ही मग्न रहते हैं (तं लब्धि अनंतानंत सहज सुइ सहज जिनेन्द सनंद पओ) प्रभुमें अनन्तानन्त ज्ञानादिकी शक्ति सहज स्वभावसे प्रगट रहती हैं। वे सहज स्वरूप-

धारी जिनेन्द्र स्वात्मानन्द पद्में ही तिष्ठते हैं (सुइनंद सुनंद आनंद सुनंद चेयनंद सु समय रओ) उन्हींको स्वयं नन्द, सनन्द, आनन्द, सुनन्द व चिदानन्द कहते हैं, वे स्वसमयमें रत हैं, वे अपने स्वात्मानुभवमें लीन हैं (न्यानीय सु न्यान अनंत ममल जि य जिनेन्द स सेहरो) हे ज्ञानी ! वे अनन्त ज्ञानी कर्ममल रहित वीतराग जिनेन्द्र हैं, वे ही हमारे सेहरे हैं, पूज्य हैं ॥ ७ ॥

(संजम सुइ संजम सुवन सुवन सुव संजम समय स सुद्ध रओ) वे ही अरहन्त स्वयं यथाख्यात संयम रूप हैं। उन्होंने संयमके भीतर होनेवाले विकारोंको भलेप्रकार शमन कर दिया है। वे स्वसमयमई संयमरूप शुद्ध पद्में विराजित हैं (संजम संजम सुनहु सुयं सुइ सुइ संसुद्ध सु समय रओ) संयम संयम शब्दको सुनते ही वह संयम आत्मासे भिन्न नहीं है। आत्माकी शुद्ध परिणति जो स्वसमय रूप या स्वरूपाचरण रूप है वही वीतरागीके संयम है (गति गम्य अगम्य अनंत सु सुद्ध सुयं सुइ ममल विन्यान स सेहरो) श्री अरहन्तकी पर्याय या स्थिति ज्ञानगम्य है, ज्ञानी ही अरहन्तके सच्चे स्वरूपको समझते हैं अथवा केवलज्ञानी ही केवलज्ञानी अरहन्तकी महिमा जानते हैं, अल्पज्ञानियोंके लिये उनका स्वरूप अगम्य है। वे अनंत शक्तिधारी शुद्ध स्वयं रागादि मल रहित वीतराग विज्ञानमई आत्मा हैं, वे ही हमारे लिये सेहरा हैं या मुकुट हैं ॥ ८ ॥

(कषाय अषाइ कषाइ जिनय जिन जिनय जिनेन्द रओ) श्री अरहन्तने कषायोंको और अक्ष अर्थात् इंद्रियोंके विषयोंकी चाहको, जिसकी उत्पत्ति भी कषायोंसे होती है, जीत लिया है इसीसे वे जितेन्द्रिय, जित-कषाय, वीतराग, जिनेन्द्रपद्में आरूढ़ कहलाते हैं (नं लिंगु अलिंगु सुलिंगु सुइ जिन लिंग सुलिंग सु जिनय रओ) श्री अरहन्त भगवानका स्वरूप लिंग रहित अर्थात् वेद या कामविकारसे रहित है, वे काम रहित और निष्काम अङ्गके धारी हैं तथा वे जिन लिंग हैं, निर्ग्रंथ दिगम्बर स्वरूपके धारी हैं और भलेप्रकार भाव-लिङ्ग स्वरूप जिनपद्को रखनेवाले हैं (मिथ्यात सहाव सरूव सुयं सुइ विलय सुयं जिन सुद्ध रओ) श्री अरहंतप्रभुके स्वभावमेंसे मिथ्यात्व स्वभाव स्वयं विला गया है, वे स्वय शुद्ध वीतराग सम्यक्तमें लीन हैं न्यानीय निवासु अवयासु सु नंतानंत सुयं जिन सेहरो) हे ज्ञानी ! वे अरहन्त अनन्तानन्त पदार्थोंके जाननेकी शक्तिको रखनेवाले परम वीतराग जिन हमारे लिये सेहरा हैं या मुख्य हैं ॥ ९ ॥

(न्यानेन न्यान विन्यान सुन्यान सुन्यान सुममल सुममल रओ) श्री अरहन्त भगवान ज्ञानके द्वारा ही ज्ञानको जानते हैं। वहां मन व इंद्रियोंकी व कर्मोदयकी कोई सहायता नहीं है। वे केवलज्ञानमई सम्यग्ज्ञानके धारी

हैं। वे भावकर्ममल रहित वीतराग हैं, द्रव्यकर्ममल रहित घातीय कर्मोंसे शुद्ध हैं (तं सिद्ध सरूव सरूव सुयं सुइ रूव अरूव सु मुक्ति पओ) उनका स्वरूप सिद्ध भगवानके समान स्वयं शुद्ध हैं व अमूर्तीक हैं। वे ही अघातीय कर्मोंके क्षयसे मुक्तिपदको पाते हैं (एइ तारन तरन विवान विवान समय सहाव सहाव रओ) वे ही अरहन्त तारण तरण जहाज हैं। वह जहाज आत्माका एक शुद्ध स्वभाव है जो स्वभावमें ही रत हैं (ग्यानीय सुनीय सुनिय निलय जिन जिनय सिद्ध जिन सेहरो) हे ज्ञानी ! सुनो ! वे ही नित्य अविनाशी स्वात्मारूपी निवासमें रहनेवाले वीतराग जिन साध्यको सिद्ध करनेवाले श्री जिनेन्द्र हैं, वे ही हमारे लिये सेहरा हैं, मुकट हैं, पूज्य हैं ॥ १० ॥

भावार्थ—इस फूलनाके गानमें तारणस्वामीका लक्ष्य वह सेहरा है जिसको पहनकर एक वर किसी कन्याके वरनेके लिये जाता है। यहांपर श्री अरहन्त भगवानको मुक्ति कन्याको वरनेके लिये सेहरा सहित मानकर उनकी स्तुति की है। श्री अरहन्त पद चार घातीय कर्मोंके क्षयसे होता है। उसका क्रम यह है कि पहले यह जीव दर्शनमोह तथा अनन्तानुबन्धी चार कषायोंका क्षय करके क्षायिक सम्यग्दृष्टी चौथे अविरत सम्यक्तसे लेकर सातवें अप्रमत्तविरत गुणस्थानमेंसे किसीमें होजाता है, फिर मुनिपदमें रहकर धर्मध्यानके पीछे शुक्लध्यानकी आराधनाके लिये क्षपकश्रेणीपर आरूढ़ होता है। प्रथम शुक्लध्यानके प्रतापसे दशवें सूक्ष्मलोभ गुणस्थानके अन्तमें सर्व चारित्रमोह कर्मको क्षय कर क्षायिक चारित्र नामकी दूसरी लब्धिको पालेता है। फिर बारहवें क्षीणमोह गुणस्थानमें आकर दूसरे शुक्लध्यानके प्रतापसे शेष तीन घातीय कर्मोंको नाशकर शेष सात लब्धियोंको प्राप्त कर लेता है तब सयोगकेवली नामके तेरहवें गुणस्थानमें पहुंचकर श्री अरहन्त परमात्मा होजाता है। यह अरहन्त नौ लब्धियोंको लिये हुए शीघ्र ही चार अघातीय कर्मोंके क्षयसे मुक्ति सुन्दरीको बरकर सिद्ध होजांयगे।

ज्ञानावरणीय कर्मके क्षयसे अनन्त ज्ञान, दर्शनावरणीय कर्मके क्षयसे अनन्त दर्शन, अंतराय कर्मके क्षयसे अनन्त दान, अनंत लाभ, अनंत भोग, अनंत उपभोग, अनंत वीर्य; मोहनीय कर्मके क्षयसे क्षायिक सम्यक्त और क्षायिक चारित्र ये नौ केवल लब्धियां अरहन्तके चार घातीयके नाशसे स्वयं स्वभावरूप प्रगट होजाती है, नवीन नहीं आती हैं। इन नौ लब्धियोंका व्यवहारनयसे स्वरूप यह है कि वे केवली भगवान सर्व लोकालोकको अपने गुण व पर्याय सहित एक कालमें जानते हैं, यह केवलज्ञानलब्धि

हैं। उसी लोकालोकको सामान्य रूपसे देखते हैं, यही केवलदर्शनलब्धि है। सम्यग्ज्ञानका दान उपदेश द्वारा जगतको देते हैं यही अनन्त दान है व सर्व प्राणियोंको अभयदान देते हैं। उनके शरीरको पुष्टिदायक नोकर्म वर्गणाएँ समय २ आकर शरीरको स्थिर रखती है यह अनन्त लाभकी लब्धि है। अरहन्तको समवसरण विभूति, पुष्पवृष्टि आदि भोग उपभोगके योग्य सामग्री प्राप्त होती है। यही अनन्त भोग व अनंत उपभोग लब्धि है। केवली कभी भी किसी प्रकारकी निर्बलता नहीं अनुभव करते। यह उनके अनंत-वीर्यकी लब्धि है। वे वीतराग सम्यक्तमें व वीतराग चारित्रमें सदा ही प्रकाशमान हैं। यही अरहन्तके क्षायिक सम्यक्त, क्षायिक चारित्रकी लब्धि है। निश्चयनयसे इन नौ लब्धियोंका स्वरूप ऐसा विचारना चाहिये कि वे केवली भगवान आपसे अपनेको प्रत्यक्ष व सर्वांग जानते हैं। यही केवलज्ञान है व अपनेको प्रत्यक्ष देखते हैं यह केवलदर्शन है। आपसे अपनेको ज्ञानानन्दका दान करते हैं यह अनन्त दान लब्धि है। आपको आपसे ही ज्ञानानंदका व समय २ अपूर्व परिणतिका लाभ है यह अनन्त लाभ लब्धि है। आपसे ही आप अपने स्वरूपकी समय समय परिणतिका या अपने अभेद स्वरूपका निरन्तर भोग व उपभोग करते हैं यह अनन्त भोग उपभोग लब्धि है। अपने ही वीर्यसे अपने ज्ञानादि धनके भोगमें स्थिर है यह अनन्त वीर्य लब्धि है। आपको अपने स्वरूपका साक्षात्कार रूप सम्यक्त है व स्वानुभव रूप चारित्र है यह क्षायिक सम्यक्त व क्षायिक चारित्रकी लब्धि है। इन लब्धियोंका प्रकाश केवलीमें सहज स्वाभाविक रूपसे होता है, परके द्वारा नहीं होता है। केवली सदा ही स्वभावमें निवास करते हैं। वे वीतराग विज्ञानभावमें मगन हैं, वे परम संयमी हैं। उन्होंने विषयोंको व कषायोंको जीता है इससे वे जिन हैं। इसतरह मुक्ति-वधूके वर श्री अरहन्तकी गुणावलीका चिंतवन इस फूलनामें तारणस्वामीने किया है और परम भक्ति बताई है।

(५१) नन्द आनन्द फूलना गाथा १०२६ से १०३८ तक।

नन्द आनन्दह पूरिउ, चिदानन्द जिन उत्तं।
सहज नन्द तं सहज सरूवे, परम नन्द सिधि रत्तं॥ १॥

भवियन भय षिपिय मुक्ति संमिलिजै, तं अमिय रमन सिधि रमिजे।
तं धम्म रमन सिव लहिजे, भवियन तं अमिय रमन सिधि रमिजे ॥२॥ आचरी०
जिनवर उत्तउ सुद्ध परम जिन, सिद्ध सरूव स उत्तं।
न्यान विन्यानह केवलु सहियो, नन्त चतुष्ट संजुत्तं ॥ भवियन० ॥ ३ ॥
ऊवंकार ऊवनह सहियो, उवनौ दाता देउ।
न्यान विन्यानह उवन जु दाता, परमदेउ सम सोइ ॥ भवियन० ॥ ४ ॥
हिय यारह हिययार ऊवनो, ह्रींकारह हिय दिट्ठी।
अर्क विंद सो रमनह सहियो, पय कमल गुप्ति सुइ इट्ठी ॥ भवियन० ॥ ५ ॥
हिय यारह हुव यारह सहियो, उत्पन दिष्टि जिन उत्तं।
भव विनासु तं भाव ऊवनो, अमिय रमन सिधि रत्तं ॥ भवियन० ॥ ६ ॥
श्रींकारह सहयार ऊवनो, श्रीं सिद्धि सहकारं।
ममल सरूवे धम्मइ सहियो, सुद्ध दिष्टि हिययारं ॥ भवियन० ॥ ७ ॥
सहयारह हिययार ऊवनो, उवन दिष्टि सम उत्तं।
भय षिपनी कु अमिय सरूवे, रमन सिद्धि दर्संतु ॥ भवियन० ॥ ८ ॥
सहयारह तं जानु ऊपजै, हिय यारह उवन सहाओ।
ममल सहावे धम्म सरूवे, सिद्धह मुक्ति सुभाओ ॥ भवियन० ॥ ९ ॥
जानह जान सहाव संजुत्तो, तारन तरन पउत्तु।
पय संजोए भय षिपनिक है, भव्वु सिद्धि सम्पत्तु ॥ भवियन० ॥ १० ॥

जानु ऊवनो पय संजोए, पय विंदह दसंतु ।
अमिय रसायन तारन सहियो, सम सहिय मुक्ति सम्पत्तु ॥ भवियन० ॥ ११ ॥

पय विंदह विन्यान ऊवनो, परम तत्तु जिन उत्तं ।
परम पयत्तह ममल महावे, अमिय मैमुक्ति पहुत्त ॥ भवियन० ॥ १२ ॥

सम अर्थह तं समय संजुत्तो, तारन तरन स उत्तु ।
भय षिपनिकु तं अमिय सरूवे, तत्काल सिद्धि सम्पत्तु ॥ भवियन० ॥ १३ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(नन्द आनंदह नंदह पूरिउ चिदानंद जिन उत्तं) श्री जिनेन्द्र भगवानको आनन्दमें मग्न परम सुखसे पूर्ण चिदानन्दमई कहा गया है (सहजनंद तं सहज सरूवे परमनंद सिध गनं) वे सहजानन्दके भोगी हैं, सहज स्वरूपमें मग्न हैं। परमानन्दमई सिद्ध शुद्ध भावमें लवलीन हैं ॥ १ ॥

(भवियन भय षिपिय मुक्ति संमलिजै) हे भव्यजीवो ! सर्व भय छोड़कर या सर्व भय रहित मुक्तिरूपी स्त्रीसे भलेप्रकार मिलिये (तं अमिय रमन सिधि रमिजै) और आनन्दामृतमें रमण करनेवाली सिद्धि सम्पदाका भोग कीजिये (तं धम्म रमन सिव लहिजै) उस आत्मीक धर्ममें रमण कर मोक्षकी प्राप्ति कीजिये (भवियन तं अमिय रमन सिधि रमिजै) हे भव्यजीवो ! उस आनन्दामृतमें रमण करनेवाली सिद्धिरूपी स्त्रीके साथ रमण कीजिये ॥ २ ॥

(जिनवर उत्तउ सुद्ध परम जिन सिद्ध सरूव स उत्तं) श्री जिनेन्द्र भगवानने कहा है कि श्री वीतराग परमात्मा जिन सिद्ध स्वरूपके धारी कहे गये हैं (न्यान विन्यानह केवलु सहियं ... इष्ट संजुत्तं) वे ही केवलज्ञानके धारी हैं तथा वे ही अनन्त चतुष्टयके भी धारी हैं। अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य सहित हैं ॥ ३ ॥

(ऊवंकार ऊवनह सहियो उवनौ दाता देउ) ॐ मंत्र पांच परमेष्ठीका वाचक है, यह ज्ञान ज्योति सहित है। जब यह ध्यानमें झलकता है तब यह आनन्दका दाता देव है। अर्थात् ॐ के ध्यानसे शुद्धात्माके ज्ञानका विचार होता है। विचार करते करते स्वानुभव होता है। स्वानुभव होनेपर परमानन्दका लाभ

होता है (न्यान विन्यानह उवन जु दाता परम देउ सम सोइ) यही मंत्र ज्ञानका प्रकाश कराता हुआ केवलज्ञानका देनेवाला है। परमात्मा देवके समान यह ॐ मंत्र है। शब्दोंमें वाच्य वाचक सम्बन्ध होता है। ॐ परमात्मा प्रभुके स्वरूपको झलकानेवाला है ॥ ४ ॥

(हियथारह हियथार ऊवनो ह्रींकारह हिय दिट्ठी) ह्रीं मंत्र हितकारी है, हितकारी भावको पैदा करनेवाला है। ह्रींके भीतर श्री ऋषभादि चौवीस तीर्थंकर अरहन्त परमात्मा गर्भित हैं, ह्रींके ध्यानसे हृदयमें आत्मदृष्टि जग जाती है (अर्क विंद सो रमनह सहियो पय कमल गुप्ति सुइ इट्ठी) ह्रीं मंत्रसे सूर्य सम शुद्ध परमात्माका अनुभव होकर उसमें रमण होता है। इस पद्‌रूपी कमलमें वही आत्मदृष्टि गर्भित है- अर्थात् ह्रीं के ध्यानसे भी आत्म मनन होता है ॥ ५ ॥

(हियथारह हुव थारह सहियो उत्पन दिष्टि जिन उत्तं) यह ह्रीं मंत्र हितकारी है, उपकार सहित है, इससे तत्वदृष्टि जग जाती है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (भय विना सु तं भाव ऊवनो अमिय रमन सिधि रत्तं) इसी ह्रीं के ध्यानसे सर्व भयोंको दूर करनेवाला निर्भय शुद्धोपयोग भाव पैदा होजाता है, उसके द्वारा आनन्दामृतमें रमण होता है अथवा सिद्ध भावमें रमण होता है ॥ ६ ॥

(श्रींकारह सहयार ऊवनो श्रीं सिद्धि सहकारं) आत्मध्यानका सहकारी श्रीं मंत्र भी है। जब यह श्रीं मंत्र जपा जाता है तब वह मोक्षकी सिद्धिमें सहकारी होता है (ममल सरूवे धम्मह सहियो सुद्ध दिष्टि हियथारं) जब इस मन्त्रके द्वारा रत्नत्रय धर्म सहित आत्माके निर्मल स्वभावमें रत हुआ जाता है तब यह शुद्ध आत्मदृष्टिके प्रकाशमें हितकारी होता है ॥ ७ ॥

(सहयारह हियथार ऊवनो उवन दिष्टि सम उत्तं) ॐ ह्रीं श्रीं मन्त्रोंकी सहायतासे हितकारी उदयरूप समदृष्टि या समताभावका प्रकाश होजाता है ऐसा कहा गया है (भय षि निकु अमिय सरूवे रमन सिद्धि दर्सतु) समताभावके द्वारा सर्व भयरहित अमृतमई स्वरूपमें रमण होते हुए आत्मसिद्धिका दर्शन होता है ॥८॥

(सहयारह तं जानु ऊपजे हियथारह उवन सहाओ) इन मन्त्रोंकी सहायतासे हितकारी प्रकाश स्वभाव रत्नत्रयमई मोक्षमार्ग उपज जाता है अर्थात् स्वानुभव जग जाता है (ममल सहावे धम्म सरूवे सिद्धह मुक्ति सुभाओ) इसतरह रत्नत्रय धर्म स्वरूपी आत्मीक शुद्ध स्वभावमें स्थिर होनेसे मुक्तिका स्वभाव सिद्ध हो-जाता है ॥ ९ ॥

(जानहं जान सहाव संजुत्तो तारन तरन पउत्तु) इस मोक्षमार्गको आत्मीक स्वभाव सहित जानो। इससे तारण तरण पवित्र अरहन्त पद प्राप्त होजाता है (पय संजोए भय षिरनिक है भव्वु सिद्धि संपत्तु) इस पद या अवस्थाके होनेपर सर्व भयसे रहित होकर भव्यजीव मोक्षगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ १० ॥

(जानु ऊवनो पद संजोए पय विंदह दर्सतु) ॐ ह्रीं श्रीं पदोंके निमित्तसे मोक्षमार्गका भाव प्रकाश होजाता है, जिस भावमें परमात्माका दर्शन होता है (अमिय रसायन तारन सहियो सम सहिय मुक्ति संपत्तु) उस स्वानुभवरूप मोक्षमार्गमें आनन्दामृतरूपी रसायनका स्वाद आता है, यही भवसागरसे तारनेवाली है तब समताभावरूपी सामायिकमें रमण करनेसे यह जीव मोक्षको प्राप्त कर लेता है (पय विंदह विन्यान ऊवनो परम तत्तु जिन उत्तं) इस परमात्माके पदके अनुभवसे केवलज्ञानकी उत्पत्ति होती है, उसीको श्री जिनेन्द्रने परम तत्व कहा है। जहां शुद्ध केवलज्ञान है वहीं परमात्माका परम तत्व है (परम पयत्तह ममल सहावे अमिय मै मुक्ति पहुत्तं) इस शुद्ध स्वभावमें उत्तम प्रकारसे स्थिर होते हुए यह जीव अमृतमई अविनाशी मोक्षपदमें पहुंच जाता है ॥ १२ ॥

(सम अर्थह तं समय संजुत्तो तारन तरन स उत्तु) जो कोई समताभाव सहित पदार्थ है वही यथार्थ आत्मीक भाव सहित तारण तरण अरहन्त कहा गया है (भय षिपनिक्कु तं अमिय सरूवे तत्काल सिद्धि संपत्तु) वे अरहन्त निर्भय अमृत स्वरूपमें रमते हुए शीघ्र ही सिद्धगतिको प्राप्त कर लेते हैं ॥ १३ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें चिदानन्दमई आत्म पदार्थमें रमणको ही मोक्षमार्ग बताया है। यह मोक्षमार्ग परम सामायिक भावरूप शुद्धोपयोग है, जहां स्वानुभव होकर स्वरूपका वेदन होकर परमानन्दका भोग होता है। मोक्षमार्ग भी आनन्दरूप है, मोक्ष भी आनन्दरूप है। ॐ, ह्रीं, श्रीं, मन्त्रोंके द्वारा शुद्धात्माका मनन करनेसे भाव राग द्वेषोंसे छूटकर वीतरागरूप होजाता है। ये मन्त्र शुद्धात्माके वाचक हैं। सम्यग्दृष्टीको उचित है कि अपनेको शुद्ध स्वभावधारी समझकर शुद्ध भावका ही आराधन करे और शीघ्र ही अरहन्त होकर फिर सिद्ध होजावे। मोक्षका पद पूर्ण निर्भय, जन्म मरणादिसे रहित है। एक निजात्माकी शरणसे ही मुक्ति प्राप्त होती है। कल्लाणालोयणा ग्रन्थमें कहा है:—

इक्को सहाव सिद्धो सोहं अप्पा वियप्प परिमुक्को। अण्णेण मज्झ सरण सरणं सो एक्क परमप्पा ॥ ३५ ॥

अरस अरूव अगंधो अव्वाबाहो अणंत णाणमओ। अण्णेण मज्झ सरणं सरणं सो एक्क परमप्पा ॥ ३६ ॥

भावार्थ—मैं एक अकेला स्वभावसे सिद्धरूप निर्विकल्प आत्मा हूं। मैं और किसीकी शरणमें नहीं जाता हूं, मुझे एक अपना परमात्मा ही शरण है। वह रस रहित है, वर्ण रहित है, गन्ध रहित है, बाधा रहित है, व अनन्त ज्ञानमई है। वही एक परमात्मा मेरे लिये शरण है। मैं अन्यकी शरणमें नहीं जाता हूं।

ॐ आदि मन्त्रोंके व प्रतिबिम्बादिके आलम्बनसे ध्यान करते हुए आलम्बन रहित ध्यान होता है। जैसा श्री पद्मसिंह मुनिने ज्ञानसारमें कहा है:—

किं बहुणा सालम्बं झ णं परमत्थएण णाऊणं। परिहरह कुणह पच्छा झाणब्भासं णिरालम्बं ॥ ३७ ॥

भावार्थ—बहुत अधिक क्या कहें, भलेप्रकार आलम्बन सहित ध्यानको जानकर उसका अभ्यास करे, पीछे सालम्ब ध्यानको छोड़कर निरालम्ब हो एक आत्माका ही ध्यान करे।

(५२) दिप्ति विवान गाथा १०३९ से १०६४ तक।

दिप्ति विवान स उत्तं, दिप्ति दिपि दिपिय नन्त सुइ रमनं।
नन्तानन्त प्रवेसं, नन्त सुभावेन दिप्ति सुइ दरसं ॥ १ ॥
दिप्ति मरूव सुलष्यं, दिप्ति सुइ नन्त नन्त सुइ रमनं।
नन्त दिप्ति सुइ दिपनं, चरन विसेषन नन्त सुइ रमनं ॥ २ ॥
चित्तं विचित्त दिपियं, सुइ रमन मनिरयन रयन सुइ रमनं।
सुयं दिप्ति सुइ दिपियं, दिप्ति सुभावेन नन्त दिपि रमनं ॥ ३ ॥
दिप्ति उवन सुभावं, दिप्ति सुइ उवन प्रवेस सुइ रमनं।
दिष्टि अनन्त सु गमनं, दिष्टि प्रवेस दिप्ति सुइ मिलियं ॥ ४ ॥
दिष्टि इष्टि सुइ रिष्टं, रिष्टं सिष्टं च सिष्टि सुइ सुवनं।
उववन दिष्टि सु साहं, अवयासं दिष्टि नन्त नन्ताई ॥ ५ ॥

अन्मोय दिष्टि सुइ रमनं, अन्मोय विनन्द विल विलयन्ति ।
अवलवली अन्मोयं, अन्मोयं सुइ षिपिय कम्म बन्धानं ॥ ६ ॥
कम्मं विलय सुभावं, मुक्ति सुभावेन मुक्ति सुइ रमनं ।
मुक्ति अनन्त विसेषं, नन्त चतुष्टे सुद्ध सुह रमनं ॥ ७ ॥
दिप्ति अनन्त सुभावं, दिष्टि सुह रमन दिप्ति प्रवेसं ।
दिष्टि अनन्त सुभावं, दिप्ति प्रवेस नन्त नन्तानं ॥ ८ ॥
दिप्ति न्यान सरूवं, दिप्ति विसेषेन दिष्टि सुइ रमनं ।
न्यान रमन सुइ रमनं, कमलं आकर्न कलन निर्वानं ॥ ९ ॥
दिप्ति दिष्टि सुइ दिवियं, दिप्ति सुइ सब्द सुवन सुइ रमनं ।
अवकास कलन सुइ कर्न, कर्न सुइ कमल उवन निर्वानं ॥ १० ॥
दीप्ति रमन सुइ रमनं, दिप्ति उवन रोम सुइ रमनं ।
रोम रोम सुइ दिपियं, कलियं कमलस्य कर्न निर्वानं ॥ ११ ॥
इष्टि रोम दिपि उवनं, दर्स सुइ दिप्ति उवन दर्सति ।
मेय दिप्ति सह दिपियं, कलियं कमल स्व कर्न निर्वानं ॥ १२ ॥
दिप्ति उवन महावं, ढलनं उववन्न नन्त नन्ताई ।
लष्य अलष्य सु दिपियं, दिपियं सुइ चरन रमन सिय चरनं ॥ १३ ॥
तत्काल रमन सुइ दिपियं, दिपियं सुइ रमन चरन सिय चरनं ।
दिप्ति सब्द सहयारं कलनं सुइ कमल कर्न निर्वानं ॥ १७ ॥

दिप्ति नन्त मुइ नृतं, महमं अट्रम्मि इस्ट उवनं च ।
दिप्ति विंद मुइ अर्कं, कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं ॥ १५ ॥
दिप्ति अर्थ सर्वार्थं, दिप्तिं सुइ मार्ग वीय विन्यानं ।
दिप्ति कर्न मुइ रमनं, दिष्टि उवनं च दिप्ति मुइ रमनं ॥ १६ ॥
दिप्ति कमल बन्धानं, दिप्ति दिष्टं च उवन सुइ उवनं ।
दिप्ति पिपन धुरस्कंधं, कमलं मुइ कलिय कन निर्वानं ॥ १७ ॥
दिप्ति हितकार पय उवनं, दिप्ति चेयन्ति ममल आवरनं ।
दिप्तिं इच्छ पय रमनं, कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं ॥ १८ ॥
अंकुर दिप्त सु दिंपियं, हिययारं दिप्ती स्थान दिपि उवनं ।
दिप्ति गहिर सुइ गुपितं, दिप्ति गुहिजस्य उवन उव उवनं ॥ १९ ॥
दिप्ति जान मुइ कदलं, पय कमलं कलन रमन अंकुरयं ।
दिप्ति अनन्त विसेषं, कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं ॥ २० ॥
दिप्ति सुयं सुइ दिष्टं, दिष्टि सुइ उवन रमन जिन उत्तं ।
दिप्ति विसेष अनन्तं, कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं ॥ २१ ॥
दिप्ति दिष्टि जिन उत्तं, दिप्ति सहावेन दिष्टि प्रवेसं ।
न्यानं न्यान ऊवनं, उवन सहावेन दिष्टि दिष्टं च ॥ २२ ॥
दिप्ति दिष्टि आयरनं, उवन जै रमन उवन स सहावं ।
नन्द नन्द आनन्दं, कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं ॥ २३ ॥

दिप्ति दिष्टि सुइ उवनं, उवन सहावेन उवन उवएसं।
केवल कलन उवएसं, कलिय कमलस्य कर्न निर्वानं ॥ २४ ॥
दिप्ति दिष्टि जिन उत्तं, उत्तं सुइ समय सुवन सुइ सुवनं।
सुवनं सुवन सहावं, आकर्न कमल कलन निर्वानं ॥ २५ ॥
जं तारन तरन सहावं, कलनं सुइ श्रेनि तरन सुइ कमलं।
सहयार उववनं सुचरनं, समयं मुइ कर्न कमल सिद्धानं ॥ २६ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(दिप्ति विवान स उत्तं) आत्मप्रकाश रूपी जहाज ऐसा कहा गया है (दिष्टि दिप्ति दिपि दिपिय नंत सुइ रमनं) जिस आत्मज्ञानके प्रकाशमें अनन्त पदार्थ जैसेके तैसे झलकते हैं उसी सम्यग्ज्ञान रूपी आत्मप्रकाशमें रमण करना चाहिये। आत्मज्ञान भावश्रुत ज्ञान है, वह सम्यग्दर्शन सहित है। वह केवलज्ञानके समान पदार्थोंको ठीक २ जानता है। अन्तर मात्र प्रत्यक्ष तथा परोक्षका है (नंतानंत प्रवेसं) उस आत्मदीप्तिमें अनन्तानन्त पदार्थोंका ज्ञानापेक्षा प्रवेश है। ज्ञानमें अनन्त पदार्थोंको जाननेकी शक्ति है (नंत सुभावेन दिप्ति सुइ दासं) अनन्त स्वभावको रखनेवाली ज्ञानदीप्ति है। वही दर्शन भी है। अर्थात् अनन्त दर्शन व अनन्त ज्ञान स्वभावसे ही अनन्त शक्तिको रखनेवाले हैं। वर्तमान लोकालोकके समान अनन्त लोकालोक हों तौभी उनके देखने जाननेकी शक्ति ज्ञान दर्शनमें है ॥ १ ॥

(दिप्ति सरूव सुलष्यं) ज्ञान प्रकाशके स्वरूपको भलेप्रकार जानना चाहिये (दिप्ति सुइ नंत नंत सुइ रमनं) वह ज्ञान प्रकाश अनन्त है, उसीमें रमना योग्य है (नंत दिप्ति सुइ दिपनं) अनन्त प्रकाशका होना सोई दिपना है (चरन विसेषेन नंत सुइ रमनं) सम्यक्चारित्रके द्वारा उसीमें अनन्तकाल तक रमना चाहिये ॥ २ ॥

(चित्तं विचित्त दिपियं) उस ज्ञानमें नाना द्रव्य गुण पर्याय चित्र विचित्र झलकते हैं (सुइ रमन भवि रयन रयन सुइ रमनं) उसी ज्ञानमें रमण करना सो ही रत्नत्रय है। वहां सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्रकी एकता है। रत्नत्रयकी एकता है सो ही ज्ञानमें रमण व आत्मामें रमण है (सुयं दिप्ति सुइ दिपियं) वह ज्ञान विना किसीकी सहायताके स्वयं प्रकाशित है। ऐसी ही उसकी दीप्ति है (दिप्ति सुभावेन नंत दिपि रमनं) वह ज्ञान प्रकाश स्वभावसे ही अनन्त ज्ञानशक्तिको रखनेवाला है, उसीमें रमन करना योग्य है ॥ ३ ॥

(दिप्ति उवन सहावं) ज्ञान दीपकका प्रकाश होना स्वभाव ही है (दिप्ति सुइ उवन प्रवेस सुइ रमनं) उसी प्रकाशके प्रवेशको धरनेवाली दीप्तिमें स्वयं रमण करना चाहिये । अर्थात् आत्माके प्रदेश असंख्यात हैं, वे अनन्त पदार्थोंको जाननेके लिये फैलते नहीं हैं किंतु जैसे दर्पणमें पदार्थोंका स्वयं प्रवेश होता है वैसे ज्ञान दर्पणमें अनन्त पदार्थोंका प्रवेश होजाता है, उसीमें एकतान होना चाहिये । (दिष्टि अनंत सुगमनं) वह ज्ञानदृष्टि अनन्त पदार्थोंको भलेप्रकार जाननेवाली है (दिष्टि प्रवेस दिप्ति सुइ मिलियं) जब अनुभव करनेवाली दृष्टि उस ज्ञान प्रकाशमें प्रवेश करती है तब वह दृष्टि उस प्रकाशमें मिल जाती है अर्थात् ध्याता ध्येयकी एकता होजाती है ॥ ४ ॥

(दिष्टि इष्टि सुइ रिष्टं) आत्मदृष्टि ही परम हितकारी है । यही कर्मशत्रुओंको काटनेके लिये खड्ग है (रिष्टं सिष्टं च सिष्टि सुइ सुवनं) यह आत्मज्ञानरूपी खड्ग शांत स्वरूप है । उसीका शासन है सो ही कर्मोंकी निर्जराका कारण है । अर्थात् आत्मज्ञानमें रमण करनेसे जो वीतरागता पैदा होती है वही कर्मोंको नाश करनेवाली है । (उववन दिष्टि सु साइं) आत्मज्ञानकी प्रकाशमान दृष्टि ही मोक्षका साधन है (अवयासं दिष्टि नंत नंताई) उसीसे अनंतानंत पदार्थोंको जाननेवाली ज्ञानदृष्टिका प्रकाश होता है ॥ ५ ॥

(अन्मोय दिष्टि सुइ रमनं) आनन्दमई दृष्टिका रहना ही ज्ञानप्रकाशमें रमण करना है । (अन्मोय विनंद विल विलयंति) उस आत्मानन्दके भोगसे आकुलता या दुःखके छिद्र विला जाते है । अर्थात् आत्मानन्दमें मगन होनेसे सर्व सांसारिक दुःख क्षय होजाते हैं । (अवल वली अन्मोयं) वह आत्मानन्द बड़ी बलवान शक्ति है, उस बलके समान कोई बल नहीं है । (अन्मोयं सुइ षिपिय कम्म बंधानं) जब आत्मानन्दमें मग्न हुआ जाता है तब ही ध्यानकी अग्नि जलती है जो कर्मोंके बन्धनोंको जला देती है ॥ ६ ॥

(कम्मं विलय सुभावं) कर्मोंका स्वभाव ही क्षय होना है । यातो वे पककर अपने समयपर गिर जाते हैं या उनको वीतरागभावसे पकनेके पहिले ही गिरा दिया जाता है । (मुक्ति सुभावेन मुक्ति सुइ रमनं) आत्माका स्वभाव ही मोक्ष स्वरूप है, उसी स्वभावमें रमना—अपने शुद्ध स्वभावमें स्थिर रहना ही मुक्ति है । (मुक्ति अनंत विसेसं) उस मोक्ष स्वभावमें अनन्त विशेष द्रव्य गुण पर्याय प्रतिबिम्बित होते हैं (नंत चतुष्टै सुद्ध सुइ रमनं) जब आत्मा स्वभावमें जमकर शुक्लध्यानको प्राप्त होता है तब चार घातीय कर्म क्षय होजाते हैं और अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, अनन्तसुख ये चार चतुष्टय

प्रगट होजाते हैं और तब अरहन्तका आत्मा शुद्ध निर्विकार सुखमें रमण किया करता है ॥ ७ ॥

(दिप्ति अनंत सुभावं) आत्मज्ञानकी दीप्ति अनन्त शक्तिको रखनेवाली है (दिष्टि सुइ रमन दिप्ति प्रवेसं) उसीपर दृष्टि रखना सो ही उसमें रमण करना है या उस दीप्तिमें प्रवेश करना है (दिष्टि अनंत सुभावं) आत्मदीप्तिको देखनेवाली दृष्टि भी अनन्तशक्तिको रखनेवाली है (दिप्ति प्रवेश नंत नन्त ई) वह ज्ञान दृष्टि जब आत्मदीप्तिमें प्रवेश करती है तब अनन्तानन्त शक्तिमई केवलज्ञानकी दृष्टि झलक जाती है ॥ ८ ॥

(दिप्ति न्यान सरुवं) वह आत्मदीप्ति ज्ञान स्वरूप ही है (दिप्ति विसेषेन दिष्टि सुइ रमनं) उस आत्माके ज्ञान प्रकाशमें विशेष रूपसे दृष्टि रखना, उसीमें एकाग्र होना सो ही उस दीप्तिमें रमण करना है (न्यान रमन सुइ रमनं) आत्माके शुद्ध ज्ञानमें रमना ही दीप्तिमें रमण है (कमल आकर्न कलन निर्वानं) कमलके समान प्रफुल्लित शुद्ध आत्मामें प्राप्त होकर तन्मय होजाना ही निर्वाण है ॥ ९ ॥

(दिप्ति दिष्टि सुइ दिपियं) आत्मज्ञानके भीतर रूचि व स्थिति रखना ही आत्मप्रकाशका कारण है (दिप्ति सुइ सब्द सुवन सुइ रमनं) आत्मप्रकाशके कारण शब्दोंको सुनकर व विचार कर आत्म प्रकाशमें ही रमना चाहिये (अबयाम कऊन सुइ कर्नं) ज्ञानका अनुभव ह. मोक्षका कारण है (कर्न सुइ कमल उवन निर्वानं) आत्मानुभवरूपी साधनसे आत्मारूपी कमलका पूर्ण विकास होजाता है यही निर्वाण है ॥ १० ॥

(दिप्ति रमन सुइ रमनं) आत्माकी दीप्तिमें रमना सो ही स्वात्मरमण है (दिप्ति उवन रोम सुइ रमनं) आत्मज्ञानमें रमण करनेसे आनन्दके मारे शरीरके रोएं खड़े होजावें वहीं आत्मरमण है (रोम रोम सुइ दिपियं) रोंए रोंएमें वही आत्मप्रकाश झलक जावे अर्थात् मन, वचन, कायकी एकाग्रतासे आत्मामें रम जावे यही आत्मरमण है (कलियं कमलस्य कर्न निर्वानं) जब कमलके समान प्रफुल्लित आत्माका अनुभव होता है तब ही निर्वाणका साधन होता है ॥ ११ ॥

(इस्टि रोम दिपि उवनं) जब शरीरके रोएंके भीतर अपनी प्रिय आत्मदृष्टि झलक जाती है अर्थात् शरीर भर आत्मानुभवसे प्रफुल्लित होजाता है (दर्म सुइ दिप्ति उवन दर्मनि) तब अपनी दृष्टि आत्माके ज्ञानके प्रकाशको देखा करती है (मेय दिप्ति सह दिपियं) तब जाननेयोग्य ज्ञेय पदार्थोंके ज्ञानके साथ ज्ञान बढता जाता है अर्थात् अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान यहांतक केवलज्ञान होजाता है (कलियं कमलस्य कर्न निर्वानं) जब कमल समान शुद्ध प्रफुल्लित आत्माका अनुभव होता है तब ही निर्वाणका साधन होता है ॥ १२ ॥

(दिप्ति उवन सहावं) **आत्म दीप्तिका प्रकाश स्वभाव है** (ढलनं उववन नन्त नन्ताई) **जितना २ आत्म-ध्यानके प्रतापसे आत्मदीप्ति ढलती है, अधिक २ चमकती है यहांतक कि जब पूर्ण ढल जाती है तब केवलज्ञानमय होकर अनन्तानन्त पदार्थोंको जानती है** (लप्य अलप्य सुदिप्यिं) **तब उसमें स्थूल अर्थात् इन्द्रिय व मनसे ग्रहण योग्य पदार्थ सब झलक जाते हैं** (दिप्यिं सुइ चरन रमन सिय चानं) **जहां केवलज्ञानका प्रकाश है वहां स्वरूपाचरणमें रमण है, वहीं उज्वल वीतराग यथाख्यात चारित्र है ॥ १३ ॥**

(तत्काल रमन सुई दिप्यिं) **जिस काल स्वात्मरमण है उसी काल केवलज्ञानका प्रकाश है** (दिप्यिं सुइ रमन चरन सिय चानं) **जब केवलज्ञानका प्रकाश है तब आत्मरमण है, वही स्वरूपाचरण है तथा वही निर्मल चारित्र है** (दिप्ति सब्द सहयारं) **आत्मदीप्ति शब्दकी सहायतासे आत्माके प्रकाशका बोध होता है** (कलनं सुइ कमल कर्न निर्वानं) **पूर्ण विकसित कमलके समान शुद्ध आत ामें तन्मय होना मोक्षका प्रधान साधन है ॥१४॥**

(दिप्ति नन्त दुइ नृतं) **अनन्त केवलज्ञानका प्रकाश ही सत्य वस्तुका स्वरूप है** (सहसं अट्ठम्मि इष्ट उवनं च) **उसीकी प्रशंसामें प्रिय एक हजार आठ नामोंकी स्तुति की जाती है** (दिप्ति विंद सुइ अर्क) **प्रकाशमान परमात्मा ही सूर्य हैं** (कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं) **वहीं प्रकाशमान कमल है। उसीमें ही रमना निर्वाणका साधन है ॥ १५ ॥**

(दिप्ति अर्क सर्वार्थं) **आत्मप्रकाश ही सर्व प्रयोजनको सिद्ध करनेवाला पदार्थ है** (दिप्ति सुइ मार्ग बीय विन्यानं) **यह आत्मज्ञानका प्रकाश मोक्षका मार्ग है व यही केवलज्ञानका बीज है** (दिप्ति कर्न सुइ रमनं) **इस आत्मज्ञानको साधना वही आत्मामें रमण है** (दिष्टि उवनं च दिप्ति सुइ रमनं) **आत्मदृष्टिका उत्पन्न होना ही आत्माके ज्ञानानन्द स्वभावमें रमण करना है ॥ १६ ॥**

(दिप्ति कमल बंधानं) **आत्मज्ञानकी दीप्ति शुद्धात्मारूपी कमलकी तरफ बन्ध जाती है, एकतासे लीन होजाती है** (दिप्ति दिष्टं च उवन सुइ उवनं) **आत्मज्ञानकी दृष्टि ही उदयरूप प्रकाश है** (दिप्ति षिपन धुर स्कंधं) **यह आत्मज्ञानकी दीप्ति संसाररूपी गाड़ीके बोझके समूहको क्षय करनेवाली है। अर्थात् इसीके अनुभवसे संसारके कारण कर्मोंका क्षय होता है** (कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं) **इस कमल समान शुद्ध विकसित आत्माका अनुभव ही निर्वाणका साधन है ॥ १७ ॥**

(दिप्ति हितकर पय उवनं) **इस आत्मज्ञानकी दीप्तिसे हितकारी मोक्षपद पैदा होता है** (दिप्ति चेयंति

ममक आयरनं) यह आत्मज्ञानकी दीप्ति शुद्ध वीतराग चारित्रका अनुभव करती है (दिप्ति इच्छ पय रमनं) इस आत्मज्ञानके द्वारा ही इच्छित शुद्धात्मपदमें रमण होता है (कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं) शुद्धात्मारूपी कमलमें जमना ही निर्वाणका साधन है ॥ १८ ॥

(अंकुर दिप्ति सु दिपियं) जब सम्यग्दर्शनके होते ही आत्मज्ञानका अंकुर प्रगट होता है (हिययारं दिप्ति स्थान दिपि उवनं) तब ही हितकारी आत्मज्ञानके स्थान उदय होकर बढने लगते हैं अर्थात् जैसे अंकुरसे वृक्ष बढता है वैसे सम्यक्त सहित सम्यग्ज्ञानसे आत्मज्ञानका वृक्ष बढता जाता है (दिप्ति गहिर सुइ गुपितं) आत्मज्ञानकी गुफामें रहना ही गुप्ति है जहां मन, वचन, काय तीनोंका निरोध है (दिप्ति गुहिजस्य उवन उव उवनं) इस आत्मानुभवरूपी गुफाके भीतरसे उठकर ज्ञानका प्रकाश फैलता जाता है अर्थात् आत्मानुभवसे ही केवलज्ञान होता है ॥ १९ ॥

(दिप्ति जान सुइ कदलं) आत्मज्ञान ही एक ऐसा वृक्षका कन्द है या धड़ है (पयकमलं कलन रमन अंकुरयं) जिससे शुद्धात्मपदमें रमणरूप विकसित कमलका अंकुर फूटता है। अर्थात् आत्मानुभवरूपी जड़से ही परमात्मज्ञानका लाभ होता है (दिप्ति अनंत विसेषं) आत्मज्ञानमें अनन्त शक्ति है (कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं) इस कमल समान शुद्धात्मामें रमण करना ही निर्वाणका साधन है ॥ २० ॥

(दिप्ति सुयं सुइ दिष्टं) इस आत्मज्ञानकी दीप्तिका स्वयं अपनेसे ही दर्शन या अनुभव होता है (दिष्टि सुइ उवन रमन जिन उत्तं) इसी आत्माके दर्शनको जिनेन्द्रने आत्माके प्रकाशमें रमण होना कहा है (दिप्ति विसेष अनंतं) इस आत्माके प्रकाशमें अनन्त शक्ति है (कमलं सुइ कलिय कर्न निर्वानं) शुद्धात्मा रूपी कमलका अनुभवना ही निर्वाणका साधन है ॥ २१ ॥

(दिप्ति दिष्टि जिन उत्तं) इसी आत्माके ज्ञानको जिनेन्द्रने आत्मदृष्टि या सम्यग्दृष्टि कहा है (दिप्ति सहावेन दृष्टि प्रवेसं) इसी आत्मज्ञानके स्वभावसे आत्माके दर्शनमें प्रवेश होता है अर्थात् आत्मानुभवकी स्थिरता बढ़ती जाती है (न्यानं न्यान उवनं) आत्मज्ञानसे ही केवलज्ञानकी उत्पत्ति होती है (उवन सहावेन दिष्टि दिष्टं च) उसी प्रकार मान स्वभावके द्वारा आत्मदर्शन आत्माको देखता है ॥ २२ ॥

(दिप्ति दिष्ट आयरनं) इस आत्मदीप्तिके दर्शनमें आचरण करना चाहिये (उवन जै रमन उवन स सहावं) इसीसे रागद्वेषको जीतते हुए आत्मामें रमण भाव उठता है तथा अपना स्वभाव झलकता है (नंद नंद

आनंदं) और आत्मानन्दका सुख अनुभवमें आता है (कमलं सुइ कलिय कर्न निवानं) इस विकसित कमल समान शुद्धात्मामें रमना ही निर्वाणका साधन है ॥ २३ ॥

(दिप्ति दिप्ति सुइ उवनं) आत्मज्ञानमें दृष्टि रहना ही ज्ञानका उदय है (उवन सहावेन उवन उवएसं) ज्ञान-स्वभावमें जब अरहन्त प्रकाशमान होजाते हैं तब उसी आत्मज्ञानके प्रकाशका वे उपदेश देते हैं (केवल कलन उवएसं) उनका उपदेश यही होता है कि केवलज्ञानके भीतर अर्थात् आत्माके सहज ज्ञानके भीतर मगन हुआ जावे (कलिय कमलस्य वर्न निर्वानं) शुद्धात्मारूपी कमलका अनुभव ही निर्वाणका साधन है ॥२४॥

(दिप्ति दिप्ति जिन उत्तं) जिनेन्द्रने कहा है कि आत्मज्ञानमें दृष्टि रखनी चाहिये (उत्तं सुइ समय सुवन सुइ सुवनं) उसीको आत्मा या समयमें सवन अर्थात् स्रव कहते हैं अर्थात् वही आत्मगंगाका स्नान है तथा वही सवन कहिये शांत रसका पान है (सुवनं सवन सहावं) वह शांत रसका पान स्वाभाविक आनन्दरसका पान है (आकर्न कमल कलन निर्वानं) उसी शांत रससे व्याप्त जो शुद्धात्मारूपी कमल है वही निर्वाण है ॥२५॥

(जं तारन तरन सहावं) जो तारणतरण स्वभाव है अर्थात् शुद्धोपयोग परिणाम है (कलनं सुइ श्रेनि तरन सुइ कमलं) उसीका अनुभव मोक्ष महलकी सीढ़ी है, वही तारनेवाला जहाज है। वही प्रफुल्लित कमल समान विकसित आनन्दमय भाव है (सहयार उववन सु चरनं) उसीके साथ साथ वीतराग यथाख्यात चारित्र प्रकाशित होता है (समयं सुइ कर्न कमल सिद्धानं) वही आत्मा है, वही कमल समान विकाशमान सिद्धगति पानेका साधन है ॥ २६ ॥

भावार्थ—इस दिप्ति विवानमें श्री तारणस्वामीने यही कहा है कि आत्मज्ञानकी चमक ही वह जहाज है जिसपर चढ़कर यह जीव निर्वाणका लाभ करता है। आत्मदीप्ति रत्नत्रय स्वरूप है। इसीमें निश्चय सम्यग्दर्शन निश्चय सम्यग्ज्ञान व निश्चय सम्यक्चारित्रकी एकता है। यह आत्मानुभवरूप है, जहां आत्मा आपसे ही आपमें आपके लिये आपसे ही आपको बिठाता है। यह कर्ता कर्ण संप्रदान अपा-दान व अधिकरण तथा कर्म इन षट्कारक रूप होकरके भी एकरूप है। यह आत्मानुभव ही केवलज्ञानकी प्राप्तिका अंकुर है, बीज है, व मार्ग है। यही जहाज है, उसीपर चढ़कर भव्यजीव निर्वाणद्वीपको जाते हैं। यह आत्मानुभव स्वाभाविक परिणति है। यही स्वभावको प्रकाशमान करनेवाली है।

इस आत्मानुभवमें आत्मगंगाका स्नान है, यहीं आत्मीक शांतरसका पान है, यहीं अद्भुत प्रकाश

है, यहीं आत्मा आत्मारूप रहता है, यही एक देश विकसित कमल है सो ही अरहन्तपदमें पूर्ण विकसित कमल होजाता है। ॐ आदि शब्दोंके द्वारा इस आत्मदीप्तिको जगाना चाहिये, व इसी ज्योतिमें अपनी दृष्टि मिलाना चाहिये। दृष्टिमें दृष्टिका मिलना ही ध्यान है। यही कर्मोंको क्षय करनेको खड्गके समान है। इसीसे चार घातीय कर्म क्षय होकर केवलज्ञानी अरहन्त होते हैं। यह आत्मानुभव भावश्रुत ज्ञान है जो केवलज्ञानके समान सर्व पदार्थोंको यथार्थ जानता है। इसमें अनन्त शक्ति है। इसके प्रभावसे अनन्तानन्त शक्तिधारी केवलज्ञानका प्रकाश होता है। आत्मानुभवके होते हुए सर्व सांसारिक दुःख मिट जाते हैं, परम निराकुल सुख प्रगट होजाता है। आत्मानन्दके समान कोई बल नहीं है। यही कर्मकी निर्जराको अग्निके समान है। कर्म पर वस्तु है, वीतरागतासे समयके पहले झड़ जाते हैं। निर्वाण आत्माका निज स्वरूप है, उसी आत्मामें रमण करना ही निर्वाणका साधन है। जिस समय आत्मानुभव होता है और अपूर्व आनन्द आता है तब आत्मप्रदेशोंसे व्याप्त शरीर भी प्रफुल्लित होजाता है, रोएं खडे होजाते हैं। आत्मानुभवमें शुद्धोपयोग होता है, शुद्धोपयोगका अनुभव ही संसार तारक जहाज है, यही निर्वाणका साक्षात् कारण है। निर्वाणमें कमल समान पूर्ण विकासरूप आत्माका प्रकाश रहता है। निर्वाणकी प्राप्तिका उद्देश्य रखनेवाले भव्य जीवोंको उचित है कि निश्चय रत्नत्रयकी एकता रूपी आत्मदीप्तिका या आत्मानुभवका प्रकाश अपने भीतर करें। इसीसे यहां भी परमानन्दका लाभ होगा व आत्मा कभी न कभी निर्वाणका स्वामी होजायगा। श्री योगेन्द्राचार्य योगसारमें कहते हैं—

अजरु अमरु गुणगणणिलउ जहिं अप्पा थिरु थाइ। सो कम्महिं ण वि बंधयउ संचियपुव्व विलाई ॥ ८९ ॥

जो समसुक्खणिलीण बुहु पुण पुण अप्प मुणेइ। कम्मक्खउ करि सो वि फुडु लहु णिव्वाण लहेइ ॥ ९२ ॥

भावार्थ—अजर अमर गुणोंका समुदाय यह आत्मा जब आपमें थिर होता है तब नए कर्म नहीं बन्धते हैं, पुराने संचित कर्म झड़ जाते हैं। जो कोई समभावके सुखमें लीन होकर पुनः पुनः आत्माका अनुभव करता है वही कर्मोंको क्षय करके शीघ्र ही निर्वाणको पाता है।

श्री नागसेन मुनि तत्वानुशासनमें कहते हैं—

दृग्बोध साम्यसमताज्ज्ञातन पश्यन्नुदासिना। चित्सामान्यविशेषात्मा स्वात्मनैवानुभूयतां ॥ १६३ ॥

कर्मजेभ्य समस्तेभ्यो भावेभ्यो: भिन्नमन्वहं। ज्ञानभावमुदासीनं पश्येदात्मानमात्मना ॥ १६४ ॥

भावार्थ—इस आत्माको सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रकी एकतासे जानते हुए, देखते हुए व श्रद्धान करते हुए व सर्वसे उदासभाव रखते हुए यह चैतन्यके सामान्य विशेष भावका रखनेवाला है। इस रूप आत्माको अपने आत्मा हीके द्वारा अनुभव करना चाहिये। यह ध्याना चाहिये कि मैं वास्तवमें सर्व ही कर्मजनित भावोंसे भिन्न हूँ, ज्ञान स्वभावरूप हूँ, वीतराग हूँ। इसतरह अपने ही आत्माके द्वारा अपने आत्माको अनुभवना चाहिये।

वास्तवमें तारणस्वामी द्वारा सम्पादित इस दिप्त विवानका जो विचार करेंगे व अर्थका मनन करेंगे उनको अवश्य आत्मदीप्तिका प्रकाश प्राप्त होगा।

(५३) स न्यानी मुक्ति पओ गाथा १०६९ से १०७९ तक।

उववन्न उवन ममलं, तं न्यान रमन सुरयं।
स न्यानी मुक्ति पओ, जिननाथ रमन मिलनं ॥ १ ॥
स न्यानी मुक्ति पओ, तं अमिय कमल रमनं।
स न्यानी मुक्ति पओ, भय पषिय भव्वु मिलनं ॥ स न्यानी० ॥ २ ॥ (आचरी)
ॐकार ऊर्ध गमनं, विन्यान विंद ममलं। स न्यानी० ॥ ३ ॥
तं विंद सहज सुरयं, तं नन्त कम्मु विलयं। स न्यानी० ॥ ४ ॥
उववन्न कमल सुरयं, सिरि कमल सिद्धि रमनं। स न्यानी० ॥ ५ ॥
तं कमल कंद भवनं, परिनामु नन्त ममलं। स न्यानी० ॥ ६ ॥
सौ एक अट्ठ उवनं, तं कन्द सहज मिलनं। स न्यानी० ॥ ७ ॥
तं अग्र कमल कलनं, चौ मट्ठि वरन मिलनं। स न्यानी० ॥ ८ ॥

परिनाम अलष्य लषियं, तं तिविहि कम्मु षिपनं । स न्यानी० ॥ ९ ॥
सिरी नन्द नन्द सुरयं, तं सहज नन्द रमनं । स न्यानी० ॥ १० ॥
पर परम नन्द जिनत्वं, तं सिद्धि मुक्ति विलासं । स न्यानी० ॥ ११ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उववन्न उवन ममलं) जब शुद्ध ज्ञान प्रकाश झलक जाता है (तं न्यान रमन सुरयं) तब आत्मज्ञानमें रमण करनेवाला आत्मसूर्य प्रगट होजाता है (स न्यानी मुक्ति पत्तो) सम्यग्ज्ञानी मुक्तिको पाता है (जिननाथ रमन मिलयं) वह कर्मविजयी नाथ आपमें रमण करके आपमें मिल जाता है ॥ १ ॥

(तं अमिय कमल रमनं) सम्यग्ज्ञानी आनन्दामृतसे पूर्ण कमल समान विकसित आत्मामें रमण करता है (भय खपिय भव्वु मिलनं) भव्यजीव सर्व भयसे रहित हो मुक्तिका लाभ कर लेता है ॥ २ ॥

(ॐकारं ऊर्ध गमनं) ॐ मंत्रमें गर्भित परमात्मा स्वभावधारी शुद्ध होकर सीधा ऊपर गमन करके सिद्ध क्षेत्रमें ठहरता है (विन्यान विंद ममलं) वह सर्व कर्ममल रहित होकर अपनी ज्ञान चेतनाका ही अनुभव करता है ॥ ३ ॥

(तं विंद सहज सुरयं) उस अनुभवमें सहज स्वाभाविक आत्म-सूर्यका ही प्रकाश रहता है (तं नंत कम्म विलयं) उसके अनन्त कर्म सब क्षय होगए हैं ॥ ४ ॥

(उववन्न कमल सुरयं) वहां कमल समान आत्मारूपी सूर्यका उदय है (सिरि कमल सिद्धि रमनं) वह आत्मारूपी कमल अपनी आत्मसिद्धि रूपी लक्ष्मीको क्रीडा करा रहा है अर्थात् निर्वाणके ऐश्वर्यका धारी शुद्ध आत्मा होजाता है ॥ ५ ॥

(तं कमल कंद भवनं) वह आत्मा ही अपने प्रफुल्लित कमल समान आत्माके होनेका स्थान है (परिनामु नन्त ममलं) वहां अनन्त परिणाम सब मल रहित शुद्ध होते हैं ॥ ६ ॥

(सौ एक अट्ठ उवनं) एकसौ आठ कमलोंका उदय होता है अर्थात् कमलमें परमात्माके वाचक मंत्रको स्थापित करके एकसौ आठ दफे जप या ध्यान किया जाता है । तब १०८ दफे आत्मारूपी कमलका मनन रूप विचार होता है, यही १०८ कमलका उदय है (तं कंद सहज मिलनं) तब सहज स्वभाव हीसे आत्मा अपने ही मूल स्वभावमें मिल जाता है ॥ ७ ॥

(तं अग्र कमल कलनं चौसट्ठि वन्न मिलनं) मुख्य एक कमलको स्थापित करके उसमें स्वर व्यंजनादि सब ६४ अक्षर स्थापित करके ध्यान करे। यह ६४ अक्षर परस्पर मिलनेसे जिनवाणीके कुल अक्षर बन जाते हैं। यह भी आत्माके मननकी एक रीति है। २७ स्वर + ३३ व्यजन + ४ योगवाह ऐसे ६४ अक्षर होते हैं इसका विशेष कथन गोम्मटसार ज्ञान अधिकारसे जानना योग्य है। यहां पदस्थ ध्यानसे प्रयोजन है ॥ ८ ॥

(परिनाम अलष्य लषियं) इस तरह ध्यान करनेसे सूक्ष्म भाव जो मन व इंद्रियोंसे अगोचर है उसका अनुभव होजाता है (तं तिविह कम्मु विपनं) इसी आत्मानुभवके द्वारा द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म तीनों ही प्रकारके कर्मोंका क्षय होजाता है ॥ ९ ॥

(सिरी नंद नन्द सुयं, तं सहजनंद रयनं) ज्ञानादि ऐश्वर्यधारी परमानन्दमई सूर्यका प्रकाश होजाता है, वहीं सहजानन्दसे पूर्ण रत्नत्रयकी एकता होती है ॥ १० ॥

(पर परम नन्द जिनत्वं) वहीं उत्कृष्ट परमानन्दमई जिनपना या अरहन्तपना होता है (तं सिद्धि मुक्ति विलसं) फिर वे ही अरहन्त सिद्ध होकर मुक्तिका विलास करते हैं ॥ ११ ॥

भावार्थ—इस छोटेसे भजनमें स्वामीने यही बताया है कि सम्यग्ज्ञानी ही मोक्ष पाता है। जब आत्मज्ञानके प्रतापसे वह ध्यानका अभ्यास करता है तब ही उसे आत्मानुभवका लाभ होता है। ध्यान करनेके अनेक मार्ग हैं। पदस्थ ध्यानके द्वारा अक्षरोंको कमलमें विराजमान करके ध्यान होता है। बाहरी साधनोंसे जिस तरह बने आत्म तल्लीनता प्राप्त करनी चाहिये। यही रत्नत्रयकी एकता है व यही आत्म-शुद्धिका उपाय है। वीतराग भावसे कर्मोंकी निर्जरा होजाती है, तब अरहन्तपद प्रगट होजाता है। अरहन्त शेष चार अघातीय कर्मोंको भी क्षय करके सिद्ध परमात्मा होजाते हैं। सिद्ध भगवान ऊर्ध्वगमन स्वभाव लोकाग्र सिद्ध क्षेत्रमें विराजते हैं। सिद्धगति स्वाभविक आत्मपरिणति है। फिर कभी ज्ञाना-वरणादि द्रव्यकर्म, रागादि भावकम व शरीरादि नोकर्मका संयोग नहीं होता है। परमात्मपद परमानन्द रूप है, परम शांत स्वरूप है। जो भव्यजीव इस पदको प्राप्त करना चाहें, उनको आत्मज्ञानकी भावना ही करनी चाहिये। कल्लाणलोयणामें कहा है-इसप्रकार भावना करे—

सगरूवसहजसिद्धो विहावगुणमुक्कम्मवावारो। अण्णे ण मज्झ सरणं सरणं सो एक्क परमप्पा ॥ ४१ ॥

सुहअसुहभावविगओ सुद्धसहावेण तम्मयं पत्तो । अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एक्क परमप्पा ॥ ४५ ॥

भावार्थ—जो अपने स्वभावसे ही शुद्ध है, जो रागादि विभाव गुणोंसे व कर्मोंके व्यापारोंसे मुक्त है वही एक परात्मा मेरे लिये शरण है, अन्य कोई शरण नहीं है। जो शुभ अशुभ भावोंसे दूर है, जो शुद्ध स्वभावसे तन्मयपनेको प्राप्त है वही एक परमात्मा मेरे लिये शरण है, अन्य कोई शरण नहीं है।

(९४) जिनवर उत्तो न्यानीया गाथा १०७६ से ११०८ तक।

जिनवर उत्तो न्यानीया, तव आयरनाजू ।
न्यान विन्यानह भेऊ, सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १ ॥
अर्थति अर्थह आयरे, तव आयरनाजू ।
षट् कमलह सभावः सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ २ ॥
पंच दिप्ति परमेष्ठि मौ, तव आयरनाजू ।
अर्थ समर्थ संजुत्तु, सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ३ ॥
मति कमलासन कंठ है, तव आयरनाजू ।
हिरदै श्रुति ऊवनु, सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ४ ॥
गुहिजहि अवहि उवन पौ, तव आयरनाजू ।
गुपितह गुरु उवएसु, सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ५ ॥
मन परजै जानू मई, तव आयरनाजू ।
रिजु विपुलह स सहावो सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ६ ॥
परम तत्तु परम विंद है, तव आयरनाजू ।
परम विंदह केवल न्यानु, सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ७ ॥

अंगदि अंगह ममय मो, तव आयरनाजू ।
अर्थ ममर्थ संजुत्तु, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ८ ॥
मै मूरति सर्वंग है, तव आयरनाजू ।
ममलह ममल सहाव, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ९ ॥
न्यान विन्यान उवन पौ, तव आयरनाजू ।
अन्यानह विलयन्तु सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १० ॥
सम्मत्तह सम समयमो, तव आयरनाजू ।
मिथ्या तिविह गलन्तु, सवने न्यानीया तव आचरनाजू ॥ ११ ॥
निसंक सहावे न्यान पौ, तव आयरनाजू ।
सल्य संक विलयन्तु, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १२ ॥
मसंक रहिओ कंष्या रहिओ, तव आयरनाजू ।
व्रत्ति रहिओ न्यान महाओ, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १३ ॥
मूढ दिष्ट है मो गली, तव आयरनाजू ।
अमूढ दिष्टि सहकार मवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १४ ॥
न्यानी दोष न पिच्छई, तव आयरनाजू ।
अन्यान उवनु गलंतु सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १५ ॥
उवगोइनु अङ्ग जिनत्तु है, तव आयरनाजू ।
न्यानी दोष गलंतु सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १६ ॥

स्थितिकरन जिनुत्त है, तव आयरनाजू ।
स्थिति न्यान सरूव, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १७ ॥
वाच्छल्ल विन्यानह सहिओ, तव आयरनाजू ।
न्यान विन्यान संजुत्तु सवने, न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १८ ॥
परम तत्तु पदविंद हैं तव आयरनाजू ।
परम न्यान संजुत्तु, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ १९ ॥
दर्सन अंग स उत्तु जिनु, तव आयरनाजू ।
तिविह कम्मु विलयन्तु, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ २० ॥
न्यान सहावे दर्सिओ, तव आयरनाजू ।
अन्यान दिस्टि विलयन्तु, सवने न्यानीया तव आवरनाजू ॥ २१ ॥
दर्सन दर्सिउ न्यान मौ, तव आवरनाजू ।
चष्य अचष्यह भेउ, सवने न्यानीया तव आवरनाजू ॥ २२ ॥
चष्यह दर्सिउ समय मौ, तव आवरनाजू ।
समयह लोय अलोय, सवने न्यानीया तव आवरनाजू ॥ २३ ॥
चष्यह सब्द सहाव लौ, तव आवरनाजू ।
सब्द वियार संजुत्तु, सवने न्यानीया तव आवरनाजू ॥ २४ ॥
ममल सहावे दर्सिओ, तव आवरनाजू ।
समल कम्मु विलयन्तु, सवने न्यानीया तव आवरनाजू ॥ २५ ॥

अवहि दर्सिउ गुपित रुई, तव आयरनाजू ।
गुप्ति न्यान सहकार, मवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ २६ ॥
गुहिजह गुपित उवन पौ, तव आयरनाजू ।
गुप्ति न्यान विन्यान, मवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ २७ ॥
न्यान दिष्टि विन्यान मौ, तव आयरनाजू ।
अन्यान दिष्टि विलयन्तु, मवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ २८ ॥
जानू उपजै जान पौ, तव आयरनाजू ।
मनपर्यय न्यान सहाउ, मवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ २९ ॥
रिजु विपुलह संजुत्त है, तव आयरनाजू ।
परम न्यान मंजुत्तु, मवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ३० ॥
ममलह ममल उवन पौ, तव आयरनाजू ।
समल कम्मु विलयन्तु, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ३१ ॥
केवल दिस्टिहि ममल पौ, तव आयरनाजू ।
भय विनास सो भव्वु, सवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ३२ ॥
न्यान विन्यानह ममय मौ, तव आयरनाजू ।
भव्वु मुक्ति सम्पत्तु, मवने न्यानीया तव आयरनाजू ॥ ३३ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जिनवर उत्तो न्यानीया, तव आयरनाजू) **श्री जिनेन्द्रदेव कहते हैं, हे ज्ञानियो ! तपका आचरण करो** (न्यान विन्यान मेउ, सवने न्यानीया तव आयरनाजू) **भेदविज्ञान द्वारा सम्यग्ज्ञान या आत्मज्ञानको प्राप्त हो, सर्व ज्ञानियोंको उचित है कि निश्चय तपका आचरण करें ॥ १ ॥**

(अर्थति अर्थह आयरे) रत्नत्रयमई आत्म पदार्थका आचरण करो या अनुभव करो (षट् कमलह सभावः) षट् कमलरूप छः द्रव्यमई इस लोकका स्वरूप विचार करो अथवा छः स्थानोंमें कमल रचकर ॐ या ह्रीं या श्रीं मन्त्रको स्थापन कर अपने आत्माका मनन करो। वे छः स्थान होसक्ते हैं–नाभि, हृदय, कण्ठ, मुख, मस्तक और सिर तालु ॥ २ ॥

(पञ्च दिप्ति परमेष्टि मौ) पांच प्रकाशमान परमेष्टियोंके स्वरूप द्वारा तत्वका विचार करो। अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधुमें निश्चयसे एक शुद्ध आत्मा ही प्रकाशमान है (अर्थ समर्थ संजुत्तु) इन पांच परमेष्टियोंका क्या स्वरूप है, इनके भीतर क्या शक्ति है, उस सबका विचार करो ॥ ३ ॥

(मति कमलासन कंठ है हिरदै श्रुति ऊवन्) मतिज्ञान द्वारा कण्ठमें कमलका आसन देखकर उसमें मनको स्थापन कर ध्यान करो, तब मनमें श्रुतज्ञानका प्रकाश उत्पन्न होगा ॥ ४ ॥

(गुहिजहि अवधि उवन पौ गुपितह गुरु उवएस) यह श्री गुरुका गुप्त उपदेश है कि अपने आत्माकी गुफामें ध्यान करनेसे आत्मासे ही अवधिज्ञानकी प्राप्ति होती है ॥ ५ ॥

(मन पर्याय जनू मई, रिजु विपुलह स सहाओ) आत्मध्यानसे ही मनपर्यय ज्ञान रिजुमति व विपुलमति दो स्वभावका धारी पैदा होता है ॥ ६ ॥

(परमतत्त पद विंद है पदविंदह केवल न्यानु) परमतत्व पद एक सिद्ध स्वरूप है, उस पदके अनुभव करनेसे केवलज्ञान झलक जाता है ॥ ७ ॥

(अंगदि अंगह एमय भौ अर्थ समर्थ संजुत्तु) द्वादशांग वाणीका सार एक आत्माकी शुद्ध परिणति है जो अपने स्वरूप व शक्तिको लिये हुए है, उसे ही भजना चाहिये ॥ ८ ॥

(मै मुगति सर्वंग है) आत्मा सर्वांग ज्ञानाकारको रखनेवाला है (ममलह ममल सहाव) यह कर्म मलरहित शुद्ध स्वभावका धारी है ॥ ९ ॥

(न्यान विन्यान उवन पौ) आत्माका पद सम्यग्ज्ञानमई है (अन्यानह विलयंतु) जिस पदमें तिष्ठनेसे सब अज्ञान विला जाता है ॥ १० ॥

(सम्मत्तह सम समय मौ) निश्चय सम्यक्त समताभावरूप है व आत्मामई है, आत्माका स्वभाव है (मिथ्या तिविह गलंतु) जब यह शुद्ध निश्चय सम्यक्त प्रगट होता है तब तीन प्रकार मिथ्यात्वका नाश होजाता

है, अर्थात् दर्शन मोहकी तीन प्रकृतिमें मिथ्यात्व, मिश्र व सम्यक्त प्रकृति सत्तासे चली जाती हैं ॥११॥

(निसंक सहावे न्यान पौ) जब ज्ञानपदमें शङ्कारहित स्वभाव प्रगट होता है। मैं शुद्ध ज्ञान स्वरूप हूँ यह श्रद्धा शङ्कारहित होजाती है (सल्य संक विलयंतु) तब सर्व शल्य मिथ्या, माया, निदान व सर्व भय व शङ्काएँ विला जाती हैं ॥ १२ ॥

(ससंक रहिओ, कंख्या रहिओ) तब शङ्कारहित निःशङ्कित अंग व कांक्षा रहित निःकांक्षित अंग प्रगट होजाता है। सम्यक्तीके भीतरसे तत्वमें शंका व भय चला जाता है व वह इन्द्रिय विषयोंके सुखका अश्रद्धावान होता है (त्रृति रहिओ न्यान सहाओ) चञ्चलना रहित व मनके संकल्प विकल्प रहित एक ज्ञान स्वभाव आत्माका प्रगट होजाता है ॥ १३ ॥

(मुढ दृष्टि है सौगली अमूढ दृष्टि सहकार) अमूढ़ दृष्टि अङ्गकी सहायतासे मूढ़ दृष्टि सब गल जाती है। सम्यक्ती मूढ़तासे कोई धर्मक्रिया नहीं करता है, वह मोक्षमार्गके भीतर सहकारी जानके धर्मक्रियाओंको करता है ॥ १४ ॥

(न्यानी दोष न पिच्छई, अन्यान उवनु गलंतु) ज्ञानी आत्मा परके दोषोंको देखकर ग्लानि नहीं करता है उसका अज्ञान भाव गल गया है, वस्तु स्वरूप ठीक विचारके वह रोगी, दुखी, कम ज्ञानी, कुत्सितको देखकर व मलीन वस्तुको देखकर समभाव रखता है, ग्लानि नहीं लाता है। निर्विचिकित्सिक नामका तीसरा अङ्ग पालता है ॥ १५ ॥

(उवगोहन अंग जिनुत्त है न्यानी दोष गलंतु) ज्ञानी जिनेन्द्र कथित उपगूहन अंगको पालता है। अपने दोषोंको दूरकर गुणोंको बढ़ाता है। दूसरोंके दोषोंको भी मिटानेकी चेष्टा करता है। उनकी निंदा करनेका स्वभाव नहीं रखता है ॥ १६ ॥

(स्थितिकरन जिनुत्त है स्थिति न्यान सरूव) ज्ञानी स्थितिकरण अंगको पालकर अपनी स्थिति या थिरता अपने ज्ञानस्वरूपमें रखता है। दूसरोंको भी ज्ञानमें थिर होनेका उपदेश करता है ॥ १७ ॥

(वाच्छल विन्यानह सहियं, न्यान विन्यान संजुत्तु) ज्ञानी सम्यग्ज्ञान सहित होता हुआ अपने ज्ञान स्वभावसे परम प्रेम करता है या ज्ञानियोंसे प्रेम करता है। इसतरह वात्सल्य अंगको पालता है ॥ १८ ॥

(परम तत्तु पद विंद है, परम न्यान संजुत्तु) ज्ञान परम ज्ञानको रखता हुआ परमात्म तत्वको अनुभवमें

लाकर अपने आत्माकी प्रभावना करता है। इसी तरह आत्मज्ञानका प्रचार करता है, प्रभावना अंगको पालता है ॥ १९ ॥

(दर्सन अंग स हु) इसतरह सम्यग्दर्शनके आठ अंग कहे गये हैं (तिविह कम्मु विलयंतु) निश्चय आठ अंग सहित जो निश्चय सम्यग्दर्शनको पालता है उसके द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म तीनों ही प्रकारके कर्म गल जाते हैं ॥ २० ॥

(न्यान सहावं दर्सिओ अन्यान दिष्टि विलयंतु) ज्ञानस्वभावी आत्माका दर्शन करनेसे या अनुभव करनेसे सर्व अज्ञानभाव विला जाता है ॥ २१ ॥

(दर्सन दर्सिओ न्यान मौ चष्य अचष्यह भेउ) आत्मानुभवमें ज्ञानमई दर्शन दिख जाता है इसीको चक्षु तथा अचक्षु दर्शन कहते हैं। ज्ञानकी आंखसे आत्माको देखना यही चक्षुदर्शन है। अचक्षु अर्थात् इंद्रिय रहित या अतीन्द्रिय आत्मिक स्वभावसे आत्माको देखना अचक्षु दर्शन है ॥ २२ ॥

(चष्यह दर्सिओ समयमौ समयह लोय अलोय) ज्ञानकी चक्षुसे आत्मामई आत्मा दिख जाता है तब लोकालोकके सब पदार्थ ज्ञानमें झलक जाते हैं ॥ २३ ॥

(चष्यह सब्द सहाव लौ सब्द वियार मंजुत्तु) चक्षु शब्दके गम्भीर अर्थको जब विचारा जाता है तब इस शब्दका भाव यही होता है कि अपने स्वभावमें लव लगाई जावे ॥ २४ ॥

(ममल सहावे दर्सिओ समल कम्मु विलयंतु) वीतराग शुद्ध स्वभावका अनुभव करनेसे सर्व कर्ममल क्षय होजाते हैं ॥ २५ ॥

(अवहि दर्सिउ गुपित रुइ गुप्ति न्यान सहकार) आत्मानुभवमें गुप्ति रूप ज्ञानकी मददसे आत्मानुभवकी रूची रखनेवाला अवधिज्ञानका प्रकाश कर लेता है ॥ २६ ॥

(गुहिजह गुपित उवन पौ गुप्ति न्यान विन्यान) आत्मारूपी गुफामें तल्लीन होनेसे आत्मामें गुप्त रहनेवाला ज्ञान प्रकाश होता चला जाता है ॥ २७ ॥

(न्यान दृष्टि विन्यान मौ अन्यान दृष्टि विलयंतु) सम्यग्ज्ञानमई ज्ञान दृष्टि होनेसे अर्थात् शुद्धात्मानुभव होनेसे अज्ञान भाव सब विला जाता है ॥ २८ ॥

(जानु उवजै जान पौ मनपर्यय न्यान सहाउ) ज्ञान पद्में रमनेसे ज्ञान उपजता है, मनःपर्यय ज्ञानका स्वभाव प्रगट होजाता है ॥ २९ ॥

(रिजु विपुलह संजुत्तहै परम न्यान संजुत्तु) रिजुमति विपुलमति ज्ञान सहित होनेसे परम ज्ञान-केवलज्ञान प्रगट होजाता है ॥ ३० ॥

(ममलह ममल उवन पौ सकल कम्मु विलयंतु) रागद्वेष मल व कर्ममलरहित परमात्मपद्में रहनेसे सर्व ही कर्ममल क्षय होजाते हैं ॥ ३१ ॥

(केवल दिष्टिइ ममल पौ भय विनास सो भव्वु) केवलज्ञान, केवलदर्शन सहित परमात्मपद प्रगट होनेसे भव्योंका सर्व भय विनाश होजाता है ॥ ३२ ॥

(न्यान विन्यानह समय मौ भव्वु मुक्ति संपत्तु) भव्यजीव पूर्ण ज्ञान सहित परमात्मा होकर मुक्तिको प्राप्त कर लेता है ॥ ३३ ॥

भावार्थ—इस भजनमें श्री तारणस्वामीने दिखलाया है कि भव्यजीवो ! यदि तुम ज्ञानी हो और आत्मकल्याण करना चाहते हो तो तपका आचरण करके कर्मोंकी निर्जरा करो, और मुक्तिका लाभ करो। निश्चय तप अपने आत्मा हीमें तपना या आत्मानुभव करना है। यह आत्मानुभव भेदविज्ञानके द्वारा होता है। अभ्यास करनेके लिये कमलमें मन्त्रोंको स्थापन कर ध्यानका मनन करना चाहिये। पांच परमेष्टीके स्वरूपके विचार द्वारा भी एक शुद्धात्माका मनन करना चाहिये। आत्मा हीके ध्यान करनेसे अवधिज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान तथा केवलज्ञानका प्रकाश होता है। निश्चय सम्यक्तके प्रकाशसे, शुद्ध क्षायिक सम्यक्तसे दर्शनमोहकी तीनों प्रकृतियोंका क्षय होता है। शुद्ध सम्यक्तसे आत्माके शुद्ध स्वरूपका अनुभव होता है। उस सम्यक्तको निःशंकितादि आठ अङ्ग सहित पालना चाहिये।

व्यवहारनयसे इस आठ अङ्गका स्वरूप यह है कि जैन मतके तत्वोंमें शङ्का न रखना व इस लोक, परलोक वेदना, अरक्षा, अगुप्ति, मरण व अकस्मात् भय न रखना निःशङ्कित अङ्ग है। इँद्रिय सुखको सुख न प्रतीतिमें लाकर उसकी रुचि दूर करना निःकांक्षित अङ्ग है। दुःखी, रोगी, आपत्तिरूप जनको व नीच व मलीन जनको व वस्तुको देखकर ग्लानि न करना समभाव रखना निर्विचिकित्सित अङ्ग है। मूढ़तासे कोई धर्म काम न करना अमूढ़दृष्टि अङ्ग है। अपने गुणोंको बढ़ाना, दूसरेके दोषोंको निन्दाके अभिप्रायसे

प्रगट न करना उपगूहन अङ्ग है। अपनेको व दूसरोंको धर्ममें स्थिर करना स्थितिकरण अङ्ग है। धर्मात्माओंसे प्रेम रखना वात्सल्य अङ्ग है। जैनधर्मकी प्रभावना करना प्रभावना अङ्ग है। निश्चयनयकी मुख्यतासे श्री समयसारमें श्री कुन्दकुन्दाचार्यने आठ अङ्गोंका स्वरूप नीचे प्रकार कहा है:—

जो चत्तारिवि पाए छिंददि ते कम्ममोहबाधकरे। सो णिस्संको चेदा सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो ॥ २४४ ॥

भावार्थ—जो कोई कर्मबन्ध करनेवाले व मोह व बाधाको पैदा करनेवाले मिथ्यात्व, अविरत, कषाय, योगोंका नाश करता है, उनसे अपने आत्माको भिन्न अनुभव करता है, वह सम्यग्दृष्टी आत्मा शङ्का रहित जानना चाहिये। वह निःशंकित अङ्ग धारी है।

जो ण करेदि दु कंखं कम्मफले तहय सव्वधम्मेसु। सो णिक्कंखो चेदा सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो ॥ २४५ ॥

भावार्थ—जो कोई कर्मोंके सुख दुःख रूप फलोंमें व सर्व प्रकारके व्यवहार धर्मोंमें इच्छा नहीं करता है वह सम्यग्दृष्टी निःकांक्षित अङ्ग धारी जानना योग्य है।

जो ण करेदि दु गुंछं चेदा सव्वेसिमेव धम्माणं। सो खलु णिव्विदिगिंछो सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो ॥ २४६ ॥

भावार्थ—जो कोई ज्ञानी सर्व ही वस्तुके स्वभावोंमें समभाव रखता है, ग्लानि नहीं करता है वह सम्यग्दृष्टी निर्विचिकित्सित अङ्गका धारी जानना चाहिये।

जो हवदि असम्मूढो चेदा सव्वेसु कम्मभावेसु। सो खलु अमूढदिट्ठी सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो ॥ २४७ ॥

भावार्थ—जो कोई ज्ञानी सर्व कर्मोंके रूप भावोंमें मूढ़ता रहित होता है, किसीमें ममता या मोह नहीं करता है, वह अमूढ़दृष्टि अङ्गका धारी सम्यग्दृष्टी जानना योग्य है।

जो सिद्धभत्तिजुत्तो उवगूहणगो दु सव्वधम्माणं। सो उवगूहणगारी सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो ॥ २४८ ॥

भावार्थ—जो सिद्ध महात्मा सिद्ध भगवानकी भक्तिमें लवलीन होकर सर्व विभाव धर्मोंको ढकनेवाला है वह उपगूहन अङ्ग धारी सम्यग्दृष्टी जानना योग्य है।

उम्मग्गं गच्छंतं सिवमग्गे जो ठवेदि अप्पाणं। सो ठिदिकरणेण जुदो सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो ॥ २४९ ॥

भावार्थ—जो कुमार्गमें जाते हुए आत्माको रोककर उसे मोक्षमार्गमें स्थापित करता है वह स्थितिकरण अंग सहित सम्यग्दृष्टी जानना योग्य है।

जो कुणदि वच्छलत्तं तिण्हे साधूण मोक्खमग्गम्मि। सो वच्छलभावजुदो सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो ॥ २५० ॥

भावार्थ—जो कोई मोक्षके साधनेवाले सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्रकी एकतारूप मार्गमें भक्ति करता है, प्रेम करता है, वह वात्सल्य अंगधारी सम्यग्दृष्टी जानना योग्य है।

विज्जारहमारूढो मणोरहरएसु हणदि जो चेदा। सो जिणणाणपहावी सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो ॥ २५१ ॥

भावार्थ—जो कोई आत्मविद्यारूपी रथमें चढ करके मनरूपी रथके वेगोंको नाश करता है वह जिनेन्द्रके धर्मकी प्रभावना करनेवाला सम्यग्दृष्टी जानना योग्य है।

इसप्रकार जो निश्चय सम्यक्तका मनन या अनुभव करता है वह एक सच्चा तपस्वी है, सच्चा साधु है। वही उन्नति करते करते केवली अरहन्त होजाता है। फिर सर्व कर्म रहित हो शुद्ध सिद्ध होकर मोक्ष प्राप्त होजाता है। अतएव स्वामीका उपदेश है कि हे ज्ञानियो! ज्ञान भावमें सन्तोष न मानो किन्तु ज्ञानकी सहायतासे निश्चय तपका आचरण करो। ध्यान समाधिको जागृत करो। यही मोक्षमार्ग है। यही परमानन्दका उपाय है।

---

(५९) सब्द प्रियो विवान गाथा ११०९ से ११३३ तक।

सब्द प्रियो जिन उत्तं, सब्दं सुइ उवन कलन कमलं च।
सब्द कमल उववन्नं, प्रियो सुई सवन सवन आकर्नं ॥ १ ॥

सब्द अनन्त विसेषं, नन्तानन्तं च सरनि सुइ उवनं।
कर्म सुयं सुइ विलयं, विलयं सुइ कमल कम्म विलयन्ती ॥ २ ॥

सब्दं उववन्न सहावं, उवनं सुइ कमल न्यान उववन्नं।
उवन सुबन सुइ कर्न, कन्न सुइ कमल उवन निर्वानं ॥ ३ ॥

सब्द सहाव अनन्तं, कर्न आकर्न न्यान सुइ समयं।
कर्न समय सुइ कलनं, अवयासं कमल उवन सिद्धानं ॥ ४ ॥

सब्दं रसनि अनन्तं, रसियं सुइ कन न्यान पिय रमनं ।
कर्न पियं सुइ कलनं, कलनं सुइ कमल उवन सिद्धानं ॥ ५ ॥
सब्दं कसनि अनेयं, कसियं सुइ सब्द न्यान पिय रमनं ।
कर्न पियं सुइ कलनं, कलनं सुइ कमल उवन निर्व्वानं ॥ ६ ॥
सब्दं ताति अलष्यं, लषियं सुइ कन कलन अन्मोयं ।
अन्मोय कलन सुइ कमलं, कमलं अन्मोय न्यान निर्वानं ॥ ७ ॥
सब्दं तार सु तरलं, कलनं सुइ कर्न रमन तत्कालं ।
रमन कर्न सुइ कलनं, कलनं सुइ कमल न्यान निर्वानं ॥ ८ ॥
सब्द फूक सुइ गमनं, गमनं सुइ अगम गमिय सुइ कर्न ।
स्फटिक न्यान सुइ कलनं, कलनं अन्मोय कमल निर्व्वानं ॥ ९ ॥
सब्दं असब्द उवनं, असब्द सुइ सब्द न्यान सुइ कर्न ।
कर्न अन्मोय सु कलनं, कलनं अन्मोय कमल निर्वानं ॥ १० ॥
सब्द सब्द सुइ सब्दं, सब्दं सुइ उवन सुवन सुइ कर्न ।
कर्न न्यान अन्मोयं, कर्न अन्मोय कमल निर्वानं ॥ ११ ॥
सब्द प्रिये जिन उत्तं, प्रियो सुई सब्द नन्त अन्मोयं ।
अन्मोय कर्न सुइ कमलं, कमलं अन्मोय न्यान निर्वानं ॥ १२ ॥
सब्दं सरस सहावं, सरस सहावेन सब्द प्रिय कर्न ।
कन पियं सिय चरनं, चरनं सिय कमल सब्द निर्वानं ॥ १३ ॥

सर सब्दं सुइ उवनं, उवनं मर सब्द कर्न सुइ रमनं ।
कर्न रमन सुइ कलनं, कलनं सुइ रमन कमल निर्वानं ॥ १४ ॥
सर सहाव सुइ उवनं, सब्दं असब्द गुप्ति सुइ सब्दं ।
सब्द कमल सुइ कर्नं, कर्नं सुइ न्यान कमल निर्वानं ॥ १५ ॥
सरं च सब्द सहावं, सब्दं मर कर्न समय सुइ रमनं ।
कर्न समय सुइ कलनं, कलनं सुइ समय कमल निर्वानं ॥ १६ ॥
असब्दं मर उवन सहावं, उवन अवयास असब्द हिययारं ।
हिययार कर्म सुइ समयं, कर्नं सुइ समय कलन निर्वानं ॥ १७ ॥
गुप्ति सब्द सुइ रमनं, अवध्यं सहाव उवन उवन निहि उत्तं ।
उवन उवन पिय कर्नं, कर्नं पिय कमल सब्द निर्वानं ॥ १८ ॥
षट् मर उवन अनेयं, अनेयं अन्मोय कमल सुइ उवनं ।
कमल कर्न सुइ समयं, कर्नं सुइ समय कमल निर्वानं ॥ १९ ॥
प्रियो सब्द जिन उत्तं, प्रियो सब्द असब्द सहकारं ।
कर्नं हिययार सु रमनं, रमनं सुइ कंन कमल निर्वानं ॥ २० ॥
प्रियो दिस्ति सुई सुवनं, दिस्तिं सुइ प्रियो दृष्टि सुइ रमनं ।
दिस्ति दिष्टि हिय कर्नं, कर्नं हिय कमल सब्द निर्वानं ॥ २१ ॥
असब्द अदिष्टि प्रिय सवनं, पीऊ सुइ उवन हिययार सुइ रमनं ।
हिय प्रियो कर्न सुइ समयं, समयं सुइ कर्न कमल निर्वानं ॥ २२ ॥

असब्द अदिष्टि अनन्तं, उवनं हियार मन हुवयार मुइ रमनं ।
हिय हुव रमन सुकर्न, कर्न प्रिय रमन कमल निर्वानं ॥२३॥
सब्द प्रियो जिन उत्तं, प्रियो सब्दस्य जिनय जिन रमनं ।
जिन उवन रमन मुइ कर्न, कर्न मुइ कमल रमन निर्वानं ॥२४॥
जं तारन तरन सहावं, अन्मोयं मम श्रेनि कलन मुइ कर्न ।
कर्न चरन सिय कमलं, तारन सह समय कमल निर्वानं ॥२५॥

अन्वय सहित अर्थ—(सब्द प्रियो जिन उत्तं) श्री जिनेन्द्रने हितकारी प्रिय शब्दोंको कहा है (सब्दं मुइ उवन कलन कमलं च) जिन शब्दोंके द्वारा स्वयं ही कमल समान विकसित शुद्ध आत्मामें एकाग्र ध्यान उत्पन्न होजाता है (सब्द कमल उववन्नं) शब्दके द्वारा आत्मारूपी कमल विकसित होजाता है (प्रियो मुइ सुवन सवन आकर्न) वह शब्द बड़ा ही प्रिय है जिसके सुननेसे शांतरस चारों तरफ छाजाता है ॥ १ ॥

(सब्दं अनंत विसेषं) शब्दोंके अनन्त भेद हैं। जितने प्रकारके भावोंसे शब्द निकलते हैं उतने ही अनन्त भेद शब्दोंके होसक्ते हैं (नंत नंत सगनि मुइ उवनं) जिन शब्दोंमें उपयोग लगानेसे अर्थात् मिथ्यात्व-भाव वर्द्धक शब्दोंके सुननेसे अनन्त संसारकी उत्पत्ति होती है (कर्न सुयं मुइ विलयं) परन्तु जब जिनवाणीको सुना जाता है तब वह अनन्त संसार स्वयं विला जाता है (विलयं मुइ कमल कम्म विलयंती) अनन्त संसारके विलय होनेसे आत्मारूपी कमल विकसित होजाता है और सब कर्म क्षय होजाते हैं ॥ २ ॥

(सब्दं उववन्न सहावं) शब्दका स्वभाव उत्पन्न होता है क्योंकि यह पुद्गलकी पर्याय है (उवनं मुइ कमल न्यान उववन्नं) शब्दके द्वारा स्वयं ही आत्मारूपी कमलमें ज्ञानका प्रकाश होजाता है (उवन उवन मुइ कर्न) ज्ञानका वारवार प्रकाश रहना वही निर्वाणका कर्न अर्थात् साधन है (कर्न मुइ कमल उवन निर्वानं) इसी साधनसे आत्मारूपी कमल निर्वाणको प्रकाश कर लेता है ॥ ३ ॥

(सब्द सहाव अनंत) शब्दोंमें अनन्त शक्ति है (कर्न अकर्न न्यान मुइ समर्थ) कर्णोंके द्वारा सुननेसे ही आत्माका ज्ञान झलक जाता है। जो रुचिपूर्वक समयसारादि शास्त्रोंको पढ़ता रहता है उसके आत्मज्ञान

अमाप होजाता है। (कर्न समय सुइ कमलं) आत्माका अनुभव करना सो ही मोक्षका कारण है (अबयार्य कमल उवन सिद्धानं) इसीसे आत्मारूपी कमलमें केवलज्ञानका प्रकाश होजाता है और वह सिद्धगतिको प्राप्त होजाता है ॥ ४ ॥

(सब्दं रसनि अनंतं) शब्दोंमें अनन्त रस भरे हैं-अर्थात् शब्दोंके सुननेसे अनेक प्रकारके शुभ व अशुभ भाव होजाते हैं (रसियं सुई कर्न न्यान पिय रमनं) कानोंके द्वारा सुनकर उन शब्दोंसे ज्ञान प्राप्त कर जो हितकारी ज्ञान होता है उसमें मन रमण कर जाता है (कर्न पियं सुइ कलनं) जो शब्द कानोंको प्रिय लगते हैं उनहीमें मन जमता है (कलनं सुइ कमल उवन सिद्धानं) शुद्धात्माका जब मनन शब्दोंके द्वारा होता है तब आत्मारूपी कमल विकसित होकर सिद्ध होजाता है ॥ ५ ॥

(सब्दं कसनि अनेयं) कांसेके बाजोंके द्वारा अनेक प्रकारके शब्द होते हैं, जैसे मजीरा, झांझ आदिके द्वारा निकले हुए शब्द (कसियं सुइ सब्द न्यान पिय रमनं) इन कांसेके बाजों द्वारा प्रगट हुए शास्त्रके शब्दोंसे जो हितकारी व आत्मोपकारी ज्ञान होता है उस ज्ञानमें मन रमण कर जाता है (कर्न पियं सुइ कलनं) जो शब्द कानोंको प्रिय लगते हैं उनहीमें मन रम जाता है (कलनं सुइ कमल उवन निर्वानं) उस आत्मज्ञानके मननसे कमल समान आत्मा शुद्ध होकर निर्वाणको प्राप्त कर लेता है ॥ ६ ॥

(सब्दं ताति अलष्यं) तत अर्थात् चर्मसे ढके बाजोंके द्वारा भी शब्द होता है (लषियं सुइ कर्न कलन अन्मोयं) जब ऐसे बाजोंके शब्द कानमें आते हैं तब उन शब्दोंके द्वारा जो ज्ञान प्रगट होता है उसमें मगन होनेसे आनन्द प्रगट होजाता है (अन्मोय कलन सुइ कमलं) इस आत्मानन्दमें मगन होनेसे आत्मारूपी कमल खिल जाता है (कमलं अन्मोय न्यान निर्वानं) उस आत्मामें आनन्द अनुभव करनेसे ज्ञान शुद्ध होजाता है और आत्मा निर्वाणको प्राप्त कर लेता है ॥ ७ ॥

(सब्दं तार सु तरलं) तारके बाजोंके द्वारा भी मनोहर शब्दोंका विस्तार होता है, जैसे सितार, सारंगी आदिके बाजे (कलनं सुइ कर्न रमन तत्कालं) जब ऐसे बाजेकी ध्वनि कानमें आती है तब मन उसमें उसी समय रमण कर जाता है (रमन कर्न सुइ कलनं) कानोंके द्वारा रमण होते ही उन शब्दोंके भावोंका मनन होता है (कलनं सुइ कमल न्यान निर्वानं) आत्माका मनन होनेसे आत्मारूपी कमल केवलज्ञानको प्राप्त करके निर्वाणको प्राप्त होजाता है ॥ ८ ॥

(सब्द फूक सुइ गमनं) फूकके द्वारा बजनेवाले बाजोंसे भी शब्द निकलते हैं जैसे बांसुरी आदिसे (गमनं सुइ अगम गमिय सुइ कर्न) कानोंमें जब वे शब्द आते हैं तब उनसे इंद्रियोंसे अगम्य ऐसे आत्माका ज्ञान होजाता है (स्फटिक न्यान सुइ कल्नं) तब स्फटिकमणिके समान शुद्ध निर्मल ज्ञानका अनुभव होता है (कलनं अन्मोय कमल निर्वानं) आत्मानुभवके आनन्दमें मगन होनेसे कमल समान आत्मा शुद्ध हो निर्वाणको प्राप्त कर लेता है ॥ ९ ॥

(सब्दं असब्द उवनं) शब्द वही हितकारी हैं जिनसे शब्द रहित अमूर्तीक आत्माका बोध पैदा हो (असब्द सुइ सब्द न्यान सुइ कर्न) आत्मज्ञान बोधक शब्द जब कानोंमें पड़ता है तब आत्माका ज्ञान होता है (कर्न अन्मोय सु कलनं) जब कानोंमें शब्द आते हैं तब ज्ञानानन्दका भाव होता है (कलनं अन्मोय कमल निर्वानं) इस ज्ञानानन्दके अभ्याससे कमल समान आत्मा शुद्ध होकर निर्वाणको प्राप्त कर लेता है ॥ १० ॥

(सब्द सब्द सुइ सब्दं) शब्द अनेक प्रकारके होते हैं। शब्द वही है जो आत्मानुभवका कारण हो (सब्दं सुइ उवन सुवन सुइ कर्न) शब्द वही है जिसके कानोंमें सुननेसे शांतामृत पैदा होजावे (कर्न न्यान अन्मोय) ज्ञानानन्दका साधक हो सोई शब्द है (कर्न अन्मोय कमल निर्वानं) ज्ञानानन्दके अनुभवसे ही यह आत्मारूपी कमल विकसित हो निर्वाणको पाता है ॥ ११ ॥

(सब्द प्रिये जिन उत्तं) श्री जिनेन्द्रने उसीको प्यारा हितकारी शब्द कहा है (प्रियो सुइ सब्द नन्त अन्मोयं) जिस प्रिय शब्दके द्वारा अनन्त सुखका लाभ होजावे (अन्मोय कर्न सुई कमलं) आत्मानन्दका साधन ही आत्मारूपी कमलका विकास है (कमलं अन्मोय न्यान निर्वानं) आत्माके ज्ञानमें आनन्दके अनुभवसे निर्वाणका लाभ होता है ॥ १२ ॥

(सब्दं सरस सहावं) शब्द वही योग्य है जिससे आत्मीक स्वादकी शक्ति प्रगट हो (सरस सहावेन सब्द पिय कर्न) ऐसा रसीला स्वभाव रखनेवाला शब्द ज्ञानीके कानोंको प्यारा होता है (कर्न पियं सिय चरनं) कानोंको प्यारा लगकर उस शब्दके द्वारा निर्मित आत्म-रमणरूप चारित्र होजाता है (चरनं सिय कमल सब्द निर्वानं) जिस शब्दसे निर्मल चारित्र होजावे। उसीके द्वारा यह आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ १३ ॥

(सर सब्दं सुइ उवनं) जलके समान शांतिकारी शब्दका जहां प्रकाश है (उवनं सर सब्द कर्न सुइ रमनं)

ऐसे जलके समान शब्द कानोंमें जब कहते हैं तब मन उनके भावमें रमण कर जाता है (कर्न रमन सुइ कलनं) जब कान द्वारा उपयोग शब्दोंमें रमण करता है तब शांत रसका भोग होता है (कलनं सुइ रमन कमल निर्वानं) उसी ज्ञानानन्दके रमणसे ही यह आत्म–कमल निर्वाणका त्यागी होता है ॥ १४ ॥

(सर सहाव सुइ उवन) शांतिमय शब्दोंके द्वारा निर्मल जलके समान आत्माका स्वभाव झलक जाता है (सब्दं असब्द गुप्ति सुइ सब्दं) जिस शब्दसे शब्द रहित आत्माके भीतर तल्लीनता हो वही शब्द यथार्थ है (सब्द कमल सुइ कर्नं) ऐसा शब्द ही आत्मारूपी कमलके विकासका साधन है (कर्न सुइ न्यान कमल निर्वानं) यही ज्ञानरूपी साधन आत्मारूपी कमलको निर्वाण पहुँचा देता है ॥ १५ ॥

(रं व सब्द सहावं) शान्त जलके समान शब्दका स्वभाव होना चाहिये (सब्दं स कर्न समय सुइ रमनं) जिस शब्दरूपी जलके कानोंमें पड़ते ही आत्माके भीतर रमण होजावे (कर्न समय सुइ कलनं) आत्माका अनुभव ही मोक्षका साधन है (कलनं सुइ समय कमल निर्वानं) यही स्वरूप रमण आत्म नुभव आत्मारूपी कमलको निर्वाण पहुँचा देता है ॥ १६ ॥

(असब्दं सर उवन सहावं) वह आत्मीक शांत जल शब्द रहित प्रकाश स्वभाव है (उवनं अवयास अरक हिययारं) जिसमें हितकारी शब्द रहित ज्ञानका प्रकाश रहता है (हिययार कर्न सुइ समयं) यह हितकारी आत्मीक ज्ञान सो ही आत्मासे अभेद रूप आत्मा ही है (कर्नं सुइ समय कलन निर्वान) यह आत्मानुभव ही निर्वाणका साधन है ॥ १७ ॥

(गुप्ति सब्द सुइ रमनं) गुप्ति शब्द बताता है कि मन वचन कायोंको वश करके आत्मामें रमण किया जावे (अवर्ध्य सहाव उवन उवन विहि उत्तं) जिससे पवित्र स्वभावका झलकाव हो, इसीसे आत्माकी निधि जो केवलज्ञान है उसका उदय कहा गया है (उवन उवन विय कर्नं) आत्माके स्वभावका लगातार उदय रहना ही प्यारा हितकारी आत्माका साधन है (कर्नं विय कमल सब्द निर्वानं) जिस शब्दसे हितकारी साधन हो वही शब्द आत्मारूपी कमलको निर्वाण पहुँचानेमें कारण है ॥ १८ ॥

(षट सर उवन अनेयं) छः सरोवरोंसे अनेक कमल उत्पन्न होते हैं, इसका भाव यह भी होसक्ता है कि छः द्रव्योंके विचारसे अनेक प्रकार मनको विकसित करनेवाले भावरूपी कमल पैदा होते हैं अथवा ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः, इस छः अक्षरी मन्त्र रूपी सरोवरके द्वारा अनेक शुद्ध भावरूपी कमल पैदा होते हैं (अनेयं

अन्मोय कमल सुइ उवनं) इस छः अक्षरी मंत्ररूपी सरोवरसे या छः द्रव्योंके मननसे अनेक आत्मारूपी कमलको विकसित करनेवाले भाव पैदा होते हैं (कमल कर्न सुइ समयं) आत्मारूपी कमलका शुद्धोपयोग भाव सो ही मोक्षका साधन है, वह आत्मा ही है (कर्न सुइ समय कमल निर्वानं) ऐसा आत्मारूपी शुद्धोपयोग भाव ही वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल निर्वाणको पाता है ॥ १९ ॥

(प्रियो सब्द जिन उत्तं) श्री जिनेन्द्रने उसीको प्रिय शब्द कहा है (प्रियो सब्द असब्द सहकारं) जो प्रिय शब्द, शब्द रहित आत्माके ज्ञानका सहकारी हो (कर्न हिययार सुरमनं) स्वात्मरमण हितकारी है, मोक्षका साधन है (रमनं सुइ कर्न कमल निर्वानं) यह आत्मरमण वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ २० ॥

(प्रियो दिप्ति सुइ सुवनं) वही श्रवण है जिस शब्दके सुननेसे प्यारी हितकारी आत्म दीप्ति जग जावे (दिप्तिं सुइ प्रियो दिष्टि सुइ रमनं) जो दीप्ति प्यारी हितकारी आत्मीक दर्शनमें रमण करनेवाली है (दिप्ति दिष्टि हिय कर्न) आत्माके दर्शनका प्रकाश ही मोक्षका प्यारा साधन है (कर्न हिय कमल सब्द निर्मानं) जिन शब्दोंके द्वारा हितकारी साधन प्राप्त होकर आत्मारूपी कमल निर्वाणको पावें वही शब्द सफल है ॥ २१ ॥

(असब्द अदिष्टि प्रिय स्रवनं) वही हितकारी शब्दोंका सुनना है जिससे वह आत्मा अनुभवमें आजावे जो शब्दका व चक्षुका विषय नहीं है (पंऊ सुइ उवन हिययार सुइ रमनं) वहीं आत्मीक रसका पान है, वहीं हितकारी ज्ञानका उदय है, जहां आत्मामें रमण है (हिय प्रिये कर्न सुइ समयं) हितकारी प्यारा आत्मामें रमणरूपी साधन वह आत्मारूप ही है (समयं सुइ कर्न कमल निर्वानं) वही आत्माराधनरूपी साधन आत्मारूपी कमलको निर्वाण प्रदान करता है ॥ २२ ॥

(असब्द अदिष्टि अनंतं , जो शब्द व चक्षुके विषयसे दूर है वह आत्मा अनन्त शक्तिका धारी है (उवनं हियार मनहुवयार सुइ रमनं) उसका उदय हितकारी है, उसीमें रमण करना मनका उपकारी है अर्थात् मनको वश करनेवाला है (हिय इव रमन सु र्नं) हितकारी आत्मीक रमन ही उत्तम मोक्ष साधन है (कर्न प्रिय रमन कमक निर्वानं) हितकारी आत्मीक रमनरूपी साधनसे आत्मारूपी कमल निर्वाणका भागी होता है ॥ २३ ॥

(सब्द प्रियो जिन उत्तं) श्री जिनेन्द्रने उसीको प्यारा शब्द कहा है (प्रियो सब्दस्य जिनय जिन रमनं)

जिस प्यारे शब्दके द्वारा यह सम्यग्दृष्टी आत्मा मिथ्यात्व विजयी जिन कर्मविजयी आत्मारूपी जिनके स्वभावमें रमण करें (जिन उवन रमन सुई कर्नं) श्री जिनेन्द्र भगवानके समान अपने आत्माके प्रकाशमें रमण करना मोक्षका साधन है (कर्नं सुइ कमल रमन निर्वानं) यही आत्मीक रमन वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल निर्वाण पाता है ॥ २४ ॥

(जं तारन तरन सहावं) जिस अरहन्त स्वरूप आत्माका तारण तरण स्वभाव है जो स्वयं भी संसारसे पार होंगे व दूसरोंको भी उपदेश देकर पार करनेमें निमित्त होंगे (अन्मोयं सम श्रेनि कलन सुइ कर्नं) वह अरहन्त आनन्दरूप हैं, समताभावकी श्रेणीपर आरूढ़ हैं, वे ही साक्षात् मोक्षके साधन हैं (कर्नं चरन सिय कमलं) उनका कमल समान विकसित आत्मा शुद्ध चारित्रमई है, यही मोक्षका साधन है (तारन सह समय कमल निर्वानं) यह आत्मा अनेक जीवोंको तारनेके साथ २ कमलके समान पूर्ण विकसित होकर निर्वाणको जाकर सिद्ध होजाता है ॥ २५ ॥

भावार्थ—इस भजनका नाम सब्दप्रियो विवान है अर्थात् वह जहाज जो हितकारी शब्दरूप है। शब्दोंके द्वारा ज्ञान जग जाता है। ज्ञानका और शब्दका वाच्य वाचक सम्बन्ध है। शब्द जगतमें अनेक प्रकार होते हैं। जैसे तीन प्रकारके उपयोग हैं वैसे उनको झलकानेवाले तीन प्रकारके शब्द हैं। अशुभ शब्द अशुभोपयोगके, शुभ शब्द शुभोपयोगके, शुद्ध शब्द शुद्धोपयोगके कारण हैं। मिथ्यात्व सहित शुभ व शुभ शब्दोंके सुनने व कहनेसे इस जीवने अनन्तकालसे संसारमें भ्रमण पाया है। अतएव ऐसे शब्दोंको-ऐसी गुरुकी वाणीको व ऐसे शास्त्रोंके शब्दको सुनना चाहिये जिनसे मिथ्यात्व छूट जावे और सम्यग्दर्शनका प्रकाश होजावे। आगम ज्ञान तत्वज्ञानका कारण है। शुद्धात्मा वाचक व पांच परमेष्ठी-वाचक मन्त्र आत्माकी शुद्ध परिणतिमें रमनेके कारण हैं। इन शब्दोंके जपनेसे, मननसे व ध्यानसे शुद्धात्म रमण होता है। आध्यात्मीक भजनोंको वैसे ही या चार प्रकारके बाजोंके द्वारा गानेसे भी शुद्धात्माके रमणमें परिणति जाती है। बाजे चार प्रकारके हैं जैसा ऊपर कहा है वैसा ही सर्वार्थसिद्धिमें कहा है।

"प्रायोगिकं चतुर्धा ततविततघनसौषिरभेदात्" अर्थात् मानवोंकी प्रेरणासे बजनेवाले बाजे चार तरहके होते हैं-(१) तत—चमड़ेसे मढ़े हुए मृदंग ढोलके बाजे, (२) वितत—तारके बजे सितार वीणा आदि, (३) घन—कांसेके घण्टे, घड़ियाल, मंजीरा आदि, (४) सौषिर—कलके बाजे बांसरी आदि।

मनको अन्य विषयोंसे हटाकर रमानेके लिये ये बाजे बड़े प्रबल निमित्त कारण हैं। इन बाजोंको बजाते हुए अध्यात्मीक पद गानेसे भाव पढ़ने व सुननेवालोंका आत्माकी तरफ चला जाता है। जिससे आत्माका अच्छा मनन होता है। आत्मरमणमें ही मोक्षमार्ग है। क्योंकि वहां शुद्धात्माका श्रद्धान, ज्ञान तथा चारित्र है। शुद्धात्माके अनुभवसे ही अरहन्तपद व सिद्ध पदका लाभ होता है। साधकका मन बहुत सूक्ष्म होता है। जब शुद्ध आत्मध्यानमें रमण न करे तो शास्त्राभ्यास, भजन, चर्चा आदिके द्वारा अध्यात्मिक विचार करना योग्य है। ये हितकारी आत्मीक रससे पूर्ण शब्द परम्परासे मोक्षके साधक हैं। जिनवाणीको तारक कहा है कि उसके प्रतापसे मोक्ष साधन मिलता है। परमप्रिय शब्दरूपी विमान जिन वचन है जिन श्रुत है। इसके आलम्बनसे भाव श्रुतरूप आत्मानुभवको पाकर मोक्षका साधन करना योग्य है। समाधिशतकमें श्री पूज्यपादस्वामी कहते हैं—

तदब्रूयात्तत्परान पृच्छेत्तदिच्छेत्तत्परो भवेत्। येनाविद्यामयं रूपं त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत ॥ ५३ ॥

भावार्थ—आत्मा सम्बन्धी शब्दोंको कहो वैसा ही प्रश्न दूसरोंको करो, उसी आत्माकी ही इच्छा करो, उसी आत्मामें तत्पर रहो। जिससे अज्ञानमई स्वरूप छूटकर ज्ञानमई स्वभाव झलक जावे।

सोऽहमित्यात्तसंस्कारस्तस्मिन्भावनया पुनः। तत्रैव दृढसंस्काराल्लभते ह्यात्मनि स्थितिम् ॥ २८ ॥

भावार्थ—सोहं मंत्रके द्वारा अभ्यास करनेसे आत्माकी भावना होती है। आत्माकी दृढ़ भावनाके प्रतापसे आत्मामें स्थिरता होती है।

पदोंके ध्यानकी महिमा योगेन्द्रदेव अमृताशीति ग्रन्थमें कहते हैं—

यं निष्कलं सकलमक्षयकेवलं वा, सन्तः स्तुवन्ति सततं समभावभाजः।
वाच्यस्य तस्य वरवाचकमंत्रयुक्तो हे पान्थ शाश्वतपुरीं विश निर्विशंकः ॥ ३२ ॥

भावार्थ—जो शरीर रहित, अविनाशी पूर्ण केवलज्ञान स्वरूपी आत्मा है। सन्तपुरुष समभावमें तिष्ठकर निरन्तर उसीकी स्तुति करते हैं। हे मोक्षका यात्री! उस परमात्माके वाचक उत्तम मंत्रोंको जपता हुआ व उनके द्वारा शुद्धभावको पाता हुआ निर्भय होकर मोक्षपुरीमें प्रवेश कर।

(५६) पनविवि वधाओ गाथा ११३४ से ११४६ तक ।

पन पन विवि परम जिनेन्द स उत्तउ, परम तत्तु पद विंद मऊ ।
परम देऊ परमक्खम उत्तउ, परम रमन तं परम जिनु ॥ १ ॥
ऐ परम जिनेन्दह ममल स उत्तो, ममल दिष्टि तं न्यान मऊ ।
न्यान विन्यानह समय सहाओ, चांदनु समयह विनयमऊ ॥ २ ॥
ऐ समय स उत्तउ सिद्ध सहाओ, सिद्ध सुद्ध सु समय पऊ ।
सिद्ध सरूवै सुयं सु रमियो, चांदनु जिन उत्तु विन्यान मऊ ॥ ३ ॥
सिद्धह सिद्ध सरूव सुरूनो, सिद्ध स उत्तउ ममल पऊ ।
ममल ऊवएसिउ सूषिम महियो, चांदनु सूषिम उव लषियो ॥ ४ ॥
सूषम महियो न्यान विन्यान सौ, कमल रमन तं परम पऊ ।
कमलह रमने रमन सरूवे, चांदनु रमियो जिन समए ॥ ५ ॥
जिन समय सुलंकृत सिद्ध सहावे, हित मित परिनै परिन मऊ ।
कोमल सहियो हिय उवयार हो, चांदनु हियए ममल पऊ ॥ ६ ॥
विन्यान विंद तं समय संजुत्तु, मय मूर्ति तं मुक्ति पऊ ।
मुक्तिहि मुक्ति सुभाउ सहज रुइ, चांदनु सहजहि विमय मऊ ॥ ७ ॥
ऐ नन्तानन्त सु सुद्ध परम जिनु, नन्त विसेष सु दिस्टि मऊ ।
न्यान विन्यानह सुयं सु रमने, रमियो सिद्धह मुक्ति पऊ ॥ ८ ॥
जिनवर उत्तो रयन ममल पउ, परिनै उवन सुमल रहियो ।
कम्म जु विलयो मुक्ति जिनेन्दह, चांदनु समय सु मुक्ति पऊ ॥ ९ ॥

परभाव पउत्तउ परम जिनेन्दह, ममय सु सहियो जिनय पऊ।
तं साहिय ममयह लोय अलोयनि, सूषम महियो मुक्ति पऊ॥ १०॥
[illegible] गलियो, कम्मु विलय अवयास पऊ।
[illegible] मल पउ, चांदनु ममल सु विनय मऊ॥ ११॥
अन्माय न्यान विन्यान सु महियो, षिपक दिस्टि तं षिपक पऊ।
षिपक दिस्टि तं षिपक ममल मौ, मुक्ति दृष्टि तं मुक्ति पऊ॥ १२॥
मुक्ति इस्टि तं सिद्ध सहज रुइ, नन्तानन्त सु सूषिमऊ।
जिन सुद्ध परम जितु परम सरूव वि, चांदनु परम सुविनय मऊ॥ १३॥

अन्वय सहित अर्थ—(पन पन विवि) पांच परमेष्ठियोंको नमस्कार करके श्री तारणस्वामी कहते हैं (जिनेन्द स उत्तउ परम तत्तु पद विंद मऊ) श्री जिनेन्द्रभगवानने कहा है कि परम तत्व आत्मीकपदका अनुभव स्वरूप है। अर्थात् जहां आत्माका अनुभव है वही परम तत्व है (परम देउ परमसरू उत्तउ) परमात्मादेवको परम अविनाशी कहा गया है (परम रमन त परम जितु) वे परम तत्वमें रमन करनेवाले हैं और वे कर्मोंको जीतनेवाले जिन हैं॥ १॥

(ऐ परम जिनेन्दह ममल स उत्तउ) ऐ भाइयो! श्री उत्कृष्ट जिनेन्द्र भगवानने उसीको मल रहित शुद्ध कहा है (ममल दिष्टि तं न्याय मऊ) जिसका सम्यग्दर्शन निर्मल है व जो सम्यग्ज्ञान स्वरूप है (न्यान विन्यानह समय सहाओ) जो भेद विज्ञानका धारी है तथा स्वसमय स्वभावका धारी है अर्थात् जो अपने आत्माके स्वभावमें रमण करनेवाला है (चांदनु समयह विनय मऊ) जो चन्दनके समान सुखरूप है व जो आत्मा विनयरूप है—रत्नत्रयकी परम भक्ति रखनेवाला है॥ २॥

(ऐ समय स उत्तउ सिद्ध सहाओ) हे भाइयो! आत्माका स्वभाव सिद्ध भगवानके स्वभावके समान कहा गया है (सिद्ध सुद्ध सु समय पऊ) यह आत्मा स्वयं सिद्धरूप है, शुद्ध है व स्वसमयमई आपसे आपमें लीन रहनेवाला है (सिद्ध सरूवै सुयं स रमिओ) यह सिद्ध स्वरूपी होकर स्वयं अपनेमें रमण करनेवाला है

(चांदनु जिन उत्तु न्यान मऊ) श्री जिनेन्द्रने कहा है कि यह आत्मा चन्दनके समान सुखरूप है ॥ ३ ॥

(सिद्धः सिद्ध सरूव सुसनो) यह सिद्ध है व सिद्ध स्वरूपी है तथा परम तेजस्वी है (सिद्ध प-त्तउ ममल पउ) सिद्धहीको निर्मल पदमें रहनेवाला कहा गया है ममल उवएसिउ सुषिम सहियो) ऐसा ही उपदेश है कि यह आत्मा सिद्धके समान परम सूक्ष्म है–मन तथा इंद्रियोंका विषय नहीं है (चांदन सुषिम उवलषियो) वह चन्दनके समान सुखपूर्ण है व सूक्ष्म प्रज्ञा दृष्टिसे जाना जाता है ॥ ४ ॥

(सुषिम सहिओ न्यान विन्यान मौ) यह आत्मा सूक्ष्म इसलिये है कि ज्ञानाकार है (कमल रमन तं परम पऊ) यह आपके ही शुद्ध कमल समान आत्मामें रमण करता है, वही इसका परम पद है (कमलः रमने रमन सरूवे) वह रत्नत्रय स्वरूप कमलमें ही रमण करना है (चांदनु रमियो जिन समए) वह चन्दनके समान सूखपूर्ण है तथा वह वीतराग स्वरूप आत्मामें ही मगन है ॥ ५ ॥

(जिन समय सुलंकृत सिद्ध सहावे) वह वीतरागी आत्मा सिद्धके स्वभावसे भलेप्रकार शोभायमान है (हितमित परिनै परिनमऊ) वह अपनी परम हितकारिणी व मर्यादारूप शुद्ध परिणतिमें परिणमन करनेवाला है (कोमल सहियो हित हुवयार हो) वह स्वभावसे परम कोमल मार्दव स्वरूप है, वही हितकारी व उपकारी है (चांदनु हियए ममल पऊ) वह चन्दनके समान सुखपूर्ण है, उसीका निर्मल पद मनमें झलक रहा है ॥ ६ ॥

(विन्यान विंद तं समय संजुत्तु) भेदज्ञान द्वारा जो आत्माका अनुभव है वही आत्मा है (मय मर्ति तं मुक्ति पऊ) आत्मा परिणमनशील स्वभावको रखनेवाला है इसीसे संसार अवस्थाको त्यागकर मुक्ति अवस्थाको प्राप्त कर लेता है (मुक्ति ही मुक्ति सुभाउ सहज सुइ) मुक्त स्वभाव रूप शुद्ध आत्मा है ऐसी स्वाभाविक रूचि ही मुक्तिका कारण है (चांदनु सहजहि विनय मऊ) वह चन्दनके समान सुखपूर्ण है व स्वभावसे ही रत्नत्रयमें विनय रूप है ॥ ७ ॥

(ऐ नंतानंत सु सुद्ध परम जिनु) ऐ भाइयो ! अनन्तानन्त जो शुद्ध परम जिन श्री सिद्धात्मा हैं (नंत विसेष सु दिस्टि मऊ) उनमें अनन्त गुण दिखलाई पडते हैं (न्यान विन्यानह सुयं सु रमनं) वे अपने ज्ञान स्वभावमें रमण कर रहे हैं (रमियो सिद्धह मुक्ति पऊ) ऐसे सिद्धोंके स्वभावमें रमण करता है वह सिद्धपदको पाता है ॥ ८ ॥

(जिनवर उत्तो रमन ममल पउ) श्री जिनेन्द्रने कहा है कि रत्नत्रय निर्मल पद है। वही मोक्षका साधन

है (परिनै उवन सुमल रहियो) जब निश्चय रत्नत्रय सर्व दोष रहित जीवके भावमें प्रगट होकर परिणमन करता है अर्थात् आत्मा आत्माका श्रद्धान ज्ञान आचरण करता हुआ आत्मानुभवमें रमण करता है (कम्मु जु विलयो मुक्ति जिनेन्दह) जब उसके कर्म क्षय होजाते हैं वह मुक्तिरूप जिनेन्द्र होजाता है (चांदनु समय सु मुक्ति पऊ) वह चन्दनके समान सुखपूर्ण है ऐसा परमात्मा मुक्तिपदमें पहुँच जाता है ॥ ९ ॥

(परमान पउत्तउ परम जिनेन्दह) परम जिनेन्द्र उत्तम प्रमाणको प्राप्त कर चुके हैं अर्थात् केवलज्ञानको प्राप्त कर चुके हैं (समय सु महियो जिनय पऊ) आत्मामें ही जिनेन्द्रका पद है अर्थात् कर्म काटकर आत्मा ही जिनेन्द्र होजाता है (तं साहिय ममयह लोग अलोयवि) रत्नत्रयको साधन करनेसे आत्मामें लोक अलोक झलक जाते हैं (सूषम सहियो मुक्ति पऊ) जब वह शरीरादि सबसे छूटकर सूक्ष्म हलका कर्म रहित होजाता है तब वह मुक्तिको पालेता है ॥ १० ॥

(सूषम परिनामह सुयं सु गलियो) सूक्ष्म अतीन्द्रिय भावमें परिणमन करनेसे अर्थात् आत्मानुभव करनेसे कर्म स्वयं गल जाते हैं (कम्मु विलय अवयास मऊ) जब कर्म क्षय होजाते हैं तब शुद्ध ज्ञानमई आत्मा होजाता है (अवयास नंत नंत ममल पउ) इस ज्ञानके निर्मल स्वभावमें अनन्तानन्त पदार्थ झलकते हैं (चांदनु ममल सु विनय मऊ) आत्मा चन्दनके समान सुखपूर्ण है, शुद्ध है, व मार्दव गुण सहित परम विनयरूप है ॥ ११ ॥

(अन्मोय न्यान विन्यान सु सहियो) वह आत्मा ज्ञानानन्द स्वभावका धारी है (षिपक दिष्टि तं षिपक पउ) वह क्षायिक सम्यग्दर्शन स्वरूप है व क्षायिक पदमें विराजित है (षिपक दिष्टि तं षिपक ममल मो) वह क्षायिक दर्शन स्वरूप है व कर्मोंको क्षय करके सर्व रागादि रहित शुद्ध होजाता है (मुक्ति दिष्टि तं मुक्ति पऊ) यही बन्धनसे छूटकर आत्मदर्शी जीव मुक्तिको पालेता है ॥ १२ ॥

(मुक्ति इष्टि तं सिद्ध सहज सुइ) मुक्ति ही इष्ट है, वही सिद्धरूप है, इसमें स्वाभाविक रूचि होना यही सम्यग्दृष्टि है (नंतानंत सु सूषिमऊ) यही क्षायिक सम्यक्तका धारी अनन्तानन्त पदार्थोंको जानता हुआ परम सूक्ष्म अतीन्द्रिय होजाता है (जिन सुइ परम जिनु परम सरूव नवि) वही जिन है वही शुद्ध है वही जिनेन्द्र है, वही परम स्वरूपमें रहनेवाला है (चांदनु परम सु विनय मऊ) वही चन्दनके समान सुखपूर्ण है, वही परम मार्दव भावका धारी है ॥ १३ ॥

भावार्थ—इस स्तोत्रमें शुद्ध आत्माके स्वरूपका व उसकी प्राप्तिके उपायका वर्णन है। इसमें चांदन शब्द कई जगह आया है यद्यपि चन्दनके समान सुखपूर्ण अर्थ कर दिया गया है तथापि इस शब्दका ऐसा भी भाव होसक्ता है कि कोई चांदन नामका तारणस्वामीका शिष्य हो उसकी तरफ संकेत करके यह सिद्धपदका स्तोत्र कहा गया हो। क्योंकि विनयमऊ पद साथमें होनेसे विनयवान उसका विशेषण हो-सक्ता है। इस स्तोत्रका भाव यही है कि सिद्धपदकी रुचि ही सिद्धपदका कारण है। जिसने निश्चयनयकी प्रधानतासे भलेप्रकार यह समझ लिया है कि यह आत्मा सिद्धके समान शुद्ध, अमूर्तीक, सूक्ष्म, मन व इंद्रियोंसे अतीत, ज्ञानमई, दर्शनमई, परम वीतराग व निर्विकार है व यह परिणमनशील भी है ऐसा दृढ़ श्रद्धान निश्चय सम्यग्दर्शन है, ऐसा दृढ़ ज्ञान निश्चय सम्यग्ज्ञान है, ऐसे ही श्रद्धान ज्ञानमई भावमें तन्मय होना निश्चय सम्यक्चारित्र है। इस रत्नत्रयकी एकताको स्वात्मानुभव कहते हैं। यह आत्मरूप ही भाव है। यह मोक्षका साक्षात् साधन है। जो इस शुद्ध भावमें रमण करता है उसके वीतरागभावके प्रतापसे मोहका नाश होकर अरहन्त पद प्रगट होजाता है जिसमें केवलज्ञान स्वभाव अनन्तानन्त पदार्थोंका ज्ञान रखता है। यही अरहन्त फिर चार अघातीय कर्मोंके क्षयसे सिद्ध होजाते हैं। श्रीतारणस्वामी जोर देकर कहते हैं यदि हे भव्यो! तुमको सिद्धपदकी प्राप्ति करनी है तो इस मार्गका सेवन करो। निश्चिन्त हो आत्माके बागमें क्रीड़ा करो। इससे यहां भी आनन्द होगा व आनन्दमई पद प्राप्त होगा। एक बात खास इसमें बताई है कि आत्माको परिणमनशील माननेसे ही यह संसार अवस्थाको त्यागकर मुक्त होसक्ता है, कूटस्थ नित्य माननेसे बन्ध व मोक्ष बन नहीं सक्ता है। श्री योगसारमें श्री योगेन्द्रदेव कहते हैं—

जो अप्पा सुद्ध वि मुणइ असुइसरीरविभिण्णु। सो जाणइ सच्छइ सयलु सासयसुक्खहलीणु ॥ ९४ ॥

वज्जिय सयलवियप्पयइं परमसमाहि लहंति। जं वेददि साणंद फुडु सो सिवसुक्ख भणंति ॥ ९६ ॥

भावार्थ—जो आत्माको इस अशुचि शरीरसे भिन्न शुद्ध अनुभव करता है वह अविनाशी सुखमें लीन होकर सर्व शास्त्रोंको जानता है। जो कोई सर्व विकल्पोंको छोडकर परम समाधिको पाते हैं वे जिस आनन्दको भोगते हैं उसीको मोक्षका सुख कहते हैं।

वास्तवमें एकान्तमें बैठकर जो इस स्तोत्रको मनन करेगा वह आत्मानुभवको पाएगा। अथवा इस

स्तोत्रको बहुत भव्य जीव मिलकर पढ़ेंगे व बाजेके साथ गाएंगे उनका आत्माकी तरफ ध्यान जाएगा। यह परम कल्याणकारी स्तोत्र है।

(५७) हितकार श्रेणी गाथा ११४७ से ११८२ तक।

उव उवन उवन वीरु, विन्यान रमाई रे; उव उवन समय नन्ता न्यान सहाई रे।
तं न्यान विन्यान सहावे उवन रमाई रे, सुइ समय उवन वीर मुक्ति लहाई रे ॥ १ ॥
उव उवन उवन उव उवन सहाई रे, उव उवन अन्मोय स न्यानी मुक्ति लहाई रे।
एहु मुक्ति लहाई चरन सिरि मुक्ति लहाई रे, एहु मुक्ति लहाई जिनय जिन मुक्ति लहाई रे ॥
एहु मुक्ति लहाई उवन जिन मुक्ति " रे, एहु मुक्ति लहाई समय जिन मुक्ति लहाई रे ॥२॥(आ०)
उव उवन उवन वीरो स्रेनि सहाई रे, उव उवन अन्मोये स्रेनि उवन रमाई रे।
उव उवन अन्मोये स्रेनि मुक्ति लहाई रे, उव उवन सहावे कलनि सिरि स्रेनि " रे ॥ उव० ॥३॥
उव उवन उवन स्रेनि कलन सहाई रे, तं कलन उवन उवने रयन सहाई रे।
विपि दिप्ति रमन रूव रमन रमाई रे, कम कमऊ कलन रंजु उवन " रे ॥ उव० ॥४॥
तं चरन उवन उवने मै रमन " रे, तं रयन उवन उवने चरन चराई रे।
तं रयन रमन रै सुवन सहाई रे, तं चरन चरिय सिद्धि मुक्ति लहाई रे ॥ उव० ॥५॥
हिययार कलन स्रेनि उवन " रे, पद पद्म रमन स्रेनि उवन सहाई रे।
तं उवन उवने वय रमन रमाई रे, सुत्र सुयं रमन रुव रमन " रे ॥ उव० ॥६॥
मै मयन चरन तं ममल " रे, गम गमन अगम रै उवन " रे।
हिय उवन अगम रै उवन " रे, हंसा हिय रमन कम कमऊ " रे ॥ उव० ॥७॥

जं वज्ज ग्रहन वज्र जे उवन महाई रे, तं उवन उवने न्यान विन्यान रमाई रे।
वसु रमन रयन रै रयन सहाई रे, अन्मोय कलन सेनि मुक्ति लहाइ रे ॥ उव० ॥८॥
जं विनय सिरी सुइ सुवन सहाई रे, तं उवन उवन वै सुवन रमाई रे।
तं उवन उवने विनय सुइ सुवन " रे, तं गमन लष्य विनि अगम " रे ॥ उव० ॥९॥
तं विनय सिरी वज्र सयन सहाई रे, अन्मोय कलन सेनि उव उवन " रे।
अन्मोय सहावे उव उवन " रे, संजुत्तु उवन अन्मोये मुक्ति लहाई रे ॥ उव० ॥१०॥
जं कर्न सिरी हिय रमन " रे, तं सेनि सहावे उव उवन रमाई रे।
तं कर्न सिरी उव उवन " रे, पय रमन धरन सिय सिद्धि लहाई रे ॥ उव० ॥११॥
जं हिये रमन सेनि रमन रमाई रे, तं उवन उवने षिम रमन सहाई रे।
सुई सेनि अन्मोए नन्ता ममल " रे, अन्मोय कलन सुइ सिद्धि " रे ॥ उव० ॥१२॥
जं नन्द सिरी सुइ सेनि सहाई रे, तं उवन उवन तं उवन रमाई रे।
तं पदम रंजु सह रंज सुभाई रे, तं ममल रंजु जिन रंजु सहाई रे ॥ उव० ॥१३॥
सुइ रमन सुयं सुइ रमन सहाई रे, अन्मोय कलन सिरि नन्द " रे।
हिययार रमन तं ममल रमाई रे, अन्मोय हिययार कलन सिरि मुक्ति लहाई रे ॥ उव० ॥१४॥
तं नन्द उवन विनय सुइ सुवन सुभाई रे, तं सहज सिरी आनन्द सहाई रे।
अन्मोय कलन सुइ रमन रमाई रे, तं नन्द संजुत्तु सुइ ममल सहाई रे ॥ उव० ॥१५॥
आनन्द सिरी हिय सेनि सहाइ रे, तं उवन उवने विनय सुवन रमाई रे।
जय रमन पदम रंजु ममल सुभाई रे, विन्यान वियरे रमन रमाई रे ॥ उव० ॥१६॥

अन्मोय कलन सेनि मुक्ति रमाइं रे, कलि कलन अन्मोए सुइ सिद्धि लहाई रे।
जं समय सिरी सुइ सेनि सहाई रे, तं उवन उवने सुव उवनु सहाई रे ॥ उव० ॥१७॥
सुइ अनय रंजु अन्मोय रमाई रे, सुइ उवन उवने तव सिरीय ,, रे।
जं वज्र सहाई समय सिरी सयन सहाई रे, हिययार सहावे उव उवन रमाई रे ॥ उव० ॥१८॥
उव उवन उवन उव उवन रमाइ रे, हिययार जै रमन सुयं सुव सुवन सहाई रे।
तं उवन सहावे सह सहज सुभाई रे, अन्मोय कलन सिरी मुकति लहाई रे ॥ उव० ॥१९॥
जं समय सिरी सुइ वज्र सहाइ रे, अन्मोय उवन उवने सेनि सहाइ रे।
तं उवन उवने वै रमन सुभाई रे, सुइ सुयं सुवन रंज उवन सुभाई रे ॥ उव० ॥२०॥
सुइ उवन सहज रंजु सहज सुभाई रे, सुइ उवन उवन सुइ कलन सहाई रे।
तं उवन रयन सिरि रमन रमाई रे, अन्मोय कलन सिरी सिद्धि लहाइ रे ॥ उव० ॥२१॥

कमल चरन सुइ कर्न जिनुत्तं, हंम सुवन अवयाम संजुत्तं।
दिप्ति सुदिप्ति अभय जिन रमना, सु अर्क अर्थविंद सिद्धि सुगमना ॥२२॥
नन्द आनन्द समय सुइ उवना, हिययार अलष अगम जिन रमना।
सहयार रमन सुइ रंज जिनुत्तं, उवन पिपन सुइ ममल सिधि रत्तं ॥ २३ ॥
उवन अर्क सुइ उवन जिनुत्तं, विन्यान वीस चौ उवन संजुत्तं।
सहयार हियार उव उवन सुइ रमना, सुइ उवन सहावे सिद्धि सु गमना ॥ २४ ॥
कलिय करन सुइ कर्न उवन जिनुत्तं, उवन कमल सुइ चरन संजुत्तं।
कलन कमल सुव कर्न सुरत्तं, अन्मोय कमल सुइ सिधि सम्पत्तं ॥ २५ ॥

विंद विन्यान समय दिपि महिं, सुनन्द माह हियार जिनुतं ।
सहयार वज्र सुइ सेनि अन्मोयं, सुहम मय कमल वलि मुक्ति रंजो ॥ २६ ॥
जं सुवन सिरी जिन सेनि महाई रे, अन्मोय उवन सुइ कलन रमाई रे ।
सुइ उवन रंज सुइ सेनि सहाई रे, तं दिसि रमन जिन रमन जिनाई रे ॥ २७ ॥
तं उवन उवन सुइ सुवन सहाई रे, सुइ नयन सिरी तं पउ मन लाई रे ।
जय जयन सिरी जिन रमन रमाइ रे, अन्मोय कलन कर्न मुक्ति लहाई रे ॥ २८ ॥
अवयास सिरी जं सेनि सहाई रे, तं उवन उवने सुत्र सप्त सहाई रे ।
तं सुवन रंजु सुव सुवन " रे, तं कमल रंजु सह रंज " रे ॥ २९ ॥
तं मयन रंजु कर्न रंजु " रे, मन रंजु लषन रंजु सुभाई रे ।
तं उवन उवन सुइ सहज सुभाई रे, तं विलय सिरी तं न्यान सहाई रे ॥ ३० ॥
त उवन उवन सुइ सहज " रे, तं निलय सिरी तं न्यान " रे ।
तं सहज सिरी जिन जिनय रमाई रे, अन्मोय कर्न सुइ सिद्धि लहाई रे ॥ ३१ ॥
जं दिसि सिरी दिपि दिसि रमाई रे, उवन उवन वय रमन सहाई रे ।
लषन रंजु तं ममल सुभाई रे, रमन रंजु तं विमल सहाई रे ॥ ३२ ॥
तं रमन रंजु तं सुवन सहाई रे, जं सुवन उवन सुइ रमन सहाई रे ।
षिपन जयन जय लषन जिनाई रे, अन्मोय कलन कर्न सुइ सिद्धि लहाई रे ॥ ३३ ॥
सु दिसि सिरी जिन सेनि सहाई रे, तं उवन उवने उव उवन सहाई रे ।
त षिपक सेनि गमन रंजु " रे, सुवन सेनि रमन रंजु " रे ॥ ३४ ॥

उवन रंजु लषन सेनि सहाई रे, पदम रंजु पर परम सुभाई रे।
सुइ सुवन उवन उव उवन सुभाई रे, अन्मोय कर्न तं मुक्ति लहाई रे॥ ३५ ॥
जं मदन गमन उवन सिरीय सहाई रे, सुइ सुवन उवन सुइ न्यान सहाई रे।
तं न्यान विन्यान सुव सुवन रमाई रे, अन्मोय कलन कर्न सिद्धि लहाई रे॥ ३६ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन उवन वीर, विन्यान रमाई रे) हे वीर पुरुष! सम्यग्दर्शनका प्रकाश करके तू आत्मज्ञानमें रमण कर (उव उवन समय न्यान सहाई रे) सम्यग्दृष्टी आत्माकी परिणति ही अनन्तज्ञानके प्रकाशका कारण है (तं न्यान विन्यान सहावे उवन रमाई रे) जो ज्ञानी आत्मीक ज्ञानके स्वभावमें प्रगट रूपसे रम जाता है (सुइ समय उवन वीर मुक्ति लहाई रे) हे वीर! वही आत्मा ही प्रकाशमान होकर मुक्तिको पाता है ॥ १ ॥

(उव उवन उवन उव उवन सहाई रे) सम्यग्दर्शनका उदय परमावगाढ़ सम्यग्दर्शनके लिये सहकारी है जो तेरहवें गुणस्थानमें होता है (उव उवन अन्मोय स न्यानी मुक्ति लहाई रे) जो इस सम्यग्दर्शनके भीतर आनन्दित रहता है वही ज्ञानी मुक्ति पाता है (एहु मुक्ति लहाई चरन सिरी मुक्ति लहाई रे) हे भाई! मुक्ति वही पाता है, जो चारित्ररूपी लक्ष्मीसे विभूषित होता है (एहु मुक्ति लहाई जिनय जिन मुक्ति लहाई रे) हे भाई! मुक्ति वही पाता है, जो कर्मोंको जीतकर जिन होजाता है (एहु मुक्ति लहाई उवन जिन मुक्ति लहाई रे) हे भाई! मुक्ति वही पाता है, जो अरहन्त हो वीतराग भावको प्रगट कर देता है (एहु मुक्ति लहाई समय जिन मुक्ति लहाई रे) हे भाई! मुक्ति वही पाता है, जो आत्मा श्री जिनेन्द्र होजाता है ॥ २ ॥

(उव उवन उवन वीरो सेनि सहाई रे) हे वीरो! सम्यग्दर्शनका प्रकाश ही मोक्षके मार्गमें सहायक है (उव उवन अन्मोय सेनि उवन रमाई रे) जो कोई सम्यग्दर्शनमें आनन्दित होता है वही मोक्षमार्गरूपी आत्मानुभवके प्रकाशमें रमण करता है (उव उवन अन्मोय सेनि मुक्ति लहाई रे) सम्यक्तभावके द्वारा आनन्दित होते हुए मोक्षमार्गपर चलकर जीव मुक्ति प्राप्त कर लेता है (उव उवन सहाये कलन सिरि सेनि रमाई रे) इस सम्यग्दर्शनकी सहायतासे ही आत्मानुभूतिरूपी लक्ष्मी मोक्षमार्गमें रमण करती है ॥ ३ ॥

(उव उवन उवन सेनि मुक्ति लहाई रे) जैसे २ सम्यग्दर्शनका प्रकाश बढ़ता जाता है वैसे २ ही उसकी

सहायतासे स्वात्मानुभवरूपी मोक्षमार्गमें रमण होता जाता है (तं कलन उवन उवने रयन सहाई रे) उस आत्मानुभवके उदयमें सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्ररूपी रत्नोंकी सहायता है (दिपि दिप्ति मन कब रमन रमाई रे) प्रकाशमान आत्मीक ज्ञानमें रमण करना सो ही आत्माके स्वरूपमें रमण करना है (कम कमल कलन रंजु रवन पद ई रे) सम्यग्दर्शनकी सहायतासे ही रमणीक कमल समान आत्मा आपके अनुभवमें रंजायमान होजाता है ॥ ४ ॥

(तं चरन उवन उवने मे रमन रमाई रे) जब सम्यग्दर्शन सहित चारित्रका प्रकाश होता है तब उसीके परिणमनमें रमण करता हुआ आनन्दित होता है (तं रयन उवन उवने चरन चराई रे) तब रत्नत्रयके प्रकाशके होते हुए स्वरूपाचरण चारित्रमें ही वर्तन होता है (तं रयन रमन रै सुवन सहाई रे) जब रत्नत्रयमें रमण होता है तब वह रमण आत्मानन्द रूपी शांत अमृतके वेगके लिये कारण है (तं चरन चरिय सिद्धि मुक्ति कहाई रे) जो स्वरूपाचरणमें चलते हैं वे आत्माकी सिद्धि पाकर मुक्तिको पालेते हैं ॥ ५ ॥

(हिययार कलन सेनि उवन सहाई रे) सम्यग्दर्शनकी सहायतासे मोक्षमार्गका हितकारी अभ्यास होता है (पद पदम रमन सेनि उवन सहाई रे) सम्यक्तकी मदद्से आत्मीक कमलके पद्में रमण होता है, यही मोक्षमार्ग है (तं उवन उवने वय रमन रमाई रे) उसी सम्यक्तके उदयमें व्रतोंके भीतर रमण होता हुआ आनन्दका अनुभव होता है (सुव सुयं रमन सुव रमन सहाई रे) जो कुछ स्वयं अपनेसे आत्मामें रमण है सो ही सदा काल आत्मरमण रूपी मोक्षका सहकारी है ॥ ६ ॥

(मै मयन चरन तं ममल रमाई रे) चारित्रमें परिणमन करना सो ही शुद्ध स्वरूपमें रमण करना है (गम गमन अगम रै उवन सहाई रे) इन्द्रिय व मनसे अगोचर ऐसे अगम आत्मामें लगातार प्रवाह रूप जमना सो सम्यग्दर्शनकी सहायतासे होता है (नोट—यहां उवनका भाव उदय रूप सम्यक्त है) (हिय उवन अगम रै उवन रमाई रे) हितकारी सम्यग्दर्शनके प्रतापसे आत्मामें बड़े२ वेगसे जमकर रमना होता है (हंसा हिय रमन कम कमल सहाई रे) आत्मारूपी हँस प्रेमसे रमण करता है उसमें उस सुन्दर आत्मा हीकी सहायता है, परकी सहायता नहीं है ॥ ७ ॥

(जं बज्र ग्रहन बज्र जे उवन सहाई रे) कर्मरूपी पर्वतोंको चूर्ण करनेवाला वज्रमय आत्मध्यान है। जो इस आत्मध्यानरूपी वज्रको ग्रहण करता है तो उसकी इस वज्रसे विजय होजाती है, यही केवलज्ञानके

उद्यको सहकारी है (तं उवन उवने न्यान विन्यान रमाई रे) सम्यग्दर्शनके उदयसे ज्ञान ज्ञानमें रमण करता है (वसु रमन रयन रै नय रयन सहाई रे) सम्यक्त आदि आठ गुणधारी सिद्ध–स्वरूपमें रमण सो ही रत्नत्रयमें एकाग्र होना है। उसके लिये निश्चय रत्नत्रयको दिखानेवाली नय सहकारी है (अन्मोय कलन सेनि मुक्ति कहाई रे) आत्मानन्दका अभ्यास ही मोक्षमार्गमें सहाई है, इसीसे मुक्ति प्राप्त होती है ॥ ८ ॥

(जं विनय सिरी सुइ सुवन सहाई रे) जो रत्नत्रयमें विनयरूपी लक्ष्मी है सो ही आत्मानन्दरूपी अमृतके लाभमें सहायक है (तं उवन उवन वै सुवन रमाई रे) उस लक्ष्मीका जितना उदय होता है उतना ही इस आत्मानन्दरूपी अमृतके स्वादमें रमण होता है (तं उवन उवने विनय सुइ सुवन सहाई रे) उस रत्नत्रयमें विनय रखना सो ही आत्मानन्दरूपी अमृतका सहाई है (तं गमन कष्य विनि अगम रमाई रे) उसी रत्नत्रयके भीतर परिणमन करना है सो ही अलक्ष्य व अगम्य ऐसे सूक्ष्म आत्माके रूपमें रमण करना है ॥ ९ ॥

(तं विनय सिरी वज्र सयन सहाई रे) वह रत्नत्रयमें विनयरूपी लक्ष्मी वज्रके समान कर्मको चूर्ण कर आत्मामें लयता प्राप्त करनेमें सहाई है (अन्मोय कलन सेनि उव उवन रमाई रे) आत्मानन्दका अभ्यास सो ही मोक्षमार्गके उदयमें रमण करना है (अन्मोय सहाये उव उवन सहाई रे) वही आनन्द स्वभावके प्रकाशमें सहकारी है (संजुत्त उवन अन्मोये मुक्ति लहाई रे) जो सम्यग्दर्शनके साथ आत्मानन्दमें रमण करता है वह मुक्तिको प्राप्त कराता है ॥ १० ॥

(जं कर्न सिरी हिय रमन सहाई रे) जिन परिणामोंसे सम्यक्त व चारित्रका प्रकाश होता है उनको करण परिणाम कहते हैं। यही चारित्रको साधनेवाली लक्ष्मी है, वही हितकारी आत्मरमणमें सहकारी है (तं सेनि सहाये उव उवन रमाई रे) मोक्षके मार्गके स्वभावमें वह प्रकाश रूपसे रमण करती है अर्थात् जहां आत्मरमण है वही मोक्षमार्ग है (त कर्न सिरी उव उवन सहाई रे) वही करण परिणाम रूपी लक्ष्मी स्वभावके प्रकाशमें सहकारी है (पय रमन धरन सिय सिद्धि लहाई रे) उसी पदमें रमण करनेसे व उसीकी धारणासे व अचल समाधिसे निर्मल सिद्ध गति प्राप्त होती है ॥ ११ ॥

(जं हिये रमन सेनि रमन रमाई रे) जो हृदयमें आत्मरमण है वही मोक्षमार्गके भीतर रमना है (तं उवन उवने षिम रमन सहाई रे) सम्यग्दर्शनके प्रकाशमें ही यह योग्यता है जो आत्मरमणमें सहकारी हो (सुई सेनि अन्मोए नन्ता ममल रमाई रे) इसी आत्मरमण मोक्षमार्गके द्वारा शुद्ध व अनन्त आनन्दमें रमण होता है

(अन्मोय कलन सुइ सिद्धि सहाईं रे) आत्मानन्दका अभ्यास है वही सिद्धगति प्राप्तिका सहकारी है ॥ १२ ॥

(जं नन्द सिरी सुइ स्रेनि सहाईं रे) जो आत्मानन्दरूपी लक्ष्मी है वही मोक्षमार्गमें सहायकारी है (तं उवन उवन तं उवन रमाईं रे) वह आनन्द वारवार प्रगट होकर आत्मानन्दमें ही रमण करता है (तं पदम रंजु सह रंज सुभाईं रे) वही आत्मानन्दरूपी लक्ष्मी आत्मारूपी कमलमें रंजायमान होरही है। उसी आत्माके साथ वह बड़ी शोभनीक दीखती है (तं ममल रंजु सहाईं रे) उसी शुद्ध आनन्दकी मगनता श्री जिनेन्द्रके अनन्त सुखके प्रकाशमें सहाई है ॥ १३ ॥

(सुइ रमन सुयं सुइ रमन सहाईं रे) आपमें आप रमण करना सो ही आत्मध्यानका सहायक है (अन्मोय कलन सिरि नन्द सहाईं रे) आत्मानन्दका अभ्यास वही अनन्त सुख लक्ष्मीके प्रकाशका सहकारी है (हिययार रमन तं ममल रमाईं रे) हितकारी आत्म-रमण है सो ही शुद्धोपयोगके भीतर रमण करना है (अन्मोय हिययार कलन सिरी मुक्ति लहाईं रे) आत्मानन्दका हितकारी अभ्यास श्री मुक्ति लक्ष्मीको प्राप्त करता है ॥ १४ ॥

(तं नंद उवन विनय सुइ सुवन सुभाईं रे) आत्मानन्दके प्रकाशकी विनय करना सो ही आनन्दामृतका भोग है (तं सहज सिरी आनंद सहाईं) आनन्दकी विनय ही स्वभाव रूप आनन्द लक्ष्मीको प्रगटतामें सहकारी है (अन्मोय कलन सुइ रमन रमाईं रे) आनन्दका अभ्यास ही आत्माके रमणमें मग्न होना है (तं नंद संजुत्त सुइ ममल सहाईं रे) इसी आत्मानन्दके साथ वर्तन करना शुद्ध होनेका साधन है ॥ १५ ॥

(आनंद सिरी हिय स्रेनि सहाईं रे) आत्मानन्द रूपी लक्ष्मी हितकारी मोक्षमार्गमें सहायक है (तं उवन उवने विनय सुवन रमाईं रे) वह आनन्द लक्ष्मी प्रकाश रूप होकर बड़े विनयसे आनन्दामृतमें रम रही है (जय रमन पदम रंजु ममल सुभाईं रे) उस लक्ष्मीकी जय हो वह आत्मारूपी कमलमें रमकर मगन होरही है व शुद्धोपयोगकी भावना रूप है (विन्यान विपरे रमन रमाईं रे) वह ज्ञानके मध्यमें ही बड़े उत्साहसे रमण कर रही है ॥ १६ ॥

(अन्मोय कलन स्रेनि मुक्ति रमईं रे) आत्मानन्दके अनुभव करनेके ही मार्गसे मुक्तिमें रमण होता है (कलि कलन अन्मोए सुइ सिद्धि लहाईं रे) जो वीर आत्मानुभवके आनन्दको भोगता है वही सिद्धिको पाता है (जं समय सिरी सुइ स्रेनि सहाईं) जो आत्माके गुणोंकी लक्ष्मी है वही मोक्षमार्गमें सहाई है, उन गुणोंका ही मनन करना योग्य है (तं उवनु उवनें सुव उवनु सहाईं रे) उन हीके मननसे आत्मानुभवका प्रकाश होता है वही आत्मा सूर्यके विकाशमें सहाई है ॥ १७ ॥

८

(सुइ अभय रंजु अन्मोय रमाई रे) इस भय रहित आत्मामें रंजायमान होना ही भीतर रमना है (सुइ उवन उवने तव सिरीय सहाई रे) उसीके उदय होते हुए तप रूपी लक्ष्मी प्रगट होती है, जो परम सहकारी है (जं वज्र सहाई समय सिरी सयन सहाई रे) वह तप ही कर्मोंके चूर करनेको वज्र है, वही आत्माकी लक्ष्मीकी स्थिरतामें सहकारी है (हिययार सहावे उव उवन रमाई रे) वही हितकारी आत्माके स्वभावको प्रकाश करनेमें समर्थ स्वात्म रमण रूप है ॥ १८ ॥

(उव उवन उवन उव उवन रमाई रे) हे भाई ! प्रकाशरूप सम्यग्दर्शनके भीतर रमण करो (हियथार जे रमन सुयं सुव सुवन सहाई रे) परम हितकारी जय करानेवाले सम्यग्दर्शनमें रमण करना स्वयं आत्मसूर्यके विकाशका कारण है (तं उवन सहावे सह सहज सुभाई रे) उस सम्यक्तके स्वभावमें तिष्ठकर सहज ही आपकी भावना करनी चाहिये (अन्मोय कलन सिरी मुकति लहाई रे) आत्मानन्दका रमण ही परम ऐश्वर्य सहित मुक्तिका कारण है ॥१९॥

(जं समय सिरी सुइ वज्र सहाई रे) जो आत्मानुभवकी लक्ष्मी है वही कर्म पूर्ण करनेके वज्ररूप है (अन्मोय उवन उवने श्रेनि सहाई रे) वही आनन्दका प्रकाश है, वही आत्मानन्द मोक्षमार्गमें सहायी है (तं उवन उवने वै रमन सुभाई रे) उसी आत्मानन्दके प्रकाशमें यथार्थ व्रत व रत्नत्रयकी भावना होती है (सुइ सुयं सुवन रंज उवन सुभाई रे) वहीं आपमें तिष्ठकर मगन होकर आत्माकी भावना करना चाहिये ॥ २० ॥

(सुइ उघन सहज रंजु सहज सुभाई रे) स्वाभाविक मगनताका उदय होना ही सहज आत्माकी भावना है (सुइ उवन उवन सुइ कलन सहाई रे) यही आत्माकी भावना जितनी २ बढ़ती जाती है उतनी उतनी ही आत्माके रमणमें मदद मिलती जाती है (तं उवन रयन सिरी रमन रमाई रे) आत्मामें रमण करना ही रत्नत्रय-रूपी लक्ष्मीमें रमण होकर मग्न होना है (अन्मोय कलन सिरी सिद्ध सहाई रे) आत्मानन्दकी मगनता ही श्री सिद्धपदका कारण है ॥ २१ ॥

(कमल चरन सुइ कर्न जिनुत्तं) आत्माके विकसित कमल समान स्वभावमें आचरण करना ही मोक्षका कारण अर्थात् साधन है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (हंस सुवन अवयास संजुत्तं) वही आत्मारूपी हँसके क्रीड़ा करनेका सरोवर है जिसमें ज्ञान भरा हुआ है (दिप्ति सु दिप्ति अभय जिन रमना , ज्ञानके भलेप्रकार प्रकाशसे निर्भय जिन समान आत्मामें रमण करना है (सु अर्क अर्थ विन्द सिद्धि सु गमना) सो भलेप्रकार सूर्य समान आत्मा पदार्थका अनुभव है उसीसे ही सिद्धिपदमें गमन होता है ॥ २२ ॥

(नंद आनंद समय सुइ उवना) आत्मानन्दमें मगन होना सो ही प्रकाश है (हिययार अलष अगम जिन रमना) वही हितकारी, मन इंद्रियोंसे अतीत अलष व अगम्य आत्मारूपी जिनमें रमण करना है (सहयार रमन सुइ रंज जिनुत्तं) आत्माके साथ रमना है उसीको जिनेन्द्रने आत्मानन्दका विलास कहा है (उवन षिपन सुइ ममल सिधि रत्तं) सो ही उदयरूप पर्यायको क्षय करनेवाला है, सो ही शुद्ध सिद्धिपदमें अनुरक्त है ॥ २३ ॥

(उवन अर्क सुइ उवन जिनुत्तं) आत्मारूपी सूर्यका उदय या प्रकाश सो ही सच्चा प्रकाश है। ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (विन्यान बीस चौ उवन संजुत्तं) उसीके भीतर वही प्रकाश है जैसा ज्ञानका प्रकाश २४ तीर्थंकरोंमें होता है अर्थात् हरएक आत्मा तीर्थंकरोंके समान अनन्तज्ञान प्रकाशके स्वभावको रखनेवाला है (सहयार हियार उव उवन सु रमना) सहकारी व हितकारी इस आत्माके प्रकाशमें भलेप्रकार रमण करना योग्य है (सुइ उवन सहावे सिद्धि सु गमन) इसी रमणसे जब स्वभावका प्रकाश होजाता है अर्थात् केवलज्ञान होजाता है तब यह आत्मा सिद्धगतिको पालेता है ॥ २४ ॥

(कलिय कलन सुइ कर्न उवन जिनुत्तं) आत्मारूपी कमलकी कलीका अनुभव है सो ही मोक्षके साधनका उदय है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (उवन कमल सुइ चरन संजुत्तं) आत्मारूपी कमलका प्रकाश होना ही रागद्वेषके संकुचित भावको दूरकर समभावसे प्रफुल्लित होना ही चारित्रका संयोग है (कलन कमल सुव कर्न सु रत्तं) आत्मारूपी कमलका अनुभव है सो ही मोक्ष साधनमें भलेप्रकार लग जाना है (अन्मोय कमल सहसिधि संरत्तं) इसी कमल सम आत्मामें आनन्दित होना ही सिद्धि प्राप्तिका उपाय है ॥ २५ ॥

(विंद विन्यान समय दिपि सहियं) जब आत्माका प्रकाश ज्ञानके भीतर अनुभवरूप होता है अर्थात ज्ञान चेतनारूप परिणमता है (सुनंद साह हिययार जिनुत्तं) वही आनन्दरूप हितकारी साधन है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (सहयार वज्र सुइ सेनि अन्मोयं) वही कर्म चूर्ण करनेको वज्र समान है, वही आनन्द सम मोक्षमार्ग है (सह समय कमल कलि मुक्ति संजोयं) वही मानों एक हजार पांखड़ीका कमल है जो मुक्तिसे संयोग करता है अर्थात् जैसे किसी देवीको एक हजार पत्तेका कमल चढ़ाया जावे वैसे ही यह आत्मा अपने अनन्त गुणोंसे विकसित होकर मुक्ति स्त्रीके पास पहुँचता है ॥ २६ ॥

(जं सुवन सिरी जिन सेनि सहाई रे) यह जो आत्मामें परिणमनरूपी लक्ष्मी है वही जिन होनेके मार्गमें सहाई है (अन्मोय उवन सुइ कलन रमाई रे) यहां जो आनन्दका उदय है, सो ही आत्माके भीतर जमकर

उसका रमण करना है (सुइ उवन रंज सुइ सेनि सहाई रे) वही आत्माके प्रकाशमें मगनता है, वही मोक्षमार्ग है, वही साधन है (तं दिप्ति रमन जिन रमन जिनाई रे) वही ज्ञानमें रमण है, वही श्री जिन स्वभावमें रमण है, वही जिनेन्द्रका स्वभाव है ॥ २७ ॥

(तं उवन उवन सुइ सुवन सहाई रे) आत्मामें ज्ञानका लगातार उदय रहना ही आत्माके परिणमनमें सहकारी है (सुइ नयन सिरी तं पउ मन लाई रे) वही निश्चयनयकी लक्ष्मी है, उसीके स्वभावमें मन लगा दिया है। अर्थात् निश्चयनय द्वारा जाननेयोग्य शुद्ध आत्मामें मनको जोड़ दिया है (जय जयन सिरी जिन रमन रमाई रे) वही कर्मको जीतनेवाली लक्ष्मी है, वही जिनके स्वभावमें रमण करनेवाली है (अन्मोय कलन कर्न मुक्ति लहाई रे) आत्मानन्दका अनुभव ही साधन है जिससे मुक्ति प्राप्त होती है ॥ २८ ॥

(भवयास सिरी जं सेनि सहाई रे) ज्ञानरूपी लक्ष्मी ही जिन होनेके मार्गमें सहाई है (तं उवन उवने सुय सप्त सहाई रे) उस आत्मीक ज्ञानके उदयमें सात तत्वोंका ज्ञान सहायक है-जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, सवर, निर्जरा, मोक्ष इन सात तत्वोंके मननसे ही आत्माका यथार्थ ज्ञान होता है (तं सुवन रंजु सुव सुवन सहाई रे) आत्माकी परिणतिमें आनन्द मानना ही आत्माकी उन्नतिमें सहायक है (तं कमल रंज सह रंज सहाई रे) आत्मारूपी कमलमें आनन्दित होना ही अनन्त सुखका कारण है ॥ २९ ॥

(तं मयन रंजु कर्न रंजु सहाई रे) आत्माके ज्ञानमें मगन होना ही मोक्ष साधनमें मगन होना है। यही मगनता मोक्ष साधक है (मन रंजु लष्यन रंजु सुभाई रे) आत्मीक ज्ञान लक्षणमें मगन होनेसे व भावना करनेसे मन प्रसन्न होजाता है (तं उवन उवन सुइ सहज सुभाई रे) आत्मज्ञानका उदय होना ही सहजमें आत्माकी भावना करनी है (तं निलय सिरी तं न्यान सहाई रे) आत्मा ही आत्मज्ञानरूपी लक्ष्मीका निवास है, उसीका अनुभव केवलज्ञानके लिये सहकारी है ॥ ३० ॥

(तं उवन उवन सुइ सहज सुभाई रे) आत्माका अनुभव है सो ही स्वाभाविक भावना है (तं निलय सिरी तं न्यान सहाई रे) वही मोक्षरूपी लक्ष्मीका घर है, वही केवलज्ञानका कारण है (तं सहज सिरी जिन जिनय रमाई रे) वही स्वाभाविक आत्माकी लक्ष्मी है, जो श्री जिनेन्द्रमें रमण करनेवाली है (अन्मोय कर्न सुइ सिद्धि सहाई रे) उसीमें आनन्दका लाभ सो ही वह साधन है जिससे मोक्षका लाभ होता है ॥ ३१ ॥

(जं दिप्ति सिरी दिपि दिप्ति रमाई रे) जो आत्मप्रकाशरूपी लक्ष्मी है सो आत्माके प्रकाशमान ज्ञानमें

ही रमण करनेवाली है (उवन उवन वय रमन सहाई रे) वही प्रकाश करती हुई व्रतोंके रमणमें या निश्चय आच-रणमें सहाई है (लषन रंजु तं ममल सुभाई रे) उसका लक्षण आत्मानन्द है वहां शुद्ध भावना है (रमन रंजु तं विमल सहाई रे) आत्मानुभवमें रंजायमान होना ही कर्म मैलको काटनेवाला है ॥ ३२ ॥

(तं रमन रंजु तं सुवन सहाई रे) आत्माके रमणमें आनन्दका पाना ही आत्माकी उन्नतिका कारण है (जं सुवन उवन तं रमन सहाई रे) जेसी २ आत्मोन्नति होती जाती है वैसी वैसी ही रमणता बढ़ती जाती है (षिपन जयन जय लषन जिनाई रे) उसीसे ही कर्मोंका क्षय होता है, उसीसे मोहपर विजय प्राप्त होती है, उसका लक्षण ही विजय करना है, वह विजयरूप है (अन्मोय कलन कर्न सुई सिद्धि लहाई रे) आत्मानुभवमें आनन्द पाना ही वह साधन है जिससे सिद्ध गति होती है ॥ ३३ ॥

(सु दिप्ति सिरी जिन सेनि सहाई रे) आत्म प्रकाशरूपी लक्ष्मी ही जिनपदके मार्गमें सहाई है (तं उवन उवने उव उवने सहाई रे) वह जैसी२ प्रकाश करती है वैसी२ ही जिनपदकी प्राप्ति होती जाती है (तं षिपक सेनि गमन रंजु सहाई रे) उसीसे ही क्षपकश्रेणीपर गमन होता है जहां पर चढ़कर मोहका क्षय किया जाता है, वही आत्मानन्दको देनेवाली है (सुवन सेनि रमन रंजु सुहाई रे) आत्मोन्नतिके मार्गमें रमणता आनन्दको बढ़ाने-वाली है ॥ ३४ ॥

(उवन रंजु लषन सेनि सहाई रे) आत्माके प्रकाशमें आनन्द होना ही वह लक्षण है जो मोक्षमार्ग है व मोक्षका सहकारी है (पदम रंजु पर पाम सुभाई रे) आत्मारूपी कमलमें आनन्द मानना ही परम उत्कृष्ट भावना है (सुइ सुवन उवन उव उवन सुभाई रे) वही आत्मोन्नतिका प्रकाश यथार्थ आत्मप्रकाशकी भावना है (अन्मोय कर्न तं मुक्ति लहाई रे) उसीमें आनन्द मानना वह साधन है जिससे मुक्ति होती है ॥ ३५ ॥

(जं मदन गमन उवन सिरीय सहाई रे) उसीसे कामदेवका भाव चला जाता है व ब्रह्मचर्यकी लक्ष्मी प्रगट होजाती है (सुइ सुवन उवन सुइ न्यान सहाई रे) वही आत्मोन्नतिका साधन है, वही केवलज्ञानका कारण है (तं न्यान विन्यान सुव सुवन रमाई रे) ज्ञान स्वभावकी परिणतिमें रमण करना ही साधन है (अन्मोय करन कर्न सिद्धि लहाई रे) आत्मानुभवमें आनन्दका अनुभव वह करण है या उपाय है जिससे सिद्धि प्राप्त होती है॥ ३६॥

भावार्थ—इस आत्मीक भावनासे आत्मानुभव रूपी मोक्षमार्गका वारवार मनन किया गया है। वास्तवमें अध्यात्म भाव मिश्री व अमृतकी डली है जिसको जितनी वार भी चूसा जायगा परम मिष्ट

आत्मीक रसका स्वाद आयगा। मोक्षका मार्ग कहीं आत्मासे बाहर नहीं है। यद्यपि सात तत्वोंके ज्ञान व श्रद्धानसे आप और परका यथार्थ ज्ञान होता है तब ही भेदविज्ञान जगता है। भेदविज्ञानके प्रतापसे जब आत्माका भलेप्रकार मनन होता है तब यकायक सम्यग्दर्शनका उदय होता है। निश्चय सम्यग्दर्शनके उदय होते ही आत्मानुभवकी शक्ति होजाती है। जब जितना २ आत्मानुभव होता है उतना २ आनन्द आता है, उतना २ ही आत्मबल बढ़ता जाता है तब और भी अधिक रमणता आत्मामें होती है। आत्मामें रमण करना ही वह वज्र है जो कर्मोंको चूर्ण करता है, इसीके अभ्याससे यह आत्मा क्षपकश्रेणीपर चढ़कर पहले मोह कर्मको क्षयकर फिर तीन घातीयको क्षयकर अरहन्त होजाता है, फिर उसी आत्म-रमणके प्रतापसे शेष अघातीय कर्मोंका भी क्षय करके सिद्ध होजाता है। मोक्षके लिये हितकारी श्रेणी आत्मानुभव ही है। इस मार्गपर आरूढ़ भये विना व्यवहार चारित्र मोक्षका साधक नहीं है। आत्मानुभव ही सच्चा चारित्र है जो आनन्दका अनुभव करता है और कर्म बन्धको काटता है। इसलिये श्री तारणस्वामी कहते हैं कि-हे वीर! यदि तू सच्चा वीर है तो कमर कसले और कर्मोंका क्षय करनेके लिये वज्र समान आत्मध्यानको ग्रहण कर और परम वीरताके साथ कर्मोंका क्षय कर। वीतरागभावकी वृद्धि ही आत्मोन्नतिका कारण है। संसारवनसे छूटकर सिद्धगति प्राप्त करना अपना ध्येय होना चाहिये जिससे आत्मा अनन्त कालके लिये सुखी होजावे। मोक्षमार्ग जरा भी कष्टरूप व आकुलतारूप नहीं है, वह बिलकुल निराकुल आत्मानन्दरूप है। श्री योगसारमें कहते हैं—

अप्पा दंसणु णाण मुणि अप्पा चरणु वियाणि। अप्पा संजम सील तउ अप्पा पच्चक्खाणि ॥ ८० ॥

जहिं अप्पा तहिं सयलगुण केवलि एम भणंति। तिहिं कारण ए जीव फुडु अप्पा विमल मुणंति ॥ ८४ ॥

अप्पसरूवह जो रमइ छंडवि सहुववहारु। सो सम्माइट्ठी हवह लहु पावइ भवपारु ॥ ८८ ॥

भावार्थ—यह अपना शुद्ध आत्मा ही सम्यग्दर्शन है, यही ज्ञान है, यही आत्मा चारित्र है, यही आत्मा संयम है, यही शील है, यही तप है, यही आत्मा प्रत्याख्यान या त्याग है ऐसा जानो या मनन करो ॥ ८० ॥ जहां आत्माका अनुभव है वहां सर्व गुण आजाते हैं ऐसा केवली भगवान कहते हैं। इसलिये हे जीव! तू भलेप्रकार निश्चिन्त होकर निर्मल आत्माका अनुभव कर ॥ ८४ ॥ जो सर्व व्यवहार छोड़कर आत्माके स्वभावमें रमण करता है वही वीतराग सम्यग्दृष्टी है, वही शीघ्र ही संसारको पार कर लेता है ॥ ८८ ॥

(५८) राछडो भवियन फूलना गाथा ११८३ से ११९६ तक।

नन्द आनन्दह नन्द जिनु, भवियन, चेयन नन्द सहाउ, भवियन।
गुरु गुरुओ जिन नन्द जिन, सहज नन्द ससहाउ, भवियन ॥
परमानन्द महाउ भवियन, गुरु गुरुओ जिन नन्द जिनु ॥ १ ॥
अप्पा अप्पै मो सुनहु भवियन, सुद्धय ममल मरूव, भवियन।
गुरु गुरुओ जिननन्द जिनु, परम सुभावह परम मुनि, भवियन ॥
नमि परमप्प सहाउ भवियन, गुरु गुरुओ जिन नन्द जिनु ॥ २ ॥
पंच इष्टि परमेष्टि मउ, भवियन, श्री सहकार स उत्तु, भवियन।
गुरु गुरुओ जिन नन्द जिनु, लषियो लष्य अलष्य मउ, भवियन ॥
षिपनिक रूवे रूवे, भवियन, गुरु गुरुओ जिन नन्द जिनु ॥ ३ ॥
मै मूर्ति न्यान विन्यान मौ, भवियन, नो उत्पन्न सहाउ, भवियन।
गुरु गुरुओ जिन नन्द जिनु, समय संजुत्तु समय मउ, भवियन ॥
श्री लषि मन उत्तु, भवियन, गुरु गुरुओ जिन नन्द जिनु ॥ ४ ॥
ॐवंकार उवन मौ, भवियन, उत्पन्नह उवन सहाउ, भवियन।
गुरु गुरुओ जिननन्द जिनु, ममल सरूवे ममल पउ, भवियन,
यं श्री लषियन भाउ, भवियन, गुरु गुरुओ जिननन्द जिनु ॥ ५ ॥
ह्रींकार हिययार मौ, भवियन, ह्रीं हुंकार सरूव, भवियन। गुरु गुरुओ० ॥
भय षिपिय भव्वु तं मुक्तिपउ, भवियन, यं श्री लषियन रूव, भवियन। गुरु० ॥ ६ ॥

श्रींकारह समहाउ मुनि, भवियन, सहजनन्द ससरूव, भवियन । गुरु० ॥
अमिय सरूवं ममल पउ, भवियन, य श्री लषि मन उत्तु भवियन । गुरु० ॥७॥
उववन दिस्टि हिययार मौ भवियन, सहकारह ममल सुभाउ, भवियन । गुरु०
धर्मह सहियो तिअर्थ मौ, भवियन, यं श्री लषि मन भाउ, भवियन, । गुरु० ॥ ८ ॥
हिययारह स भाउ मुनि भवियन, उत्पन्नह रिष्टि संजुत्तु, भवियन । गुरु० ॥
सहकारह ममल सहाउ मौ, भवियन, भय षिपिय सिद्धि सम्पत्तु, भवियन। गुरु० ॥९॥
सहकार दृष्टि हिययार मौ, भवियन, उववन्नह अमिय सरूव, भवियन । गुरु० ॥
धर्म सहाओ सु सिद्धि पौ, भवियन, यं श्री लषि मन सूर, भवियन । गुरु० ॥१०॥
अथति अर्थह ममल पौ, भवियन, पद् कमलह संजुत्तु, भवियन । गुरु० ॥
कमल सहावे रमन पौ, भवियन, भय षिपनिक लंकृत उत्तु, भवियन । गुरु० ॥११॥
अर्थति अर्थह भय रहिओ, भवियन, मोहह भवह विनासु, भवियन । गुरु० ॥
दिष्टि झडप मौ गलि गई भवियन, य श्री लषि मनिसूर, भवियन । गुरु० ॥१२॥
जान उवनौ न्यानमउ, भवियन, पद विंदह न्यान विन्यानु, भवियन । गुरु० ॥
सर्वन्यह स महाउ मौ, भवियन, भय विनास तं भव्वु, भवियन । गुरु० ॥१३॥
अमिय पयोहर पर्म मौ, भवियन; धर्मह ममल विन्यानु, भवियन । गुरु० ॥
यं श्री लषि मन लष्य मौ, भवियन, भव्वु सिद्धि सम्पत्तु, भवियन । गुरु० ॥१४॥

अन्वय सहित अर्थ—(नन्द आनन्दह नन्द जिनु भवियन) हे भव्य जीवो ! आनन्दमें मगन श्री जिनेन्द्रके समान अपनेको जानकर आत्मानन्दका आनन्द भोग करो (चेयानन्द सहाउ) आत्माका स्वभाव चिदानन्द है

(गुरु गुरुओ जिन नन्द जिन) सर्व गुरुओंमें बड़े श्री वीतराग आनन्दमई जिन भगवान हैं (सहज नन्द ससहाउ) वे सहजानन्दी हैं वैसा ही इस आत्माका स्वभाव है (परमानन्द सहाउ) इस आत्माका परमानन्द स्वभाव है ॥१॥

(अप्पा अप्पै सो मुनहु भवियन) हे भव्यजीवो ! आत्मा हीके द्वारा आत्माका मनन करो (सुद्धव ममल सरूव) जिसका स्वरूप शुद्ध है रागादि मल रहित निर्मल है (परम सुभावह परम मुनि) उसे उत्कृष्ट स्वभावका धारी परमात्मारूप ही मानो (नमि परमप्प सहाउ) परमात्माके स्वभावको नमन करके-अर्थात् श्री सिद्ध भगवानको अपने भावोंमें प्रीतिपूर्वक धारण करके द्रव्य दृष्टिसे अपनेको वैसा ही जानके इसी द्रव्य स्वभावका मनन करो। क्योंकि जिस पर्यायको प्राप्त करना है उसीकी भावना करनेसे वह पर्याय प्रगट हो सकती है ॥ २ ॥

(पंच इष्टि परमेष्ठि मउ भवियन श्री सहकार स उत्तु) हे भव्यजीवो ! पांचों ही परमेष्ठी श्री अरहन्त सिद्ध, आचार्य उपाध्याय साधु अपने परम हितकारी हैं, उनहीकी सहायतासे मोक्ष लक्ष्मीकी प्राप्ति होगी ऐसा कहा गया है। पांच परमेष्ठीके अन्तरंग गुणोंका मनन आत्माके मननका कारण है (लषियो रूप्य अरूप्य मउ षिउनिक रूवे रूव) उन्हीके द्वारा अनुभवने योग्य मन व इंद्रियोंसे अगोचर, क्षायिक स्वरूप धारी परमात्माके स्वभावका ज्ञान होता है ॥ ३ ॥

(भवियन, मै मूर्ति न्यान विन्यान मउ नो उत्पन्न सहाउ) हे भव्यजीवो ! परिणमनशील परमात्माका रूप ज्ञानाकार है। वह नवीन उत्पन्न नहीं होता है, वह अनादि निधन अविनाशी है (समय संजुत्तु समय मउ) वह स्वरूपाचरण सहित है व आत्मारूप ही है (श्री लषि मन उत्त) उसे ही परम ऐश्वर्य सहित अनुभव योग्य कहा गया है, उसीको मनमें धार ॥ ४ ॥

(भवियन, ॐवंकार उवन मौ उत्पन्नह उवन सहाउ) हे भव्यजीवो ! प्रकाशरूप ॐमंत्र वह है जिसके द्वारा ध्यान करनेसे केवलज्ञान स्वभाव प्रगट होजाता है (ममल सरूवे ममल पउ श्री लषि मन भाउ) उसके द्वारा अपने वीतराग स्वरूपमें तिष्ठकर परमात्माके शुद्ध पदको-उसकी अन्तरंग लक्ष्मीको वारवार मनन कर ॥ ५ ॥

(ह्रींकार हिययार मौ ह्रीं हुंकार सरूव, भवियन) हे भव्यजीवो ! ह्रीं मंत्र भी हितकारी है, यह ह्रीं मंत्र चौवीस तीर्थंकरोंके स्वरूपको बतानेवाला है (मत्र विपनिक भव्नु तं मुक्तिरउ) यह भव्यजीवोंके सर्व भयोंको

क्षय करनेवाला है व मुक्तिपदको देनेवाला है (यं श्री लषि मन रूव) अपने मनमें उसके द्वारा परमात्माके ऐश्वर्यका ध्यान करो ॥ ६ ॥

(भवियन ! श्रींकारह स सहाउ मुनि, सहजनन्द ससरुव) हे भव्यजीवो ! श्रीं मंत्रके द्वारा अपने स्वभावका मनन करे कि यह सहजानन्द स्वभावका धारी है (अमिय सरूवे ममल पउ) यह शुद्धपद अपने आनन्दामृतसे भरे हुए स्वरूपमें रहनेवाला है (यं श्री लषि मन उत्त) उसीके ऐश्वर्यको पहचान कर ध्यान करो, ऐसा कहा गया है ॥ ७ ॥

(भवियन ! उवन दिष्टि हियथारमौ सहकारह ममल सहाउ) हे भव्यजीवो ! परम हितकारी आत्मज्ञानका प्रकाश है इसीके अनुभवसे आत्माका शुद्ध स्वभाव प्रगट होता है (तिमर्थ मउ धर्मह सहियो यं श्री लषि मन भाउ) वह आत्मज्ञानका प्रकाश रत्नत्रय रूप धर्म सहित है जिसके ऐश्वर्यको देखकर भावना करो ॥ ८ ॥

(भवियन हिययारह स भाउ मुनि उत्पन्नह दिष्टि संजुत्तु) हे भव्य जीवो ! हितकारी आत्माका स्वभाव है यही उस छेनीको रखती है जिससे कर्म कटते हैं। भावार्थ–आत्माके स्वभावके अनुभव रूपी छेनीसे कर्म आत्मासे छूटकर अलग होजाते हैं अतएव इसी स्थानका मनन करो (सहकारह ममल सहाउ मौ भय षिपिर सिद्धि सम्पत्तु) इसीकी सहायतासे शुद्ध स्वभाव प्रगट होगा, सर्व भय क्षय होजायगा और सिद्धगतिका लाभ होगा ॥९॥

(भवियन सहकार दृष्टि हिययार मौ उवनह अमिय रुरुव) हे भव्व जीवो ! आत्माके स्वभावके मननसे आनन्दामृतका झलकाव होता है, यही परम हितकारी है व सहायक है व इष्ट है (धर्म सहाओ सु सिद्धि पौ यं श्री लषि मन सूर) आत्मीक धर्मकी सहायतासे ही सिद्धपद होता है जो वीर भावधारी मन होता है वह उस सिद्धपदके ऐश्वर्यको समझता है ॥ १० ॥

(भवियन षट् कमलह संजुत्तु ति अर्थह अर्थ ममल पौ) हे भव्य जीवो ! छह प्रकारी मन्त्रको कमलमें स्थापित करके अर्थात् ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः मन्त्रके द्वारा रत्नत्रयमई पदार्थ आत्माका जो सिद्धपद है सो प्राप्त होता है (कमल सहावे रमन पौ भय षिपनक लंकृत उत्तु) कमलके समान प्रफुल्लित आत्माके स्वभावमें रमण करनेसे भय रहित भावसे शोभनीक होजाता है अर्थात् निर्भय पद प्राप्त होजाता है ऐसा कहा गया है ॥ ११ ॥

(भवियन ! ति अर्थह अर्थ भय रहिओ भौइह भवय विनास) हे भव्य जीवो ! रत्नत्रय पदार्थ भय रहित है इसीके सेवनसे संसारका नाश अवश्य होगा (दृष्टि झडप मौ गलि गई यं श्री मनि सूर) जब आत्मदृष्टि एकदम

प्रकाशित होजाती है अर्थात् केवलज्ञानका प्रकाश होता है तब संसार गल जाता है। हे वीर पुरुष ! उस पदकी लक्ष्मीका मनन कर ॥ १२ ॥

(भवियन, न्यानमउ जान उवनो पद विंदइ न्यान विन्यान) हे भव्य जीवो ! ज्ञानमई जहाज बन गया है जिसमें ज्ञानमई पदका अनुभव होता है (सर्वन्यह स सहाव मौ भय विनास तं भव्तु) इस जहाजपर चढ़कर भव्य जीव सर्व भयोंको क्षय करके अपने स्वभावमय सर्वज्ञ होजाता है ॥ १३ ॥

(भवियन, अमिय पयोहर धर्म मौ धर्मह ममल विन्यानु) हे भव्य जीवो ! यह सर्वज्ञ पद आनन्दामृतका समुद्र है, स्वभावमई धर्म है, जहां शुद्ध ज्ञान है (यं श्री लषि मन लष्य मो भव्वु सिद्धि सम्पत्तु) भव्य जीव इस पदकी लक्ष्मीको देखकर उसी लक्ष्यमें मन लगाता है, वह सिद्धिको पालेता है ॥ १४ ॥

भावार्थ—इस फूलनेमें भी श्री तारणतारण स्वामीने भव्य जीवोंको यह शिक्षा दी है कि अपने आत्माके स्वभावको द्रव्यार्थिक नयसे विचार करो। इसका स्वभाव सिद्ध भगवानके समान शुद्ध वीतराग ज्ञाता दृष्टा आनन्दमई है। यह परम शुद्ध है। शुद्ध स्वभावका मनन व ध्यान ही आत्माकी शुद्धिका कारण है। ॐ, ह्रीं, श्रीं, अथवा ॐ ह्रां ह्रीं ह्र ह्रौं ह्रः इस छः अक्षरी मंत्रके द्वारा उसी परमात्मपदका मनन करो। मनन करते ही एक समय यकायक आजाता है जब आत्मामें थिरता होजाती है। यह थिरता ही स्वानुभव है। जहां निर्विकल्प स्वाद आता है तब परमानन्दका प्रकाश होता है। आनन्दका अनुभव होना ही आत्मध्यानका प्रकाश है। यही स्वानुभव परमानन्द देता है और वही कर्मोंकी निर्जरा करता है। अतएव भव्य जीवोंको मनको एकाग्र करके अपने ही आत्माके शुद्ध स्वभावका अनुभव करना चाहिये। इसीके प्रतापसे यह जीव क्षपकश्रेणी पर चढ़कर प्रथम अर्हन्त परमात्मा फिर सिद्ध परमात्मा होजाता है। बारबार प्रेरणा की है कि आत्माका ही मनन करो। यही मोक्षमहलमें लेजायगा।

श्री परमात्मप्रकाशमें योगेन्द्रदेव कहते हैं:—

णवि उपज्जइ णवि मरइ, बंधु ण मोक्खु करेई। जिउ परमत्थे जोइया जिणवरु एउ भणेइ ॥ ६४ ॥

अट्ठह कम्मह बाहिरउ सयलइं दोसइं चत्तु। दंसण णाण चरित्त मउ, अप्पा भावि णिरुत्तु ॥ ७६ ॥

अप्पिं अप्प मुणंतु जिउ, सम्माइट्ठि हवेइ। सम्माइट्ठिउ जीव डउ, लहु कम्मइ मुच्चेइ ॥ ७७ ॥

भावार्थ—जब परमार्थ दृष्टिसे देखा जाय तो यह जीव न तो उपजता है न मरता है न इसके बन्ध

है न मोक्ष है। ऐसा श्री जिनेन्द्र भगवान कहते हैं। निश्चयनयसे यह जीव आठ कर्म रहित है, सर्व राग द्वेषादिसे शून्य है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्रमय है। ऐसे ही आत्माकी भावना करो। जो आत्मासे आत्माको आत्मारूप शुद्ध अनुभव करता है वही सम्यग्दृष्टी है। सम्यग्दृष्टी जीव शीघ्र ही कर्मोंसे छूट जाता है।

(५९) ठहकार फूलना गाथा ११९७ से १२०४ तक।

जिन जिनवर हो, उत्तउ भवियन, ममल सुभाए।
जिन जिनियो हो कम्मु अनन्तु सु धम्म सहाए॥
धर धरियो हो ज्ञान ठान सो ममल सुहाए।
ठहकारे हो ममल न्यान सो मुक्ति सुभाए॥ १॥
उप उपजिऊ हो भय विनासु ठहकार सुभाए।
जिन वयन जुहो उपजिउ स्वामी ममल सुभाए॥
उप उपजिऊ हो कम्मु जु विलयो धम्म सहाए।
षिपि कम्म जुहो मुक्ति संजोए न्यान सहाए॥ २॥
उव उवनउ हो अथति अर्थह ममल सहाए।
ठहकारे हो न्यान विन्यानह सो धम्म सहाए॥
जह कम्म जुहो उपजिउ भवियन समल सहाए।
सु कम्मु जुहो विलयो स्वामी न्यान सहाए॥ ३॥
जं चष्य अचष्यह उपजिउ अन्यान सहाए।
सो कम्म जुहो विलयो चेयन धम्म सुभाए॥

जं जानु उपजिउ समई ममल सहाए ।
तं न्यान अन्मोयह मिलियो ममल सुभाए ॥ ४ ॥
जं न्यान विन्यान ऊवनो ममल सहाए ।
तं न्यान अनन्त जु दर्सिउ धम्म सहाए ॥
तं अष्यर सुर विंजन ठहकार सुभाए ।
तं दर्सिउ हो दर्सन दिष्टिहि ममल सुभाए ॥ ५ ॥
पद दर्सिउ हो परम तत्तु परमप्प सहाए ।
विन्यानह हो दर्सिउ विन्दु जु धम्म सहाए ॥
पद अर्थह उवनो समई ठहकार सहाए ।
तं अर्थति अर्थह जोयो ममल सुभाए ॥ ६ ॥
सम अर्थह संजोयो जोयो धम्म सहाए ।
परमर्थह पद अर्थ सुहायो ज्ञान सहाए ॥
कल लंकृत हो कम्मु जु उवजिउ ममल सहाए ।
सु न्यान अन्मोयह विलयो ममल सुभाए ॥ ७ ॥
निःसकह हो संक जु विलयो धम्म सहाए ।
ठहकारे हो न्यान विन्यानह ममल सुभाए ॥
भय विनसिय हो भव्वु ऊवनो ममल सुभाए ।
षिपि कम्मु जु हो मुक्ति पहूंते ममल सुभाए ॥ ८ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जिन जिनवर हो उत्तउ भवियन ममल सुभाए) हे भव्य जीवो ! श्री जिनेन्द्र भगवानने अपने शुद्ध स्वभावसे तत्वका उपदेश किया है (जिन जिनियो हो कम्मु अनंतु सुधम्म सहाए) श्री जिनेन्द्रने अनंत कर्मवर्गणाओंको रत्नत्रय धर्मके प्रतापसे क्षय कर दिया है (धर धरियो हो ज्ञान ठान मो ममल सुहाए) उन्होंने शुद्धोपयोगके साथ ध्यानके स्थानोंको धारण किया था, धर्मध्यान व शुक्लध्यानको ध्याया था (ठहकारे हो ममल न्यान मो मुक्ति सुभाए) उनका वीतरागता सहित ज्ञान चन्द्रमाके समान निर्मल है व मोक्ष स्वभाव रूप ही है। (नोट—ठका अर्थ कोषमें चन्द्रमा है) ॥ १ ॥

(उव उवजिओ हो भय विनास ठहकार सुभाए) ध्यानके बलसे उनका स्वभाव चन्द्रमाके समान निर्मल सर्व भय रहित प्रगट होगया है (जिनवयन न्हो उवजिन स्वामी ममल सुभाए) श्री अरहन्त भगवानका स्वभाव शुद्ध है, उनहीके दिव्य वचनद्वारा जिनवाणीका प्रकाश होता है (उव उवजिऊ हो कम्मु जु विलयो धम्म सहाए) रत्नत्रय धर्मकी सहायतासे बन्ध प्राप्त कर्म क्षय होजाते हैं (षिपि कम्म जुहो मुक्ति संजाए न्यान सहाए) कर्मोंका क्षय होनेपर यह आत्मा अपने ज्ञान स्वभावसे मुक्तिको पालेता है ॥ २ ॥

(उव नवनउ हो अर्थति अर्थह ममल सहाए) रत्नत्रय स्वरूप पदार्थ ऐसा आत्मा अपने निर्मल स्वभावके साथ प्रकाशमान है (ठहकारे हो न्यान विन्यानह मो धम्म सहाए) रत्नत्रय धर्मके सहारेसे चन्द्रमाके समान उज्वल ज्ञान प्रगट होजाता है (ज कम्म जुहो उवजिउ भवियन ममल सहाए) हे भव्य जीवो ! कर्मोंका बन्ध रागद्वेषसे मलीन स्वभावके कारण होता है (सु कम्मु जुहो विलयो स्वामी न्यान सहाए) वे ही सब कर्म श्री जिनेन्द्र भगवानकी आत्माके भीतरसे आत्मज्ञानके स्वभावमें लीन होनेसे दूर होगए हैं ॥ ३ ॥

(जं चष्य अचष्यह उवजिउ अन्यान सहाए) अज्ञान या मिथ्या ज्ञानकी सहायतासे पांच इंद्रिय और मन सम्बन्धी अनेक विकल्प उठते हैं जिनसे कर्म बन्ध होता है (सो कम्म जुहो विलयो चेयन धम्म सहाए) वे सब कर्म आत्मीक धर्ममें लीन होनेसे क्षय होजाते हैं (जं जानु उवजिउ समई ममल सुहाए) आत्माका स्वाभाविक भाव शुद्धोपयोगकी सहायतासे प्रगट होता है, वही भवसागरसे पार होनेका जहाज है (तं न्यान अन्मोयह विलयो ममल सुभाए) वह स्वभाव ज्ञानानन्दके साथ मिला हुआ शुद्ध निर्मल स्वभाव होजाता है। अर्थात केवलज्ञानमई स्वभाव झलक जाता है ॥ ४ ॥

(जं न्यान विन्यान ऊवनो ममल सहाए) मिथ्यातरूपी मलके जानेपर जब निर्मल सम्यग्दर्शन प्रगट होता

है तब ज्ञान भी निर्मल होजाता है (तं न्यान अनंत जु दर्सिउ धम्म सहाए) वह सम्यग्ज्ञान रत्नत्रय धर्मके प्रतापसे अनन्त ज्ञान स्वरूप आत्माको देख लेता है या अनुभव कर लेता है (तं अष्यर सुर विंजन ठहकार सुभाए) तब ही जिनवाणीके अक्षरोंका स्वर व्यंजनोंका चन्द्रमाके समान निर्मल भाव ज्ञानीके भीतर झलक जाता है (तं दर्सिउ हो दंसन दिट्ठि हि ममल सुभाए) तब ही सम्यग्दर्शन शुद्ध स्वभावको देख लेता है या अनुभव कर लेता है ॥ ५ ॥

(पद दर्सिउ हो परम तत्तु रमण्ण सहाए) सम्यग्दृष्टी ज्ञानी जीव परमात्मा स्वरूप अपने ही आत्माके परम तत्वको निश्चय नयसे देख लेता है (विन्यान हो दर्सिउ विंदु जु धम्म सहाए) ज्ञानीका आत्मज्ञान रत्नत्रय धर्मकी सहायतासे स्वात्मानुभवको देख लेता है । अर्थात् ज्ञान–ज्ञानके स्वादमें मगन होजाता है (पद अर्थह उवनो समई ठहकार सहाए) तब चन्द्रमा समान निर्मल भावकी सहायतासे आत्माका यथार्थ पद आपमें झलक जाता है (तं अर्थति अर्थह जोयो ममल सुभाए) तब रत्नत्रयमई पदार्थ अपने निर्मल स्वभावको देख लेता है या अनुभव कर लेता है ॥ ६ ॥

(सम अर्थह संजोयो जोयो धम्म सहाए) रत्नत्रय धर्मकी सहायतासे ज्ञानीके निश्चयके द्वारा समताभाव सहित व राग द्वेष रहित पदार्थोंको देखा है । ज्ञानीके ज्ञानमें यह जगत छः द्रव्य स्वरूप भिन्न २ भासता है । सर्व आत्माएँ एक रूप शुद्ध समान झलकती हैं (परमर्थह पद अर्थ सुहावो ज्ञान सहाए) आत्मध्यानकी सहायतासे ज्ञानीको परमार्थ पदार्थ अपना शुद्धात्मा ही प्यारा झलक रहा है (कऊ लंकृत हो कम्म जु उपजिउ ममल सहाए) शरीरके भीतर तन्मय होनेसे मिथ्यात्व अवस्थामें अशुद्ध भावोंसे जो कर्म बन्धा हुआ था (सु न्यान अन्मोयह विलयो ममल सुभाए) वे सर्व कर्म निर्मल स्वभावसे ज्ञानमें आनन्द माननेसे या ज्ञानानन्दमें लीनतासे क्षय होगए हैं ॥ ७ ॥

(निड संकइ हो संक जु विलयो धम्म सहाए) ज्ञानी निज आत्माके स्वरूपमें शङ्का रहित है व सर्व भय रहित है । उसकी सर्व शङ्काएँ व भय रत्नत्रय धर्मके प्रतापसे दूर होगए हैं (ठहकारे हो न्यान विन्यानह ममल सुभाए) वह राग द्वेष रहित निर्मल ज्ञान स्वभावमें चन्द्रमाके समान चमक रहा है (भय विनसिय हो मत्नु उवनो ममल सुभाए) जब भव्य जीवके भीतर वीतराग स्वभाव प्रगट होजाता है तब उसका सर्व सांसारिक भय मिट जाता है, वह अनन्तबलि अपनेको अविनाशी अनुभव करता है (षिपि कम्म जु हो मुक्ति पहुंचे ममल सुभाए) वह

भव्यजीव स्वात्मानुभवके अभ्याससे कर्मोंका क्षय कर देता है और कर्म रहित व शुद्ध स्वभावमें होकर मुक्तिको पहुंच जाता है ॥ ८ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें भी स्वामीने यही बताया है कि मिथ्या दर्शन, मिथ्या ज्ञान व मिथ्या चारित्रके कारण यह जीव अपने स्वरूपको भूला हुआ पांच इंद्रियोंके विषयोंमें व मनके नानाप्रकार विकल्पोंमें उलझ जाता है तब घोर कर्म बन्ध करता है और संसारमें भटकता है। श्री जिनवाणी परम हितकारिणी है जिसका मूल स्रोत श्री सर्व वीतराग भगवान है। उसके शब्दोंपर ध्यान देनेसे जब आत्मा और अनात्माका ठीक ठीक ज्ञान होता है तथा आत्माके मनन करनेसे मिथ्यात्व कर्म दब जाता है और सम्यग्दर्शन गुण प्रगट होजाता है। तब आत्म-प्रतीति होरही है, आत्मानुभवकी कला प्रगट होजाती है। सम्यग्दृष्टी आत्मज्ञानका स्वाद लेता है। वह स्वात्मानुभव करता रहता है, इसमें प्रचुर कर्मोंकी निर्जरा होती है। रत्नत्रयमई धर्मका लाभ इस व्यक्तिके होजाता है जो स्वानुभवका अभ्यासी है। इसी स्वानुभवसे केवलज्ञान प्रगट होजाता है और फिर सर्व कर्म रहित होकर मुक्तिको पालेता है। भव्यजीव जिसतरह बने आत्मज्ञानको प्राप्त करना चाहिये।

श्री योगसारमें योगीन्द्रदेव कहते हैं:—

राय रोस वे परिहरइ जो अप्पा णिवसेई। सो धम्मु वि जिणु उत्तियउ जो पंचम गइ देइ ॥ ४७ ॥

जो सम्मत्तपहाणु बुहु सो तयलोय पहाणु। केवलणाण वि सह कहई सासयसुक्खणिहाणु ॥ ९० ॥

भावार्थ—जो कोई रागद्वेषको छोड़कर आत्मामें विश्राम करता है उसीने धर्मको पाया है, ऐसा जिनेन्द्र कहते हैं। वही पंचम गति मोक्षको पाता है। जो बुद्धिमान सम्यग्दर्शनमें प्रधान हैं वह तीन लोकमें प्रधान है, वह केवलज्ञानको पाकर अविनाशी सुखका भण्डार होजाता है।

(६०) उत्पन्न साह विवान गाथा १२०५ से १२३५ तक।

उव उवन उवन जिन उत्तं, उव उवनं उवन साहि संजुत्तं ।
उव उवन उवन सुइ रमनं, उवनं सुइ साहि कर्न कमलं च ॥ १ ॥
उवन दिस्टि सुइ रमनं, उवनं सुइ समय समय संजुत्तं ।
उवन दिस्टि सुइ रमन, उवनं सुइ कन कलन कमलं च ॥ २ ॥
उवन दिस्टि सुइ सुवनं, चौदस संजुत्तु कलन जिन रमनं ।
कलन कर्न अन्मोय, साहिय सुइ कमल उवन निर्वानं ॥ ३ ॥
दिस्ट चष्य जिन उत्तं, चष्यं सुइ दिस्टि न्यान विन्यानं ।
विन्यान न्यान सुइ कलन, सुइ कर्न कमल जिन उत्तं ॥ ४ ॥
चष्य सुभाव जिनुत्तं, चष्यं सहकार अचष्य जिन भनियं ।
अचष्य हियारउ उवन, उवनं सुइ कलन कर्न निर्वानं ॥ ५ ॥
अचष्य अदस जिनुत्तं, अदर्स सुइ सरनि कम्म विलयन्ति ।
अदर्स सरनि जिन विलयं, दर्सिय सुइ ममल कमल कर्न च ॥ ६ ॥
अचष्य दिस्टि जिन रमनं, रमनं जिन उवन अनषिरं रमनं ।
रमन कर्न हिययारं, कन हिय उवन कमल कलनं च ॥ ७ ॥
अचष्य सुभाव जिनुत्तं, अचष्ये सहकार अवहि सुइ दर्सं ।
अवहि उवन निहि भनियं, उव उवन साहि कर्न सुइ कमलं ॥ ८ ॥
अवहि दर्स जिन दर्सं, गुपित सह सहज गुहिज उव रमनं ।
गुहिज गुप्ति गुरु गरुवं, साहिय सुइ कर्न कमल अवयासं ॥ ९ ॥

अवहि उवन निहि उत्तं, उत्तं सुइ सुवन उवन जिन नाहं ।
जिन दिष्टिं सुइ रमनं, साहिय सुइ कमल विंद कर्न च ॥ १० ॥
अवहि दिस्टि जिन रमनं, अवहि सहावेन केवलं उवनं ।
केवल ममल सहावं, उव उवनं सुइ कमल कर्न सुइ समयं ॥ ११ ॥
केवल कलन उवन्नं, कलनं सुइ चरन चरन जिन उत्तं ।
उत्पन्न साहि सुइ कमलं, कमलं सुइ उवन केवलं न्यानं ॥ १२ ॥
दिष्टि विवान स उत्तं, उत्तं सुइ ममल केवलं न्यानं ।
दर्संति नन्त नन्तं, दर्स सुइ समय कर्न कमलं च ॥ १३ ॥
केवल दर्सन सहियं, दिष्टि सुइ समय जिनेन्द विंदानं ।
जिन उवनं जिन उत्तं, समयं सुइ कर्न कमल निर्वानं ॥ १४ ॥
कर्न उवन सुइ उवनं, उवन सुइ सब्द उवन जिन उत्तं ।
जिन उत्त समय सुइ कर्न, कर्न सुइ कमल केवलं न्यानं ॥ १५ ॥
सब्दं नन्त उवन्नं, सब्द सुइ ममल साहियं कर्न ।
ममल उवन सुइ रमनं, साहिय सुइ कमल केवलं न्यानं ॥ १६ ॥
सब्द साहि सुइ सुवनं, सब्दं सुइ सरनि नन्त विलयन्ति ।
न्यान सब्द सम सवनं, साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं ॥ १७ ॥
न्यान विन्यान स उत्तं, सब्दं सुइ ममल कमल सुइ रमनं ।
कर्न रमन जिन उत्तं, साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं ॥ १८ ॥

न्यान न्यान स उत्तं, सब्दं जिन समय सुवन सुइ कन ।
सब्द समय सुइ ममलं, साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं ॥ १९ ॥
सब्द सहाव स उत्तं, सब्द सुइ ममल न्यान जिन रमनं ।
रमन कर्न सुइ ममलं, साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं ॥ २० ॥
सब्द हियार उवन्नं, हिययारं उवन हुवयार जिन उत्तं ।
जिन उत्त कन हिय हुवयं, साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं ॥ २१ ॥
सब्दं सयन विवान, सब्द हिय उवन हुव नन्त सुइ रमनं ।
रमन समय सुइ कन, साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं ॥ २२ ॥
हिय हुव उवन सहावं, उवनं सुइ सरनि कम्म विलयन्ति ।
जिन उत्त कन हिय हुवनं, साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं ॥ २३ ॥
उवनं उवन सहावं, उवनं अवयास नन्त सुइ ममलं ।
नन्तानन्त ममलं, साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं ॥ २४ ॥
दिसि सब्द छइ उवनं, कलनं कमलं च साहि अवयासं ।
विवान साहि अवयासं, विवान अवयास साहियं कमल ॥ २५ ॥
जं विवान उववन्नं, उव उवनं नन्त ममल छइ रमनं ।
जिन उत्त साहि छइ कर्न, उवनं छइ साह कमल निर्वानं ॥ २६ ॥
जं जं उवन सहावं, उवनं सुइ अर्क जिन अर्क ममलं च ।
अर्क उत्तु जिन अर्क, उवनं सुइ साहि कमल निर्वानं ॥ २७ ॥

उव उवनं नन्त विसेषं, नन्तनन्तं च ममल उवनं च।
ममल रमन सुइ कर्न, उवनं सुइ साहि कमल निर्वानं ॥ २८ ॥
उवनं नन्त सु गमनं, गमन सुइ गमिय आगम उव ममल।
ममल उत्तु सम कन्न, उवनं सुइ साहि कमल निर्वानं ॥ २९ ॥
उवनं सुइ दिप्ति दिसनं सब्द सुइ उवन ममल अवयासं।
जिन उत्त उत्त सुइ कन, उवनं सुइ साहि कमल निर्वानं ॥ ३० ॥
तारन तरन सहावं, कलनं सुइ कमल कर्न सुइ चरनं।
सिद्ध धुव उत्त जिनुत्तं, कमलं सुइ समय सिद्धि संपत्तं ॥ ३१ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन उवन जिन उत्तं) श्री जिनेन्द्र भगवानने सम्यग्दर्शनके प्रकाशका महात्म्य वर्णन किया है (उव उवनं उवन साहि संजुत्तं) सम्यग्दर्शनका उदय ही मोक्षके साधन सहित है अर्थात् सम्यग्दर्शनके विना मोक्षका साधन नहीं होसक्ता है (उव उवन उवन सुइ रमनं) सम्यग्दर्शनके प्रकाशमें ही रमण करना चाहिये (उवनं सुइ साहि कर्न कमलं च) वही साधन है, उसीके उपायसे आत्मारूपी कमलका विकाश होता है ॥ १ ॥

(उवन दिष्टि सुइ रमनं) सम्यग्दर्शनकी तरफ दृष्टि रखना अर्थात् निज शुद्धात्माकी ओर ही देखना सो ही रमण है (उवनं सुइ समय समय संजुत्तं) जहां आत्माका उदय हो वही स्वरूपाचरण सहित भाव है (उवन दिस्टि सुइ रमनं) सम्यग्दर्शनकी ओर देखना ही आत्मामें रमण है (उवनं सुइ कर्न कलन कमलं च) यही आत्मरमण करना मोक्षके साधनमें रमण करना है जिससे आत्मारूपी कमलका विकाश होता है ॥२॥

(उवन दिष्टि सुइ सुवनं) आत्मदृष्टि जपना सो ही आनन्द रसका पान है (चौदस संजुत्त कलन जिन रमनं) तथा जो आत्मामें रमण करता है वही अरहन्त जिनेन्द्रके रूपमें रमण करता है, जिनके शरीरकी रचना अपेक्षा दश प्राण हैं तथा कर्मकी अपेक्षा चार प्राण हैं। अर्थात् वचन वल, काय बल, आयु और श्वासो-

चहूास (कलन कर्न अन्मोयं) आत्मानुभवका अभ्यास करते हुए उसीमें आनन्दका भोग करना (सहिय सुइ कमल उवन निर्वानं) वही वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल विकसित होकर निर्वाणका लाभ भी कर लेता है ॥ ३ ॥

(दिष्टि चष्य जिन उत्तं) श्री जिनेन्द्रने चक्षु दर्शनको कहा है, निश्चयसे ज्ञान चक्षुसे आत्माको देखना ही चक्षु दर्शन है (चष्यं सुइ दिष्टि ग्यान विन्यानं) वही आंख है जो आत्मज्ञानका दर्शन करे (विन्यान ग्यान सुइ कलनं) भेदविज्ञान पूर्वक आत्मज्ञानका जो अभ्यास करना है (कलनं सुइ कर्न कमल जिन उत्तं) यही अभ्यास वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल कर्मोंसे छूटकर अपने स्वभावमें प्रफुल्लित होजाता है। ऐसा श्री जिनेन्द्रने कहा है ॥ ४ ॥

(चष्य सुभाव जिनुत्तं) श्री जिनेन्द्रने ज्ञानचक्षुका यह स्वभाव कहा है (चष्यं सहकार अचष्य जिन भनियं) जिस ज्ञानकी आंखसे इंद्रिय रहित आत्माका दर्शन हो, आत्मा अतीन्द्रिय है ज्ञानगम्य है ऐसा जिनेन्द्रका उपदेश है (अचष्य हियारउ उवनं) हितकारी आत्माके स्वभावका प्रकाश होता है (उवनं सुइ कलन कर्न निर्वानं) सोही प्रकाश व उसीमें रमण वह साधन है जिससे निर्वाणका लाभ होता है ॥ ५ ॥

(अचष्य अदर्स जिनुत्तं) आत्माका स्वभाव इंद्रियोंसे व मनसे दिख नहीं सक्ता ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (अदर्स सुइ सरनि कम्म विलयंति) इंद्रियोंसे अगोचर आत्मामें रमण करनेसे ही कर्मोंका क्षय होता है, आत्मा द्वारा आत्माका ग्रहण कर जो आत्मानुभव करता है वह वीतराग भावोंको प्राप्त होता है जिनसे बहुत अधिक कर्म गिर जाते हैं (अदर्स सरनि जिन विलयं) कर्मविजयी आत्मामें रमण करना ही संसारका क्षय करनेवाला है (दर्सिय सुइ ममल कमल कर्न च) वही मानव जो आत्मानुवी है शुद्ध आत्मारूपी कमलका दर्शन कर लेता है यह आत्मदर्शन मोक्षका कारण है ॥ ६ ॥

(अचष्य दिष्टि जिन रमनं) इंद्रिय व मनसे अगोचर ज्ञानदृष्टिसे श्री जिनेन्द्रके समान अपने आत्मामें रमण करना चाहिये (रमनं जिन उवन अनषिरं रमनं) इसी तरह श्री जिनेन्द्रके स्वभावमें रमण करनेसे वचनोंसे अगोचर आत्मामें रमण होता है। अर्थात् जिनेन्द्रके समान अपना स्वरूप मनन करते करते ध्याता आत्मरमी होजाता है (रमन कर्न हिययारं) यह आत्मरमण ही हितकारी साधन है (कर्न हिय उवन कमल कलनं च) इस हितकारी साधनसे ही शुद्धात्मारूपी कमलका शुद्ध अनुभव झलक जाता है ॥ ७ ॥

(अचष्य सुभाव जिनुत्तं) इन्द्रियातीत ज्ञानका स्वभाव ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (अचष्य सहकार अवहि सुइ दर्सं) कि उस ज्ञानके अनुभवसे अवधिज्ञान दर्श जाता है (अवहि उवन निहि भनियं) अवधिज्ञानको एक ऋद्धि कहा गया है जिसके परमावधि व सर्वावधि होती है वह इसी शरीरसे मोक्षगामी होता है। ऐसा जीव विशेष आत्मज्ञानी व सम्यग्दृष्टी होता है (उव उवन साहि कर्न सुइ कलनं) ऐसे जीवके भीतर जो आत्मज्ञानका प्रकाश है वह आत्मारूपी कमलके विकाशका प्रबल साधन है ॥ ८ ॥

(अवहि दर्स जिन दर्सं) जिसने अवधि दर्शन तथा ज्ञान प्राप्त किया है ऐसा सम्यग्दृष्टी जीव (गुपित मह सहज गुहित उव रमनं) तीन गुप्ति सहित स्वाभाविक आत्माके अनुभवकी गुफामें रमण करता है (गुहिज गुप्ति गुरु गरुवं) उस गुफामें गुप्त होकर वह महान भारी आत्मा होजाता है। गुरुओंका गुरु परम गुरु होजाता है (साहिय सुद्ध कर्न कमल अवयासं) वह इस शुद्धोपयोगके साधनसे आत्मरूपी कमलको विकसित कर देता है अर्थात् केवलज्ञानी होजाता है ॥ ९ ॥

(अवहि उवन निहि उत्तं) अवधिज्ञानके प्रकाशको एक निधि या ऋद्धि कहा गया है (उत्तं सुइ सुवन उवन जिन नाहं) ऐसे ऋद्धिधारी सम्यग्दृष्टी साधुके जो आनन्दरसका प्रवाह बहता है उससे वह जिननाथ या केवलज्ञानी होजाता है (जिन दिष्टि सुइ रमनं) जैसा जिनेन्द्रने देखा है ऐसे शुद्ध आत्मीक भावमें रमण करता है (साहिय सुइ कमल विंद कर्न च) सो ही साधन है जिससे आत्मारूपी कमलका भोग होता है ॥१०॥

(अवहि दिष्टि जिन रमनं) अवधि दर्शनवाला सम्यग्दृष्टी आत्मा श्री जिनेन्द्रके गुणोंमें रमण करता है (अवहि सहावेन केवलं उवनं) ऐसे आत्म-रमणके अभ्याससे केवलज्ञानका लाभ होता है (केवल ममल सुभावं) केवलज्ञान आत्माका शुद्ध स्वभाव है क्योंकि वह ज्ञानावरण कर्मके क्षयसे प्रगट होता है (उव उवनं सुइ कमल कर्न सुइ समयं) केवलज्ञानका होना ही आत्मारूपी कमलका विकाश है, वही पदार्थ मोक्षका साधन है, वह आत्मारूप ही है ॥ ११ ॥

(केवल कलन उवनं) केवल एक वीतराग आत्मतल्लीन भाव केवलीके प्रगट होजाता है (कलनं सुइ चरन चरन जिन उत्तं) इसी आत्मतल्लीनताको वीतराग चारित्र या यथाख्यात चारित्र कहते हैं जैसा जिनेन्द्रने कहा है (उत्पन्न साहि सुइ कमलं) तब इस साधनसे साध्य आत्मारूपी कमलका विकाश होजाता है (कमलं सुइ उवन केवलं न्यानं) आत्मारूपी कमलका विकाश होना ही केवल ज्ञानका प्रकाश है ॥ १२ ॥

(दिष्टि विशान स उत्तं) उन्हीं अरहन्तको तारनतरन समर्थ आत्मदर्शनका जहाज कहते हैं (उत्तं सुद्द ममल केवलं न्यानं) वही सर्व मल व राग द्वेष रहित केवलज्ञानका उदय कहा गया है (दसैति नंत नंतं) यह केवलज्ञान केवलदर्शन सहित अनन्तानन्त पदार्थोंको देख लेता है (दर्म सुद्द समय कर्न कमलं च) यही आत्मदर्शन है, यही वह आत्माकी परिणति है जो आत्मा कमलके कर्मयुक्त होकर पूर्ण प्रकाशमें कारण है ॥१३॥

(केवल दर्सन सहियं) अरहन्त भगवान केवलदर्शनके धारी हैं (दिष्टि सुद्द समय जिनेंद विंदानं) वही जिनेन्द्रदेव अपनी आत्मदृष्टिसे आत्मानन्दका भोग करते रहते हैं (जिन उवनं जिन उत्तं) जिनेन्द्रपदके प्रकाशको ही श्री अरहन्त जिन कहा गया है (समयं सुद्द कर्न कमल निर्वानं) अरहन्तका आत्मा ही वह साधन है जो चार अघातीय कर्मोंका क्षय कर देता है और पूर्ण कमलसमान विकसित आत्माको करके निर्वाण पहुंचा देता है ॥ १४ ॥

(कर्न उवन सुद्द उवनं) मोक्षमार्गका प्रकाश होना ही आत्माका उदय है (उवनं सुद्द सह उवन जिन उत्तं) जिनेन्द्र भगवानने उवन शब्दका यही भाव कहा है जो आत्माके भीतर आत्मानुभवका उदय हो (जिन उत्त समय सुद्द कर्न) जिनेन्द्रने जैसा आत्माको कहा है वैसा ही अनुभव करना सो ही समय है (कर्न सुद्द कमल केवलं न्यानं) यही वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमलको केवलज्ञानका प्रकाश होजाता है ॥१५॥

(सब्दं नंत उवन) अनन्त शब्दका प्रकाश इसलिये है कि (सब्द सुद्द ममल साहियं कर्न) उस शब्दसे निर्मल शुद्ध केवलज्ञानका साधन किया जावे जो कि अनन्त है (ममल उवन सुद्द रमनं) शुद्ध स्वभावका उदय सो ही आत्मामें रमण है (साहिय सुद्द कमल केवलं न्यानं) इसी साधनसे ही आत्मारूपी कमलको केवल ज्ञानका लाभ होता है ॥ १६ ॥

(सब्द साहि सुद्द सुवनं) वे शब्द भी साधन होसक्ते हैं जिन शब्दोंके भावोंमें ध्यान देनेसे आनन्दामृतका स्वाद आवे (सब्दं सुद्द सरनि नंत विलयंति) जिन शब्दोंके द्वारा ध्यान करनेसे अनन्त संसारका क्षय होजावे (न्यान सब्द सम सुवनं) आत्मज्ञान शब्दसे आत्मामें समभावका परिणमन होना चाहिये (साहिय सुद्द कलन कमल निर्वानं) आत्मज्ञानके ही अभ्यासके साधनसे आत्मारूपी कमलको निर्वाणका लाभ होता है॥१७॥

(न्यान विन्यान स उत्तं) उसीको भेदविज्ञान कहा गया है (सब्दं सुद्द ममल कमल सुद्द रमनं) जिस भेदविज्ञान शब्दसे यह भाव लिया जावे कि परसे छूटकर कमलसम शुद्ध आत्मामें रमण किया जावे (कर्म

रमन जिन उत्तं) जिनेन्द्रने कहा है कि इसी आत्मानुभवके साधनमें रमना चाहिये (साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं) इसी साधनके अभ्याससे आत्मारूपी कमल निर्वाणको प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

(न्यानं न्यान स उत्तं) उसीको सम्यग्ज्ञान या आत्मज्ञान कहा गया है (सब्दं जिन समय सुवन सुइ कर्न) जिस शब्दसे वीतरागमय आत्माके आनन्दको लिया जावे, यही मोक्षमार्ग है (सब्द समय सुइ ममलं) समय शब्द भी निर्मल शुद्ध आत्माका वाचक है (साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं) इसी साधनके अभ्याससे यह आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ १९ ॥

(सब्द सहाव स उत्तं) शब्दका ऐसा स्वभाव कहा गया है (सब्दं सुइ ममल न्यान जिन रमनं) कि शब्द वे ही कार्यकारी हैं जिनके द्वारा शुद्ध ज्ञान स्वभावी वीतरागमय आत्मामें रमण किया जावे (रमन कर्न सुइ ममलं) आत्मामें रमण ही शुद्ध मोक्षमार्ग है (साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं) उसी साधनके अभ्याससे आत्मारूपी कमल निर्वाण लाभ करता है ॥ २० ॥

(सब्द हिययार उवन्नं) वे ही शब्द हितकारी झलकते हैं (हिययारं उवन हिययार जिन उत्तं) जिन शब्दोंसे हित हो व उपकार ऐसा हो जिसको जिनेन्द्र भगवान उपकार कहते हैं अर्थात् आत्मा स्वस्वरूप पाकर शुद्ध होजावे (जिन उत्त कर्न हिय हुवयं) हितकारी वही साधन है जिसको जिनेन्द्र भगवानने कहा है (साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं) उसी आत्मानुभवके साधनके अभ्याससे यह आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ २१ ॥

(सब्दं सयन विवानं) शब्दोंमें अर्थात् शब्दोंके द्वारा प्रगट भाव ज्ञानमें जो तन्मय होजाना वही संसार सागरसे पार होनेका जहाज है (सब्दं हिय उवन उव नन्त सुइ रमनं) जिनसे हित हो व अनन्त शक्तिका प्रकाश हो उन्हीं शब्दोंके भावोंमें रमण करना चाहिये (रमन समय सुइ कर्न) आत्मामें रमण होना ही मोक्षका साधन है (साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं) उसी साधनका अभ्यास कर आत्मारूपी कमलको निर्वाण होजाता है ॥ २२ ॥

(हिय हुय उवन सहावं) आत्मज्ञानका स्वभाव ही हितकारी है (उवनं सुइ सरनि कम्म विलयंति) उसी स्वभावके अनुभवसे संसारके भ्रमण करानेवाले कर्म क्षय होजाते हैं (जिन उत्त कर्न हिय हुवनं) जिनेन्द्र भग

वान द्वारा कथित साधन ही हितकारी है (साहिय सुइ कलन कमल निर्वानं) इसी साधनके अभ्याससे आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ २३ ॥

(उवनं उवन सहावं) आत्मज्ञानका प्रकाश ही प्रकाश है (उवनं अवयास नन्त सुइ ममलं) जिसके द्वारा निर्मल अनन्तज्ञान झलक जाता है (नंतानंत सु ममलं) वह केवलज्ञान ऐसा निर्मल है जिसमें अनन्तानन्त गुण पर्याय एक साथ प्रगट होते हैं (साहिय सुइ कलन कमक निर्वानं) इसी साधनके अभ्याससे आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ २४ ॥

(दिप्ति सब्द सुइ उवनं) दीप्ति शब्दसे उसी आत्मज्ञानके प्रकाशसे मतलब है (कलनं कमलं च साहि अवयासं) जिससे कमल समान शुद्ध आत्माका अनुभव हो व जिससे अनन्तज्ञानका साधन हो (विवान साहि अवयासं) यही तारनतरन जहाज है, यही केवलज्ञानका साधन है (विवान अवयास साहियं कमलं) इसी आत्मानुभवके जहाजसे आत्मारूपी कमलका प्रकाश होता है ॥ २५ ॥

(जं विवान उववन्नं जो यह आत्मानुभवरूपी जहाज तैयार होगया है (उव उवनं नंत ममल सुइ रमनं) इस जहाजकी दृष्टि अनन्त शुद्ध आत्मरमणकी तरफ है (जिन उत्त साहि सुइ कर्नं) जिनेन्द्रने जो साधन बताया है वही मोक्षका उपाय है (उवनं सुइ साह कमक निर्वानं) इसी साधनसे कमल समान आत्मा निर्वाणका लाभ करता है ॥ २६ ॥

(जं जं उवन सहावं) जो कुछ आत्माका प्रकाश स्वभाव है (उवनं सुइ अर्क जिन अर्क ममलं च) वही स्वभाव प्रकाशमान सूर्यसम है, वैसे ही श्री जिनेन्द्र भगवान निर्मल सूर्यसम हैं (अर्क उतु जिन अर्क) सूर्य समान जिनेन्द्रने आत्माको सूर्य समान ही कहा है (उवनं सुइ साहि कमल निर्वानं) इसी सूर्यका उदय होना सोही आत्मारूपी कमलको निर्वाण प्राप्त होना है ॥ २७ ॥

(उव उवनं नन्त विसेषं) केवलज्ञानके प्रकाशमें अनन्तगुणा पर्याय झलक जाते हैं (नंतानंतं च ममल उवनं च) उसमें ऐसी शुद्धता है कि अनन्तानन्त पदार्थ झलक सक्ते हैं (ममल रमन सुइ कर्नं) ऐसे शुद्ध आत्माके स्वभावमें रमण करना सोही मोक्षका साधन है (उवनं सुइ साहि कमल निर्वानं) इसी साधनके अभ्याससे आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ २८ ॥

(उवन नंत सुगमनं) केवलज्ञानका उदय अनन्त पदार्थोंको भलेप्रकार जानता है (गमनं सुइ गमिय ममल

उव ममलं) ऐसा ज्ञान मन व इंद्रियसे अगोचर आत्मामें रमणरूप व शुद्ध वीतराग है (ममल उत्तु सम कर्नं) मोक्षका साधन शुद्ध साम्यभाव कहा गया है (उवनं सुइ साहि कमल निर्वानं) इसी समभावका प्रकाश वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ २९ ॥

(उवनं सुइ दिप्ति दिसनं) आत्मज्योतिका प्रकाश ही उदय है (सब्दं सुइ उवन मनक अवयासं) शब्द वे ही सार हैं जिनके प्रतापसे शुद्ध ज्ञानका प्रकाश हो (जिन उत्त उत्त सुइ कर्नं जिनेन्द्रने जैसा कहा है उसीको साधन करना चाहिये (उवनं सुइ साहि कमल निर्वानं) इसी साधनके अभ्याससे आत्मारूपी कमल निर्वाणका लाभ करता है ॥ ३० ॥

(तारनतरन सहावं कलनं सुइ कमल कर्न सुइ चरनं) अरहन्तपदमें तारणतरण स्वभावका प्रगट होना सोई आत्मारूपी कमलका विकाश है तथा वही भाव मोक्षका साधन है, वही यथाख्यात चारित्र है (सिद्ध धुव उत्त जिनुत्तं) श्री जिनेन्द्रने सिद्ध अवस्थाको ध्रुव अर्थात् अविनाशी कहा है (कमलं सुइ समय सिद्धि संपत्तं) कमल समान सर्व तरह प्रफुल्लित होकर यह आत्मा सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ ३१ ॥

भावार्थ—इस साधक विमानमें यही पुनः पुनः झलकाया है कि निर्वाणका साधक जहाज शुद्ध आत्माका अनुभव है। मुमुक्षु जीवको जिनवाणीके अभ्याससे निर्मल सम्यग्दर्शन प्राप्त करना चाहिये। जिससे यह भेदविज्ञान उत्पन्न होजावे कि आत्मा भिन्न है व रागादि भाव कर्म, ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्म शरीरादि नोकर्म भिन्न हैं। आत्माकी सत्ता निराली है तथापि निश्चयनयसे सब आत्माएँ समान गुणोंकी धारी हैं। समताभाव लानेके लिये इसी नयसे देखना चाहिये। साम्यभावके अभ्याससे ध्यानकी कला प्रगट होजाती है। आत्मध्यानके ही प्रतापसे नवीन कर्मोंका रुकना व पुरातन कर्मोंका क्षय होता है। आत्मा इंद्रिय व मनसे अगोचर है, बहुत ही सूक्ष्म पदार्थ है, उसका अनुभव भी तब ही होता है जब मनके व इंद्रियोंके व्यापारोंको बन्द कर दिया जावे व उपयोग केवल अपने आत्मामें ही रमण करे। आत्मानुभव ही एक औषधि है जो कर्मोंका क्षय कर सक्ती है। इसलिये साधकको उचित है कि आत्मानुभवका अभ्यास करे। आत्माका स्वभाव आत्म-स्वभावके अनुभवसे ही प्रगट होता है। जो आत्मतत्वको पहचानता है, उसीके पास रत्नत्रयरूपी जहाज तैयार होजाता है। वह जहाजपर चढ़कर मोक्षद्वीपको पहुँच जाता है।

कल्लाणालोयणामें जैसा कहा है वैसी आत्माकी भावना करनी योग्य है—

णाणाउ जो ण भिण्णो वियप्पभिण्णो सहावसुक्खमओ । अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एक परमप्पा ॥ ४३ ॥
ते को ण होदि सुयणो तं कस्स ण बंधवो ण सुयणो वा । अप्पा हवेह अप्पा एगागी जाणगो सुद्धो ॥ ४७ ॥

भावार्थ—**जो आत्मा ज्ञानसे भिन्न नहीं है किन्तु भेद व विकल्प रहित है तथा स्वभावसे ही सुख-रूप है वही एक परमात्मा है, उसीकी शरणमें मैं जाता हूँ, अन्य किसीकी शरण नहीं लेता हूँ। हे भाई ! तेरा कोई भाई, बन्धु, स्वजन नहीं है, न तू किसीका भाई-बन्धु स्वजन है। आत्मा एक अकेला ज्ञाता स्वभावधारी शुद्ध वीतराग है।**

(६१) जयमाला छन्द गाथा १२३६ से १२५० तक।

उव उववनु उव उवन उवनऊ, उववन दिष्टि उवन पऊ।
उववन समय सुइ सिद्धि पऊ, उववन परम जिन उत्त पऊ ॥ १ ॥
उवन ऊवनो उवन पउत्तु, उवन जिनुत्तु सु समय संजुत्तु।
उवन पउत्तु सुन्यान पउत्तु, सु अष्यर सुर व्यंजन संजुत्तु ॥ २ ॥
सो विंजन सुर संजोय पुनन्तु, सो अष्यर अषयभाव दर्संतु।
सु अषय सु रमण अमिय संजुत्तु, सो विषभंजनु भव्वु स उत्तु ॥ ३ ॥
सो भय षिपनिक रमन पहुत्तु, सो रमियो रमनह न्यान विन्यान।
सुर सुयं ऊवनो मत्त सुमत्तु, जिननाथ रमन सुइ समय संजुत्तु ॥ ४ ॥
सुर विंजन रमियो सुरह समाओ, न किंटि तासु सुयं सुर ग्राह।
सो रमियो न्यान अन्मोय अनंतु, सो हितमित परिनै समय संजुत्तु ॥ ५ ॥
अषिर सुर विंजन रमन सहाओ, सो पय अर्थह ममल सुभाओ।
रिषिम सुइ उवनौ पयह पउत्तु, सो उवनो परम तत्तु दरसिंतु ॥ ६ ॥

पद दर्सह परम तत्तु दरसन्तु, सो परम अमिय रस रसिय पउत्तु ।
सो भय विनासु है जिनह पउत्तु, सो सल्य ससङ्क भाव विलयंतु ॥ ७ ॥
सो अभय सुभाव जिनुत्तु पउत्तु, उवन सहावे दिष्टि दर्संतु ।
सो पद हंसउ अथ सहाओ, सो अर्थति अर्थह समय सहाओ ॥ ८ ॥
सो जिनह स उत्तउ ममल स उत्तु, सो कमलह कलियो मुक्ति पहुत्तु ।
सो अर्थ ऊवनौ समय सहाओ, हिययार स उत्तउ न्यान सहाओ ॥ ९ ॥
उववन्न दर्सिउ नन्तनन्तु, परिनाम, न्यान विन्यान संजुत्तु ।
सो कमलह कमल सहाउ जिनुत्तु, सो कमल रमन जिनमुक्ति सम्पत्तु ॥ १० ॥
अवयासह नन्तानन्त पउत्तु, अन्मोय दिष्टि सम समय संजुत्तु ।
सो न्यान अन्मोयह रसिय जिनुत्तु, सो अमिय पयोहर मुक्ति संजुत्तु ॥ ११ ॥
संसार सरीर जे सरनि विमुक्क, उववन जिन दस दर्संतु ।
सो सूषम परिनै षिपनिक उत्तु; सो न्यान अन्मोयह मुक्ति दर्संतु ॥ १२ ॥
जिन उवन जिनय सहाउ जिनुत्तु, जिन दस वयन जिन ममय सजुत्तु ।
जिनुत्तु निसंक संक विलयन्तु, सो समय संजुत्तु मुक्ति पहुत्त ॥ १३ ॥
जिनु तो तारन तरन सहाओ, सो न्यान अन्मोयह ममल सुभाओ ।
सो तरन सहावे सु समय पउत्तु, सो न्यान अन्मोयह संपत्तु ॥ १४ ॥

घत्ता—

इव उववन्न सहाओ, सुइ सुवन पऊ अमिय पयोहर सुतऊ ।
भय षिपिय भव्वु तं परम जिनु, सिद्ध समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ १५ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उदवनु उव उवन उवनऊ) अब सम्यग्दर्शनका उदय होगया है (उववन विष्टि उवन मऊ) इसी सम्यग्दर्शनके द्वारा परमात्मपदका प्रकाश होता है (उववन समय सुइ सिद्धि पऊ) आत्माके स्वभावका प्रकाश होना ही सिद्धपद है (उववन परम जिन उत्त मऊ) श्री परम जिन अरहन्त भगवानने ही ऐसा कहा है ॥ १ ॥

(उवन ऊवनो उवन पउत्त) सम्यग्दर्शनका उदय होनेसे ही आत्माका उदय होता है (उवन जिनुत्तु सुसमय संजुत्तु) ऐसा उदय ही आत्माके स्वभावको रखनेवाला है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (उवन पउत्तु सु न्यान पउत्तु) सम्यग्दर्शनके उदयके साथ ही सम्यग्ज्ञानका उदय होजाता है (सु कष्यर सुइ व्यंजन संजुत्तं) तब अक्षर स्वर व्यंजन सहित श्रुतज्ञान सम्यग्ज्ञान कहलाता है ॥ २ ॥

(सो विंजन सुइ संजोय पुनंतु) ऐसे स्वर व्यंजनोंको मिलाकर श्री जिनेन्द्रकी स्तुति करनी चाहिये (सो अष्यर अषय भाव दर्सेतु) ऐसी स्तुतिके अक्षर अविनाशी आत्मीक भावको दर्शाते हैं (सु कषय सुरमण अमिय संजुत्तु) इसी स्तुतिके करनेसे अविनाशी व आनन्दामृत सहित आत्मीक पदमें रमण होता है (सो विष भंजनु भव्वु स उत्त) ऐसा आत्मारूपी भव्यजीव मोह या कर्मके जहरको निकाल कर फैंक देता है ॥३॥

(सो भय षिपनिक रमन पहुत्तु) सो आत्मारूपी भव्यजीव सब भयोंको दूर करके निर्भय आत्मानुभवमें पहुँच जाता है (सो रमियो रमनह न्यान विन्यान) यह भव्य रत्नत्रयकी एकतारूप आत्मज्ञानमें रम जाता है (सुर सुयं उवनो मंत सुमत्तु) जिससे स्वयं केवलज्ञान सूर्यका उदय होजाता है, जो भलेप्रकार प्रसन्नरूप या आनन्दरूप है (जिननाथ रमन सुइ समय संजुत्त) वे ही श्री जिनेन्द्र हैं, जो स्वयं आत्मामें रमण कर रहे हैं ॥ ४ ॥

(सुर विंजन रमियो सुग्ह समाओ) स्वर व्यंजन शब्दोंके द्वारा सूर्यके समान स्वपर प्रकाशक ज्ञानके स्वभावमें रमण होता है अर्थात् श्रुतज्ञान केवलज्ञानका कारण है (न ग्रिटे तासु सुयं सुर ग्राह) उस ज्ञान सूर्यको ग्रसनेवाला मोहरूपी ग्रह स्वयं नहीं ग्रसता है अर्थात् मोहरूपी ग्रहका साहस नहीं होता है कि केवलज्ञान सूर्यको आच्छादित करे या फिर ज्ञानावरण कर्मका उदय नहीं होसक्ता है जिससे ज्ञान पर आवरण पड़े क्योंकि ज्ञानावरण कर्मका सर्वथा क्षय होगया है (सो रमियो न्यान अन्मोह अनन्तु) वह शुद्ध ज्ञान अनन्त सुखमें रमण कर रहा है (सो हितमित परिनै समय संजुत्तु) वहांपर आत्मा अपनी स्वाभाविक मर्यादासे स्वयंका जैसे हित हो उस तरह परिणमन कर रहा है अर्थात् शुद्धोपयोगमें शुद्ध परिणति ही होरही है ॥५॥

(अषिर सुर विंजन रमन सहाओ) **अक्षर स्वर व्यंजन शब्दोंके द्वारा आत्मामें रमण करना चाहिये** (सो पय अर्थह ममल सुभाओ) **वह आत्मा पदार्थ शुद्ध स्वभावका धारी है** (सुषिम सुइ उवनो पयह पउत्तु) **आत्माके मननसे आत्माका सूक्ष्म अनुभव करते करते परमात्मतत्वका दर्शन होजाता है अर्थात् केवलज्ञान द्वारा प्रत्यक्ष आत्माका साक्षात्कार होजाता है ॥ ६ ॥**

(पद दर्सह परम तत्तु दरमंतु) **अरहन्तपदमें पहुँचते ही परमात्म-तत्वका दर्शन होजाता है** (सो परम अमिय रस रमिय पउत्तु) **तब परम आनन्दामृत रसका स्वाद आजाता है** (सो भय विनासु तै जिनह पउत्तु) **तब ही सर्व भय रहित वीतरागभाव जग जाता है** (सो सल्य ससंक भाव विलयंतु) **सर्व शल्य व सर्व शङ्काएँ दूर हो जाती हैं। प्रत्यक्ष आत्मदर्शनमें शङ्काका व भयका कोई स्थान नहीं रहता है। ७ ॥**

(सो अभय सुभाव जिनुत्तु पउत्तु) **अभय आत्माका स्वभाव झलक जाता है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है** (उवन सहावे दिष्टि दरमंतु) **तब आत्मदृष्टि स्वप्रकाश स्वभावमें रमण कर आत्माको देखा करती है** (जो पद हंसइ अर्थ सहाओ) **यही पद आत्मारूपी हँसका व आत्म-पदार्थका स्वभाव है** (सो अर्थति अर्थइ समय सहाओ) **वही रत्नत्रयमई आत्म-पदार्थका स्वभाव है ॥ ८ ॥**

(सो जिनह स उत्तउ ममल म उत्तु) **उसी अरहन्त परमात्माके पदको जिन कहते हैं, उसीको मलरहित वीतराग कहते हैं** (सो अमलह कलियो मुक्ति पउत्तु) **वही कमल समान आत्मा अपनी कलाको पूर्ण विकसित करके अर्थात् पूर्ण कर्म रहित होकर मुक्तिपदमें पहुंच जाता है** (सो अर्थ ऊवनो समय सहाओ) **मुक्तिपदमें आत्मा पदार्थ अपने स्वभावमें ही उदय रहता है** (हिययार स उत्तउ न्यान सहाओ) **उसीको हितकारी पद तथा ज्ञान-स्वभावी पद कहते हैं ॥ ९ ॥**

(उववन्नह दर्सिउ नन्त नन्तु) **उस शुद्ध आत्मामें अनन्तानन्त दर्शन नामका गुण झलक रहा है** (परिनाम न्यान विन्यान संजुत्तु) **उस शुद्ध परिणाममें शुद्ध अनन्त ज्ञान भी गर्भित है** (सो कमलह कमल सहाव जिनुत्तु) **वही सर्व आत्मारूपी कमलोंमें उत्तम आत्मा है वह स्वभावमें है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है** (सो कमल रमन जिन मुक्ति संरत्त) **वह आत्मारूपी कमल अपने आपमें रमण करता हुआ जिन स्वरूप मुक्तिमें बना रहता है ॥१०॥**

(अवयासह नन्तानन्त पउत्तु) **उसके ज्ञानमें अनन्तानन्त पदार्थोंके झलकानेका अवकाश है** (अन्मोय दिष्टि सम समय संजुत्तु) **वहां अनन्त सुखका दर्शन है, वहां समताभाव सहित आत्मा है** (सो न्यान अन्मोयह रसिय

जिनुत्तु) वह मुक्तात्मा ज्ञानके आनन्दमें रसिक होरहे हैं, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (सो अमिय पयोहर मुक्ति संजुत्तु) वही आनन्दामृतके समुद्र हैं। इस तरह मुक्तात्माका स्वभाव है ॥ ११ ॥

(संसार सरीर जो सरनि विमुक्कु) अपने संसारमें शरीर धारणके फंदेसे छूट गये हैं, वे आवागमन रहित होगये हैं (उववन जिन दर्स दर्सतु) वे प्रकाशमान वीतराग आत्माका दर्शन करते हैं (सो सूषम परिनै षिपनिक उत्तु) वे मन व इंद्रियोंसे अगोचर परम सूक्ष्म अमूर्तीक हैं तथा क्षायिक भावोंमें परिणमन करते हैं ऐसा कहा गया है (सो न्यान अन्मोयह मुक्ति दर्सतु) वे ज्ञानानन्दमई मोक्ष भावको अनुभव कर रहे हैं ॥ १२ ॥

(जिन उवन जिनय सहाय जिनुत्तु) वे ही मुक्तात्मा प्रकाशमान जिन हैं, वे ही वीतराग स्वभावधारी हैं। ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (जिन दर्स वयन जिन समय संजुत्तु) वे प्रभु वीतराग आत्म दर्शनमें परिणमन कर रहे हैं। वे ही श्री जिनेन्द्र आत्मा है (जिनुत्तु निसंक संक विलयंतु) वे ही पूर्ण निःसंक हैं उनके कोई शंकाका कारण नहीं है, ऐसा श्री जिनेन्द्रने कहा है (सो समय संजुत्तु मुक्ति पहुत्तु) वे ही स्वभावमें रमण करनेवाले आत्मा मुक्ति प्राप्त हैं ॥ १३ ॥

(जिनु तो तारन तरन सहाओ) वे श्री सिद्ध भगवान तारन तरन स्वभाव है। आप भवसागरसे तर गये हैं व जो उनका ध्यान करता है वह भी संसारसे पार होजाता है (सो न्यान अन्मोयह ममल सुभाओ) वे ही ज्ञानानन्दमई शुद्ध स्वभावधारी हैं (सो तरन सहावे सु समय पउत्तु) उन्होंने तरण स्वभावके कारण अपने आत्माको आप ही पालिया है (सो न्यान अन्मोयह सिद्धि संपत्तु) वे ज्ञानानन्दमें मगन सिद्धगतिको प्राप्त कर चुके हैं ॥ १४ ॥

(इय उववन सहाओ सुइ सुवन पऊ) श्री सिद्धात्मा परम उदयरूप स्वभावमें हैं, वे ही परमानन्दके स्वादको लेरहे हैं (अमिय पयोहर सुनऊ) वे ही आनन्दामृतके समुद्र हैं (भय षपिय भव्व तं परम जिनु) हे भव्य-जीव! वे ही निर्भय हैं, वे ही परम जिन हैं (सिद्ध समय सिद्धि संपत्तु) उन्होंने आत्माकी सिद्धि प्राप्त करली हैं ॥ १५ ॥

भावार्थ—इस जयमालमें सिद्ध भगवानके गुण गाकर अपने आत्माका मनन किया गया है। आत्माको परमात्मा बतानेवाला रत्नत्रय धर्म है। उसमें मुख्य सम्यग्दर्शन है। सम्यग्दर्शन होते हुए ही ज्ञान सम्यग्ज्ञान व चारित्र सम्यक्चारित्र होता है। सम्यग्दर्शनके होते हुए ही आत्मज्ञानका प्रकाश होता है तब ध्याता भव्यजीव उत्तम उत्तम मंत्रोंके द्वारा व अन्य शब्दोंके द्वारा शुद्धात्माका मनन करता है। शब्दोंके

द्वारा आत्मीक भावमें थिरता प्राप्त होजाती है। तब आत्मानुभव जग जाता है और वहां आत्मानन्दका अनुभव होने लगता है। इसीको मोक्षमार्ग कहते हैं, यहां परम समताभाव रहता है। इसीके अभ्याससे यह गुणस्थानोंपर चढ़ता जाता है। मोहका नाशकर फिर तीन घातीय कर्मोंका नाश करके केवलज्ञानी अरहन्त परमात्मा होजाता है, फिर यही आत्मा शरीरकी आयु समाप्त करके सर्व कर्ममलरहित शुद्ध सिद्ध परमात्मा होजाता है। वे परमात्मा फिर संसारमें भ्रमण नहीं करते हैं, सदा ही अपने ज्ञानानन्द स्वभावमें मगन रहते हैं, वे नित निरंजन निर्विकार परम वीतराग भावके धारी हैं।

परमात्मप्रकाशमें श्री योगेन्द्रदेव कहते हैं—

वेयहिं सत्थहिं इन्द्रियहिं जो जिय मुणहु ण जाइ। णिम्मल झाणहिं जो विसउ सो परमप्पु अणाइ ॥ २३ ॥
केवल दंसण णाण मउ केवल सुक्ख सहाउ। केवल वीरिउ सो मुणहि जो जि परावरु भाउ ॥ २४ ॥
जेहउ णिम्मलु णाणमउ सिद्धिहिं णिवसइ देउ। तेहउ णिवसइ बंभु परु देहहं मं करि भेउ ॥ २६ ॥

भावार्थ—वह अनादि परमात्मा वेद, शास्त्र व इंद्रियोंसे जाना नहीं जाता है। वह तो एक निर्मल ध्यानका विषय है। वह अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख व अनन्त वीर्य स्वभाव है। वही सबसे उत्कृष्ट पदार्थ है। जैसा सिद्धगतिमें निर्मल ज्ञानमई देव बिराजमान है वैसा ही निश्चयसे परमब्रह्म अपने शरीरमें बिराजमान है, इसमें भेद न माने।

---

(६२) हिययार रमन फूलना गाथा १२५१ से १२९३ तक।

उव उवनौ उवन उवन पऊ, उव उवनौ न्यान विन्यान, सुयं जिनु ॥ १ ॥
हिययार रमन तं मुक्ति पऊ, तं मुक्तिहि सिद्ध सरूव, सहज रुइ
हिययार रमन तं मुक्ति पऊ ॥२॥ (आचरी)
जिन जिनयति जिनय जिनेन्द्र पऊ, जिन जिनि पउ कम्मु अनन्त, रमन जिन ॥३॥ हिययार०
जिन जिनवर उत्तउ ममल पऊ, तं ममलह सिद्ध सरूव, सहज जिन ॥ ४ ॥ हिय० ॥

सुइ सिद्ध सहज गुन नन्त मऊ, भय षिपनिक भव्वु स उत्तु, ममल जिन ॥ ५ ॥ हियं० ॥
संमत्त सहिय गुन नन्द मऊ, तं नन्द आनन्द स उत्तु, ममल जिन ॥ ६ ॥ हियं० ॥
तं न्यान विन्यान अनन्त पऊ, सुइ दर्सन नन्त सहाउ, षिपक जिन ॥ ७ ॥ हियं० ॥
त अमिय रमन रस सिद्धि पऊ, तं रमियो विंद विन्यान, मुक्ति जिन ॥ ८ ॥ हियं० ॥
विन्यान वीर्य तं उवन मऊ, तं सुष्य सु परमानन्द, जिनय जिन ॥ ९ ॥ हियं० ॥
सुहमतह सुद्ध सरूव पऊ, तं हिय हिययार सजुत्तु, सहज जिन ॥ १० ॥ हियं० ॥
तं अर्क सुभाव सु रमन पऊ, त रमियउ विंद विन्यान, अलष जिन ॥ ११ ॥ हियं० ॥
तं हिय हुवयारह रमन पऊ, तं अरुह रमन स सहाउ, परम जिन ॥ १२ ॥ हियं० ॥
अवगाहन रमनह सिद्ध पऊ, सु अगुरुलघु समय सुभाउ, सुयं जिन ॥ १३ ॥ हियं० ॥
तं बाधा हो विलय सो समय पऊ, सिद्ध समय सिद्धि संपत्तु, परम जिन ॥ १४ ॥ हियं० ॥
निसंक सहावे सु दस मऊ, भय सल्य संक विलयन्तु, जिनय जिन ॥ १५ ॥ हियं० ॥
तं कष्या रहितु सो ममल पऊ, तं समल कम्मु विलयन्तु, ममल जिन ॥ १६ ॥ हियं० ॥
तं निक्रति वित्ति न पिच्छए, तं मूढ दिष्टि विलयन्तु, आनन्द जिन ॥ १७ ॥ हियं० ॥
उवगूहन अंग जिनुत्तीयो, सुइ न्यानीय दोष गलंतु, परम जिन ॥ १८ ॥ हियं० ॥
तं स्थिति रमनह रयन पऊ, तं स्थिति सिद्ध सरूव, अलष जिन ॥ १९ ॥ हियं० ॥
तं वाच्छल विनय संजुत्तु मौ, विन्यान न्यान दर्संतु, सुयं जिन ॥ २० ॥ हियं० ॥
तं परम तत्तु तं परम जिनु, सुइ भद्र भाव उवलद्ध, जिनय जिन ॥ २१ ॥ हियं० ॥
तं सिद्ध सहाव स उत्त जिनु, जिन हितमित परिनै जुत्तु, नन्द जिन ॥ २२ ॥ हियं० ॥

तं चेयन नन्दह नन्द मऊ, तं सहज नन्द ससरूव, जिनय जिन ॥ २३ ॥ हिय० ॥
तं लष्यन लषियउ अलष पऊ, तं लषियो जिन उवएसु सहज जिन ॥ २४ ॥ हिय० ॥
तं कमल कंद जिन उत्तमऊ, परिनामू नन्तानन्त सुकिय जिन ॥ २५ ॥ हिय० ॥
मौ एक अङ्ग तं ममल पऊ, तं समल कम्मु विलयन्तु, परम जिन ॥ २६ ॥ हिय० ॥
तं विंजन रमनह रयन पऊ, सुर रमनह सिद्ध सरूव, जिनय जिन ॥ २७ ॥ हिय० ॥
तं कमल गिरा जिन उत्त समू, तं चौसठि वरन चरंतु, ममल जिन ॥ २८ ॥ हिय० ॥
त परम अमिय रस परम पओ, तं कमल कलिय जिन उत्त, परम जिन ॥ २९ ॥ हिय० ॥
तं कमलह कलियो उत्त जिनु, त कलियो अंग दिगन्त, सहज जिन ॥ ३० ॥ हिय० ॥
सम अर्थह समय संजुत्तु पऊ, भय षिपनिक भय जिन उत्तु, ममय जिन ॥ ३१ ॥ हिय० ॥
जिन जिनय समय तं सहज जिनु, जिन नन्द आनन्द स उत्तु, अलष जिन ॥ ३२ ॥ हिय० ॥
जिन सहज नन्द ससहाउ लई, तं परमनन्द परमेष्टि, परम जिन ॥ ३३ ॥ हिय० ॥
जिन नन्दह नन्द सनन्द जिनु, जिन जिनपति कम्म महाउ, जिनय जिन ॥ ३४ ॥ हिय० ॥
जिन षिपनिक सरूवे षिपक मऊ, षिपि कम्मु सिद्धि संपत्तु, परम जिन ॥ ३५ ॥ हिय० ॥
विन्यान वीय वाच्छल रओ, तं न्यान वृत्ति पिच्छतु, ममल जिन ॥ ३६ ॥ हिय० ॥
तं ममलह ममल जिनुत्त पऊ, आगंतु रमन सिधि रत्तु, सुयं जिन ॥ ३७ ॥ हिय० ॥
भय षिपिय भव्वु त मुक्ति पऊ, तं अमिय रमन संजुत्तु, जिनय जिन ॥ ३८ ॥ हिय० ॥
तं नन्द आनन्दह परम पऊ, जिन जिनयति जिन उवएसु, सहज जिन ॥ ३९ ॥ हिय० ॥
तं ममल सुभाओ परम पओ, तं अर्थति अर्थह भेउ, अमिय जिन ॥ ४० ॥ हिय० ॥

परमप्पह सहियो परम पऊ, तं चेयन नन्द सनन्द, परम जिन ॥४१॥ हिय० ॥
जिन सिद्ध मुक्ति स सहाउ मऊ, अन्मोय सहाव सलीन, सहज जिन ॥४२॥ हिय० ॥
तं तारन तरनह समय मऊ, सुइ समय मिद्धि संपत्तु, सिद्ध जिन ॥४३॥ हिय० ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनौ उवन उवन पऊ) **अब उदयरूप सम्यग्दर्शनका उदय होगया है** (उव उवनौ न्यान विन्यान) **उसीके साथ सम्यग्ज्ञानका उदय होगया है ॥ १ ॥**

(हिययार रमन तं मुक्ति पऊ) **जो कोई हितकारी आत्माके ज्ञानमें रमण करते हैं, वे ही मुक्तिको पाते हैं** (तं मुक्ति सिद्ध सरूव, सहज जिन) **वह मुक्ति सिद्धके स्वरूपमें है, स्वाभाविक रुचिधारी सिद्ध होते हैं ॥२॥**

(जिन जिनयति जिनय जिनेन्द पऊ) **श्री जिनेन्द्रका पद जयवन्त हो जिसने जीतने योग्य कषायादि भावोंको जीत लिया है** (जिनि जिनि पउ कम्मु अनंत, रमन जिन) **व जिन्होंने अनन्त कर्मोंको भी जीत लिया है, जो अपने वीतराग भावमें रमण कर रहे हैं ॥ ३ ॥**

(जिन जिनवर उत्तउ ममल पउ) **श्री जिनेन्द्रने जिसे मलरहित शुद्ध पद कहा है** (तं ममकह सिद्ध सरूव, सहज जिन) **वह कर्म रहित सिद्ध भगवानका स्वरूप है, वे ही स्वाभाविक जिन हैं ॥ ४ ॥**

(सुइ सिद्ध सहज गुन नंत मऊ) **वे ही सिद्ध महाराज स्वाभाविक अनन्त गुणोंके धारी हैं** (भय षिपनिक भव्वु स उत्तु, ममल जिन) **हे भव्य ! उनको निर्भय कहा गया है, वे ही रागादि मलरहित जिन हैं ॥ ५ ॥**

(संमत्त सहिय गुन नंद मऊ) **वे सिद्ध भगवान मोहकर्मके नाशसे सम्यग्दर्शनके धारी हैं। यह सम्यक्त गुण आनन्दमई है** (तं नंद आनंद स उत्तु, ममल जिन) **उसी सम्यक्त गुणके परिणमनको आनन्द गुणमें मगन होना कहा गया है अर्थात् जहां सम्यक्तभावका अनुभव होता है वहां आत्मानन्दका अनुभव होता है। वे सिद्ध रागादि मलरहित जिन हैं ॥ ६ ॥**

(तं न्यान विन्यान अनंत पऊ) **वे सिद्ध ज्ञानावरण कर्मके नाशसे अनन्त ज्ञानको प्राप्त होचुके हैं** (सुइ दर्सन नन्त सहाउ, षिपक जिन) **तथा उनका स्वभाव अनन्त दर्शन, दर्शनावरण कर्मके नाशसे प्रगट होगया है। वे सर्व कर्मोंको क्षय किये हुए क्षायिक जिन हैं ॥ ७ ॥**

(तं अमिय रमन रस सिद्धि पऊ) **वे सिद्ध भगवान आनन्दामृत रसके पानमें मगन हैं** (तं रमियो विंद

विन्यान, मुक्ति जिन) वे ज्ञान चेतनाका स्वाद लेरहे हैं, वे ही मुक्त प्राप्त जिन हैं। आत्मज्ञानका अनुभवना ही ज्ञान चेतना है ॥ ८ ॥

(विन्यान वीर्य तं उवन मऊ) अन्तराय कर्मके नाशसे व आत्मज्ञानके बलसे सिद्ध भगवानके अनन्त वीर्यका प्रकाश होगया है (तं सुग्म सु परमानंद, जिनय जिन) चारों घातीय कर्मोंके नाशसे उनको परमानन्दमई अनन्त सुखकी प्राप्ति होगई है। वे ही कर्मविजयी जिन हैं ॥ ९ ॥

(सुइ मउइ सुद्ध सरूव पऊ) नाम कर्मके नाशसे सिद्ध भगवानने सूक्ष्मत्व गुण सहित विशुद्ध स्वरूपको प्राप्त कर लिया है, न उनके शरीर है, न वह इंद्रिय व मनके गोचर हैं, ऐसे सूक्ष्म हैं (तं हिय हिययार संजुत्त, सहज जिन) वे सिद्ध भगवान अपना हित कर चुके हैं व दूसरोंको हितकारी हैं। जो उनका ध्यान करते हैं वे स्वयं सिद्ध होजाते हैं। वे स्वभावसे ही जिन हैं ॥ १० ॥

(तं अर्क सुभाव सु रमन पऊ) सिद्ध भगवान स्वपर प्रकाशक सूर्यके समान हैं व अपनेसे आपमें रमण कर रहे हैं (तं रमियउ विंद विन्यान अलष जिन) वे ज्ञानके ही स्वादमें मगन हैं। श्री सिद्ध जिनका स्वरूप इंद्रियोंके व मनके द्वारा जानने योग्य नहीं है। जो आत्मस्थ होता है वही सिद्धको जानता है ॥ ११ ॥

(तं हिय हुवयारह रमन पऊ) वे सिद्ध आत्महितमें उपकारी निजपदमें रमण करने वाले हैं (तं अरुह रमन स सहाउ, परम जिन) वे सिद्ध अपने स्वाभाविक पूज्यनीय पदमें रमण कर रहे हैं, वे ही श्रेष्ठ जिन हैं ॥१२॥

(अवगाहन रमनह सिद्ध पऊ) सिद्ध भगवानने आयुकर्मके नाशसे अवगाहन गुणको प्राप्त कर लिया है वे उसीमें रमण कर रहे हैं। एक सिद्धके आकारकी अवगाहनामें अनन्त सिद्ध समा जाते हैं तौभी सत्ता सबकी निराली बनी रहती है (सु अगुरुलघु समय सुभाउ, सुयं जिन) तथा गोत्रकर्मके नाशसे अगुरु लघु गुण सहित आत्माके स्वभावको प्राप्त कर लिया है जिससे उनमें छोटे बड़ेपनेकी कोई कल्पना नहीं है। वे स्वयं ही अपने पुरुषार्थसे जिन हुए हैं ॥ १३ ॥

(तं बाधा हो विलय सो समय मऊ) श्री सिद्ध महाराजने वेदनीय कर्मके नाशसे अव्याबाध गुणको प्राप्त कर लिया है जिससे उनको कोई बाधा या अन्तराय नहीं पड़ता है, वे आत्मारूढ़ ही हैं (सिद्ध समय सिद्धि संपत्त, परम जिन) उन्होंने आत्मामई होकर सिद्धि प्राप्त करली है। वे ही श्रेष्ठ जिन हैं ॥ १४ ॥

(निसंक सहावे सु दर्स मऊ) श्री सिद्ध भगवान शंका रहित अपने दृढ़ स्वभावमें लीन हैं। क्षायिक

सम्यग्दर्शनके धारी हैं (भय सरय संक विळयंतु, जिनय जिन) उनके सर्व भय विला गए हैं, वे ही कर्मोंके जीतनेवाले जिन हैं। भावार्थ–श्री सिद्ध भगवान सम्यक्तके प्रथम अंग निःशंकित अंगके धारी हैं ॥ १५ ॥

(तं कष्या रहित सो ममल पऊ) श्री सिद्ध भगवान सर्व इच्छाओंसे रहित परम निःकांक्षित अंगके धारी शुद्ध स्वभावमई हैं (तं सयल कम्म विळयंतु ममल जिन) इसी अंगके द्वारा उनके सर्व कर्म विला गए हैं, न भाव कर्म रागादि हैं न द्रव्य कर्म ज्ञानावरणादि हैं, न शरीरादि नोकर्म हैं, वे सिद्ध मल रहित जिन हैं ॥१६॥

(तं निकुति विति न पिच्छए) सिद्धोंमें कोई तिरस्कार या घृणाका स्वभाव नहीं देखा जाता है, वे यथार्थ निर्विचिकित्सित अंगके धारी हैं (तं मूढ दिष्टि विलयंतु आनंद जिन) उनमें केवलज्ञान होनेके कारणसे कोई मूढदृष्टि नहीं है। इससे वे यथार्थ अमूढ़दृष्टि अंगके धारी हैं। वे परमानंद धारी जिन हैं ॥ १७ ॥

(उवगूहन अंग भितुत्तीयो) वे सिद्ध भगवान सर्व दोषोंसे रहित होनेके कारण जिन भगवान कथित उपगूहन अङ्गके धारी हैं (सुइ न्यानीय दोष गलंतु, परम जिन) वे केवलज्ञानी हैं, उनके सब दोष क्षय होगये हैं, वे ही उत्कृष्ट जिन परमात्मा हैं ॥ १८ ॥

(तं स्थिति रमनइ रयन पऊ) वे सिद्ध भगवान रत्नत्रय पदमें परम दृढ़तासे रमण कर रहे हैं इससे वे स्थितिकरण अंगके धारी हैं (यं स्थिति सिद्ध सरूव, अलष जिन) उनकी स्थिति सिद्ध स्वरूपमें है। वे मन व इंद्रियोंसे अगोचर अलष जिन है ॥ १९ ॥

(तं वाच्छल विनय संजुत्त मऊ) वे सिद्ध भगवान अपने रत्नत्रय स्वभावमें बड़ी विनय व भक्तिसे लीन हैं इससे निश्चय वात्सल्य अंगके धारी हैं (विन्यान न्यान दर्संतु, सुयं जिन) वे अपने ज्ञान स्वभावका बड़े भावसे दर्शन कर रहे हैं, वे स्वयं जिन हुए हैं ॥ २० ॥

(तं परम तत्तु तं परम जिनु) वे परमात्मतत्व हैं, वे श्रेष्ठ जिन हैं, उन्होंने अपने आत्माकी पूर्ण प्रभावना कर डाली है, वे सच्चे प्रभावना अंगके धारी हैं (सुइ मउ भाव उवलद्ध, जिनय जिन) उन्होंने मङ्गलकारी शुद्ध भावको प्राप्त कर लिया है, वे ही सच्चे वीर जिन हैं ॥ २१ ॥

(तं सिद्ध सहाव स उत्त जिनु) श्री जिनेन्द्रने इस तरह आठ अंगधारी सिद्धका स्वभाव कहा है (जिन हितमित परिनै उत्तु, नन्द जिनु) वे श्री जिनेन्द्र सिद्ध परम हितकारी व अपनी ही मर्यादित परिणतिमें लीन हैं, कभी स्वभावसे विभावरूप परिणमन नहीं करते हैं, वे आनन्दमई जिन हैं ॥ २२ ॥

(तं चेयन नन्दह नन्द मउ) वे ही चिदानन्द हैं, वे ही आनन्दमई हैं (तं सहजनन्द ससरूव जिनय जिनु) वे ही सहजानन्दमई स्वस्वरूपमें रमण करते हैं, वे ही वीतराग जिन हैं ॥ २३ ॥

(तं लष्यन लषियो अलष पऊ) श्री सिद्ध भगवानने अपने अलष पदमें रमण करके अपने स्वाभाविक लक्षणको जान लिया है (तं लषियो जिन उवएसु, सहज जिन) उन्होंने जिनेन्द्रके उपदेशके सारको जाना है या अनुभव किया है, वे ही सहज स्वाभाविक जिन हैं ॥ २४ ॥

(तं कमल कंद जिन उत्तमऊ) वे ही अपने आत्मारूपी कमलके कंद हैं, वे ही उत्तम जिन हैं (परिनाम नन्तानन्त, सुकिय जिन) वे अपने अनन्तानन्त गुण पर्यायोंमें स्वभावसे परिणमन करनेवाले हैं, वे आप ही जिन हुए हैं ॥ २५ ॥

(सौ एक अट्ठ तं ममल पऊ) जो कोई १०८ दफे उस निर्मल सिद्धपदको ध्याता है (तं समक कम्मु विलयंतु, परम जिन) उसके सर्व कर्म विला जाते हैं। वे सिद्ध ही श्रेष्ठ जिन हैं ॥ २६ ॥

(तं विंजन रमनह रयन पऊ) वे रत्नत्रयमई पदमें प्रकाशमान रूपसे रमण कर रहे हैं (सुर रमनह सिद्ध सरूव, जिनय जिन) वे सूर्य समान आत्मा अपने सिद्ध स्वभावमें रमण कर रहे हैं, वे ही उत्कृष्ट जिन हैं ॥२७॥

(तं कमल गिरा जिन उत्त समू) श्री जिनेन्द्ररूपी कमलसे वाणीका लगातार प्रकाश होता है (तं चौसठि परम चरन्तु ममल जिन) उस वाणीकी द्वादशांगमें रचना श्रुतकेवली करते हैं, उस श्रुतके अपुनरुक्त अक्षर ६४ अक्षरोंके परस्पर संयोगसे बनते हैं। इतने हैं—६४ अक्षरोंके द्विसंयोगीसे लेकर ६४ संयोगी तक कुल अपुनरुक्त अक्षर १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ होते हैं। ये अक्षर १ कम एक ट्री प्रमाण है। २ के अङ्कको ६ दफे वर्ग किया जाय, जितना आवे उसमें १ कम है। जैसे २×२=४, ४×४=१६, १६×१६= २५६। इस तरह कर लेना चाहिये। ऐसे श्रुतसे जिन सिद्धोंका बोध होता है, वे शुद्ध वीतराग जिन हैं ॥२८॥

(तं परम अमिय रस परम पओ) वे परमानन्दमई अमृत रसको उत्तम प्रकारसे स्वादमें लेते हैं (तं कमल कलिय जिन उत्त परम जिन) उनहीको प्रफुल्लित कमलके समान जिन कहा गया है, वे ही श्रेष्ठ जिन हैं ॥२९॥

(तं कमलह कलियो उत्त जिन) उन्हींको प्रफुल्लित कमलके समान जिनेन्द्रने कहा है (तं कलियो अंग दिगंत सहज जिन) उस कमलकी कली या प्रभा दशो दिशाओंमें फैली हुई हैं, वे स्वाभाविक जिन हैं ॥ ३० ॥

(सम अर्थह समय संजुत्त पऊ) वे सिद्ध भगवान समताभावसे पूर्ण आत्मारूपी पदार्थ हैं (भय षिपनिक भव्वु जिन उत्तु समय जिन) हे भव्य! उनहीको भयसे रहित श्री जिनेन्द्रने कहा है। वे ही वीर आत्मा हैं ॥ ३१ ॥

(जिन जिनय समय तं सहज जिनु) वे ही विजयी जिन हैं, वे ही स्वाभाविक सहज आत्मा जिन हैं (जिन नंद आनंद स उत्तु अलष जिन) उनहीको आनन्दमें मग्न जिन कहा गया है, वे मन व इन्द्रियोंसे अगोचर हैं ॥ ३२ ॥

(जिन सहज नंद स सहाव लई) वे सिद्ध जिनेन्द्र सहजानन्दमई अपने स्वभावको लिये हुए हैं (तं परम नंद परमेष्टि, परम जिन) वे ही परमानंदमई परमेष्ठी हैं, परम पदमें तिष्ठनेवाले हैं, वे ही श्रेष्ठ जिन हैं ॥ ३३ ॥

(जिन नंदह नंद सनंद जिनु) वे जिनेन्द्र आनंदमें मग्न हैं, आनन्दमई हैं (जिन जिनयति कम्म सहाउ जिनय जिन) जिन्होंने कर्मोंके स्वभावको जीन लिया है, वे ही वितराग जिन हैं ॥ ३४ ॥

(जिन षिपक सरूवे षिपक मऊ) श्री सिद्ध भगवान सर्व कर्मोको क्षय कर चुके हैं इसलिये क्षायिक भावोंके रखनेवाले क्षायिक स्वरूप हैं (षिपि कम्मु सिद्धि मंगत्तु परम जिन) उन्होंने कर्मोंका क्षय करके सिद्धपद पाया है। वे श्रेष्ठ जिन हैं ॥ ३५ ॥

(विन्यान वीय वाच्छल्ल रओ) वे ज्ञानके बीज हैं अर्थात् उनका ध्यान करनेसे आत्मज्ञान पैदा होता है, वे आत्माके प्रेममें अनुरक्त हैं अर्थात् वे आत्मरमी हैं (तं न्यान वृत्ति पिच्छंतु, ममल जिन) वे ज्ञानमें ही परिणमन करते हुए ज्ञानका अनुभव कर रहे हैं, वे ही शुद्ध जिन हैं ॥ ३६ ॥

(तं ममलह ममल जिनुत्त पऊ) वे ऐसे पदमें हैं जो रागादि मलसे भी रहित हैं और कर्ममलसे भी रहित है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (आगंतु रमन सिद्धि रत्तु, सुयं जिन) वे सिद्ध भगवान अपने नवीन प्राप्त सिद्ध पदमें रमण करते हुए एकाग्र हैं, वे स्वयं जिन हुए हैं ॥ ३७ ॥

(भय षिपिय भव्वु तं मुक्ति पऊ) वे सर्व भयोंको क्षय करके मुक्ति प्राप्त कर चुके हैं। हे भव्य! (तं अमिय रमन संजुत्तु, जिनय जिन) वे आनन्दामृतमें रमण करते हैं। वे ही वीर जिन हैं ॥ ३८ ॥

(तं नंद आनंदह परम पऊ) सिद्ध भगवानका श्रेष्ठ पद आनन्दमें मग्न हैं (जिन जिनयति जिन उवएसु, सहज जिन) जैसा जिनेन्द्रका उपदेश था उसीके अनुसार उन्होंने कर्मोंको विजय किया है। वे ही सहज स्वाभाविक जिन हैं ॥ ३९ ॥

(तं ममल सुभाओ परम पओ) सिद्धका परम पद शुद्ध स्वभावमें है (तं अर्थह अर्थति भेउ, अमिय जिन) वे सिद्ध रत्नत्रयमई पदार्थ हैं। वे अमृत स्वरूप जिन हैं ॥ ४० ॥

(परमप्पाह सहियो परम पऊ) सिद्धका श्रेष्ठपद परमात्मारूप है (तं चेयन नंद सनंद परम जिन) वह चिदानन्दमें मगन हैं, वे ही श्रेष्ठ जिन हैं ॥ ४१ ॥

(जिन सिद्ध मुक्ति स सहाउ मऊ) श्री वीतरागी जिनने स्वभावमई मोक्षका पद सिद्ध कर लिया है (अन्मोय सहाव सलीन, सहज जिन) वे आत्मानन्दके स्वभावमें लीन हैं, वे ही स्वाभाविक जिन हैं ॥ ४२ ॥

(तं तारन तरनह समय मऊ) वे ही आत्मारूप प्रभु तारणतरण हैं। आप तो भवसागरके पार पहुँच गये हैं, व जो उनका ध्यान करता है वह भी संसारसे पार होता है (सुइ समय सिद्धि संपत्तु, सिद्ध जिन) आत्माने उस सिद्धपदको पालिया है, वे ही सिद्ध जिन हैं ॥ ४३ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें श्री सिद्ध परमात्माके गुणोंका मनन किया गया है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र, रत्नत्रय धर्मके प्रतापसे जो आत्मा आगे कर्मोंको क्षय कर देताहै और क्षायिक भावोंको प्राप्त कर लेता है वही सिद्ध होजाता है उसके आत्माके सर्व गुण विकसित होजाते हैं, आठ कर्मोंके क्षयसे आठ मुख्य गुणोंके नाम बताये हैं। सम्यक्त, अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्य, अनन्तदर्शन, सूक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व और अव्याबाध। प्रभु परम शुद्ध परमात्मा हैं। उनके शरीरका व किसी पुद्गलके बंधका कोई सम्बन्ध नहीं है। वे परमानन्दमें मगन हैं। उनके ही क्षायिक सम्यक्त है व वे ही सम्यक्तमें आठों अंगोंको निश्चयसे धारण करते हैं। वे अपने शुद्ध स्वभावमें विना किसी शंका व भयके तिष्ठ रहे हैं इससे निःशङ्कित अंगके पालक हैं।

उनमें कोई सांसारिक सुखकी वासना नहीं है, वे आत्मानन्दमें मगन हैं, इससे निःकांक्षित अङ्गके धारी हैं। उनका किसी भी पदार्थपर तिरस्कार भाव नहीं है, वे पूर्ण द्वेषरहित हैं, इससे निर्विचिकित्सित अङ्गके धारी हैं। वे परम आत्मीक प्रत्यक्ष ज्ञानके द्वारा आत्माके यथार्थ स्वरूपमें रमण करते हैं, उनके कोई मूढ़ता नहीं है, इससे अमूढ़दृष्टि गुणके धारी हैं। उन्होंने अपने गुणोंको बढ़ा लिया है, सर्व रागादि दोषोंको दूर कर दिया है, इससे वे उपबृंहण या उपगूहन अङ्गके धारी है। सिद्धोंने अपने शुद्ध स्वभावमें अनन्तकालके लिये अपनी स्थिति प्राप्त कर ली है, इससे वे स्थितिकरण अङ्गके धारी हैं। सिद्ध भगवान अपने

शुद्ध स्वरूपके बड़े प्रेमी हैं, आत्म स्वभावमें आसक्त हैं, इससे वे वात्सल्य गुणके धारी हैं। उन्होंने पूर्ण परमात्म तत्वको पाकर आत्माकी प्रभावना कर ली है। इससे वे प्रभावना अङ्गके धारी हैं। श्री सिद्ध परमात्मा सहज स्वभाव रूप हैं। द्रव्यापेक्षा अनादि अनन्त कालमें एकाकार हैं। पर्यायापेक्षा अभूतपूर्व सिद्धपर्याय उन्होंने प्राप्त की है। उनकी महिमा वचन अगोचर है। जो उनका ध्यान करते हैं वे भी सिद्ध होजाते हैं। तीर्थंकर सदा सिद्ध हीका अनुभव करते हैं, इसीसे वे भवसागरके पार होजाते हैं। इसलिये सिद्ध भगवानको तारन तरन कहते हैं। जो सिद्धोंके शुद्ध भावमें अपनेको जोड़ता है वही यथार्थ सिद्ध भगवानकी स्तुति करता है।

परमात्म-प्रकाशमें श्री योगेन्द्रदेव सिद्ध परमात्माका स्वरूप बताते हैं—

सयलहं कम्महं दोसहंवि, जो जिणु देउ विभिण्णु। सो परमप्पपयासु तुहुं जोइय णिय में मण्णु ॥ ३२९ ॥

केवल दंसण णाण सुहु वीरिउ जो जि अणंतु। सो जिण देउ वि परम मुणि परम पयासु मुणंतु ॥ ३३० ॥

जम्मण मरण विवज्जियउ चउ गइ दुक्ख विमुक्कु। केवल दंसण णाण मउ णंदउ तित्थु जि मुक्कु ॥ ३३२ ॥

भावार्थ—जो जिनदेव सर्व कर्मोंसे व सर्व दोषोंसे रहित है उन्हींको नियमसे हे योगी! तू परमात्मा जान। जो अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, अनन्त वीर्यके धारी हैं वे ही परमात्मा हैं उन्हींको परम मुनि जिनदेव मानते हैं। वे जन्म मरणसे रहित हैं, चारों गतिके दुःखोंसे छूट गए हैं, वे अपने शुद्ध दर्शन व शुद्ध ज्ञानमें रहते हुए मुक्त दशामें आनन्दका भोग करते हैं।

धम्मरसायणमें श्री पद्मनन्दि मुनि कहते हैं—

ण वि अत्थि माणुसाणं आदसमुत्थं चिय विषयातीदं। अव्वुच्छिन्नं च सुहं अनोवमं जं च सिद्धाणं ॥ १९० ॥

अट्ठविहकम्मवियडा सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा। अट्ठगुणा किदकिच्चा लोयग्गणिवासिणो सिद्धा ॥ १९१ ॥

भावार्थ—जो आत्मासे ही होनेवाला, इंद्रियोंके विषयोंसे अतीत, अविनाशी व अनुपम सुख सिद्धोंको होता है वैसा साधारण मानवोंको नहीं होसक्ता। वे सिद्ध भगवान आठ कर्म रहित हैं, आठ गुण सहित हैं, परम शांत हैं, मल रहित निरोगी हैं, अविनाशी हैं, कृतकृत्य हैं, वे लोकाग्र निवासी हैं।

(६३) उवन विंद रमन वधाओ गाथा १२९४ स १३०२ तक ।

उव उवनो हो उवन विंद रम उत्तु जहो, उव उवन कमल रम ममल पओ ।
उव उवनो हो तारन तरन म उत्तु जुहो. कमल विंद रम परम पओ ॥ १ ॥
उव उवनो हो उवन हिययार संजुत्त जुहो, हुवयार विंद रम रमन पओ ।
उव उवनो हो सुइ सहयार मजुत्तु जुहो, कमल रमन रम समय मऊ ॥ २ ॥
समय म उत्तुह मम ममय रमन जिनु हो, समय कमल रम विंद मऊ ।
रमि रमियो हो अमिय रमन जिन उत्तु जुहो, ऐ रमियो कमल सिद्ध पऊ ॥ ३ ॥
पिपि पिपियो हो सुयं पिपक जिनु उत्तु जुहो, सुयं पिपिय सुइ धुव रमनू ।
सुइ सुयं स्कंधह सुयं ममल जिनु, कुन्यान विलय सुइ जिनय जिनु ॥ ४ ॥
मय पयं पउलह हो गुप परम जिनु, उव उवन सहावे न्यानी सहज जिनु ।
सुइ सहज [illegible] हो चेय चेतन जिनु हो, [illegible] महियो [illegible] जिनु ॥ ५ ॥
स्थानह महियो महज रमन जिनु हो, आयरन परम जिन परम पओ ।
तं विंद रमन रस कमल रमन जिनु हो, जिन जिनियो कम्मु अनन्त सुई ॥ ६ ॥
तं गुप्तिह गुप्त ग्रहिज रमन जिनु हो, अर्थ विंद जिनु कमल जिनु ।
कमलह कलियो हो कमल सरूवे जिन हो, चौसठि चमर जिनु चरन मऊ ॥ ७ ॥
षट् कमलह सहियो अर्थति अर्थ जुहो, तं अर्क विंद रस रमन पऊ ।
तं अर्क उवनो हो अर्क रमन जिन, ऐ विंद विन्यान सु कमल मऊ ॥ ८ ॥
तं ममलह ममल कमल रमन जिनु हो, ऐ अर्क विंद रस रमन पऊ ।
त सहज रमन रस विंद रमन जिनु हो, सिद्ध समय संजुत्तो तरन जिन मुक्ति जय ॥ ९ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनो हो उवन विंद रस उत्तु जुड़ो) हे भाई ! आत्मानुभवका रस जैसा कहा है वैसा तत्वज्ञानीके भीतर प्रकाशमान होरहा है (उव उवन कमल रस ममल पओ) यह प्रफुल्लित कमल समान शुद्ध पद धारी आत्माका ही रस है (उव उवनो हो तारन तरन स उत्तु जुड़ो) हे भाई ! तारण तरण आत्माका उदय होगया है जैसा कहा है (कमल विंद रस परम पओ) वे तारण तरण अरहन्त भगवान परमात्मा पदमें तिष्ठकर आत्मारूपी कमलके रसका स्वाद लेते हैं ॥ १ ॥

(उव उवनो हो उवन हिययार संजुत्त जुड़ो) हे भाई ! ज्ञानके प्रकाशमें हितकारी श्री अरहन्त भगवानका उदय होगया है (हुवयार विंद रस रमन पओ) वे परमोपकारी आत्मानुभवके रसमें रमण कर रहे हैं (उव उवनोहो सुइ सहयार संजुत्त जुड़ो) हे भाई ! वे अरहन्त परम सहकारी हैं, उनका प्रकाश होगया है (कमल रमन रस समय मऊ) वे प्रफुल्लित आत्मारूपी कमलमें रमन करते हुए आत्मीक रसका स्वाद लेते हुए परमात्मा रूप ही हैं ॥ २ ॥

(समय म उत्तुइ मम समय रमन जिनु हो) परमात्मा इन्हें ही कहते हैं जो समभावरूप चारित्रमें रमण करते हों (समय कमल रस विंद मऊ) जो आत्मारूपी कमलके रसका स्वाद लेते हैं (रम रमियो हो अमिय रमन जिन उत्तु जुड़ो) जो आनन्दके भीतर रमण करते हुए उसीमें मगन हो उन्हींको जिन कहते हैं (ऐ रमियो कमल सिद्ध पऊ) जो इसतरह आत्मारूपी कमलमें रमण करते हैं वे ही सिद्धपदको पाते हैं ॥ ३ ॥

(षिपि षिपियो हो सुयं षिपक जिनु उत्त जुड़ो) जो कर्मोंको क्षय कर डालते हैं उनको क्षायिक भाव धारी जिनेन्द्र कहते हैं (सुयं षिपिय सुइ धुव रमनु) वे आप ही कर्मोंको क्षय कर ध्रुव रूपसे सदा ही अपने आपमें रमण करते हैं (सुइ सुयं स्कंधह सुयं ममल जिनु) वे भगवान आप ही अनन्त गुणोंके समूह हैं, वे स्वयं शुद्ध जिन हैं (कुन्यान विलय सुइ जिनय जिनु) उनका मिथ्याज्ञान सब दूर होगया है, वे स्वयं जिन हैं ॥ ४ ॥

(पय पयं पउत्तह हो सुयं परम जिनु) वे पद पदमें पवित्र हैं, हरतरह शुद्ध हैं, वे स्वयं परमजिन हैं (उव उवन सहावे न्यानी सहज जिनु) वे सदा ही प्रकाशमान ज्ञानी स्वभावमें लीन जिन हैं (सुइ सहज सरूवे हो चेय चेयन जिनहो) वे स्वयं सहज स्वरूपमें हैं, वे ही ज्ञान चेतना स्वरूप चेतन जिन हैं (चेयन सहियो समय जिनु) वे ही चेतन गुण धारी परमात्मा जिन हैं ॥ ५ ॥

(स्थानह सहियो सहज रमनु जिन हो) सिद्धक्षेत्रमें विराजमान सिद्ध महाराज अपने सहज स्वरूपमें रमण

कर रहे हैं (आचरन परम जिन परम पओ) वे सिद्ध भगवान वीतरागमई परमात्माके परम पदका ही आचरण कर रहे हैं (तं विंद रमन रस कमल रमन जिनु हो) वे स्वानुभवमें रमण करते हुए आत्मारूपी कमलमें प्राप्त आनन्द रसका स्वाद लेरहे हैं (जिन जिनियो कम्मु अनंतु) जिन्होंने अनन्त कर्मोंको जीत लिया है ॥ ६ ॥

(तं गुपित गुप्त गुहिज रमन जिनु हो) वे मन वचन कायके प्रपंचसे रहित आत्मारूपी गुफाके भीतर गुप्तरूपसे निष्ठकर उसीमें रमण करनेवाले वीतराग प्रभु हैं (अर्क विंद जिन कमल जिनु) वे ही सूर्यसम स्वात्म प्रकाश करते हुए कमलरूपी आत्माको प्रफुल्लित करनेवाले हैं (कमलह कलियो हो कमल सहूवे जिनु हो) वे आत्मारूपी कमलमें ही ठहरे हुए स्वयं कमलके समान प्रफुल्लित जिन हैं (चौसठि चमर जिन चरन मऊ) जब वे अरहन्त पदमें होते हैं तब देवगण चौसठ चमरोंसे श्री जिनेन्द्रकी सेवा करते हैं ॥ ७ ॥

(षट् कमलह सहियो अर्थ ति अर्थ जुहो) मस्तकादि छः जगह कमल विराजमान करके उसमें ॐ या अर्हं मंत्रद्वारा या एक कमलमें छः अक्षरी मंत्र स्थापन करके ध्यान किया जावे। वह मंत्र है—" ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः " इस मंत्रके द्वारा रत्नत्रयमई पदार्थका अनुभव किया जावे (तं अर्क विंद रस रमन पओ) तब सूर्य-सम आत्माका अनुभव होता है तथा आत्मीक रसमें रमणता होती है (तं अर्क ऊवनोहो अर्क रमन जिन) तब इस सूर्य सदृश आत्मामें रमण करनेसे सूर्य समान जिनेन्द्र पदका प्रकाश होजाता है (ऐ विंद विन्यान सु कमल मऊ) हे भाई ! तब ही कमल समान प्रफुल्लित आत्माके ज्ञानका अनुभव होता है ॥ ८ ॥

(तं ममलइ ममल कमल रमन जिनु हो) तब परम शुद्ध वीतराग विकसित कमल समान आत्मामें रमण होता हुआ जिन पद प्रगट होता है (ऐ अर्क विंद रस रमन पऊ) हे भाई ! यही आत्मारूपी सूर्यका अनुभव है, यही आत्मीक रसमें रमणता है (तं सहज रमन रस विंद रमन जिनु हो) तब सहज स्वभावसे आत्मीक रसके भीतर रमणता होती है और वे जिनेन्द्र आत्म-रमणकारी होजाते हैं (सिद्ध समय संजुत्तो तरन जिन मुक्ति भयं) वे ही आत्मा स्वयं आपको संसार-समुद्रसे तारते हुए परम वीतराग भावमें रमते हुए मुक्ति पहुँच जाते हैं ॥ ९ ॥

भावार्थ—इस बधाओमें सिद्धपदकी बधाई गाई गई है। सम्यग्दृष्टी आत्मा ॐ, श्रीं, ह्रीं मंत्रोंके द्वारा या अन्य प्रकारसे ध्यानका अभ्यास जब करता है तब उसे आत्मानुभव प्राप्त होता है। इस आत्मा-नुभवमें परमानन्दका स्वाद आता है। यही वह ध्यानकी अग्नि है जिससे कर्म भस्म होते हैं, रागद्वेष व

अज्ञानभाव सब मिटता है। आत्मा पवित्र होते होते श्री जिनेन्द्र अरहन्त परमात्मा होजाता है। तब सहज स्वभावमें आत्मरमणता होती है। कोई ध्यानका उद्यम नहीं करना पड़ता है। ज्ञान चेतनाका प्रकाश होजाता है। यही अरहन्त शीघ्र ही सर्व कर्मोंको क्षय करके सिद्धपदमें पहुँच जाते हैं। सिद्ध शुद्धपदका साक्षात उपाय सम्यग्दर्शन सहित स्वात्मानुभव है। अतएव जो स्वहित करना पड़े उनको सर्व जंजालसे चित्त हटाकर स्वात्मानुभवका ही अभ्यास करना चाहिये। श्री परमात्म प्रकाशमें कहा है—

जे भत्तउ रयणत्तइं तसु मुणि लक्खणु एउ। अप्पा मिल्लिवि गुणणिलउ, तासु वि अण्णु ण झेउ ॥ १'१७ ॥

जे रयणत्तउ णिम्मलओ, णाणिय अप्पु भणंति। ते आराहय सिव पयइं, णिय अप्पा झायंति ॥ १५८ ॥

अप्पा गुणमउ णिम्मलउ, अणु दिणु जे झायंति। ते पर णियमें परम मुणि. लहु णिव्वाण लहंति ॥ १५९ ॥

भावार्थ—जो रत्नत्रयरूपी मोक्षमार्गका भक्त है, उसका यह लक्षण जानो कि वह गुणोंसे पूर्ण आत्माको छोड़कर और दूसरे पदार्थका ध्यान नहीं करता है। जो ज्ञानी आत्माको ही निर्मल रत्नत्रय-स्वरूप कहते हैं वे मोक्षपदके आराधक अपने आत्माका ही ध्यान करते हैं। जो कोई रातदिन गुण पूर्ण आत्माको ध्याते हैं, वे परम मुनि नियमसे शीघ्र निर्वाणको पाते हैं।

(६४) न्यान रमन वधाओ गाथा १३०३ से १३१३ तक।

जिन जिनयति न्यान सहाई जिनु हो, अन्मोय न्यान जिन उत्तु।
तं न्यान अन्मोए विंद रमन जिनु, तं कमल रमन सिव संतु ॥ १ ॥

सहज जिन न्यान रमन मुझ भावै गो, दिपि दिप्ति दिष्टि पिंड सब्द विंदरे।
अन्मोय तरन सिधि पावै हो, मा मुज्झु न्यान रमन जिन भावै गो ॥ २ ॥ (आचरी)

उव उवन हियार सहिय जिनु हो, जिन जिनियो कम्मु अनन्तु।
भय षिपनिक तं अमिय रमन जिनु, तं कमल रमन जिन उत्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ ३ ॥

त क्रांति इष्ट सुइ उवन जिनय जिनु, स्फटिक इस्ट उव उत्तु ।
रूव अरूव तं इष्ट उवन पउ, तं मव्द वियार मंजुत्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ ४ ॥

हित मित परिनै सव्द इष्ट पउ, कोमल केवल उत्तु ।
सव्द इष्ट तं उवन महज जिनु, तं विंद कमल जिन उत्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ ५ ॥

मनपर्यय त इष्ट उवन पौ, गम्य अगम्य दर्मंतु ।
हिययार रमन अन्मोय न्यान मय, तं अम्ह रमन विहमन्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ ६ ॥

अक सु अर्क सु अर्क अमिय रसु, इष्ट उवन सुइ उत्तु ।
विंद रमन सुइ कमल रमन जिनु, ममल रमन जिन उत्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ ७ ॥

आगन्तु रमन हिययार महज जिनु, हुवयार रमन मोइ उत्तु ।
अन्मोय न्यान सुइ पिपक रमन जिनु, तं विंद रमन मिद्धि रत्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ ८ ॥

आयरन रमन स्थान रमन जिनु, गुप्ति इच्छ सुइ रमनु ।
पय पद इस्ट सु अर्थ ति अर्थह, मध्य ममल जिन उत्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ ९ ॥

मध्य रमन तं उवन उवन पउ, गुप्ति ठकार सु इष्टु ।
मुक्ति सुभाए मुक्ति रमन जिनु, भय पिपिय रमन मंजुत्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ १० ॥

अन्मोय न्यान स्थान रमने जिनु, जिन तरन विवान म उत्तु ।
दिपि दिप्ति दिष्टि सुइ सव्द रमन पिउ, मम विंद कमल मिद्धि रत्तु हो ॥ मा मुज्झु० ॥ ११ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जिन [illegible] जिनु) रागादिके जीतनेवाले ज्ञान स्वभावी श्री जिनेन्द्र हैं (अन्मोय न्यान जिनु उत्तु) उनको ज्ञानानन्दमई श्री जिनेन्द्रने कहा है (तं न्यान अन्मोय विंद, रमन जिन) वे

ज्ञानानन्दका स्वाद लेते हुए स्वात्मरमी जिन हैं (तं कमल रमन मिव संतु) **वे ही आत्मारूपी प्रफुल्लित कमलमें रमण करनेवाले मोक्ष स्वभावरूप परम शांत हैं ॥ १ ॥**

(सहज जिन न्यान रमन सुयं भावै जो) **वे स्वभावसे ही कर्म विजयी जिन आत्मज्ञानमें रमण करनेवाले हैं। मुझे वह ही प्रिय हैं। मैं उनहीकी भावना करूँगा** (दिपि दिप्ति दिष्टि पिउ सब्द विंद रे) **जिनके भीतर ज्ञान दर्शनका प्रकाश होरहा है, व परम प्रिय शब्दोंके द्वारा उनका मनन होता है** (अन्मोय तरन सिधि पावे हो) **जो इस आनन्दमई जहाजपर चढ़ेगा वह सिद्धिको पावेगा** (मा मुज्झु, न्यान रमन जिन भावै जो) **हे मन! मोह मत कर। मुझे तो ज्ञानमें रमण करनेवाला जिनेन्द्र ही प्रिय है, उसीकी मैं भावना करूँगा ॥ २ ॥**

(उव उवन [illegible] जिनु जो) **वे उदयरूप परम हितकारी जिनेन्द्र हैं** (जिनि जिनियो कम्मु अनंत) **जिन्होंने अनन्त कर्मोंको जीत लिया है** [illegible] भय [illegible] जिनु) **वे सर्व भयको क्षय कर चुके हैं,** [illegible] **हे भाई! आत्मारूपी कमलमें रमण करनेवाले जिन कहे हैं ॥ ३ ॥**

([illegible] जिनु) **वे जिनेन्द्र मनोहर शरीरकी शोभाको रखनेवाले वीतरागी जिन हैं, अथवा उनका आत्मा ज्ञानकी कांतिसे अति शोभायमान है, न वे कर्मविजय जिन हैं** (स्फटिक इष्ट उव उत्तु) **उनका परमौदारिक शरीर स्फटिक मणिकी प्रभाके समान चमक रहा है अथवा उनका आत्मा स्फटिक-मणिके समान निर्मल हैं ऐसा कहा गया है** (रूव अरूव तं इष्ट उवन उउ) **वे अरहंत शरीरकी अपेक्षा रूपी हैं, आत्माकी अपेक्षा अरूपी हैं, उनका पद परम इष्ट है** (तं [illegible] संजुत्तु) **उनके द्वारा दिव्यवाणीका प्रकाश होता है ॥ ४ ॥**

(हितमित [illegible] इष्ट पउ) **उनके इष्ट पदसे जो शब्द प्रगट होते हैं वे मर्यादारूप व परम हितकारी हैं अर्थात् उनसे आत्महितका उपदेश प्रगट होता है** (कोमल केवल उत्तु) **वे शब्द बड़े ही कोमल होते हैं, सुननेवालोंके कर्णोंको प्रिय होते हैं, केवल कहिये मात्र परम कोमल हैं उनमें किंचित् भी कठोरता नहीं है ऐसा कहा गया है** (सब्द इष्ट तं उवन सहज जिनु) **वे प्रिय शब्द सहज ही स्वभावसे ही श्री जिनेन्द्र द्वारा प्रगट होते हैं उनमें अरहन्तकी इच्छाकी प्रेरणा नहीं होती है। केवली भगवानके कर्मके उदयसे व भव्य**

जीवोंके पुण्यके उदयसे वाणी प्रगट होती है (तं विंद कमल जिन उत्तु हो) उनको आत्मारूपी कमलमें रमण करनेवाला जिन कहा गया है ॥ ५ ॥

(मनपर्यय तं इष्ट उवन मौ) वह वाणी श्रोताओंके मनको परम इष्ट प्रकाशित होती है (गम्य अगम्य दर्सतु) उस वाणीसे गम्य अर्थात् स्थूल शीघ्र समझमें आनेयोग्य व अगम्य अर्थात् सूक्ष्म मन व इन्द्रियोंके अगोचर पदार्थोंको दर्शाया जाता है (हिययार रमन अन्मोय न्यान मय) वे अरहन्त हितकारी आत्मीक स्वभावमें रमण कर रहे हैं, वे ज्ञानानन्द स्वरूपमय हैं (तं अरहु रमन विद्दसंतु हो) वे अरहन्त आत्माके रमनेमें प्रफुल्लित हैं ॥ ६ ॥

(अर्क सु अर्क सु अर्क अमिय रमु) वे सूर्यसम प्रतापी हैं, स्फटिकमणिके समान परम निर्मल हैं तथा आनन्द रससे पूर्ण एक अरक या रसायन अरक हैं (इष्ट उवन सुइ उत्तु) उन अरहन्तको इष्ट ज्ञान प्रकाशरूप कहते हैं (विंद रमन सुइ कमल रमन जिनु) वे ज्ञानमें रमण करते हैं अथवा वे कमल समान आत्मामें रमण करनेवाले जिन हैं (ममल रमन जिन उत्त हो) अथवा उनको शुद्धात्मामें रमण करनेवाला जिन कहा गया है ॥७॥

(आगंतु रमन हिययार स ज जिनु) आनेवाली सिद्ध पर्यायमें वे रमण करते हैं, वे जगतको हितकारी सहज जिन हैं (हुवयार रमन सोइ उत्तु) उनको उपकार स्वरूप चारित्रमें रमण करनेवाला कहा गया है (अन्मोय न्यान सुइ षिपक रमन जितु) वे ज्ञानानन्दमय हैं व वे स्वयं क्षायिकभावमें रमण करनेवाले जिन हैं (तं विंद रमन सिधि रत्तु) वे ही ज्ञानचेतनामें रमण करनेवाले हैं व सिद्ध स्वभावमें तल्लीन हैं ॥ ८ ॥

(आयरन रमन स्थान रमन जिनु) वे जिनेन्द्र स्वरूपाचरणमें रमण करते हैं व अपने ही स्थान अर्थात् प्रदेशोंमें रमण करनेवाले हैं (गुप्ति इच्छ सुइ रमनु) वे मन वचन कायसे आगे चार परम इष्ट आत्मपदमें रमण करनेवाले हैं (पय पद इस्ट सु अर्थति अर्थइ) अरहन्तका पद परम इष्ट है, रत्नत्रयमयी पदार्थ है (मध्य ममल जिन उत्तु) उनको मध्यम शुद्ध जिन कहा गया है, उत्तम शुद्ध जिन सिद्ध हैं। उनकी अपेक्षा अरहन्त मध्यम शुद्ध जिन हैं; क्योंकि उनके नामादि चार अघातीय कर्मोंका क्षय बाकी है ॥ ९ ॥

(मध्य रमन तं उवन उवन पौ) वे मध्यम आत्मामें रमण करते हुए परम प्रकाशरूप हैं (गुप्ति ठकार सु इष्टु) वे आत्मामें गुप्त चन्द्रमाके समान परम इष्ट शांतिदाता हैं (मुक्ति सुभाए मुक्ति रमन जिनु) वे स्वयं मोक्ष स्वभाव है या वे मोक्ष भावमें रमण करनेवाले जिन हैं (भय षिपिय रमन संजुत्तु) वे निर्भय भावमें रमण करनेवाले हैं ॥ १० ॥

(अन्मोय न्यान स्वान रमन जिनु) वे उन आत्म प्रदेशोंमें रमण करनेवाले हैं जिन प्रदेशोंमें ज्ञान और आनन्द भरा हुआ है (जिन तरन विन्यान स उत्तु उन अरहन्तको तारन तरन जहाज कहा गया है (दिपि दिप्ति दिष्टि सुइ सब्द रमन जिन) वे ज्ञान दर्शन गुणसे देदीप्यमान हैं, शब्दोंसे जिसका बोध होता है। उस आत्म-स्वभावमें रमण करनेवाले जिन हैं (सम विंद कमल सिद्धि रतु) वे समताभावके अनुभव करनेवाले कमल समान विकसित आत्मा हैं, वे सिद्ध भावमें लवलीन हैं ॥ ११ ॥

भावार्थ—इस वधावेमें श्री अरहन्त भगवानकी स्तुति की गई है। उनको यहां मध्यम जिन कहा गया है, जिनके तीन भेद किये जासकते हैं-जघन्य जिन, मध्यम जिन, उत्तम जिन। जघन्य जिन अविरत सम्यग्दृष्टिसे लेकर क्षीणमोह गुणस्थान तकके साधु हैं, मध्यम जिन सयोग व अयोग केवली तेरहवें व चौदहवें गुणस्थानवाले केवली जिन हैं, उत्तम या उत्कृष्ट जिन वे सिद्ध परमेष्ठी हैं जिनके शरीर भी नहीं है, न कोई द्रव्य कर्म है, न कोई भाव कर्म है। श्री अरहन्त परमौपरिक स्फटिक मणिके समान शरीरके धारी हैं, वे परम वीतराग हैं। उनकी वाणी भव्यजीवोंको अपनी २ भाषामें समझ पड़ती है। परम कोमल व इतनी कर्णप्रिय होती है कि सब श्रोतागण परम तृप्त व आनन्दित होजाते हैं, वस्तु स्वरूप समझकर गद्‌गद होजाते हैं। वे परम वीतराग आत्मरमी हैं, क्षायिक भावोंके धारी हैं। उनके नौ क्षायिक भाव प्रगट हैं-अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनंत वीर्य, अनन्तभोग, अनन्त उपभोग, अनन्त दान, अनन्त लाभ, क्षायिक सम्यक्त तप, क्षायिक वीतराग चारित्र। वे अनन्तसुखके भोक्ता हैं, वे ज्ञान चेतनामें रमण करनेवाले हैं, वे परम शांत हैं। उनकी महिमा अपार है। इंद्रादिक देव उनका दर्शन करके व भक्ति करके परम प्रसन्न होजाते हैं। वे भगवान परम शुद्ध भावमें रमण करते हैं, शीघ्र ही मुक्तिपद प्राप्त करेंगे। वे सच्चे तारणतरण जहाज हैं। जो भव्य जीव उनके उपदेश किये हुए रत्नत्रयरूपी मोक्षमार्गपर आरूढ़ होते हैं, वे भी मोक्षको जाते हैं। अरहन्तोंके गुणोंकी भावना सच्ची आत्माकी ही भावना है।

आत्मस्वरूपमें अरहन्तका स्वरूप यह कहा है—

ध्यानानलप्रतापेन दग्धे मोहेन्धने सति। शेषदोषास्ततो ध्वस्ता योगी निष्कल्मषायते ॥ ६ ॥
मोहकर्मरिपौ नष्टे सर्वे दोषाश्च विद्रुताः। छिन्नमूलतरोर्यद्वद ध्वस्तं सैन्यमराजवत् ॥ ७ ॥
नष्टं छद्मस्थविज्ञानं नष्टं केशादिवर्धनम्। नष्टं देहमलं कृत्स्नं नष्टे घातिचतुष्टये ॥ ८ ॥

तदा स्फटिकसंकाशं तेजोमूर्तिमयं वपुः । जायते क्षीणदोषस्य सप्तधातुविवर्जितम् ॥ १२ ॥
सकलग्राहकं ज्ञानं युगपद्दर्शनं तदा । अव्याबाधसुखं वीर्यं एतदाप्तस्य लक्षणं ॥ १३ ॥
क्षुधा तृषा भयं द्वेषो रागो मोहश्च चिन्तनम् । जरा रुजा च मृत्युश्च स्वेदः खेदो मदो रतिः ॥१५॥
विस्मयो जननं निद्रा विषादोऽष्टादश ध्रुवाः । त्रिजगत्सर्वभूतानां दोषाः साधारणा इमे ॥ १६ ॥
एतैर्दोषैर्विनिर्मुक्तः सोऽयमाप्तो निरंजनः । विद्यन्ते येषु ते नित्यं तेऽत्र संसारिणः स्मृताः ॥ १७ ॥

भावार्थ—ध्यानरूपी अग्निके प्रतापसे मोहरूपी ईंधन जब जलजाता है तब शेष दोष भी नष्ट होजाते है तब योगी मलरहित निर्मल होजाता है। मोहकर्मरूपी शत्रुके नाश होनेपर उसी तरह सर्व दोष चले जाते हैं उसीतरह वृक्षकी जड़ उखड़ जानेपर वृक्ष गिर जाता है या राजाके नाश होनेपर सेना भाग जाती तब अल्पज्ञान नहीं रहता है, सर्व ज्ञान प्रगट होजाता है। नख, केशका बढ़ना बन्द होजाता है। सर्व देहका मल चला जाता है। जब चार घातीय कर्मोंका क्षय होजाता है तब दोष रहित परमात्माका शरीर तेजमई स्फटिककी मूर्तिके समान शरीरकी सात धातुओंसे शून्य होजाता है। सर्वको जाननेवाला ज्ञान, अनन्तदर्शन, बाधारहित अनन्त सुख, व अनन्त वीर्य प्रगट होजाता है यही आप्तका लक्षण है। तीन जगतके प्राणियोंमें नीचे लिखे अठारह दोष साधारण रूपसे पाए जाते हैं—(१) भूख, (२) प्यास, (३) भय, (४) द्वेष, (५) राग, (६) मोह, (७) चिंता, (८) जरा, (९) रोग, (१०) मरण, (११) खेद, (१२) पसीना, (१३) मद, (१४) अरति, (१५) आश्चर्य, (१६) जन्म, (१७) निंद्रा, (१८) शोक। जिनके ये १८ दोष होते हैं वे रागादि मलरहित निरंजन अरहन्त आप्तदेव हैं। जिनके भीतर ये दोष होते हैं वे संसारी कहलाते हैं। हमें अरहन्त भगवानकी भक्ति करते रहना चाहिये।

(६५) ॐ उवनो फूलना-गाथा १३१४ से १३४७ तक।

उव उवनो हे उवनह उवन सहाओ, उव उवनो हे विंद विन्यान सुभाओ।
उव उवन सहावे मुक्ति पऊ, उव उवनो हे न्यान विन्यान सजुत्तु।
उव उवनो हे, मुक्ति पंथ दर्संतु, सिद्ध सरूवे सिद्ध पऊ ॥ १ ॥

सिद्धह सुद्धह ममल सुभाओ, सो भय षिपनिक हे भव्वु सुभाओ,
अमिय पयोहर अमिय मओ, नन्द आनन्दह नन्द सुभाओ।
सु चेयन नन्दह सहज सुहाओ, परमानन्दं तं मुक्ति पओ ॥ २ ॥ (आचरी)
जो उत्पन्न निरन्तर जुत्तु, श्रीवकार तिय लोय संजुत्तु,
सुयं लब्धि त ममल पउत्तु, न्यान विन्यानह समय संजुत्तु।
सुदर्सन दर्सिउ नन्त अनन्तु, सो उवनो दाता देउ सुई ॥ सिद्धह० ॥ ३ ॥
लब्धि ऊवनो लब्धि उत्तु, भोय उवभोयह न्यान सजुत्तु,
विन्यान वीय तं मुक्ति पओ, सम समयह समय संजुत्तु।
हित मित परिन कोमल उत्तु, चरन सुहावे सिद्धि पओ ॥ सिद्धह० ॥ ४ ॥
कमलह केवल कलिय सुभाओ, सो जिन रंजन जन विलय सहाओ,
ठकार विन्यान सु मुक्ति पऊ, पंच पंचोत्तर परम ऊवनु।
उत्पन रमन तं रयन ऊवनु, तत्काल रमन तं मुक्ति पओ ॥ सिद्ध० ॥ ५ ॥
दिष्टि इस्टि है रिस्टि संजुत्तु, रस्टि सस्टि है सस्टि स उत्तु,
उत्पन इस्टि तं ममल पऊ, सहकार इस्टि है सिद्ध सहाओ।
समय संजुत्तउ ममल पओ, हितमित परिनै समय मओ ॥ सिद्ध० ॥ ६ ॥
अवयास इस्टि है नन्त अनन्तु, उवन अवयासह सहज संजुत्तु,
न्यान अन्मोय सु ममल पओ, अन्मोयह इस्टि तं न्यान संजुत्तु।
कम्मु गलीया नन्तानन्तु, षिपक इस्टि तं षिपक मओ ॥ सिद्ध० ॥ ७ ॥

मुक्ति इस्टि है मुक्ति सुभाओ, लोय अलोयह नन्त सहाओ,
मुक्ति सरूवे मुक्ति पओ, नन्त सौष्य तं नन्तानन्तु ।
सुयं षिपकु तं सिद्ध पउत्तु, सिद्ध संजुत्तउ ममल पओ ॥ सिद्ध० ॥ ८ ॥
अष्यर रमनह अषय पउत्तु, सुर रमन है सिद्धि संजुत्तु,
विन्यान रमन तं ममल पओ, विंजन सहियो विनय स उत्तु ।
पय उत्पन्न जु सब्द संजुत्तु, सब्द महावे ममल पओ ॥ सिद्ध० ॥ ९ ॥
सुत तह भेयह सप्त स उत्तु, सब्द सहावे ममल मुनन्तु,
सब्द असब्द सुइ समय मओ, सब्द विन्यान विनय संजुत्तु ।
सब्द भेय सुत नन्तानन्तु, असब्द साहन विंदन्तु ॥ सिद्ध० ॥ १० ॥
गुप्ति सब्द है उवन सहाओ, गुहिज गुपित तं सब्द सहाओ,
गुप गुपितिह रुचियो मुनहु, सब्द सहावे कमल मुनंतु ।
कमल स उत्तउ ममल पउत्तु, कमलह कलियो मुक्ति पओ ॥ सिद्ध० ॥ ११ ॥
सुयं स्कंधह सहज सरूव, सुयं सुभाउ सु ममल अपारु,
सुयं सुलष्यन लक्खिय मौ, सुयं सुकलियो कलन सहाओ ।
सुयं सुरूवे सिद्ध सुभाओ, सुयं स्कंध सु ममल पओ ॥ सिद्ध० ॥ १२ ॥
दुरस्कंध दुर्बुद्धि संजुत्तु, भय सहाय तं कम्मु अनन्तु,
सल्य संक सहकार मओ, न्यान सहावे भय विलयन्तु ।
सल्य संक भय नन्त गलन्तु, न्यान अन्मोयह मुक्ति पओ ॥ सिद्ध० ॥ १३ ॥

दुबुधि षिपिय सु न्यान स उत्तु, भय षिपनिक है अभय पउत्तु,
निसंक संक रहियो मुनहु, सल्य संक विलयन्त सुभाओ।
सो भय षिपनिक है न्यान सहाओ, सो न्यान अन्मोयह मुक्ति पओ ॥सिद्ध०॥ १४॥

सुय स्कंधह सु सिद्धि पउत्तु, दुर स्कंध सुविलय स उत्तु,
सुयं सुभाय सु ममल पओ, ममलह ममल सहाउ स उत्तु।
न्यान विन्यान सु समय मंजुत्तु, कमल सहाव सु मुक्ति पओ ॥ सिद्ध० ॥ १५॥

कमलह कलियो नन्तानन्तु, दिस्ति भेय सुत नन्तानन्तु,
सुयं स्कंधह मउ समू, कमल पउत्तु जिनय स उत्तु।
कम्मु गलिय तं नन्तानन्तु, कमलह परिनै मुक्ति पओ ॥ सिद्ध० ॥ १६॥

कमलह परिनै परम स उत्तु, परमान दिस्टि तं नन्तानन्तु,
कमलह समय संजुत्त जिनु, समय मंजुत्तउ कमल पउत्त।
सहकार नन्त विन्यान संजुत्त, समय सहावे समय मओ ॥ सिद्ध० ॥ १७॥

अवयास नन्त तं कमल स उत्तु, न्यान विन्यानह समय संजुत्त,
अवयामह नन्तानन्त पओ, अन्मोय न्यान तह कमल पउत्त।
अन्मोयह तं कम्मु गलन्तु, अन्मोय सहावे षिपक मओ ॥ सिद्ध० ॥ १८॥

अन्मोय न्यान तं कमल मंजुत्त, षिपियो कम्मु अनन्त विलंतु,
कमल सहावे मुक्ति पओ, मुक्ति संजुत्तो सिद्ध महाओ।
हित मित परिनै ममल सुभाओ, कमल सहाव सु सिद्धि पऊ ॥ सिद्ध० ॥ १९॥

कमलह कलियो रमन रवंतु, रमन सहावे लंकृत जत्तु,
विन्यान वीर्य तं मुक्ति पओ, समय मुक्ति तं ममल सुभाओ ।
नन्तानन्त सु न्यान महाओ, न्यान वृद्धि विन्यान पओ ॥ सिद्ध० ॥ २० ॥

कमल पउत्तो नन्त प्रकार, आयरनह तं ममल अपार,
न्यान अन्मोय सु नन्त पओ, अन्मोय सहावे षिपक पउत्त ।
नन्तानन्त सु कम्मु गलंतु, अन्मोय महावे मुक्ति मओ ॥ सिद्ध० ॥ २१ ॥

उवन उवनौ उवन म उत्त, भय षिपिनकु है भव्वु स उत्त,
भय विलयन्त उममल पओ, सुभाव सुहावे भव विलयन्तु ।
मन भय गलिय सु नन्तानन्तु, भय विनास भव्वु जु मुनहु ॥ सिद्ध० ॥ २२ ॥

अमिय दिस्टि त भय विलयन्तु, दिस्टिहि भय उववन्न गलंतु,
झड़प विलय विन्यान पओ, भय विलयन्तु उवन महाओ ।
उवनो न्यान विन्यान सुभाओ, उवनो अर्थ ति अर्थ है ॥ सिद्ध० ॥ २३ ॥

उव उवन दिस्टि हितकार सजुत्तु, महयार समय तं नन्तानंतु,
हिययार दिस्टि तं उवन मऊ, उवन दिस्टि हितकार संजुत्तु ।
महयार समय तं नन्तानन्तु, हियं दिस्टि त उवन मओ ॥ सिद्ध० ॥ २४ ॥

महयार दिस्टि तं अमिय मंजुत्तु, हिय महाव उववन संजुत्तु,
उववन सहाउ सहयार मओ, महयारह तं उवन सहाओ ।
अमिय दिस्टि विष गलिय सुभाओ, उव उवन महावे मुक्ति पओ ॥ सिद्ध० ॥ २५ ॥

सिद्ध सरूवह पत्तु म उत्तु, विक्त रूव उवएसु अनन्तु,
उव उवन देइ हिययार लै, सक्ति सरूवे दत्त सहाओ।
न्यान ऊवनो समय सुभाओ, अन्मोय दत्त त मुक्ति पओ ॥ सिद्ध० ॥ २६ ॥

पत्त ऊवनो उवन संजुत्त, दत्त ऊवनो समय संजुत्त,
दाता पतु सम भाओ मओ, कमलह कमल सहाउ पउत्त।
समय अन्मोय सु समय संजुत्त, अन्मोय समय सम सिद्धि पओ ॥ सिद्ध० ॥ २७ ॥

उव उवनु ति अथह अर्थ संजुत्त, अर्थ समर्थह ममल मुनन्तु,
ममल सहावे सिद्धि पओ, अर्थ ऊवनो अर्थ समर्थ।
अर्थ सिद्ध सर्वार्थ समीयु, समर्थु सिद्ध तं जिन भनिओ ॥ सिद्ध० ॥ २८ ॥

अगम अर्थ सम अर्थ सम्पत्त, दिस्टि अर्थ सहयार समर्थु,
अर्थ सिद्ध सम सिद्ध मओ, सहयार अथु सम समय संजुत्त।
अवयास अर्थ तं नन्तानन्तु, अन्मोय अर्थ तं ममल पओ ॥ सिद्ध० ॥ २९ ॥

उत्पनु सिधु हिययार संजुत्त, सहयार सिद्ध तं नन्तानन्तु,
उक्त सिद्ध जिन उक्त पओ, परिनै सिद्ध परमान सु सिद्धु।
समय सिद्ध सहयार समीयु, अवयास सिद्ध सं नन्त पओ ॥ सिद्ध० ॥ ३० ॥

अन्मोय सिद्ध सम समय संजुत्त, षिपक सिद्ध तं कम्म गलंतु,
षिपि कम्मु मुक्ति सम भाउ समू, मुक्ति सिद्धु तं सिद्ध म उत्त।
रमन सिद्ध तं अमिय संजुत्त, सिद्ध मुक्ति संजुत्त पओ ॥ सिद्ध० ॥ ३१ ॥

विन्यान विंदु तं विंदु संजुत्तु, न्यान विन्यान सु सिद्धि पउत्तु,
सिद्ध संजोए विंद मओ, अलष लषिय तं विंद सहाओ।
वीयराउ जिन उत्त पहाओ, राग गलिय जन रंज मओ ॥ सिद्ध० ॥ ३२ ॥
सिद्ध पउत्तो राग गलंतु, जनरंजन राग उवनु विलन्तु,
कलरंजन दोष जु स गलियो, मनरंजन राग गलंतु सुभाओ।
दर्सन मोहंधु सु गलिय सहाओ, दत्तु कम्म विलयंतु सुई ॥ सिद्ध० ॥ ३३ ॥
भय सल्य संक विलयंतु सुभाओ, निसंक सहावे ममल सहाओ,
सिद्ध सरूवे ममल पओ, न्यान विन्यानह समय संजुत्त।
सुयं लब्धि सो लहिय संजुत्त, न्यान अन्मोय सु मुक्ति गओ ॥ सिद्ध० ॥ ३४ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनो हे उवनह उवन सहाओ) हे भाई! अब प्रकाशरूप आत्माका स्वभाव झलक गया है (उव उवनो हे विंद विन्यान सुभाओ) ज्ञान चेतनामई स्वभाव प्रगट होगया है जिससे ज्ञान-स्वभावका अनुभव होरहा है (उव उवन सहावे मुक्ति पऊ) जब आत्माका स्वभाव प्रकाशमान होजाता है तब आत्मा मुक्ति प्राप्त कर लेता है (उव उवनो हे न्यान संजुत्तु) यह स्वभाव केवलज्ञानके साथ प्रगट हुआ है (उव उवनो हे मुक्ति पंथ दर्सेतु) यह स्वभाव प्रगट रूपसे मोक्षमार्गको दर्शाता है कि आत्माके स्वभावमें रमण करोगे तब ही मोक्षमार्ग है (सिद्ध सरूवे सिद्ध पऊ) जब साधने योग्य सिद्ध स्वभाव प्रगट होजाता है तब जीव सिद्धपदको पालेता है ॥ १ ॥

(सिद्धह सुद्धह ममल सुभाओ) श्री सिद्ध भगवान शुद्ध है, सर्व मलरहित निर्मल स्वभावधारी है (सो भय षिपनिक हे भव्वु सुभाओ) उनके ध्यानमे सर्व भय दूर होजाता है। हे भव्य! उसी सिद्ध स्वभावकी भावना करो (अमिय पयोहर अमिय मओ) सिद्धका स्वभाव आनन्दामृतका समुद्र है। आनन्द अमृत-स्वरूप ही है (नन्द आनंदह नन्द सुभाओ) वह निजानन्दमें मगन आनन्द स्वभाव है (सु चेय नंदह सहज सुहाओ) वही चिदा-नन्दमई सहज स्वभाव हैं (परमानन्दं तं मुक्ति पओ) वही परमानन्दमई है, वे मुक्ति प्राप्त हैं ॥ २ ॥

(नो उत्पन्न निरंतर जुत्तु) वे सिद्ध भगवान नवीन उत्पन्न नहीं हुए हैं, वे अनादि निधन निरन्तर रहनेवाले ध्रुव हैं (ग्रीवकार तिव लोय मंजुत्तु) वे तीन लोकके ऊपर विराजमान हैं। जैसे शरीरके ऊपर गले सहित मानव होता है (सुयं लब्धि तं ममल पउत्तु) उन्होंने अपने निर्मल पदको स्वयं प्राप्त किया है (न्यान विन्यानह ममय मंजुत्तु) वे केवलज्ञानमई आत्मा हैं (सुदर्सन दर्सिउ नन्त अनन्तु) उन्होंने केवल दर्शनसे अनन्तानन्त पदार्थोंको देखा है (सो ऊवनो दाता दो हुई) वे ही आनन्दके देनेवाले देव प्रगट हैं, उनके ध्यानसे आनन्द प्राप्त होता है ॥३॥

(लब्धि ऊवनो लब्धि उत्तु) श्री सिद्ध परमात्माके नौ लब्धियोंका प्रकाश कहा गया है (भोय उवभोयह न्यान संजुत्त) अनन्त भोग, अनन्त उपभोग, अनन्त ज्ञान लब्धियें प्राप्त हैं (विन्यान वीर्य तं मुक्ति पओ) ज्ञानके साथ अनन्त वीर्य भी है। वे मुक्तिपदमें है (सम सम्मतह समय संजुत्तु) उनके समताभाव रूप क्षायिक चारित्र व क्षायिक सम्यक्त लब्धि भी है हित मित परिनै कोमल उत्तु) सिद्ध भगवान परम हितकारी हैं, अपने स्वभावमें मर्यादारूप परिणमन कर रहे हैं, परम कोमल स्वभावधारी कहे गए हैं (चरन महावे सिद्धि पओ ; स्वरूपाचरणके स्वभावसे ही उन्होंने सिद्धपदको पाया है। यहां नौ लब्धियोंमें केवलदर्शन, अनन्त लाभ, अनन्त दानको लेकर नौ लब्धि गिन लेना चाहिये ॥ ४ ॥

(कमलह केवल कलिय सुभाओ) वे केवल असहाय आत्मारूपी कमलमें मगन स्वभाव हैं (सो जिन रंजन जन विलय सहाओ) मानवोंको रंजायमान करनेवाला राग स्वभाव श्री जिनेन्द्रकी आत्मासे दूर होगया है (ठकार विन्यान सु मुक्ति पऊ) वे चन्द्रमाके समान शांतिमय ज्ञान स्वरूप हैं व मुक्तिपदमें विराजित हैं (पंच पंचोत्तर परम ऊवनू) उनके पांच भाव परम उत्कृष्ट प्रगट हैं। अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्त वीर्य व जीवत्व तथा उन्होंने पूर्वावस्थामें संवर निर्जराके कारणोंकी सेवा की है। इससे उत्तम पद पाया है। वे संवर व निर्जराके कारण भाव पचहत्तर नीचे प्रकार समझमें आते हैं। ५ व्रत + १ रात्रि भोजनके व्रत + ३ गुप्ति + ५ समिति + १० दशलाक्षणी धर्म, + १२ भावना + २२ परिषह जय + ५ प्रकार चारित्र + १२ प्रकार तप=७५—यदि कुछ और भाव हो तो ज्ञानी विचार लेवें (उत्पन रमन तं रयन ऊवनू) आप हीमें रमण करनेसे उनके रत्नत्रयकी पूर्णता प्रगट हुई है (तत्काल रमन तं मुक्ति पओ) जब परम यथाख्यात रूपसे तपमें निष्काम रमण होता है, योगोंकी भी चंचलता नहीं रहती है, तब आत्मा शीघ्र ही उसी समय मोक्षस्थानको जाता है ॥ ५ ॥

(दिष्टि इष्टि है रस्टि संजुत्तु) आत्मानुभवकी प्रिय दृष्टि कर्म काटनेका शस्त्र है (रस्टि स स्टि है सस्टि स उत्तु) उसीसे कल्याणका स्वाद आता है। आत्मानुभवको ही परम कल्याण कहा गया है (उत्पन्न दृस्टि तं ममल पऊ) उसी आत्मानुभवके अभ्याससे परम इष्ट निर्मल सिद्धपद प्रगट होजाता है (सहकार इस्टि है सिद्ध सहाओ) इसी परमप्रिय आत्मानुभवसे ही सिद्ध स्वभाव झलकता है (समय संजुत्तउ ममल पऊ) वही आत्माका निर्मल पद है (हितमित परिनै समय मओ) सिद्ध आत्मा, आत्माकी हितकारी मर्यादारूप परिणतिमें ही परिणमन करते रहते हैं ॥ ६ ॥

(अवगास इस्टि है नन्त अनन्तु) सिद्ध भगवानमें अनन्तानन्त पदार्थोंका ज्ञान स्वभावसे रहता है (उवन अवयासह सहज संजुत्त) वहां सहज स्वभावसे ज्ञानका प्रकाश है (न्यान अन्मोय सु ममल पओ) वे ज्ञानानन्दमई शुद्ध पदमें हैं (अन्मोयह इस्टि तं न्यान संजुत्तु) वहां अनन्तज्ञान सहित सहजानन्द परमप्रिय बिराजमान है (कम्मु गलीया नन्तानन्तु) ज्ञानानन्दके प्रतापसे ही अनन्तानन्त कर्म क्षय होगये हैं (षिपक इस्टि तं षिपक मओ) वे सिद्ध भगवान परमप्रिय क्षायिक भावमें तिष्ठे हुए क्षायिक स्वभावमें ही हैं ॥ ७ ॥

(मुक्ति इस्टि है मुक्ति सुभाओ) सिद्ध भगवानको मुक्ति ही प्यारी है, वे मुक्ति स्वभावरूप ही हैं (लोय अलोयह नन्त सहाओ) लोकालोक अनन्त उनके स्वभावमें झलक रहा है (मुक्ति सरूवे मुक्ति पओ) वे मोक्षस्वरूपमें ही हैं व मुक्ति प्राप्त कर चुके हैं (नन्त सौष्य तं नन्तानन्तु) उनमें अनन्तानन्त स्वाभाविक सुख है (सुयं षिपक तं सिद्ध पउत्तु) वे सब कर्मोंका क्षय करके सिद्धपद पाचुके हैं (सिद्ध संजुत्तओ ममल पओ) वे सिद्ध भाव सहित शुद्ध पदमें हैं ॥ ८ ॥

(अष्यर रमनह अषय पउत्तु) श्रीसिद्ध भगवान अविनाशी आत्मामें रमण करनेसे ही अविनाशी पदमें पहुँचे हैं अथवा उन्होंने श्रुतज्ञानके अक्षरोंके द्वारा ध्यान करनेमें अक्षय पदको पाया है (सुर रमन है सिद्धि संजुत्त) सूर्य समान आत्मामें रमण करनेसे वे सिद्धपदको पहुँचे हैं अथवा आदि स्वरोंके द्वारा ध्यान करनेसे परमपदको पाया है (विन्यान रमन तं ममल पओ) आत्मज्ञानके रमणसे ही उन्होंने निर्मलपदको पाया है (विंजन सहियो विनय स उत्तु) वे ज्ञान सहित ज्ञानकी विनयमें लीन हैं अथवा व्यंजन अक्षरोंकी विनयसे ध्यान करके उनकी आत्माने उन्नति की है (पय उत्पन्न जु सब्द संजुत्त) शब्दोंको मिलाकर पद बनते हैं (सब्द सहावे ममल पओ) ॐ आदि पदोंकी सहायतासे ध्यान करके आत्मा सिद्धपदको पाता है ॥ ९ ॥

(सुत तह मेयह सत्त स उत्त) श्रुतज्ञानमें जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, इन सात तत्वोंका भेद बताया है (सब्द सहावे ममल मुनन्तु) शास्त्रके शब्दोंको समझनेमें शुद्ध आत्माका मनन होता है (सब्द असब्द सुइ समय मओ) शब्दोंके द्वारा शब्द रहित आत्माका बोध करना चाहिये (सब्द विन्यान विनय संजुत्तु) भव्य जीव शब्दोंकी व शब्दोंसे प्रकाशित ज्ञानकी विनय करता है (सब्द मेय सुत नन्तानन्तु) शब्दोंके द्वारा अनन्तानन्त श्रुतज्ञानका लाभ होता है (असब्द साहन विंदन्तु) निश्चयसे शब्द रहित आत्माका अनुभव ही मुक्तिका साधन जानो ॥ १० ॥

(गुप्ति सब्द है उवन सहाओ) प्रकाशरूप गुप्ति शब्द है (गुहिज गुपित तं सब्द सहाओ) इस शब्दकी सहायतासे मन वचन काय तीनोंको रोककर आत्मारूपी गुफामें गुप्त होजाना चाहिये (गुरु गुपितिह रुचियो मुनहु) गुरु द्वारा बताई हुई इस गुप्तिमें रुचि धरकर इसीका मनन करो (सब्द सहावे कमल मुनंतु) शब्दकी सहायतासे आत्मारूपी कमलका मनन करो (कमल स उत्तउ ममल पउत्तु) इसी कमलके ध्यानसे शुद्ध भावको पाता है ऐसा कहा गया है (कमलह कलियो मुक्ति पओ) जो इस कमल समान प्रफुल्लित आत्मामें रमण करता है वह मुक्तिपदको पाता है ॥ ११ ॥

(सुयं स्कंधह सहज सरूव) यह आत्मा स्वयं सहज स्वरूप अनंत गुण पर्यायोंका समूहरूप द्रव्य है (सुयं सुभाउ सु ममल अपारु) यह स्वयं स्वभावसे ही निर्मल व अनंत अपार शक्तिका धारी है (सुयं सुलष्यण लषियउ मो) यह स्वयं अपने शुद्ध चेतना लक्षणसे लक्ष्यमें आता है (सुयं सुकलियो कलन सहाओ) यह स्वयं अपने आत्मामें तन्मय रूप स्वभावसे आपमें तल्लीन है (सुयं सरूवे सिद्ध सुपाओ) स्वयं अपने स्वरूपमें तिष्ठकर सिद्धकी भले प्रकार भावना करो (सुयं स्कंध सु ममल पओ) यह स्वयं गुण समुदाय आत्मा आप ही निर्मल पदको पालेता है ॥ १२ ।

(दुःस्कंध दुर्बुद्धि संजुत्तु) जब आत्मा पापकर्म या मिथ्यात्वसे मलीन होता है तब इसके मिथ्या बुद्धिका प्रकाश होता है (भय सहाय तं कम्मु अनन्तु) यह संसारके सुखोंके छूटनेका भय रखता है, संसारके दुःखोंसे डरता रहता है, परन्तु मिथ्या बुद्धिसे धर्मका सेवन नहीं करता है । इससे अनन्त कर्मोंका बन्ध करता है (सल्य संक सहकार मओ) इस अज्ञानीके भीतर माया, मिथ्या, निदान तीन शल्यें रहती हैं व यह शङ्काशील रहता है (न्यान सहावे भय विलयन्तु) परन्तु आत्मज्ञानकी सहायतासे सब भय चला जाता है

(सल्य संक भय नंत गलंतु) सर्व शल्य, सर्व शङ्काएँ सर्व भय अनन्त भी हो तौ भी गल जाते हैं (न्यान अन्मोय मुक्ति पओ) ज्ञानानन्दमें मगन होनेसे मुक्ति प्राप्त होती है ॥ १३ ॥

(दुर्बुधि षिपिय सु न्यान स उत्तु) जब मिथ्यात्व सहित बुद्धि क्षय होजाती है तब सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है ऐसा कहा गया है (भय षिपनिक है अभय पउत्तु) तब सर्व भय चला जाता है, ज्ञानी निर्भय होजाता है। क्योंकि उसको अपना आत्मा परमात्माके समान परम सुखी व अनन्तबली दीखता है (निसंक संक रहियो मुनहु) हे भाई! निःशंक होकर निर्भय होकर आत्माका मनन करो (सल्य संक विलयन्त सुभाओ) आत्माका स्वभाव ही ऐसा है जिसमें कोई शल्य व शंका नहीं रह सक्ती है (मो भय षिपनिक है न्यान सहओ) ज्ञान स्वभावमें रमण करनेसे सर्व भय दूर होजाता है (मो न्यान अन्मोयह मुक्तिपओ) इसतरह जो आत्मज्ञानमें अनुमोदना रखता है, ज्ञानानंदमें मगन होता है वह मुक्तिको पाता है ॥ १४ ॥

(सुयं स्कंध सु सिद्धि पउत्तु) यह गुणसमुदाय आत्मा स्वयं सिद्धिको पाता है (दुस्कंध सु विलय स उत्त) कर्मोंके सर्व समूह जो आत्माको बाधक हैं वे सब क्षय होजाते हैं (सुयं सुभाव सु ममल पओ) आत्माका निज स्वभाव परम शुद्ध है (ममलह ममल सहाउ स उत्तु) आत्माका स्वभाव भाव मल व द्रव्य मलसे रहित परम निर्मल है (न्यान विन्यान सु समय संजुत्तु) जब यह आत्मा सम्यग्ज्ञानसे पूर्ण होजाता है (कमल सहाव स मुक्ति पओ) तब यह कमलके समान अपने स्वभावमें पूर्ण प्रफुल्लित होजाता है और यह मुक्तिका लाभ करता है ॥ १५ ॥

(कमलह कलियो नन्तानन्तु) इस कमल समान आत्मामें ज्ञानकी कलियें अनंतानंत हैं (दिस्टि भेय स्रुत अनन्तानन्त) श्रुतज्ञान उन अनंतानंत ज्ञानके भेदोंको देख लेता है (सुयं स्कंधह भेउ समु) जब यह आत्मा आप ही अपने द्रव्य स्वभावमें लीन होता है तब समताभावके भेदको पालेता है (कमल पउत्तु जिनय स उत्त) तब कमल समान विकसित आत्माको जिन कहते हैं (कम्मु गलिय तं नंतानंतु) उनके अनंतानंत कर्म क्षय होजाते हैं (कमलइ परिनै मुक्ति पओ) तब पूर्ण कमलके समान पूर्ण भावमें परिणमन करते हुए यह आत्मा मुक्तिको पालेता है ॥ १६ ॥

(कमलह परिनै परम स उत्तु) जब आत्मा अपने उत्कृष्ट स्वभावमें परिणमन करता है (परमान दिस्टि

तै नन्तानन्तु) **तब अनन्त ज्ञानकी दृष्टि झलक जाती है** (कमलह समय संजुत्तु जिनु **तब प्रफुल्लित कमलके समान आत्माको जिन कहते हैं** (समय संजुत्तउ कमल पउत्तु) **तब आत्मारूपी कमल स्वरूपाचरण चारित्रका धारी होता है** (सहकार नन्त विन्यान संजुत्तु) **साथमें अनन्तज्ञान होता है** (समय सहावे समय मओ) **वह आत्मीक स्वभावसे ही आत्मामई या परमात्मा होता है ॥ १७ ॥**

(अवयास नन्त तं कमल स उत्तु) **वह कमल ऐसा है जिसमें अनन्त पदार्थोंके जाननेकी जगह है** (न्यान विन्यानह समय संजुत्तु) **वह केवलज्ञान सहित आत्मा है** (अवयामह नन्तानन्त पओ) **उसमें अनन्तानन्त पदार्थोंका ज्ञान है** (अन्मोय न्यान तह कमल पउत्तु) **उस कमलने ज्ञानानन्दको पालिया है** (अन्मोयह तं कम्मु गलंतु) **ज्ञानमें आनन्दका अनुभव करनेसे कर्म गल जाते हैं** (अन्मोय सहावे षिपक मओ) **तब वह क्षायिक भावधारी परमात्माके आनन्द स्वभावमें मगन रहते हैं ॥ १८ ॥**

(अन्मोय न्यान तं कमल संजुत्त) **वह आत्मारूपी कमल ज्ञानानन्दसे पूर्ण है** (षिपियो कम्मु अनन्त विलन्तु) **उसमेंसे अनन्तानन्त कर्मोंके स्थान क्षय होगये हैं** (कमल सहावे मुक्ति पओ) **जब आत्मा कमलके समान पूर्ण विकसित होजाता है तब वह मुक्तिको पालेता है** (मुक्ति संजुत्तो सिद्ध सहाओ) **सिद्धका स्वभाव मुक्तिरूप है** (हितमित परिनै ममल सुभाओ) **वे सिद्ध भगवान परम हितकारी हैं, वे अपनी मर्यादासे ही अपने शुद्ध स्वभावमें परिणमन कर रहे हैं** (कमल महाव सु सिद्धि पऊ) **कमलके समान पूर्ण प्रफुल्लित स्वभावसे आत्मा सिद्धिपदको पाता है ॥ १९ ॥**

(कमलह कलियो रमन रवंतु) **यह आत्मारूप कमल अपनी कलियोंमें या अपने गुणोंमें रमण कर रहा है** (रमन सहावे लंकृत जुत्तु) **इसका स्वभावमें आपमें रमण करना है। इसी स्वभावसे यह शोभायमान है** (विन्यान वीर्य तं मुक्ति पओ) **यह अनन्त ज्ञानी व अनन्त वीर्यवान मुक्तिको पाता है** (समय मुक्ति तं ममल सुभाओ) **जब आत्माकी मुक्ति होती है तब कर्मरहित शुद्ध स्वभाव प्रगट होजाता है** (नन्तानंत सु न्यान सहाओ) **तब अनन्तानन्त पदार्थोंको जाननेका समर्थ ज्ञान स्वभाव प्रगट होता है** (न्यान वृद्धि विन्यान पओ) **आत्मज्ञानसे ज्ञानकी वृद्धि होते होते वह केवलज्ञानरूप होजाता है। आत्मा–आत्मानुभवसे ही केवली होता है ॥२०॥**

(कमल पउत्तो नन्त प्रकार) **आत्मारूपी कमल कर्मकी संगतिमें अनेक प्रकारका होता है** (चावरनह तं ममल अपार) **चारित्रके पालनेसे यह आत्मा अपार शुद्धिको पाता है** (न्यान अन्मोय सु नन्त पओ) **जब ज्ञानमें**

आनन्द अनन्तरूपसे आने लगता है (अमोय सहावे विपक पउत्त) उस आनन्दमई स्वभावसे क्षायिक भाव होजाता है (नन्तानन्त सु वम्मु गलंतु) तब अनन्तानन्त कर्म गल जाते हैं (अन्मोय सहावे मुक्ति पओ) उस आनंदमई स्वभावसे ही यह आत्मा मुक्तिको पालेता है ॥ २१ ॥

(उव उवनौ उवन म उत्त) वही आत्मज्ञानके प्रकाशका उदय कहा गया है (भय विपिनक है भव्वु स उत्तु) उसी भावको हे भव्य ! भयोंका नाशक कहा गया है (भय विलयंनउ ममल पओ) भयके क्षय होते ही निर्मल पद प्राप्त होता है (सुभाव सुहावे भय विन्यंतु) अपने आत्मीक स्वभावकी सहायतासे सर्व भय दूर होजाते हैं (मन भय गलिय सु नन्तानन्तु) मनके भीतर रहनेवाले अनन्त भय चले जाते हैं (भय विनास भव्वु जु मुनहु) हे भव्य ! जिस तरह संसारका भय मिट जावे, उस तरह तत्वका मनन करो ॥ २२ ॥

(अमिय दिस्टि तं भय विलयन्तु) आनन्दामृतके अनुभवसे वे सर्व संसारके भय विला जाते हैं (दिस्टिह भय उववन्न गलंतु) आत्म श्रद्धाके होते हुए जो कोई भय उत्पन्न हों, वे गल जाते हैं (झडत विलय विन्यान पओ) जैसे ही भय हट जाते हैं, वैसे ही शीघ्र ही ज्ञानपद प्रकाश होजाता है (भय विलयन्तु उवन सहाओ) भयोंके जाते ही स्वभावका उदय होजाता है (उवनो न्यान विन्यान सुभाओ) वह ज्ञानचेतनामई स्वभाव झलक जाता है (उवनो अर्थति अर्थ है) तब रत्नत्रयमई पदार्थ प्रकाश होजाता है ॥ २३ ॥

(उव उवन दिस्टि हितकार संजुत्त) आत्मज्ञानकी दृष्टि बड़ी हितकारी है, जब उदय होजाती है (सहयार समय तं नन्तानंतु) तब अनंतगुण पर्यायके स्वामी आत्माके उदयके लिये वह दृष्टि सहकारी है (हिययार दिस्टि तं उवन मऊ) यह प्रकाश रूप दृष्टि बड़ी ही हितकारी है (उवन दिस्टि हितकार संजुत्त) ऐसी हितकारी आत्मज्ञानकी दृष्टिके होते हुए (सहयार समय तं नन्तानन्तु) उसकी सहायतासे आत्माकी अनंत शक्तिओंका विकाश होजाता है (हिय दिस्टि तं उवन मओ) इसलिये यह उदयरूप दृष्टि बड़ी ही हितकारी है ॥ २४ ॥

(सहयार दिस्टि तं अमिय संजुत्त) यह आत्माकी उन्नतिमें सहायकारी दृष्टि आनन्दसे परिपूर्ण है (हिय सहाव उववन संजुत्त) इसीसे हितकारी आत्माका स्वभाव प्रगट होजाता है (उववन सहाउ सहयार मओ) यह प्रकाशरूप आत्माका स्वभाव बड़ा सहकारी है (सहयार तं उवन सहाओ) इसकी सहायतासे स्वभाव प्रकाश होता है (अमिय दिस्टि विष गलिय सुभाओ) इस आनन्दामृतकी दृष्टिसे विषरूप स्वभाव अर्थात् मोहका सर्व विकार गल जाता है (उव उवन सहावे मुक्ति पओ) तब स्वभावके प्रकाशसे आत्मा मोक्षको पालेता है ॥२५॥

(सिद्ध सर्रुवै पत्तु स उत्त) सिद्ध भगवानका स्वरूप मात्र कहा गया है (विक्त रुव उवएसु अनन्तु) जब वह भावोंके भीतर प्रगट होता है तो मानो उन सिद्धोंका अनन्त हितकारी उपदेश ही प्राप्त होजाता है (उव उवन देइ हिययारु ले) वह हितकारी ज्ञानभाव देता है जिसे लेना चाहिये (सक्ति सरूवे दत्त सहाओ) इसलिये वे सिद्ध भगवान अपनी शक्तिसे दाताके स्वभावको रखनेवाले हैं (न्यान ऊवनो समय सुभाओ) जब सिद्धका ज्ञान होजाता है तब आत्माकी भलेप्रकार भावना होती है (अन्मोय दत्त नं मुक्ति पओ) आनन्दका दान मिलनेसे आत्मा मुक्तिको पहुँच जाता है।

भावार्थ—यह आत्मा निश्चयसे सिद्ध स्वरूप है। सिद्धका स्वरूप ही पात्र है। सिद्ध स्वरूप ही दाता है। उत्तमोत्तम पात्र सिद्ध हैं, जो ज्ञानदान देते हैं। आत्मा सिद्ध स्वरूपी है। यह आपसे अपनेको सिद्ध स्वरूपके भावका दान देता है इसलिये यही दाता है व यही पात्र है। इसतरह आपसे आपको जब ज्ञानानन्दका दान मिलता रहता है तब यह आत्मा-आत्मानन्दके परम लाभसे तृप्त हो मुक्ति लाभ करलेता है॥२६॥

(पत्त ऊवनो उवन संजुत्त) आत्मज्ञानके प्रकाशको लिये पात्रका उदय होता है (दत्त ऊवनो समय संजुत्त) उसीके लिये दातारूप आत्माका भाव प्रगट होता है (दाता पतु सम भाओ मओ) दाता भी आत्मा है पात्र भी आत्मा है। आत्मा-आत्माको आत्मीक भाव देता है, दोनोंका समभाव होता है अर्थात् द्वैत विचारसे अद्वैत आत्मानुभव होजाता है (कमलह कमल सहाउ पउत्तु) आत्मारूपी कमलकी सहायतासे आत्मारूपी कमल अपने स्वभावको प्राप्त करता है (समय अन्मोय सु समय संजुत्त) आत्मामें आनन्दका लाभ होना सो आत्मारूप ही है (अन्मोय समय सम सिद्धि पओ) जब समभावके साथ आत्मानन्द निरन्तर रहता है तब सिद्धपद प्राप्त होजाता है ॥ २७ ॥

(उव उवनु ति अर्थह अर्थ संजुत्त) अब रत्नत्रय सहित आत्म पदार्थका उदय होगया है (अर्थ समर्थह ममल मुनन्तु) अनन्त शक्तिधारी शुद्ध आत्माका ही मनन करो (ममल सहावे सिद्धि पओ) जब आत्मा कर्ममलसे छूटकर स्वभावको पालेगा तब सिद्धपदको पाजायगा (अर्थ ऊवनो अर्थ समर्थ) अपनी सिद्धिको करनेके लिये शक्तिशाली आत्मारूपी पदार्थका प्रकाश होगया है (अर्थ सिद्ध सर्वार्थ समीतु) आत्माके प्रयोजनकी सिद्धि होना अर्थात् आत्माका शुद्ध होजाना सर्व अर्थका प्राप्त कर लेना है (समर्थ सिद्ध तं जिन भनिओ) सर्वार्थ पूर्ण श्री सिद्ध भगवानको ही जिन कहा गया है ॥ २८ ॥

(अगम अर्थ सम अर्थ सम्पत्तु) मन व इन्द्रियोंसे अगोचर आत्माका लाभ सो ही समताभावका लाभ है (दिस्टि अर्थ सहयार समर्थु) आत्माका अनुभव ही आत्माके विकाशका समर्थ कारण है (अर्थ सिद्ध सम सिद्ध मओ) आत्मारूपी पदार्थकी सिद्धि होना सो ही समभावरूप सिद्ध भावका होना है (सहयार अर्थ सम समय संजुत्) यह सहकारी पदार्थ समभाव सहित आत्मा ही है (अवयास अर्थ तं अनन्तानन्तु) आत्मारूपी पदार्थमें अनन्तज्ञान है (अन्मोय अर्थ तं ममल पओ) इसी पदार्थके भीतर आनन्दमग्न होना ही शुद्ध पदके लाभका उपाय है ॥ २९ ॥

(उत्पन सिद्ध हिययार संजुत्तु) सिद्ध भावका पैदा होना बड़ा हितकारी है (सहयार सिद्ध तं नन्तानन्तु) सिद्ध भावका रमण ही अन्तानन्त शक्तिधारी सिद्ध पदका उपाय है (उक्त सिद्ध जिन उक्त पओ) ऐसे ही सिद्धको जिन पद कहते हैं (परिनै सिद्ध परमान सु सिद्ध) श्री सिद्ध भगवान अपने सिद्धरूप शुद्ध ज्ञानमें परिणमन करते हैं (समय सिद्ध सहयार समीपु) आत्माके लिये सिद्ध भाव सहकारी है (अवयास सिद्ध तं नन्त पओ) सिद्ध भगवानमें अनन्त शक्तियोंका अवकाश है ॥ ३० ॥

(अन्मोय सिद्ध सम समय संजु) सिद्ध भगवान आनन्दरूप व समतारूपमई आत्मा हैं (षिपक सिद्ध तं कम्म गलंतु) वे क्षायिक भावधारी सिद्ध हैं उनके सर्व कर्म गल गये हैं (षिपि कम्मु मुक्ति सम भाउ समू) कर्मोंको क्षय करके मुक्तिपदको प्राप्त हुआ है वहां समभाव बना रहता है (मुक्ति सिद्ध तं सिद्ध म उत्तु) जो कर्मोंसे मुक्त होकर साध्यको सिद्ध कर लेते हैं उनको ही सिद्ध कहते हैं (रमन सिद्ध तं अमिय संजुत्तु) वे सिद्ध आत्मानन्दमें रमण करते हैं (सिद्ध मुक्ति संजुत्त पओ) जो सिद्धपद है वही मुक्तिपद है ॥ ३१ ॥

(विन्यान विंदु तं विंदु संजुत्त) ज्ञान चेतनाके अनुभवमें ज्ञानका स्वाद आता है (न्यान विन्यान सु सिद्धि पउत्तु) ज्ञानके ही द्वारा सिद्धपद होता है (सिद्ध सजोए विंद मओ) श्री सिद्ध भगवान ज्ञानका अनुभव ही करते हैं (अलष लषिय तं विंद सहाओ) वे सिद्ध ज्ञानानन्दके स्वादमें ही मन व इंद्रियसे अगोचर आत्माका अनुभव करते हैं (वीयराय जिन उत्त पइ ओ) उसी प्रभावसे वे वीतराग जिन कहे जाते हैं (राग गलिय जन रंज मओ) वहां मानवोंको रंजायमान करनेवाला राग गल गया है ॥ ३२ ॥

(सिद्ध पउत्तो राग गलंतु) रागके गल जानेसे ही सिद्धपद होता है (जनरंजन राग उवन विलन्तु) वहां जनोंको रंजायमान करनेवाले रागका कारण कर्म ही विला गया है (कलरंजन दोष जु से गलियो) शरीरमें राग

करनेका सर्व दोष बिलकुल गल गया है न शरीर है, न कर्म है (मनरंजन राग गलंतु सुभाओ) मनको रंजायमान करनेवाले राग स्वभावका भी गलन होगया है (दर्सन मोहंधु सु गलिय सहाओ) दर्शन मोहरूपी अन्धा बनानेवाला कर्मका स्वभाव भी गल गया है (दत्त कम्म विलयंतु सुई) विभावोंके देनेवाले कर्मोंका पूर्ण विलय होगया है ॥ ३३ ॥

(भय सल्य संक विलयंतु सुभाओ) वहां ऐसा स्वभाव प्रगट होगया है। न वहां कोई भय है, न शल्य है, न कोई शङ्का है (निसंक सहावे ममल सहाओ) वहां पूर्ण निःशङ्क स्वभाव है, पूर्ण शुद्ध स्वभाव है (सिद्ध सहवे ममल पओ) वहां शुद्ध सिद्ध स्वरूपकी प्राप्ति होगई है (न्यान विन्यानह समय संजुत्तु) वे शुद्ध ज्ञानसे परिपूर्ण हैं (सुयं लब्धि सो लहिय संजुत्तु) उन्होंने अपने स्वभावको स्वयं प्राप्त किया है उसे ही सदा रखनेवाले हैं (न्यान अन्मोय सु मुक्ति गओ) वे ज्ञानानन्दके भोक्ता होते हुए मुक्तिपदको प्राप्त हुए हैं ॥ ३४ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें सिद्धपदकी ही महिमा है। भाव यही है कि आत्मज्ञान ही मोक्षका कारण है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्रकी एकताका लाभ ही आत्मज्ञान, आत्मानुभव स्वरूप है, उसी भावको ज्ञान चेतना कहते हैं। इसी भावके अभ्याससे यह आत्मा उच्च भावोंमें चढ़ते हुए चार घातीय कर्मोंका क्षय करके अरहन्त होजाता है। फिर अघातीय कर्मोंको भी नाश करके सिद्ध होजाता है। सिद्ध भगवान सर्व कर्मरहित परम शुद्ध आत्मीक भावमें रमण करते हैं, वे परमानन्दसे पूर्ण हैं। वे अपने स्वभावको त्याग करके भी विभावरूप नहीं होते हैं। उनके कभी रागादि विकार व योगोंका समानपना नहीं है, वे सर्व प्रपंचसे रहित होकर अपने स्वभावके पूर्ण स्वामी होजाते हैं। जो उनका ध्यान करता है उसे वह अपना पद देते हैं। अर्थात् सिद्धोंका ध्यान ही सिद्धपदका दाता है। सिद्ध पात्र भी हैं, दाता भी हैं। सिद्ध भावका अनुभव सिद्धोंकी विनय है तब सिद्ध पात्र हुए। सिद्धोंके मननसे सिद्धपद होता है। इसमें सिद्ध दाता भी हुए। सर्व प्रकार ग्रहण करनेयोग्य एक सिद्धपद है। ॐ मंत्रमें भी मुख्य लक्ष्य सिद्धपर ही रहता है। ॐका ध्यान करते हुए सिद्ध भावपर लक्ष्य रखना चाहिये। सिद्धोंकी महिमा वचनगोचर नहीं है। उनको वारवार कमलके समान पूर्ण विकसित कहा गया है। वे परमानन्द दाता हैं। जो उनका ध्यान करता है वह आनन्दमग्न होजाता है। संसार सम्बन्धी सब राग वहां नहीं है। ध्यान रंजन, कल रंजन, व मन रंजन तीन तरहका राग होता है। न वहां दूसरे मानवोंको राजी रखनेका भाव

है, न शरीरकी सेवाका राग है, न मनमें प्रसन्नताका राग है। वे पूर्ण वीतरागी व परम ज्ञानी शरीरादि रहित शुद्ध सिद्ध आत्मा हैं। परमात्म-प्रकाशमें श्री योगेन्द्राचार्य कहते हैं कि शुद्धात्माके ध्यानसे ही सिद्ध होता है—

अप्पा मिल्लिवि णाणमउ, अण्ण परायउ भाउ। ते छंडेविणु जीव तुहुं, भावहिं अप्प सहाउ ॥ ७४ ॥
अट्ठहिं कम्महिं बाहिरउ सयलहिं दोसहं चत्त। दंसण णाण चरित्तमउ, अप्पा भावि णिरुत्त ॥ ७५ ॥
अप्पइं अप्पु मुणउ जिउ, सम्मा दिट्ठि हवेइ। सम्मादिट्ठिउ जीवडउ, लहु कम्मइ मुच्चेइ ॥ ७६ ॥

भावार्थ—हे जीव ! तू ज्ञानमई आत्माको छोड़कर और सर्व पर पदार्थ हैं उनको छोड़कर एक अपने आत्माके स्वभावकी भावना कर। यह आत्मा निश्चयसे आठों कर्मोंके बाहर है, रागादि सर्व दोषोंसे रहित है, दर्शन ज्ञान चारित्रमय है ऐसी भावना कर। आत्माके द्वारा जानता हुआ ही सम्यग्दृष्टी होता है। सम्यग्दृष्टी जीव ही शीघ्र कर्मोंसे मुक्त होता है।

(६६) फाग फूलना गाथा १३४८ से १३६० तक।

जिन जिनयति जिनय जिनय पओ, जिन जिनयति जिनय जिनेंदु।
उव उवन हि पार उवन पऊ, सहयार सिद्धि संपत्तु ॥ १ ॥
सिद्ध सरुव सुरति, तरन जिन खेलहि फागु।
मुक्ति पंथ सुई ऊवने, सह ममय सिद्धि संपत्तु ॥ २ ॥ (आचरी)
अर्क सुअर्क सुअर्क, सुयं सुई अर्क स उत्तु।
सुयं सुइ अर्क ऊवने, अर्क विंद संजुत्तु ॥ सिद्ध सरुव० ॥ ३ ॥
इस्ट इस्ट भय विलयं, उवन भय उवन विलंतु।
अभय अभय सुइ ऊवने, भय सल्य संक विलयंतु ॥ सिद्ध सरुव० ॥ ४ ॥

अर्क विंद सुइ ऊवने, विंद अर्क सुइ उत्तु ।
विंद सुयं सुइ अर्क, अर्क सुइ विंद अनंतु ॥ सिद्ध मरुव० ॥ ५ ॥
नन्त विंद सुइ अर्क, अर्क सुइ सुन्न पउत्तु ।
सुन्न सुयं [illegible] उत्तु, जिनय जिन नन्त अनन्तु ॥ सिद्ध० ॥ ६ ॥
कमल अर्क सुइ अर्क, अर्क सुइ इस्ट पउत्तु ।
इस्ट अर्क इस्टंतु, उवन वौ उवन स उत्तु ॥ सिद्ध० ॥ ७ ॥
पदम कमल सुइ अर्क, अर्क जिन अर्क पउत्तु ।
विंद अर्क उववन्न, अक सुइ विंद अनन्तु ॥ सिद्ध० ॥ ८ ॥
विंद अर्क सुइ ऊवने, कमल सब्द सुइ उत्तु ।
कमल विंद सुइ अर्क, अर्क जिन सब्द अनन्तु ॥ सिद्ध० ॥ ९ ॥
कमल अर्क सुइ ऊवने, केवल अर्क जिनुत्तु ।
केवल अर्क ऊवनो, नन्त चतुस्टय उत्तु ॥ सिद्ध० ॥ १० ॥
नन्तानन्त सु अर्क, नन्त जिन नन्त जिनुत्तु ।
नन्तानन्त सुभाइ, अर्क जिन अर्क जिनुत्तु ॥ सिद्ध० ॥ ११ ॥
अन्मोय अर्क सुइ ऊवने, जिन जिनय जिनुत्तु ।
सरनि संक भय विलयो, मुक्ति पंथ दर्संतु ॥ सिद्ध० ॥ १२ ॥
तारन तरन सहाइ, सहज जिन अर्क पउत्तु ।
अन्मोय दिस्टि सुइ ऊवने, सिद्ध समय सिद्धि संपत्तु ॥ सिद्ध० ॥ १३ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जिन जिनयति जिनय जिनय पओ) श्री जिनेन्द्रका वीतराग पद जयवन्त हो (जिन जिनयति जिनय जिनेन्द) श्री वीतराग जिनेन्द्र जयवंत हो (उव उवन हियार उवन पऊ) हितकारी आत्मज्ञानका प्रकाश उदय हुआ है (सहयार सिद्धि संपत्तु) जिसकी सहायतासे सिद्धपदका लाभ होता है ॥ १ ॥

(सिद्ध मम्त्व सुगति नगन जिन खेलहि फागु) श्री सिद्ध स्वरूपमें भलेप्रकार रत होनेवाली स्वात्मानुभूति संसारसे पार होनेवाले श्री जिनेन्द्रके साथ होली खेल रही है (मुक्ति पंथ सुइ उवने, सह समय सिद्धि संपत्तु) इसी होलीसे मोक्षमार्ग झलकता है। अर्थात् श्री जिनेन्द्रके स्वरूपके साथ स्वानुभूतिका रमण ही मोक्षमार्ग है जिसके होते हुए आत्मा सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ २ ॥

(अर्क सु अर्क सु अर्क सुयं सुइ अर्क स उत्तु) सूर्य समान भलेप्रकार प्रकाशमान अद्‌भूत सूर्य स्वयं इस परमात्मा सूर्यको कहा गया है (सुयं सुइ अर्क उवन, अर्क विन्द संजुत) परमात्मारूपी सूर्यका स्वयं उदय होता है, जहां उसी सूर्य समान परमात्माका अनुभव है ॥ ३ ॥

(इस्ट इस्ट भय विलयं उवन भय उवन विलंतु) जब आत्माके स्वरूपमें जो कि परम इष्ट है, प्रेम होजाता है, तब भय दूर होजाता है। यदि कभी कोई भय उठता भी है तो उठनेके साथ ही आत्माके स्वरूप विचारते ही विला जाता है (अभय अभय सुइ उवने, भय सल्य संक विलयंतु) निर्भय करनेवाले अभय स्वरूपको आत्मारूपी सूर्यका उदय होते ही भय, शल्य, शङ्का, सब दूर होजाती हैं ॥ ४ ॥

(अर्क विन्द सुइ उवने, विन्द अर्क सुइ उत्त) सूर्य समान आत्माका अनुभव जब प्रगट होता है तब स्वानुभवरूपी सूर्यका उदय कहा जाता है (विन्द सुयं सुइ अर्क, अर्क सुइ विन्द अनंतु) जो स्वानुभव है वही सूर्य है, जो सूर्य है वही अनन्तज्ञानका अनुभव है ॥ ५ ॥

(नंत विन्द सुइ अर्क, अर्क सुन्न पउत्तु) अनन्तज्ञानका अनुभव है वही सूर्यका उदय है—आत्मारूपी सूर्यका उदय है तब ही परभावोंसे शून्य वीतराग भावका लाभ है (सुन्न सुयं सुइ उत्त, जिनय जिन नंत अनंतु) जब परभावोंसे शून्य वीतरागभाव होता है तब ही अनन्त कर्मोंको जीतनेवाला श्री जिनेन्द्रका स्वभाव प्रगट होजाता है ॥ ६ ॥

(कमल अर्क सुइ अर्क, अर्क सुइ इस्ट पउत्तु) कमल समान प्रकाशमान आत्मा सो ही सूर्य है, सूर्यसम

आत्मा ही अपना इष्टपद है (इस्ट अर्क इस्टंतु, उवन पौ उवन स उत्तु) परमप्रिय आत्मारूपी सूर्यके साथ हित करना ही आत्मज्ञानका प्रकाश कहा गया है ॥ ७ ॥

(पदम कमल सुइ अर्क अर्क जिन अर्क पउत्तु) आत्मारूपी कमल है सो ही सूर्य है। सूर्य समान जिनेन्द्रको इस सूर्यने प्राप्त कर लिया है अर्थात् आत्मामें परमात्माका लाभ कर लिया है (विंद अर्क उववन, अर्क सुइ विंद अनंतु) स्वानुभवरूपी सूर्यका प्रकाश होना सो ही सूर्य है तब ही अनन्तज्ञानका अनुभव होता है ॥८॥

(विंद अर्क सुइ ऊवने, कमल सब्द सुइ उत्तु) आत्मारूपी सूर्यका अनुभव होने हीको कमल शब्दसे कहा गया है। क्योंकि वहां आत्मा कमल समान प्रफुल्लित होता है (कमल विंद सुइ अर्क, अर्क जिन सब्द अनंतु) आत्मारूपी कमलका अनुभव सो ही सूर्य है। वे ही सूर्य सम जिन हैं, जिनके जपनेके लिये अनेक शब्द होसकते हैं ॥ ९ ॥

(कमल अर्क सुइ ऊवने, केवल अर्क जिनुत्तु) कमल समान विकसित आत्मारूपी सूर्यका उदय होता है तब उसीको केवलज्ञानी सूर्यसम जिन कहा गया है (केवल अर्क ऊवनो, मंन चतुस्टै उत्तु) केवलज्ञानी सूर्य समान आत्मामें अनन्त चतुष्टयका प्रकाश कहा गया है। अर्थात् अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्य व अनंत सुख जहां सदा प्रकाशमान होते हैं ॥ १० ॥

(नन्तानन्त सु अर्क नंत जिन नंतु जिनुत्तु) इस केवलज्ञानी सूर्यमें अनन्तानन्त ज्ञानका प्रकाश है। वे अविनाशी जिन हैं, उनके अनन्त गुण जिनेन्द्रने कहे हैं (नन्तानन्त सुभाइ, अर्क जिन अर्क जिनुत्तु) वे अनन्त स्वभावोंके धारी हैं, वे ही वीतराग भगवान सूर्य सम तेजस्वी हैं, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है ॥ ११ ॥

(अन्मोय अर्क सुइ ऊवने, जिन जिनय जिनुत्तु) आनन्दमई सूर्यका जहां स्वयं प्रकाश रहता है, उन्हें ही जिन या जिनेन्द्र, जिनेन्द्रने कहा है (मर्शन संक भय विलयो, मुक्ति पंथ दर्सतु) उनके संसार सम्बन्धी सर्व शङ्काएँ व भय विला गये हैं तथा वे साक्षात् मोक्षमार्गका दर्शन या अनुभव कर रहे हैं ॥ १२ ॥

(तारन तरन सहाव सहज जिन अर्क पउत्तु) तारन तरन श्री अरहन्त भगवानकी सहायतासे अर्थात परमात्माके समान आत्माका अनुभव करनेसे सहजमें ही जिनेन्द्ररूपी सूर्यका लाभ होता है (अन्मोय दिस्टि सुइ ऊवने, सिद्ध समय सिद्धि संपत्त) तब आनन्दमई आत्मदृष्टि स्वयं प्रकाशित होजाती है और यह आत्मा स्वयं सिद्धपदको पालेता है ॥ १३ ॥

भावार्थ—इस होलीके फागमें आत्मानुभवकी महिमा बताई है। भलेप्रकार यह बता दिया है कि स्वात्मानुभूतितिया निज आत्माके शुद्ध स्वरूपके साथ होली खेल रही है। आत्मा स्वयं सूर्य समान परमात्माको ध्यानमें लेकर स्वयं कर्ममलके अंधकारको मिटाकर सूर्य समान अपने स्वभावमें लेजाता है। यहां केवल स्वभाव मात्र है। परभावोंकी–रागादिकोंकी पूर्ण शून्यता है। आत्मानुभव ही वास्तवमें मोक्षमार्ग है। इसीको सेवन करनेसे यह जीव क्षपकश्रेणी पर चढ़कर केवलज्ञानी होजाता है। फिर शीघ्र ही सिद्धपदको पालेता है। आत्मानुभव ही से आत्मानुभव प्राप्त होता है। परमात्मा सिद्ध भगवानके पूर्ण आत्माका अनुभव है। प्रयोजन यह है जिनको मोक्षपदकी अभिलाषा हो उनको स्वात्मानुभवका निरन्तर अभ्यास करना योग्य है। यही धर्म है ऐसा परमात्मप्रकाशमें श्री योगीन्द्रदेव कहते हैं—

भाउ विशुद्धउ अप्पणउ, धम्म भणेविणु लेहु। चउगइ दुक्खहिं जो धरइ, जीउ पडंतहु एहु॥ १९५॥

सिद्धिहिं केरा पंथडा भाउ विसुद्धउ एक्कु। जो तसु भावहिं मुणि चलइ सो किम होइ विमुक्कु॥ १९६॥

जहि भावहिं तहिं जाहि जिय, जं भावइ करि तं जि। केम्वइ मोक्ख ण अत्थि पर, चित्तहिं सुद्धि ण जं जि॥१९७॥

भावार्थ—आत्माका शुद्ध भाव ही धर्म है, यही चार गतियोंमें पड़नेसे जीवकी रक्षा करता है, इसीको ग्रहण कर। सिद्ध होनेका मार्ग एक शुद्ध भाव ही है। जो मुनि शुद्ध भावसे गिर जायगा वह किस तरह मोक्ष जायगा। जहां चाहो वहां जाओ, जो चाहो सो करो। जबतक चित्तकी शुद्धि न होगी तबतक कदापि मोक्ष नहीं होसक्ता।

---

(६७) पदवी फूलना गाथा १३६१ से १३७० तक।

पद विन्यान चरन सम्मत्तं, रंज रमन नन्द नन्द जिनुत्तं।
भय विनासु तं भव्वु स उत्तं, अन्मोय तरन सुइ सिद्धि संपत्तं॥ १॥

पदवी उवन उवन सौ उवनं, उवन चरन अन्यासम रमनं।
उवन रंज रमन भय षिपनं, नन्द कमल हिय कर्न सिधि गमनं॥ २॥

भय आयरन उवन सुत न्यानं, न्यान चरन वेदक सुइ समयं ।
हिययार रंज सुइ अमिय रमंतं, आनन्द कमल सुइ कर्न सिधि रमनं ॥ ३ ॥
पदवी सिद्ध उवन निहि अवहि, वीर्य चरन सुइ उवन सम्मत्तं ।
सहयार रंज दिपि दिप्ति सु रमनं, चेयन नन्द कर्न कमल सिधि रत्तं ॥ ४ ॥
अर्हह जिन मनपर्यय न्यानं, तव आयरन सम्मत षिउ उवनं ।
विन्यान रंजु जिन रमन जिनुत्तु, सहज नन्द कर्न कमल सिधि रमनं ॥ ५ ॥
पदवी सिद्ध केवलं न्यानं, चरन चरन धुव उवन सम्मत्तं ।
जिन जिनय रंजु जिननाथ सु रमनं, परमनन्द कर्न कमल सिधि रत्तं ॥ ६ ॥
पदवी उवन उवन जिन उत्तं, उवन सुभाइ जिनय जिन सुरतं ।
उवन उवन उव उवन सु कर्न, उवन कलन कमल सिधि रमनं ॥ ७ ॥
सुइ तारन तरन विवान स उत्तं, विवान समय उव उवन जिन रंजु ।
दिप्ति दिष्टि सुइ दिष्टि सु दिपियं, अन्मोय तरन सहसमय सिधि रतियं ॥ ८ ॥
तारन तरन उवन जिन उवनं, उवन सब्द पिय पिय सुइ सब्दं ।
उवन साहि अवयास उव कमलं, कमल कन विवान सिधि रमनं ॥ ९ ॥
तारन तरन उवन उव उवनं, उवन समय विवान सह रमनं ।
रमन कमल कर्न चर नन्तं, सह समय विवान सिद्धि संपत्तं ॥ १० ॥

अन्वय सहित अर्थ—(पद विन्यान चरन सम्मत्तं) आत्मीक स्वरूपके ज्ञानमें चलना या आत्मज्ञानका अनुभव करना सम्यग्दर्शन है (रंज रमन नन्द नन्द जिनुत्तं) जहां सम्यक्तका अनुभव होता है वहां आत्मामें

रंजायमानपना होना है तथा निजानन्दमें रमण होता है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (भय विनासु तं भव्वु स उत्तं) उस सम्यग्दर्शनको हे भव्य ! सब भयोंका नाशक कहा गया है (अन्मोय तरन सुइ सिद्धि संपत्तं) उसीमें आनन्द होना ही वह जहाज है जिसपर चढ़कर यह आत्मा मोक्षको पाता है ॥ १ ॥

(पदवी उवन उवन मौ उवनं) आत्मीक पदवीका प्रकाश होना उदय है (उवन चरन अन्यासम रमनं) इस आत्मीक उदयमें चलना सो ही उसमें रमना है जैसा रमन अन्य महात्माओंने किया है (उवन रंज रमन भय षिपनं) आत्माके भीतर रंजायमान होना आत्मरमण है, यह सर्व भयोंको दूर करनेवाला है (नंद कमल हिय कर्न सिधि गम्नं) इस कमल समान प्रफुल्लित शुद्ध आत्मामें आनन्दका अनुभव ही सिद्धिपद पानेका हितकारी साधन है ॥ २ ॥

(भय आवरन उवन सुत न्यानं) आत्मीक पदमें आवरण करनेसे या आत्मरमणसे श्रुतज्ञानका प्रकाश होता है (न्यान चरन वेदक सुइ समयं) इस ज्ञानमें चलना सो ही आत्माका अनुभव है। क्योंकि निश्चयसे श्रुतज्ञान आत्मा ही है (हियआर रंज सुइ अमिय रमंतं) यह परम हितकारी बात है कि आत्मीक आनन्दरूपी अमृतके स्वादमें रमण किया जावे (आनंद कमल सुइ कर्न सिधि रमनं) आत्मारूपी कमलका आनन्द लेना ही वह साधन है जो सिद्धभावके रमणको प्राप्त करा देता है ॥ ३ ॥

(पदवी सिद्ध उवन निहि अवहि) सिद्धपदमें रमण करनेसे अवधिज्ञानकी ऋद्धि प्रगट होजाती है (वीर्य चरन सुइ उवन सम्मत्तं) आत्माके वीर्यको प्रगट करना व आत्मामें आचरण करना ही सम्यग्दर्शनका उदय है (महयार रंज दिपि दिति सु रमनं) इसकी सहायतासे ज्ञानानन्दकी ज्योति झलक जाती है, उसीमें भलेप्रकार रमण होता है (चेयन नन्द कर्न कमल सिधि रत्तं) ज्ञान चेतनामें आनन्द मानना ही वह साधन है जिसमें आत्मारूपी कमल सिद्ध भावमें रम जाता है ॥ ४ ॥

(अरुह जिन मनपर्यय न्यानं) आत्मध्यानसे ही श्री वीतराग मुनिके मनःपर्यय ज्ञानका उदय होजाता है (तव आयरन सम्मन षिउ उवनं तपमें आचरण करनेसे सातवें या नीचेके गुणस्थानमें क्षायिक सम्यग्दर्शनका उदय होजाता है (विन्यान रंजु जिन रमन जिनुत्) ज्ञान स्वभावमें आनन्दित होना ही जिन भगवानमें रमण करना है, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (सहज नन्द कर्न कमल सिधि रमनं) सहजानन्द ही वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल सिद्ध भावमें रम जाता है ॥ ५ ॥

(पदवी सिद्ध केवलं न्यानं) सिद्ध पदवीमें रमण करनेसे केवलज्ञानकी प्राप्ति होजाती है (चान चरन ध्रुव उवन सम्मत्तं) तब यथाख्यात चारित्रसे सम्यग्दर्शन भी परमावगाढ़ या ध्रुव होजाता है (जिन जिनय रंजु जिननाथ सु रमनं) वीतराग भावमें रंजायमान होना ही श्री जिनेन्द्रके भीतर भलेप्रकार रमण माना है (परमान्द कर्न कमल सिधि रत्तं) परमानन्दका अनुभव ही वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल सिद्धभावमें रत होजाता है ॥ ६ ॥

(पदवी उवन उवन जिन उत्तं) जैसा जिनेन्द्रने कहा है वैसी परमात्मा पदवीका उदय होजाता है (उवन सुभाव जिनय जिन सुत्तं) वहां स्वाभाविक प्रकाश है। जिन भगवान अपने जिन स्वभावमें भलेप्रकार रत हैं (उवन उवन उव उवन सु कर्न) उदय होते होते आत्माके स्वभावका झलक जाना साक्षात् मोक्षसाधन है (उवन कलन कमल सिधि रमनं) इस आत्माके प्रकाशके भीतर रमण करना ही आत्मारूपी कमलका सिद्ध-भावमें रमण करना है ॥ ७ ॥

(सुइ तारन तरन विवान स उत्तं) श्री अरहन्त परमात्माको ही तारन तरन जहाज कहा गया है (विवान समय उव उवन जिन रंजु) वह अरहन्त जहाज ही वह आत्मा है जो अपने जिन स्वभावके प्रकाशमें रमण कर रहा है (दिसि दिष्टि सुइ सु दिप्पियं) वहांपर क्षायिक सम्यग्दर्शन तथा अनन्त दर्शन व अनन्त ज्ञान प्रकाशित है (अन्मोय तरन सहसमय सिधि रतियं) वे ही आनन्दरूप जहाज हैं वहां आत्मा सिद्ध भावमें रत है॥८॥

(तारन तरन उवन जिन उवनं) तारण तरण स्वरूप श्री जिनेन्द्र भगवानका प्रकाश होगया है (उवन सब्द पिय पिय सुइ सब्दं) उनके द्वारा दिव्यवाणीका प्रकाश होता है, जिसके शब्द सुननेवालोंको परम प्रिय भासते हैं (उवन सहि अवयास उव कमलं) अरहन्त भगवानका प्रकाश कमल समान आत्माके विकासका साधन है (कमल कर्न विवान सिधि रमनं) यही मोक्ष साधक अरहन्त जहाज कमलके समान हैं तथा सिद्ध-भावमें रमण कर रहे हैं ॥ ९ ॥

(तारन तरन उवन उव उवनं) तारण तरण श्री अरहन्त भगवानका प्रकाश होगया है (उवन समय विवान सह रमनं) यह प्रकाशमान आत्मारूपी जहाजमें रमण कर रहे हैं (रमन कमल कर्न अरहन्त) आत्मारूपी कम-लमें रमण करना ही मोक्षकी प्राप्तिका परम साधन है (सह समय विवान सिद्धि रमनं) यही आत्मारूपी जहाज अपने आत्मीक भावको लिये हुए सिद्धगतिको प्राप्त होजाता है ॥ १० ॥

भावार्थ—इस पदकी फूलनामें यही बताया है कि अरहन्त पदकी प्राप्तिका उपाय मूल सम्यग्दर्शनका लाभ है, इसीसे आत्मानुभव होता है, आत्मानन्दमें रमण होना है। आत्मध्यानके अभ्याससे ही श्रुतज्ञानकी पूर्णता होजाती है, श्रुतकेवली होजाता है, अनेक ऋद्धियें सिद्ध होजाती हैं, अवधिज्ञान व मन:पर्यय ज्ञान प्रगट होजाता है। अन्तमें चार घातिया कर्मोंका क्षय होकर केवलज्ञान प्रगट होजाता है तब अरहंत पद झलक जाता है। वे अनन्त आनन्दमें व यथाख्यात चारित्रमें मगन रहते हैं। उनकी दिव्य वाणीसे अनेक जीवोंका उपकार होता है। वे तारणतरण जहाजके समान परमोपकारी हैं। वे सदा सिद्ध स्वभावमें रमण करते रहते हैं व आयुको समाप्त करके सिद्ध होजाते हैं। भव्य जीवोंको उपदेश है कि यदि तुम्हें भी सिद्धपद पाना हो तो आत्मानुभवका अभ्यास करो जिससे यहां भी सुख शांति मिले व परम्परा मोक्षलाभ हो। आत्माका ध्यान ही मोक्षका उपाय है। आत्मध्यानमें समताभाव होता है। यही समभाव भवसे उद्धारक है। श्री परमात्मप्रकाशमें कहा है—

राय दोसवे परिहरिवि, जे सम जीव णियंति। ते समभाव परिट्ठिया, लहु णिव्वाणु लहंति ॥ २२७ ॥
जो णवि मण्णइ जीव जिय, सयलवि एक्क सहाव। तासु ण थक्कइ भाउ समु, भवसायर जो णाव ॥ २३२ ॥
जीवा सयलवि णाणमय, जम्मण मरण विमुक्क। जीव पएसहिं सयल सम, सयलवि सगुणहिं एक्क ॥ २२४ ॥

भावार्थ—राग द्वेषको छोड़कर जो सब जीवोंको समान जानते हैं वे समभावमें प्रतिष्ठित होकर शीघ्र निर्वाणको पाते हैं। जो सर्व जीवोंको एक स्वभाव नहीं जानते हैं उनको वह समभाव नहीं प्राप्त होता है जो संसार-सागरसे पार होनेको नावके समान है। सर्व ही जीव ज्ञानमई हैं, जन्म मरणसे रहित हैं, प्रदेश भी सबके बराबर हैं, तथा अपने २ सर्व गुणोंकी अपेक्षा भी सब समान हैं। इसतरह विचारकर समभाव लाना चाहिये।

(६८) नृत सुवा फूलना गाथा १३७१ से १३९४ तक।

उव उवन उवन सुइ रमन पओ नृत सुवा, नृत सुइ रमन स उत्तु सुवा।
सुयं रमन सुइ उवन पौ नृत ,, उव उवन दिष्टि विलसन्तु ,, ॥ १ ॥

उव उवन दिप्ति सुइ नन्त मौ नृत-सुत्रा दिप्ति ढलन न्यान सुइ नन्त सुत्रा ।
ढलन जु नन्त विसेष मौ ,, ढलन न्यान विन्यान नृत ,, ॥ २ ॥
दिप्ति दिस्टि उव उवन पौ ,, उव उवन दिस्टि सुइ नृत ,, ।
दिस्टि रमन सुइ नन्त मौ ,, दिपि दिप्ति नन्त प्रवेसु ,, ॥ ३ ॥
उव उवन दिस्टि सुइ समय मौ ,, सुइ समय दिप्ति प्रवेसु ,, ।
जं दिस्टि दिप्त सुइ समय मौ ,, तं उवन दिस्टि प्रवेसु ,, ॥ ४ ॥
जं उवन दिप्ति सुइ नन्त मओ ,, उव उवन ढलन सुइ नंत ,, ।
दिप्ति ढलन सुर उवन मौ ,, उव समय दिस्टि सुइ नंत ,, ॥ ५ ॥
नन्त समय सुइ दिस्टि मौ ,, उव उवन दिस्टि प्रवेसु ,, ।
दिस्टि समय सुइ रमन मौ ,, उव उवन दिप्ति प्रवेसु ,, ॥ ६ ॥
उव उवन दिप्ति सुइ ढलन जिन ,, ढल ढलियो समय सहाउ ,, ।
उव उवन दिस्टि सुइ समय मौ ,, सह समय सिद्धि संपत्तु ,, ॥ ७ ॥
सह समय दिस्टि सुइ-सुर रमनु ,, सुइ उवन दिप्ति प्रवेसु ,, ।
दिप्ति दिस्टि सुइ-सुर रमन ,, सुइ समय उवन सिधि रतु ,, ॥ ८ ॥
सुइ उवन उवन उव कमल मौ ,, कल कमल उवन जिन उत्तु ,, ।
सिद्ध धुव रमन सु कमल मौ ,, कम कमल उवन पौ उत्तु ,, ॥ ९ ॥
जं जं उवनौ कमल मौ ,, उव उवन चरन सिधि रत्तु ,, ।
तं तं साहिउ समय सुइ ,, तं कर्न विंद सिधि रत्तु ,, ॥ १० ॥

जं जं उवनौ उवन मौ न्रृत-सुवा तं कर्न समय संजुत्तु सुवा ।
जं समय उवन पौ सहियो ,, तं उवन प्रिये जिन उत्तु ,, ॥ ११ ॥
जं समय प्रिये सुइ सब्द मौ ,, त समय उवन सिधि रत्त ,, ।
जं उवन सब्द सुइ कर्न मौ ,, तं समय प्रिये जिन उत्त ,, ॥ १२ ॥
जं जं उवनो उवन मौ ,, तं समय कर्न साहंतु ,, ।
जं साहिउ तं उवन मौ ,, तं समय उवन सिधि रत्तु ,, ॥ १३ ॥
जं ढलन चरन उव कमल मौ ,, तं समय कर्न साहंतु ,, ।
जं कर्न समय हुव उवन पौ ,, तं उवन कमल जिन उत्तु ,, ॥ १४ ॥
जं जं उवन उवन पौ ,, अवयास उवन साहंतु ,, ।
अवयास कर्न सुव हिय रमनु ,, हिय हुव उवन अनन्त ,, ॥ १५ ॥
उव उवन उवन अवयास मौ ,, अवयास कमल जिन उत्तु ,, ।
कमल कर्न सुइ समय मौ ,, सुइ केवल कमल जिन उत्तु ,, ॥ १६ ॥
उव उवन अन्मोय रमन विये ,, रै रमन मुक्ति विलसन्तु ,, ।
मुक्ति सुभावे जिनय जिनुत्तु ,, जिन समय सिद्धि संपत्तु ,, ॥ १७ ॥
सुइ तारन तरन सहाउ मौ ,, सुइ कमल चरन जिन उत्तु ,, ।
कमल चरन सुइ कन मौ ,, अन्मोय सिद्धि संपत्तु ,, ॥ १८ ॥
रुचि प्रिये उवन उवन मौ ,, सुइ रूव अरूव जिनुत्तु ,, ।
रूव अरूव तं रमन मौ ,, रमन चन्द्र जिन नन्दु ,, ॥ १९ ॥

उव उवन महावे कमल मौ नृत-सुवा कमल कर्न अन्मोय सुवा।
कर्न अन्मोये रमन सिया ,, वलि कमल मुक्ति दर्सतु ,, ॥२०॥
उव उवन सहावे रमन मौ ,, रमि रमन चन्द्र जिन उत्तु ,, ।
रमन सियं सुइ कर्न पिऊ ,, सुइ कर्न उवन पिउ रत्तु ,, ॥२१॥
सुइ रमन कर्न उव उवन मौ ,, उव उवन सेनि जिन उत्त ,, ।
सुयं रमन उव रमन चन्द्र ,, सुय रमन सियं अन्मोय ,, ॥२२॥
साहिय सहज सु उवन पौ ,, सुइ कलन कमल अन्मोय ,, ।
उव उवन सहावे कर्न रुइ ,, अन्मोय सिद्धि सम्पत्तु ,, ॥२३॥
सुइ तारन तरन उवन मौ ,, सुइ कर्न रमन जिन उत्तु ,, ।
सुइ कमल कर्न अन्मोय मौ ,, सुइ रमन सिद्धि सम्पत्तु ,, ॥२४॥

अन्वय सहित अर्थ— (उव उवन उवन सुइ रमन (ओ नृत सुवा) हे सचे श्रोता, सुननेवाले श्रावक ! अब प्रकाशरूप आत्मीक रमण पद या आत्मानुभवकी कला प्रगट है (नृत सुइ रमन स उत्त सुवा) हे श्रोता ! आत्मीक रमणको ही सत्य तत्व कहा गया है (सुयं रमन सुइ उवन पौ नृत सुवा) हे सत्य श्रोता ! आत्मामें रमण करना ही प्रकाशरूपी पद है (उव उवन दिप्ति विरसंतु सुवा) हे श्रोता ! इस आत्मीक अनुभवरूपी प्रकाशका विलास कर अर्थात् आत्मानन्दका स्वाद ले ॥ १ ॥

(उव उवन दिप्ति सुइ नंत मौ नृत सुवा) हे सत्य श्रोता ! यह प्रकाशरूप ज्ञानकी दीप्ति अनन्त शक्तिको रखनेवाली है (दिप्ति ढलन सुइ नंत सुवा) हे श्रोता ! यह आत्मानुभवकी दीप्ति अनन्त ज्ञानकी तरफ ढल रही है, बढ़ रही है, आत्मज्ञानके ही अभ्याससे केवलज्ञान होगा (ढलन जु नंत विसेष मौ नृत सुवा) हे सचे श्रोता! आत्माके अनुभवसे जो केवलज्ञान होगा उसमें अनन्त द्रव्य गुण पर्यायके जाननेकी शक्ति है (ढलन न्यान विन्यान नृत सुवा) वही केवलज्ञान हे सच्चे श्रोता ! प्रगट होजायगा ॥ २ ॥

(दिप्ति दिस्टि उव उवन पौ नृन सुग) हे सच्चे श्रोता ! आत्मज्ञानकी दृष्टि प्रकाशरूप है (उव उवन दिस्टि सुइ नृन सुग) इस प्रकाशरूप दृष्टिको पहचानना सच्चे श्रोताका कर्तव्य है (दिप्ति रमन सुइ नंत मौ नृन सुग) हे सच्चे श्रोता ! इस आत्मज्ञानके भीतर रमण करना ही अनन्तज्ञानकी प्रगटताका उपाय है (दिपि दिस्टि नंत पवेसु सुग) हे श्रोता ! सम्यग्दृष्टीकी यह ज्ञानदृष्टि स्वयं केवलज्ञानमें प्रवेश कर जाती है ॥ ३ ॥

(उव उवन दिस्टि सुइ समय मौ नृन सुग) हे सचे श्रोता ! यह प्रकाशरूप आत्म-ज्योति आत्मामई है (सुइ समय दिप्ति पवेसु सुग) हे श्रोता ! यही आत्माकी ज्योतिमें प्रवेश होना है। अर्थात् यही आत्माका अनुभव है (जं दिस्टि दिप्ति सुइ समय मौ नृन सुग) हे सचे श्रोता ! जो आत्मज्ञानका प्रकाश है वह आत्मारूप है (तं उवन दिष्टि पवेसु सुग) हे श्रोता ! वही प्रकाशरूपी दृष्टिमें प्रवेश है या आत्माका अनुभव है ॥ ४ ॥

(जं उवन दिप्ति सुइ नंत मऔ नृन सुग) जो वह प्रकाशरूप ज्ञान है वही अनन्तज्ञान होजाता है हे सचे श्रोता ! (उव उवन ढलन सुइ नंत सुग) हे श्रोता ! यह ज्ञान स्वयं ढलकर या बढकर अनन्तज्ञान होजाता है (दिप्ति ढलन सुइ उवन पौ नृन सुग) हे सच्चे श्रोता ! आत्माके ज्ञानके बढनेसे ही अरहन्त पद प्रगट होजाता है (उव समय दिस्टि सुइ नंत सुग) आत्माका अनुभव ही अनन्त ज्ञानका हेतु है हे श्रोता ! ॥ ५ ॥

(नन्त समय सुइ दिस्टि नृन स्रुवा) हे सचे श्रोता ! अनन्त शक्ति व गुणधारी आत्माका अनुभव सोई आत्मदृष्टि है (उव उवन दिष्ट पवेसु स्रुवा) इसी प्रकाशमान दृष्टिमें प्रवेश रखना या आत्मानुभव स्थिरतासे करते रहना चाहिये। हे श्रोता ! (दिष्टि समय सुइ रमन मौ नृन स्रुवा) हे सचे श्रोता ! आत्माकी तरफ दृष्टि रखना सोई आत्मामें रमण है (उव उवन दिप्ति पवेसु स्रुवा) हे श्रोता ! यही उदयरूप आत्माकी दृष्टिमें प्रवेश है ॥ ६ ॥

(उव उवन दिस्टि सुइ ढलन जिन नृन स्रुवा) हे सच्चे श्रोता ! आत्मानुभवरूप दृष्टिका थिर रहना सो ही अरहन्त पदकी तरफ बढना है। अर्थात् आत्मानुभव करनेहीसे यह आत्मश्रेणीपर चढकर अरहन्त होजाता है (ढल ढलियो समय सहाउ स्रुवा) हे श्रोता ! इसी तरह अभ्याससे आत्माका स्वभाव प्रगट होजाता है (उव उवन दिढ्ठि सुइ समय मौ नृत स्रुवा) हे सचे श्रोता ! इसी प्रकाशमान दृष्टिको आत्मामई भाव कहते हैं (सह समय सिद्धि संजुत्त स्रुवा) हे श्रोता ! वही आत्मा इस केवलज्ञानमई दृष्टिके साथ सिद्धगतिको प्राप्त करलेता है ॥ ७ ॥

(सह समय दिस्टि सुइ सु रमन नृन स्रुवा) हे सच्चे श्रोता ! शुद्धात्माकी तरफ दृष्टिका होना वही सूर्य-समान केवलज्ञानमई आत्मामें रमण करना है (सुइ उवन दिप्ति पवेसु स्रुवा) हे श्रोता ! वही प्रकाशमान

दीप्तिमें प्रवेश है अर्थात् सदा ज्ञानचेतनामें थिर रहना है (दिप्ति दिस्टि सुइ सु रमन नृन रुवा) ज्ञानचेतनाका प्रकाश है वही हे सच्चे श्रोता ! आत्मारूपी सूर्यमें रमण है (सुइ समय उवन सिधि रत्तु रुवा) हे श्रोता ! ऐसा ही आत्मा पूर्ण शुद्ध होकर सिद्ध भावमें लीन रहता है ॥ ८ ॥

(सुइ उवन उवन उव कमल मो नृन रुवा) हे सच्चे श्रोता ! ऐसा ही प्रकाशमान आत्मा प्रफुल्लित कमलके समान कहलाता है (कल कमल जिन उत्तु रुवा) हे श्रोता ! वही आत्मारूपी कमलमें परिणमन करनेवाला जिन अरहन्त व सिद्ध कहलाता है (सिद्ध धुव रमन सु कमल पौ नृन रुवा) हे सचे श्रोता ! श्री सिद्ध भगवान ध्रुव हैं, अविनाशी हैं, सदा ही प्रफुल्लित कमल समान आत्मस्वभावमें रमण करनेवाले हैं (कम कमल उवनपो उत्तु रुवा) हे श्रोता ! वही जलमें कमल समान अपने आपमें प्रकाशमान भगवान कहे गए हैं ॥९॥

(जं जं उवनौ कमल मौ नृन रुवा) हे सच्चे श्रोता ! जो जो आत्मा उदय होकर प्रफुल्लित कमलके समान पूर्ण होजाता है (उव उवन चरन सिधि रत्तु रुवा) वही आत्मा अपने ज्ञान प्रकाशमें आचरण करता हुआ सिद्ध स्वभावमें लीन रहता है (नं तं सहिउ समय सुइ नृन रुवा) हे सच्चे श्रोता ! उस उसने अपने आत्माको साधन कर लिया है अर्थात् जो आत्माका सचा साधन करता है वह सिद्ध होजाता है (त कर्न विंद सिधि रत्तु रुवा) हे श्रोता ! सिद्धगतिका साधन सिद्ध स्वभावमें लीन स्वात्मानुभव ही है ॥ १० ॥

(जं जं उवनौ उवनमौ नृन रुवा) हे सचे श्रोता ! जो जो उन्नति करता हुआ उदयरूप शुद्ध होजाता है (कर्न समय संजुत्तु रुवा) हे श्रोता ! वही उस साधनको करता है जिसमें आत्मा या आत्माका अनुभव ही साधन है (जं समय उवनपौ सहियो नृन रुवा) हे सचे श्रोता ! जो आत्मा आत्मज्ञानके प्रकाश सहित होजाता है (तं उवन प्रिये जिन उच रुवा) हे श्रोता ! उसहीको अपने ज्ञानमें मगन जिन कहते हैं ॥ ११ ॥

(जं समय प्रिये सुइ सब्द मौ नृन रुवा) हे सचे श्रोता ! जिसको अपना आत्मा ही प्रिय है अर्थात् जो आत्मामें मगन है उसीने शब्दमई श्रुतज्ञानका सार पाया है (तं समय रमन सिधि रत्तु रुवा) हे श्रोता ! वही आत्मामें रमनेवाला जीव सिद्ध भावमें रत या लीन होता है (जं उवन सब्द सुइ कर्न मौ नृन रुवा) हे सचे श्रोता ! श्रुतज्ञानका निश्चयसे प्रकाश होना, वही यथार्थ आत्मानुभव मोक्षका साधन है (तं समय प्रिये जिन उत्तु रुवा) हे श्रोता ! उसीको आत्मामें मगन जिन कहते हैं ॥ १२ ॥

(जं जं उवनो उवन मौ नृन रुवा) हे सचे श्रोता ! जो जो आत्मा उन्नति करता हुआ उदयरूप शुद्ध

होजाता है (तं कर्न समय संजुत्तु रुवा) हे श्रोता ! वही आत्मा मोक्षका साधन करता है (तं साहिउ तं उवन मौ नृत रुवा) हे सचे श्रोता! उसीने अपने प्रकाशमान स्वभावका साधन किया है (तं समय उवन सिधि रत्तु रुवा) हे श्रोता! वही आत्मा प्रकाशरूप सिद्ध भावमें लीन रहता है ॥ १३ ॥

(जं ढलन चरन उव कमल मौ नृत रुवा) हे सचे श्रोता ! जो चारित्रमें बढ़ता हुआ प्रफुल्लित कमलके समान विकसित होजाता है (तं समय कर्न कलन माइंतु रुवा) हे श्रोता ! वही आत्माके साधनसे आत्मारूपी साध्यको सिद्ध कर लेता है (जं कर्न समय हुव उवन पौ नृत रुवा) हे सचे श्रोता ! जो साधन आत्मारूप होकर आत्म-प्रकाशमय या आत्मानुभवमई होता है (तं उवन कमल जिन उत्तु रुवा) हे श्रोता ! वही उदयरूप व विकसित कमलके समान जिनरूप होनेका साधन कहा गया है ॥ १४ ॥

(जं जं उवन उवन पौ नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! जो जो उदयरूप आत्मज्ञानका पद है (अवयास उवन माइंतु रुवा) हे श्रोता ! वही ज्ञानके प्रकाशका साधन है (अवयास कर्न सुव हिय रमनु नृत रुव) हे सचे श्रोता! वही ज्ञानमई साधन स्वात्महितमें रमणरूप है (हिय हुव उवन अनन्त रुवा) हे श्रोता ! इसी हितकारी साधनसे अनन्तज्ञानका प्रकाश होजाता है ॥ १५ ॥

(उव उवन उवन अवयास मौ नृत रुवा) हे सचे श्रोता ! यह ज्ञानमई भावका प्रकाश है (अवयास कमल जिन उत्तु रुवा) उसीको ही ज्ञानमई प्रफुल्लित कमल समान जिन कहा गया है (कमल कर्न सुइ समय मौ नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! मोक्षका साधनरूप जो आत्मारूपी कमल है वही आत्मामई स्वभाव है (सुइ केवल कमल जिन उत्त रुव) हे श्रोता ! उसीको केवलज्ञानमई प्रफुल्लित जिन कहा गया है ॥ १६ ॥

(उव उवन अन्मोय रमन विये नृत रुवा) हे सचे श्रोता ! आत्मीक भाव जो आनन्दके रमणमें प्रेमालु है वह उदय हुआ है (रे रमन मुक्ति विलसन्तु रुवा) हे श्रोता ! वह मोक्षके ऐश्वर्यमें रमण करता हुआ आनंद लेरहा है (मुक्ति सुभ वे जिनय जिनुत्तु नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वह मोक्षके स्वभावमें विजय प्राप्त है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (जिन समय सिद्धि संपत्त रुवा) हे श्रोता ! वीतराग जिन स्वरूप आत्माने सिद्धगतिको प्राप्त कर लिया है । भावार्थ—अरहन्तने सिद्धगति प्राप्त करली है ॥ १७ ॥

(सुइ तारन तरन सहाइ मौ नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे अरहन्त तारण तरण स्वभावके धारी हैं (सुइ कमल चरन जिन उत्तु रुवा) हे श्रोता! वे ही कमल समान प्रफुल्लित आत्माके भीतर आचरण करनेवाले

जिन कहे गए हैं (कमल चरन सुइ कर्न मो नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! आत्मारूपी कमलमें आचरण करनेवाले अरहन्त मोक्षके साक्षात् साधन हैं (अन्मोय सिद्ध मं तु रुवा) हे श्रोता ! उन्होंने ही आनन्दमई सिद्धिको प्राप्त कर लिया है ॥ १८ ॥

(रुचि प्रिये उवन उवन मो नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! सिद्ध स्वरूपमें रूचि करनेवाले आत्माका उदय होगया है (सुइ रूव अरूव जिनुत्त रुवा) हे श्रोता ! उनको शरीरकी अपेक्षा रूपी व आत्माकी अपेक्षा अरूपी जिनेन्द्रने कहा है (रूव अरूव तं रमन मो नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! रूपी तथा अरूपी होकर वे अरहन्त आपमें रमण कर रहे हैं (रमन चन्द्र जिन नन्द रुवा) हे श्रोता ! उनको स्वरूपमें रमण करनेवाला चन्द्रमा कहा है अथवा वे ही आत्मानन्दी जिन हैं ॥ १९ ॥

(उव उवन सहावे कमल मो नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे प्रकाशमान स्वभावमें कमलरूप विकसित जिन हैं (कमल कर्न अन्मोय रुवा) हे श्रोता ! वे कमलरूपी साधनमें आनन्दित होरहे हैं (कर्न अन्मोए रमन सिया नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे आत्मीक साधनमें आनन्दित हैं व शुद्धभावमें रमण करनेवाले हैं (कलि कमल मुक्ति दर्सतु रुवा) हे श्रोता ! वे आत्मारूपी कमलमें लीन प्रभु मुक्तिका दर्शन कररहे हैं ॥२०॥

(उव उवन महावे रमन मो नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे अरहन्त उदय स्वरूप भावमें रमण कर रहे हैं (रमि रमन चंद्र जिन उत्तु रुवा) हे श्रोता ! वे स्वरूपमें रमण करनेवाले चन्द्रमा ही हैं ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (रमन सियं सुइ कर्न पिऊ नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे शुद्धोपयोगमें रमण करनेवाले मोक्षके परम प्रिय साधन हैं (सुइ कर्न उवन पिउ रत्तु रुवा) हे श्रोता ! वे ही साधनरूप होकर अपने परम प्रिय आत्मस्वरूपमें रत हैं ॥ २१ ॥

(सुइ रमन कर्न उव उवन मो नृत रुवा) वे ही आत्मरमी साधन हैं जो उदयरूप हैं (उव उवन सेनि जिन उत्तु रुवा) हे श्रोता ! उन्हींको श्रेणी द्वारा उन्नति करते हुए तेरहवें गुणस्थानवर्ती जिन कहा है (सुयं रमन उव रमन चंद नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे स्वयं आपमें रमण करनेवाले परम शांत स्वभावी चन्द्रमा है (सुय रमन सियं अन्मोय रुवा) हे श्रोता ! वे स्वयं शुद्धोपयोगमें रमण करनेवाले आनन्दित प्रभु हैं ॥ २२ ॥

(साहिय सहज सु उवन पो नृत रुव) हे सच्चे श्रोता ! उन्होंने उदयरूप अपने सहज स्वभावको साधन कर लिया है (सुइ कर्न कमल अन्मोय रुवा) हे श्रोता ! वे ही कमल समान आत्मामें मगन आनन्दमई प्रभु

हैं (उव उवन सहाते कर्न रुइ नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे उदयरूप स्वभावमें विराजित साधनरूप अरहन्त मोक्षकी परम रुचिको धारते हैं (अन्मोय सिद्धि सम्पत्त रुवा) वे परमानन्दमई हैं व सिद्धिको पाते हैं। हे श्रोता !॥८३॥

(सुइ तारन तरन उवन मौ नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे ही तारण तरण प्रकाशित अरहन्त हैं (सुइ कर्न रमन जिन उत्तु रुवा) हे श्रोता ! उन्हींको मोक्षके साधनमें रमण करनेवाले जिन कहते हैं (सुइ कमल कर्न अन्मोय मय नृत रुवा) हे सच्चे श्रोता ! वे ही कमल समान अरहन्त, आनन्दमय मोक्षके साधन हैं (सुइ रमन सिद्धि सम्पत्तु रुवा) हे श्रोता ! वे ही आत्मरमी अरहन्त सिद्धपदको पालेते हैं ॥ ८४ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें भी श्रावकोंको यही उपदेश है कि स्वतत्व परतत्वका निर्णय करके आत्मारूपी निज तत्वपर दृढ़ श्रृद्धान लाओ और आत्माके द्वारा ही आत्माको ग्रहण करके आत्माका ही ध्यान करो, या आत्मानुभव प्राप्त करो। यही सम्यग्दर्शनका प्रकाश है, यही सम्यग्ज्ञानका प्रकाश है, यही सम्यक्चारित्रका प्रकाश है, यही मोक्षमार्ग है। आत्मानुभवके द्वारा ही श्रावक होता है व मुनि होता है, इसीकी उन्नतिसे श्रेणीपर आरूढ़ होता है। क्षपकश्रेणी चढ़कर चार घातिया कर्म नाशकर अरहन्त जिन परमात्मा होजाता है तब मोक्षका साक्षात् कारणतम साधन प्राप्त होजाता है। अरहन्तभगवान प्रफुल्लित कमलके समान स्वरूपमें मगन हैं। उनके भीतर अनन्त शक्तिधारी केवलज्ञान है। वे परम वीतराग जिन हैं। उनको कोई सांसारिक विकारकी आवश्यक्ता नहीं है, वे परम कृतकृत्य हैं। अभी शरीर सहित होनेसे वे रूपी कहाते हैं, आत्मा तो अरूपी ही है। वे परमानन्दको भोगते रहते हैं, दिव्यवाणीका भी प्रकाश करके उपदेश देते हैं। वे तारण तरण जहाज हैं। अनेक भव्यजीव उनके आश्रयसे मोक्षमार्ग पाकर आत्मध्यानसे मुक्त होजाते हैं। वे अपनेको तारते ही हैं, वे ही आयुके क्षयपर सिद्ध कहलाते हैं, यही पद उपादेय है, भव्य जीवोंके लिये वांछनीय है, इस पदका कारण मात्र एक शुद्धोपयोग है। जो कोई इस पदको लेना चाहे उनको शास्त्रज्ञान प्राप्त करके अपने आत्माका यथार्थ निश्चय कर लेना चाहिये, फिर ध्यानके अभ्याससे वीतरागताको बढाते हुए अन्तमें सिद्धभावको पहुँच जाना होगा।

श्री परमात्मप्रकाशमें यही साधन बताया है कि समभावरूप शुद्ध भाव ही मोक्षमार्ग है—

दंसणु णाणु चरित्तु तसु, जो समभाउ करेइ। इयरहं एक्कु वि अत्थि णवि जिणवरु एउ भणेइ ॥ १६५ ॥
जेण कसाय हवंति मणि, सो जिय मेल्लहि मोहु। मोह कसाय विवज्जियउ, पर पावहि समबोहु ॥ १६७ ॥

तत्तान्तु मुणेवि मणि, जे थक्का ममभावि। ते पर सुहिया इत्तु भणि जहं रह अप्प सहावि ॥ १६८ ॥

भावार्थ— **जो सममाव करता है उसीके सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र है। दूसरेके एक भी नहीं है अर्थात् समभाव रहितके वास्तवमें तीनोंमेंसे एक भी नहीं है। जिस मोहके उदयसे कषायें होती हैं उस मोहको हे जीव! छोड़ दे। जब तू मोह कषायसे रहित होजायगा तब अवश्य वीतरागता व ममता सहित ज्ञानको पावेगा। जो कोई सच्चे तत्व व खोटे तत्वको मनमें समझकर समभावमें थिर होते हैं और जिनकी रति आत्माके स्वभावमें है, वे ही इस जगतमें परम सुखी हैं।**

(६९) सिय ध्रुव गाथा १३९५ से १४१८ तक।

उव उवनु सुयं सुइ रमनं, उवन सुई उवन उवन सुइ रमनं।
रमन सियं सुइ उवनं, उवनं सुइ सब्द कर्न धुव रमनं ॥ १ ॥
जं जं अर्क ऊवनं तं तं सियं माहि उवन सुइ रमनं।
रमन उवन धुव वयुनं, वयुनं धुव कर्न साहियं ममलं ॥ २ ॥
उवन दिप्ति सुइ सुवनं, सुवनं उववन्न रमन तं उवनं।
उवन साहिसिय रयनं, धुव उववन्न कर्न साहियं ममलं ॥ ३ ॥
उवन विषय सुइ विलयं, बाधा सुइ विषय विलय सिय रमनं।
सियं उवन धुव ममलं, धुव उववन्न कन साहियं सुवनं ॥ ४ ॥
उवन विलय सुइ ढलनं, अवधं सुइ विषय विलय सिय रमनं।
सिय रमनं धुव उवनं, धुव उवनं कमल साहियं कन ॥ ५ ॥
उवन विपय सुइ विलयं, सहज सुइ विषय विलय सिय उवनं।
उवन सियं धुव रमनं; धुव ममल कमल साहियं कर्नं ॥ ६ ॥

विषय विलय सुइ उवनं; उवनं सुइ विषय विलय सिय सुवनं ।
सिय सुवन धुव गमन; धुव गमन कमल साहियं कन ॥ ७ ॥
जिन विषयं सिय विलय; जिन सहकारेन जिनय जिन उवनं ।
जिन उवनं सिय सहियं; सिय धुव उवनं च साहियं कन ॥ ८ ॥
जिन उत्त उत्त सुइ नन्तं; नन्त सुइ साहि कमल सिय रमनं ।
रमन धुवं जिन जिनयं; सिय धुव कमल साहियं कनं ॥ ९ ॥
जिन उवन सुभाव अनंन्तं; साहिय सुइ समय उवन सिय रमनं ।
धुव सिय धुव सुइ उवनं; उवनं सुइ कमल साहियं कन ॥ १० ॥
जिन उत्त समय सुइ उवनं; उवनं सुइ उवन उवन सिय रमनं ।
रमन सियं धुव उवनं; उवनं धुव कमल साहियं कनं ॥ ११ ॥
जिन परिनै सुइ नन्तं; नन्तं सुइ उवन न्यान ममलं च ।
परिनै उवन सु रमनं; साहिय सिय परिनै जिनय जिन उवनं ॥ १२ ॥
जिन उवन उवन सुइ नन्तं; उवनं सुइ न्यान रमन ममलं च ।
सिय साहिय जिन उवनं; जिन उवन कमल साहियं कन ॥ १३ ॥
जिन वयुनं नन्त विसेषं; नन्त सुभावेन नन्त जिन उत्तं ।
जिन वयुनं साहि सिय रमनं; जिन वयुनं कमल साहियं कनं ॥ १४ ॥
जिन वयुनं सुइ उवनं; सुवनं सुइ गमन अगम सुइ उवनं ।
अगम साहि सिय सयनं; धुव उवन कमल साहियं कनं ॥ १५ ॥

जिन रमनं सुइ उ नं; सुइ उवनं रमन नन्त सुइ चरनं ।
रमन चरन सिय समयं; समयं धुव कमल साहियं कर्नं ॥ १६ ॥
जिन लष्य अलष्य सु उवनं: अलषं धुव रमन साहि सिय सुवं ।
सिय रमनं धुव उवनं; अलषं सुइ कमल साहियं कन ॥ १७ ॥
जिन धरनं उवन सुइ रमनं: जिन धरनं उवन साहि सिय सुवनं ।
जिन धरनं धुव उवनं. धुव धरनं कमल साहियं कर्नं ॥ १८ ॥
जिन गहनं जिनय जिनुत्तं, जिन उत्तं गहन साहि सिय रमनं ।
सिय धुव रमन सुहावं, सिय धुव कमलं च साहियं कर्नं ॥ १९ ॥
जिन इच्छ रमन सुइ उवनं, उवन विन्यान न्यान सुइ इच्छं ।
इच्छ धुवं सिय रमनं, सिय धुव रमन कमल कर्नं च ॥ २० ॥
जिन चेय चेय सुइ उवनं, उवनं सुइ नन्त चरन कमलं च ।
कमल उवन धुव रमनं, रमनं सिय कमल कर्न धुव उवनं ॥ २१ ॥
जिन दिष्टि इष्टि सुइ उवनं, सुइ दिप्ति दिष्टि जिन रमनं ।
जिन दिप्ति दिष्टि सिय समयं, समयं धुव उवन कमल कर्नं च ॥ २२ ॥
जिन दर्सन नन्त अनंन्तं, नन्त सुइ न्यान वीर्य विन्यानं ।
नन्त सौष्य सुइ उवन, साहिय सिय कमल कन समयं च ॥ २३ ॥
जिन विषयं सुइ विलय, जिन अन्मोय अवल बलि रमनं ।
सिय साहिय धुव उवनं, कमलं कर्नं च समय सिद्धान ॥ २४ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनु सुयं सुइ रमनं) आत्मज्ञानका प्रकाश होना सो ही आत्मामें रमण है (उवन सुई उवन उवन सुइ रमनं) आत्माको सम्यग्दर्शनका प्रकाश होना सो ही उदय है, इसी उदयके होनेपर आत्मामें रमण होता है (रमन सियं सुइ उवनं) शुद्ध भावमें रमण करना सो ही आत्माका प्रकाश है (उवनं सुइ सब्द कर्न धुव रमनं) यह आत्माका प्रकाश श्रुतज्ञानका सार है व यही साधन है जिससे ध्रुव अविनाशी आत्मामें रमण किया जावे ॥ १ ॥

(जं जं अर्क उवनं) जैसे जैसे ज्ञान सूर्यका उदय होता है (तं तं सिय साहि उवन सुइ रमनं) वैसे वैसे शुद्ध भावरूपी साधन प्रगट होता है सो ही आत्मामें रमण है (रमन उवन धुव वयुनं) आत्माके प्रकाशमें रमण करना सो ही अविनाशी ज्ञानमें रहना है (वयुनं धुव कर्न साहियं ममलं) अविनाशी ज्ञानमें रमण करना सो ही शुद्ध साध्यका साधन है अर्थात् आत्माके ध्रुव स्वभावमें लीन होनेसे ही शुद्ध भावोंकी वृद्धि होती है ॥२॥

(उवन दिप्ति मइ सुवन) आत्मज्ञानका प्रकाश सो ही आत्मामें परिणमन है (सुवनं उववन्न रमन तं उवनं) इसी आत्मपरिणमनके उदयको ही आत्मामें रमण व आत्माका उदय कहते हैं (उवन साहि सिय रमनं) आत्मप्रकाश ही साधन है व यही शुद्ध रत्नत्रय स्वरूप है या निश्चय रत्नत्रयमई है (धुव उववन्न कर्न साहियं ममलं) ध्रुव अविनाशी आत्मामें परिणमन सो ही साधन है जिससे शुद्ध भावोंका लाभ होगा ॥ ३ ॥

(उवन विषय सुइ विलयं) कर्मोंके उदयसे विषयोंकी वांछा जो होती है वह आत्माके मननसे विला जाती है (बाधा सुइ विषय विलय सिय रमनं) तब विषयोंकी चाहसे होनेवाली बाधा मिट जाती है व शुद्ध-भावमें रमण होना है (सिय उवन धुव ममलं) शुद्धभावका प्रकाश वही ध्रुव व शुद्ध आत्माका अनुभव है (धुव उववन्न कर्न साहियं सुवनं) ध्रुव आत्मामें अनुभवका उदय वह साधन है जिससे शुद्धावस्थाका साधन होता है ॥ ४ ॥

(उवन विलय सुइ कलनं) उत्पन्न अशुद्ध भावका विला जाना सो ही आत्माका उन्नतिकी तरफ बढना है, जैसे अन्धकारके हटनेसे प्रकाश होता है (बाधं सुइ विषय विलय सिय रमनं) जब इंद्रियोंके विषयोंकी चाह विला जाती है तब बाधा दूर होजाती है व शुद्ध वीतराग भावमें रमण होना है (सिय रमनं धुव उवनं) शुद्ध भावमें रमण करना वही ध्रुव अविनाशी आत्माका प्रकाश है (धुव उवनं कमल साहियं कर्न) अविनाशी आत्माका अनुभव ही वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमलका विकास होता है ॥ ५ ॥

(उवन विषय सुइ विलयं) उत्पन्न होती हुई विषयोंकी इच्छाका विला जाना (सहज सुइ विषय विलय सिय उवनं) सो ही सहजमें विषयोंसे रहित शुद्ध वीतराग भावका उदय है (उवन सियं धुव रमनं) शुद्धभावका उदय होना सो ही ध्रुव आत्मामें रमण है (धुव ममल कमल साहियं कर्नं) यही वह साधन है जिससे ध्रुव व शुद्ध आत्मारूपी कमलका विकास होता है ॥ ६ ॥

(विषय विलय सुइ उवनं) इन्द्रिय विषयोंकी चाहका विला जाना सो ही वीतरागताका प्राप्त होना है (उवन सुइ विषय विलय सिय सुवनं) वीतरागताका प्रकाश सो ही विषयोंका विला जाना है व सो ही आपका शुद्ध भावमें परिणमन है (सिय सुवन धुव रमनं) शुद्ध भावमें परिणमन है सो ही ध्रुव आत्मामें आचरण है (धुव ममल कमल साहियं कर्नं) स्वरूपमें आचरण है सो ही वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमल विकसित होता है । ७ ॥

(जिन जियं सिय विलयं) श्री जिनेन्द्रकी ओर भक्ति करनेसे भाव शुद्ध होता है तब विषयोंका भाव दूर होता है (जिन सहकारेन जिनय जिन उवनं) श्री जिनेन्द्रकी भक्तिकी सहायतासे ही कर्मोंको जीतकर जिनपना प्रकट होता है (जिन उवनं सिय सहियं) जिनपदका प्रकाश शुद्धोपयोग सहित है (सिय धुव उवनं साहियं कर्नं) शुद्ध भावका ध्रुव रूपसे प्रगट रहना यही मोक्षका साक्षात् साधन है ॥ ८ ॥

(जिन उत्त उत्त सुइ नंतं) जैसा जिनेन्द्रने कहा है वे जिन भगवान अनन्त गुणोंके धारी हैं (नंत सुइ साहि कमल सिय रमनं) वे अनन्त गुण आत्मारूपी कमलमें होते हैं, वे साधने योग्य हैं, उनका साधन शुद्ध भावोंमें रमण है (रमन धुवं जिन जिनयं) ध्रुव आत्मामें रमण करना कर्मविजयी जिनका स्वरूप है (सिय धुव कमल साहियं कर्नं) शुद्ध ध्रुव कमल समान आत्मामें रमण करना ही मोक्षका साक्षात् साधन है ॥ ९ ॥

(जिन उवन सुभाव अनंतं) श्री अरहन्त जिनेन्द्रका स्वभाव अनन्त गुणमई प्रगट होगया है (साहिय सुइ समय उवन सिय रमनं) इसने आत्माको साधन कर लिया है। वहां शुद्ध भावोंमें रमण होरहा है (धुव सिय धुव सुइ उवनं) यहां ध्रुव शुद्ध भाव है क्योंकि ध्रुव स्वभावका प्रकाश है (उवनं सुइ कमल साहियं कर्नं) यही प्रकाश कमल समान आत्माके विकासका साधन है ॥ १० ॥

(जिन उत्त समय सुइ उवनं) जैसा जिनेन्द्रने कहा है वैसा ही आत्माका यहां प्रकाश है (उवनं सुइ उवन उवन सिय रमनं) यही प्रकाश आत्माका उदय है । यह उदय है सो ही शुद्ध भावमें रमण है (रमन सियं धुव

उवनं) शुद्ध भावमें रमण होना ही ध्रुव स्वभावका झलकाव है (उवनं ध्रुव कमल साहियं कर्नं) यही झलकाव अविनाशी आत्मारूपी कमलके विकासका साधन है ॥ ११ ॥

(जिन परिनै सुइ नंतं) श्री जिनेन्द्र अपने अनन्त स्वभावमें परिणमन कर रहे हैं (नंतं सुइ उवन उवन न्यान ममलं च) अनन्त स्वभावका प्रकाश होना सो ही शुद्ध केवलज्ञानका प्रकाश है (परिनै उवन सु रमनं) इस शुद्ध परिणतिके प्रकाशमें वे भलेप्रकार रमण करते है (साहिय सिय परिनै जिनय जिन उवनं) यही शुद्ध परिणमन मोक्षका साधन है, जहां जिनेन्द्रका जिन स्वभाव या वीतराग स्वभाव झलक रहा है ॥ १२ ॥

(जिन उवन उवन सुइ नंतं श्री जिनेन्द्रका प्रकाश सो ही अनन्त स्वभावका प्रकाश है (उवनं सुइ न्यान रमन ममलं च) यही प्रकाश है सो ही वीतराग अनन्तज्ञानमें रमण है (सिय साहिय जिन उवनं) श्री जिनेन्द्रका प्रकाश ही मोक्षका शुद्ध साधन है (जिन उवन कमल साहियं कर्नं) वही जिनेन्द्रका प्रकाश आत्मारूपी कमलके पूर्ण विकासका साधन है ॥ १३ ॥

(जिन वपुनं नन्त विमेयं) श्री जिनेन्द्रका केवलज्ञान अनन्तगुण पर्यायोंका ज्ञाता है (नन्त सुभावेन नन्त जिन उत्तं) उसमें अनन्त पदार्थोंको झलकानेका स्वभाव है। इससे उसको जिनेन्द्रने अनन्तज्ञान कहा है (जिन वपुन साहि सिय रमनं) जिनेन्द्रका ज्ञान शुद्धभावमें रमणरूप है व यही साधन है (जिन वपुनं कमल साहियं कर्नं) यह जिनेन्द्रका केवलज्ञान ही आत्मारूपी कमलके विकासका साधन है ॥ १४ ॥

(जिन [illegible] सुइ उवन श्री जिनेन्द्रके ज्ञानका प्रकाश सो ही उदय है (सुदनं सुइ गमन अगम सुइ उवनं) वही आप्त परिणमन है, वही मन व इंद्रियोंसे अगोचर अगम आत्मामें आचरण है, वही उदयरूप है (अगम साहि सिव सयनं) आत्माका साधन सो ही शुद्ध भावमें शयन करना है या शुद्ध भावमें रमण करना है (ध्रुव उवन कमल साहिय कर्नं) वही ध्रुव भावका प्रकाश है। वही कमल समान विकसित शुद्धात्माका साधन है ॥ १५ ॥

(जिन [illegible] न सइ उवनं) जिनेन्द्रमें रमण करना है सो ही उदय है (सुइ उवनं रमनं नन्त सुइ चरनं) यही उदय अनन्त गुणधारी आत्मामें रमण है या उसका आचरण है (रमन चरन सिय समयं) स्वचारित्रमें रमण करना सो ही शुद्धात्माका रूप है (समयं ध्रुव कमल साहियं कर्नं) यह शुद्धात्माका स्वभाव ही वह साधन है जिससे कमल समान प्रफुल्लित ध्रुव आत्माका विकास है ॥ १६ ॥

(जिन लष्य अलष्य सु उवनं) श्री जिनेन्द्रका स्वरूप प्रकाशित है। जो बाहरी मूर्तीक होनेसे देखने योग्य है, अन्तरंग अमूर्तके होनेसे देखनेयोग्य नहीं है (अलषं धुव रमन साहि सिव सुवनं वह अलक्ष्य इंद्रियातीत आत्मा अपने ध्रुव स्वभावमें रमण कर रहे हैं, वे ही शुद्ध भावमें परिणमन कर रहे हैं, वे ही मोक्षके साधन हैं (सिव रमनं धुव उवनं) शुद्धोपयोगमें रमण होना ही ध्रुव स्वभावका उदय है (अलषं सुइ कमल साहियं कर्न) यह अलष स्वभाव ही आत्मा रूपी कमलके पूर्ण विकासका साधन है॥ १७ ॥

(जिन धरन उवन सुइ रमनं) श्री जिनेन्द्रके स्वभावमें स्थिर होना ही स्वभावका उदय है या स्वभावमें रमण है (जिन धरनं उवन साहि सिव सुवनं) जिनेन्द्रके स्वभावमें स्थिति करना ही शुद्धोपयोगमें परिणमन है व मोक्षका साधन है (जिन धरनं धुव उवनं) जिनेन्द्रको आपमें धारण करना व जिनरूप होना ही ध्रुव आत्माका उदय है (धुव धरनं कमल साहियं कर्न) यही ध्रुव स्वभावमें स्थिरता वह साधन है जिससे आत्मा रूपी कमलका विकास होता है ॥ १८ ॥

(जिन गहनं जिनय जिनुत्तं) जिनेन्द्रने कहा है कि वीतराग जिन स्वभावका ग्रहण करना ही जिन व अरहन्त होना है (जिन उत्तं गहन साहि सिव रमनं) जिनेन्द्रके कहे प्रमाण आत्माके स्वभावका ग्रहण शुद्ध भावमें रमण है व यही साधन है (सिय धुव रमन सहावं) यही शुद्ध व ध्रुव आत्माका रमण स्वभाव है (सिय धुव कमलं च साहियं कर्न) यही शुद्ध ध्रुव आतमाका रमण वह साधन है जिससे आत्मारूपी कमलका विकास होता है ॥ १९ ॥

(जिन इच्छ रमन सुइ उवनं) आत्माके वीतराग सुखमें रमण करना सो ही आत्माका प्रकाश है (उवन विन्यान न्यान सुइ इच्छं) आत्मामें जब केवलज्ञान प्रगट होता है तब ही अनन्तसुख होता है (इच्छ धुवं सिव रमनं) शुद्धोपयोगमें रमण करनेसे ध्रुव सुखका लाभ होता है (सिय धुव रमन कमल कर्न च) शुद्ध व ध्रुव भावमें रमण करना ही आत्मा कमलके विकासका साधन है ॥ २० ॥

(जिन चेय चेय सुइ उवनं) जिनेन्द्रके स्वभावका बारम्बार चेतना या अनुभव करना सो ही जिन स्वरूपका उदय है (उवनं सुइ नन्त चान कमलं च) यही उदय है सो ही अनन्त गुणोंके धारी आत्मारूपी कमलमें आचरण है (कमल उवन धुव रमनं) जब आत्मारूपी कमल विकसित होजाता है तब उसीमें ध्रुव रूपसे

मदाके लिये रमण होजाता है (रमनं सिय कमल कर्न धुव उवनं) आत्मामें रमण सो ही शुद्ध कमल समान आत्मामें रमण है, यही वह साधन है जिससे मुक्तावस्थामें ध्रुवपनेका लाभ होता है ॥ २१ ॥

(जिन दिष्टि इष्टि सुइ उवनं) जिनेन्द्र भगवानने जिस परम इष्ट तत्वको देखा है उसीका प्रकाश होगया है (सुइ दिस्ति दिष्टि जिन रमनं) उसी प्रकाशमान आत्म दर्शनमें जिनेन्द्र भगवानका रमण होता है (जिन दिस्ति दिष्टि सिय समयं , जिनेन्द्रके ज्ञानदर्शन स्वभावका प्रकाश सो ही शुद्ध आत्माका प्रकाश है (समयं धुव उवन कमल कर्न च) आत्माके अविनाशी स्वभावका प्रकाश होना सो ही पूर्ण कमल समान आत्माके विकासका साधन है ॥ २२ ॥

(जिन दर्सन नन्त नन्तं) जिनेन्द्रमें अनन्त दर्शन गुण है (नन्त सुइ न्यान वीर्य विन्यानं) उनमें अनन्त ज्ञान है व अनन्तवीर्य है (नन्त सौष्य सुइ उवनं) उनमें अनन्त सुखका प्रकाश है। इस तरह चार अनन्त-चतुष्टय शोभायमान हैं (साहिय मिय कमल कर्न समयं च) यह अर्हंत पद शुद्ध आत्मारूपी कमलके लिये परम साधन है, यही मोक्षका कारण है ॥ २३ ॥

(जिन विषयं सुइ विलयं) वीतराग स्वभावके प्रकाशमें सर्व इंद्रिय व मन सम्बन्धी विषयोंका लोप है (जिन अन्मोय अवल बलि रमनं) जिनेन्द्र भगवान परमानन्दमें व अनुपम आत्मबलमें रमण कररहे हैं (सिय साहिय धुव उवनं) वहां शुद्ध साधन है जो ध्रुव रूपसे उदय होगया है (कमलं कर्नं च समय सिद्धानं) वही सिद्ध स्वरूपमई आत्मारूपी कमलका साधन है ॥ २४ ॥

भावार्थ—इस सिय धुव गाथाओंमें शुद्धोपयोगकी महिमा है। शुद्धात्मामें इसका ध्रुव या अविनाशी रूपसे प्रकाश रहता है। सिद्धपद आत्माका ध्रुवपद है। इस पदका साक्षात् निकटवर्ती परम साधन अरहन्तपद है, अरहन्तपदसे ही सिद्धपद होता है। जिसने अरहन्तपद पाया वह अवश्य आयुकर्मके अन्तमें सिद्ध होजायगा। अरहन्त पदके लाभका मूल कारण सम्यग्दर्शन सहित ज्ञान व चारित्रमें रमण है अर्थात् एक शुद्धात्मानुभव है। इस अनुभवकी जैसी जैसी वृद्धि होती है विषयोंकी इच्छाएं दूर होती जाती हैं, तब बारह व्रत रूप देश चारित्रका पालन होता है, फिर भी आत्मानुभवसे जब अधिक वैराग्य होजाता है, तब सकल चारित्ररूप मुनिव्रतका लाभ होता है। आत्मानुभवके प्रतापसे ही श्रुतज्ञानकी पूर्णता होती है, इसीसे ही मोहनीयका नाश होता है। फिर शेष तीन घातीयकर्मोंका नाश होकर केवलज्ञानका प्रकाश

होजाता है तब ही आत्माको अरहन्त पदमें कहते हैं। अरहन्त शुद्धोपयोगी हैं, परम वीतरागी हैं, अनन्त दर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख व अनन्तवीर्य सहित हैं। वे ध्रुव स्वभावको पाचुके हैं। उनका आत्मरमण वचनातीत है। तात्पर्य यह है कि परम सुखदाई सिद्धपदके लाभके लिये भव्य जीवका परम कर्तव्य है कि वह सम्यग्दर्शनको प्राप्त करके आत्माका अनुभव करता चला जावे। जितना आत्मानन्दका साधन है वही विकारोंको हटानेवाला है, कषायोंको मिटानेवाला है, वही कर्मोंकी निर्जरा करनेवाला है व वही मोक्ष नगरमें पहुँचानेवाला है। आत्मानुभव ही यथार्थ मोक्षमार्ग है व जिनधर्म है।

परमात्मप्रकाशमें कहा है:—

अप्पा मिल्लिवि णाणियहं, अण्णु ण सुंदरु वत्थु। तेण ण विसयहं मणु रमइ, जाणंतहं परमत्थु ॥ २०२ ॥

अप्पा मिल्लिवि णाणमउ, चित्ति ण लग्गइ अण्णु। मरगउ जेण वियाणियउ, तहिं कच्चें कउ गण्णु ॥ २०३ ॥

भुंजंतु वि णिय कम्म फलु, जो तहिं राउ ण जाइ। सो णवि बंधइ कम्मु पुणु, संचिउ जेण विलाइ ॥ २०५ ॥

भावार्थ—ज्ञानियोंके लिये आत्माको छोड़कर और कोई सुन्दर वस्तु नहीं है। इसीसे पदार्थको जाननेवालोंका मन विषयोंमें नहीं रमता है। ज्ञानमई आत्माको छोड़कर दूसरी वस्तु ज्ञानियोंके मनमें नहीं रुचती। जिसने मरकत रत्नको पहचान लिया वह कांचको क्यों ग्रहण करेगा। अपने कर्मोंके फलोंको भोगते हुए जो उस फलमें रागद्वेष नहीं करे वह नवीन कर्मोंको नहीं बांधता है। व पहले बांधे हुए कर्मोंका नाश करता है।

(७०) सिय धुव छन्द गाथा १४१९ से १४४२ तक।

उव उवन उवन उव उवनु जिनु, उव उवन समय सिय धुव रमनं।
गम आगम अलष जिन धुव सिय सहियो, धुव सिय सुइ कमल सु कर्न समू॥ १ ॥
जं जं सुइ उवन उवन जिन नन्त यं, नन्त नन्त सिय रमन धुवं।
मै मूर्ति सुइ उवन ढलन सियं, उव उवन कमल धुव कर्न सियं ॥ २ ॥

उव उवन धुव रमनू, सम समय सिय चरनू ।
उव उवन उवन उत्तु, सम समय सिय इत्थु ॥ ३ ॥

उव उवन दिपि दिस्टि, सह समय सिय रमती ।
उव उवन दिस्टि दर्सु, दिपि दिष्टि सिय सुरसु ॥ ४ ॥

उव उवन मैं उवनु, सह समय सिय रमनु ।
उव उवन धुव ढलनु, उव उवन सिय सहनु ॥ ५ ॥

उव उवन धुव रमनु, तत्काल सिय सुवनु ।
उव उवन धुवं वमुनु, सम समय सिय चरनु ॥ ६ ॥

उव उवन पय समया, पय पयन सिय रमया ।
उव उवन सुइ कमलु, सर सहै सिय ममलु ॥ ७ ॥

क.म ममल सुइ कलन सिरी, सुइ समय सिय चरन सिरी ।
उव उवन धुव कलनु, सिय चरन चर रवनु ॥ ८ ॥

उव कलनु धुव अगमु, सम समय सिय रमनु ।
उव उवन धुव परिनै, सह समय धुव सरनै ॥ ९ ॥

उव उवन धुव उत्तु, सिय समय सुइ रमनु ।
उव उवन सुइ नन्तु, सिय मुक्ति विलसंतु ॥ १० ॥
उव उवन धुव सब्दु, सम समय सिय नन्दु ।
धुव उवन अवयासु, सिय रमन धुव यासु ॥ ११ ॥

उव उवन दिपि रमया, सिय रमन सम समया ।
उव उवन जिन जिनयं, सिय समय ध्रुव रमयं ॥ १२ ॥
उव उवन ध्रुव दिस्टि, सह समय सिय दिस्टि ।
उव उवन आनन्दु, सिय चेय ध्रुव नन्दु ॥ १३ ॥
उव उवन उव कमलु, सुइ कर्न सिय ममलु ।
उव कमल सुइ सब्द, सम कर्न सिय नन्द ॥ १४ ॥
सुइ समय सुइ कर्न, उव उवन हिय रमन ।
हिय उवन अवयासु, सुइ कमल उवएसु ॥ १५ ॥
जं कमल कलि उवनु, तं कर्न ध्रुव सुवनु ।
कलि कलिय सुइ कमल, सिय कर्न सुइ ममल ॥ १६ ॥
जं दिस्टि ध्रुव दिप्ति, तं नन्त सिय रमति ।
जं मरह ध्रुव उवनु, तं समय सिय गमनु ॥ १७ ॥
हिययार ध्रुव गहिर, सिय रमन ध्रुव अगम ।
ध्रुव गुपित गुपि तार, सिय रमन तत्काल ॥ १८ ॥
ध्रुव उवन छः पलय, सिय समय सम विलय ।
ध्रुव जान पय उवनु, सिय कमल सम कर्न ॥ १९ ॥
ध्रुव कमल पय कमल, सिय कदलु सुइ ममल ।
ध्रुव कदल सुइ पुलिन, सिय पुलिन सुइ रमन ॥ २० ॥

धुव पुलिन सुइ गगन, सिय कलस सुइ उवन।
धुव गमन सुइ कलस, सिय कलस ससि रमन ॥२१॥
धुव कलस ससि भवन, सिय ममल नृत रमन।
धुव परम पद विंद, सिय कमल कलि नन्द ॥२२॥
धुव कमल सुइ ममल, सिय कर्न सम ममल।
धुव सिद्धि सुइ रमन, सिय मुक्ति सुइ मिलन ॥२३॥

घत्ता—

इय धुव सिय स सहाउ मुनी, उवन माहि जिन उत्तियो।
उव उवन धुवं सुइ सिय रमन, सिद्ध समय सिद्धि सम्पत्तओ ॥२४॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन उवन उव उवनु जिनु) अब उदय होते होते जिनेन्द्रका स्वभाव उदय होगया है, आत्माका प्रकाश होगया है (उव उवन ममय सिय धुव रमनं) अब आत्मा प्रकाश करता हुआ आत्माके शुद्ध ध्रुव स्वभावमें रमण कर रहा है (गम अगम अलष जिन धुवसिय सहिओ) गम अर्थात् स्थूल अगम्य अर्थात् सूक्ष्म ऐसे सम्पूर्ण इन्द्रिय व मनके विषयोंसे अगोचर वीतराग जिनका ध्रुव शुद्ध स्वभाव वहांपर प्रगट है (धुव सिय सुइ कमल सु कर्न समृ) ध्रुव शुद्ध कमल समान आत्माका अनुभव सो ही समभावका कारण है ॥ १ ॥

(जं जं सुइ उवन उवन जिन नंनयं) जैसे जैसे उदय होते होते आत्मा अनंत गुणमई जिनरूप प्रकाश करता है (नंत नंत सिय रमन धुवं) वैसे वैसे वह अनंत शुद्ध ध्रुव स्वभावमें रमण करता है (मै मूर्ति सुइ उवन ढलन सियं) वह ज्ञान मूर्ति है व स्वयं शुद्ध भावोंकी तरफ उन्नति कर रहा है (उव उवन कमल धुव कर्न सियं) वही प्रकाशमान ध्रुव कमल समान आत्मा अपनी शुद्धताका आप साधन है ॥ २ ॥

(उव उवन धुव रमनु सम समय सिय चारु) प्रकाशमान ध्रुव आत्मामें रमण करना सो ही समभाव सहित

आत्माके शुद्ध भावमें आचरण करना है (उव उवन उवन उत्तु सम समयसिय इत्तु) आत्माका प्रकाश उसे ही कहते हैं जहां जहां आत्मा समभाव सहित आत्माके शुद्ध भावमें लीन हो ॥ ३ ॥

(उव उवन दिपि दिष्टि--मह समय सिय रमती) अब आत्मानुभवकी दृष्टि झलक गई है, यह आत्माके साथ शुद्धतासे रमण कर रही है (उव उवन दिष्टि दर्सु दिपि दिष्टि सुयं सुरमु) आत्मदर्शनका प्रकाश हुआ है यही सम्यग्दर्शनका प्रकाश है यह स्वयं आत्मामें रसिक होरहा है ॥ ४ ॥

(उव उवन मैं उवनु, मह समय सिय रमनु) अब ज्ञानका उदय हुआ है। यह ज्ञान आत्माके साथ शुद्धताके साथ रमण कर रहा है (उव उवन धुव ढलनु, उव उवन सिय महनु) यह ज्ञान प्रकाश करता हुआ ध्रुवताकी ओर उन्नति कर रहा है। यही ज्ञान प्रकाश शुद्ध भावोंके साथमें है ॥ ५ ॥

(उव उवन धुव रमनु, तत्काल सिय सुरनु) अब यहां ध्रुव आत्मामें रमण होता है उसी समय ही शुद्धोपयोगमें परिणमन होरहा है (उव उवन धुवं वयनु, समय समय सिय चरनु) अब यहां ध्रुव सामायिक ज्ञानका उदय है, यही शुद्ध आत्माके भीतर शुद्ध या वीतराग आचरण है ॥ ६ ॥

(उव उवन वय ममया, वय यवन सिय रमया) यहां अब परमात्मपदका प्रकाश है। सो ही पद पदमें हर समय शुद्ध भावमें रमण है (उव उवन सुइ कमलु, मह सहै सिय ममलु) अब यहां कमल समान प्रफुल्लित आत्माका उदय है सो शुद्ध व वीतराग भावके साथमें है ॥ ७ ॥

(कम कमल सुइ कलन सिरी, सुइ समय सिय चरन सिरी) आत्मारूपी कमल आत्मारूपी जलमें मगन होकर प्रभावको झलका रहा है सो ही शुद्ध आत्माका चारित्ररूपी ऐश्वर्य है (उव उवन धुव कलनु सिय चरन चर रवनु) आत्माके प्रकाशमें ध्रुव रूपसे लय होजाना सो ही शुद्ध चारित्रमें चलकर रमणीक भासना है ॥ ८ ॥

(उव कलनु धुव अगमु, सम समय सिय रमनु) ध्रुव व इंद्रियातीत आत्माका अनुभव सो ही समताभाव सहित शुद्ध आत्मामें रमण है (उव उवन धुव परिनै, मह समय धुव सरनै) अब यहां ध्रुव स्वभावमें परिणमन होरहा है, साथमें ध्रुव आत्माके स्वभावमें रमण है ॥ ९ ॥

(उव उवन धुवं उत्तु) यहां ध्रुव स्वभावका प्रकाश कहा गया है (सिय समय सुइ रमनु) यही शुद्ध आत्माके सुखमें रमना है (उव उवन सुइ निंतु, सिय मुक्ति विलयंतु) जिसके अनन्त गुणरूपी आत्माका प्रकाश है वह शुद्ध मुक्तिके आनन्दको लेता है ॥ १० ॥

(उव उवन धुव सब्दु) यहां ध्रुव शब्दका प्रकाश हुआ है अर्थात् ध्रुव शब्दके वाच्य ध्रुव आत्माका प्रकाश हुआ है (सम समय सिय नंदु) यह समताभाव मई आत्माके शुद्ध भावका आनन्द होरहा है (धुव उवन अवयासु, सिय रमन धुव यासु) यहां ध्रुव ज्ञानका उदय हुआ है। शुद्ध भावमें रमण करना वही ध्रुव आत्माका दर्शन है ॥ ११ ॥

(उव उवन दिपि रमया, सिय रमन सम समया) प्रकाशमान आत्म-ज्योतिमें रमण करना सो ही शुद्ध भावमें रमण है। वही समताभाव सहित आत्माकी परिणति है (उव उवन जिन जिनयं सिव समय धुव रमयं) अब यहां जिनेन्द्रका जिनपद उदय हुआ है, जहां शुद्ध आत्मा ध्रुवरूपमें रमण कर रहा है ॥ १२ ॥

(उव उवन धुव दिस्टि सह समय सिय दिस्ति) अब यहां निश्चयनयकी दृष्टिका उदय है जिसके साथ देखनेसे आत्माका शुद्धभाव प्रकाशमान होता है (उव उवनु आनन्द सिय चेय धुव नंदु) अब यहां आनन्दका उदय है, जो शुद्ध चेतनाका ध्रुव सुख है ॥ १३ ॥

(उव उवन उव कमलु, सुइ कर्म सिय ममलु) अब यहां प्रफुल्लित कमल समान आत्माका उदय है, यही शुद्ध वीतराग भावका साधन है (उव कमल सुइ सब्दु, सम कर्न सिय नन्दु) कमल शब्द बताता है कि आत्मारूपी कमलका विकास है यही समताभावरूप है, यही शुद्ध आनन्दका साधन है ॥ १४ ॥

(सुइ समय सुइ कर्न, उव उवन हिय रमन) जो आत्मा है वही निश्चयसे आत्माके लिये साधन है उसीमें भलेप्रकार रमण करना चाहिये सो ही अपने हितका प्रकाश है (हिय उवन अवयासु, सुइ कमल उवएसु) जब हितकारी ज्ञानका उदय होता है वही आत्मारूपी कमलके विकासका कारण है, यही जिनेन्द्रका उपदेश है ॥ १५ ॥

(जं कमल कलि उवनु, तं कर्न धुव सुवनु) जब कमल समान आत्माके स्वभावमें तल्लीनता होती है तब ध्रुव परिणतिकी प्राप्तिका साधन होता है (कलि कलिय सुइ कमल, सिय कर्न सुइ ममल) आपके प्रकाशमें रमना सो ही कमलके भीतर रमना है, यही शुद्ध होनेका शुद्ध साधन है ॥ १६ ॥

(जं दिस्टि धुव दिप्ति, तं नंत सिय रमति) जो ध्रुव ज्ञानकी तरफ दृष्टि है वही अनन्त शुद्ध भावमें रमण है (जं रसह धुव उवनु, तं समय सिय गमनु) आत्मारूपी सरोवरका ध्रुव रूपसे प्रकाश होना सो ही आत्माकी शुद्ध परिणतिका होना है। अर्थात् ज्ञानीको आत्मारूपी सरोवरमें सदा स्नान करना चाहिये ॥ १७ ॥

(हिययार धुवग हिर सिय रमन धुव अगम) हितकारी ध्रुव आत्माकी गुफामें प्रवेश होना सो ही शुद्ध ध्रुव इन्द्रियातीत आत्मामें रमण है (धुव गुपित गुप्ति तार सिय रमन तत्काल) ध्रुवरूपसे आत्माकी गुफामें गुप्त होना वही भवसागरसे तारनेवाला है वही हर समय शुद्ध भावमें रमण है ॥ १८ ॥

(धुव उवन छः वलय सिय समय सम निलय) जब ध्रुव आत्माका अनुभव होता है तब पांचों इन्द्रिय और मनके विचार भाग जाते हैं तब शुद्ध आत्मामें समताका निवास होजाता है (धुव जान पय उवनु सिय कमल सम कर्न) ध्रुव आत्मीक जहाज जब प्रगट होता है तब शुद्ध कमल समान आत्मामें ठहरकर समभाव जगता है वही मोक्षका साधन है ॥ १९ ॥

(धुव कमल पय कमल सियकदलु सुइ ममल) ध्रुव आत्मारूपी कमल कमलके पदमें है अर्थात प्रफुल्लित है। इसकी स्वच्छ पखड़ियां परम शुद्ध हैं अर्थात् आत्माके परिणमन परम शुद्ध वीतराग हैं (धुव कदल सुइ मुलिन सिय तुलिन सुइ रमन) ध्रुव आत्माके परिणमन हैं, वे ही वह पानीका द्वीप है जिस शुद्ध द्वीपमें आत्मा रमण करता है ॥ २० ॥

(धुव मुलिन सुइ गगन सिय कलस सुइ उवन) यह ध्रुव आत्मारूपी द्वीप है वही आकाशके समान स्वच्छ है। आत्माका विकास सो ही शुद्ध आत्मारूपी कलशका प्रकाश है (धुव गगन सुइ कलस सिय कलस ससि रमन) अपने आत्माके भीतर ध्रुवरूपसे तिष्ठना सो ही आत्मारूपी घट है जो अपने शुद्ध गुणोंसे पूर्ण है। यह शुद्ध कलश है सो ही चन्द्रमा समान शांत ज्योतिस्वरूप है उसीमें आत्मा आत्मरमण कर रहा है ॥२१॥

(धुव कलस ससि भवन सिय ममल नृत रमन) यह ध्रुव आत्मारूपी कलश है सो ही शांत आनन्दामृतसे पूर्ण चन्द्रमाका विमान है। इसीके शुद्ध वीतराग सत्य भावमें आत्मा रमण कर रहा है (धुव परम पद विंद सिय कमल कलिनंद) ध्रुव परमात्माके पदका अनुभव है सो ही आत्मारूपी शुद्ध कमलके भीतर स्थिर होकर आनन्दका स्वाद लेता है ॥ २२ ॥

(धुव कमल सुइ ममल–सिय कर्न सम ममल) ध्रुव कमल समान आत्मा ही मल रहित शुद्ध है, वही शुद्ध समभावका शुद्ध साधन है (धुव सिद्धि सुइ रमन सिय मुक्ति सुइ मिलन) ध्रुव सिद्धभावके भीतर रमण करना है सो ही शुद्ध मोक्षपदका प्राप्त कर लेना है ॥ २३ ॥

(इय धुव सिय स सहाउ मुनी) इसतरह ध्रुव शुद्ध अपने स्वभावका अनुभव करना है (उवन साहि जिन

उत्तिओ) इसीको जिनेन्द्रने मोक्षके साधनका उदय कहा है (उव उवन धुवं सुइ सिय रमन) उससे ध्रुव आत्माका प्रकाश होता है सो ही शुद्ध भावमें रमण है (सिहु समय सिद्धि संाचिओ) इसतरह यह आत्मा सिद्ध गतिको पाता है ॥ २४ ॥

भावार्थ—इस सिय धुव छन्दमें शुद्धोपयोगकी ही महिमा बताई है, आत्माका स्वरूप ध्रुव ज्ञाता दृष्टा वीतराग व आनन्दमई है। इसी स्वभावकी ओर रमण करना तथा अन्य सर्व वस्तुओंसे उपयोगका हटाना आत्मानुभव है। यही आत्मानुभव अनन्तज्ञानकी तरफ बढ़ जाता है। यह आत्मानुभव सम्यग्द-र्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र सहित है। यही मोक्षमार्ग है, यह परम सुख शांतिप्रद है। इसीमें परम समता व वीतरागता झलकती है। समभाव ही पूर्ण समभावकी प्राप्तिका कारण है। शुद्धोपयोगके रमणसे अरहन्तपद प्राप्त होता है, तब अरहन्त अपने दिव्योपदेशसे अनेक जीवोंको धर्मोपदेश देते हैं। अरहन्त भगवान ही शेष कर्मोंके क्षय होनेपर सिद्ध होजाते हैं। सिद्ध गतिका कारण एक शुद्धात्मानुभव है। जो भव्यजीव अपना हित करना चाहे तो उसको उचित है कि रागद्वेष मोहको हटाकर वीतराग भावमें रमण करें। निश्चयनयसे सब जीव शुद्ध हैं। उसी निश्चयनयके प्रतापसे सर्व जीव एक समान झलकते हैं, सम भाव आजाता है। समभावका पूर्ण प्रकाश सो ही ध्रुव आत्माका प्रकाश है, सो ही सिद्ध परमात्माका भाव है। यही ग्रहण करनेयोग्य है। परमात्मप्रकाशमें कहा है—

जो णवि मण्णइ जीव जिय, सयलवि एक्क सहाव। तासु ण थक्कइ भाउ सम, भवसायरे जो णाव ॥ २३१ ॥

जीवहं भेउ जि कम्म किउ, कम्मुवि जीउ ण होइ। जेण विभिण्णउ होइ तहं, कालु लहेविणु कोइ ॥ २३२ ॥

भावार्थ—जो कोई सब जीवोंको एक स्वभावरूप निश्चयसे नहीं मानता है उसके वह समभाव नहीं प्राप्त होता है, जो संसार—समुद्रसे पार होनेको नावके समान है। जीवोंके नरनारकादि भेद कर्मकृत हैं। कर्म कभी जीव नहीं होसक्ता। क्योंकि यह जीव कभी समयको पाकर उन कर्मोंसे छूटकर मुक्त होजाता है।

(७१) उमाहो फूलना गाथा १४४२ से १४५२ तक।

उव उवनो हो उवनो दाता उवन उवएसा, उव उवनो हो उवन हिययार रस रमन सहैसा !
उव उवनो हो साहे सहे सु निलय निवासा, सर्वंग सु उत्तउ स्वामी सुन्न निवासा ॥१॥
हम बहुलो उमाहो स्वामी तुम्हरे उवएसा अन्मोय सहावे समई मुक्ति परवेसा ॥२॥ (आचरी)
उव उवन हिययार सहावे दिस्टि सुएसा, हिययार रस दिस्टि उवनवौ सह एसा एसा ।
सहयार हिययार रमन रस उवनो उवएसा, भय षिपनिक समय सहावे मुक्ति परवेस ॥। ३ ॥ हम०॥
चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी अपनेउदेसा, उव उवनौ हो विंद कमल रस मिलन सहेसा ।
तं मिलियो हो अक विंद जिनु उवनु उवएसा, हिययार सहयार संजुत्तो मुक्ति परवेसा ॥४॥ हम०॥
चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी अपनेउ भेसा, तुम्ह लषहु न हो इस्ट उवन पौ उवन उवएसा ।
दर दर्सिउ हो इस्ट उवन पौ उवन सहेसा, रतं विंद कमल जिन उत्तउ मुक्ति परवेसा ॥५॥ हम०॥
चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी मिलन सहेसा, तं मिलिहो हो मिलन विली जिननाथ उवएसा।
जं जिनियो हो कम्मु अनन्तु अन्मोय सहेसा, भय षिपनिक हो भव्व स उत्तउ समय सहेसा ॥हम०
चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी अपनेउ सेजा, सिंहासन हो सूषम सहियो जै जै जिनेसा ।
तं विंद कमल रस रमनो मिलन सहेसा, जं जिनवर हो उवनो स्वामी मुक्ति प्रवेसा ॥हम०
चलि चलइ न हो जिनवर स्वामी अवनेउ साथा; सहकारह हो स्थान सुयं सुइ मिलन सहेसा ।
स्थानह हो स्थान सुयं जिन न्यान निवासा, सुइ कमल सुइ विंद रमन जिन निलय निवासा ॥हम०

चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी सिद्ध सहेसा, सुइ सिद्ध सुयं जिन उवने उवन सहेसा।
भव षिपनिक हो समय सहावे जिनय जिनेसा, सुइ विंद कमल रस रमने मुक्ति सहेसा ॥हम०
तं तारन हो तरन सहावे तरन उवएसा, त दिपिहि दिष्टि सब्द पिउ मुक्ति सहेसा।
विवान जुहो विंद कमल सुइ समय सुएसा, भय षिपनिक हो भव्वु सहावे मुक्ति प्रवेसा ॥हम०
पंचाइ नुहो पंच न्यान मय उवन उवएसा, भय षिपनिक हो अमिय रमन जिन ममल सहेसा।
तं विंद विन्यान कमल रस रमन जिनेसा, चतुष्टय हो विवान तरन जिन मुक्ति प्रवेसा ॥हम०

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनो हो उवनो दाता उवन उवएसा) श्री जिनेन्द्रके उपदेशके अनुसार आत्म प्रकाशके दाता श्री जिनदेवका प्रकाश हुआ है (उव उवनो हो हियया़र रस रमन पवेसा) ज्ञानके हितकारी रसमें रमण करनेवाले प्रकाशका साथ २ उदय हुआ है अर्थात् जब शुद्धात्मानुभवका प्रकाश होता है तब ही ज्ञानानन्दका झलकाव होता है (उव उवनो हो साहेमो सु निलय निवासा) अब उस ज्ञानका प्रकाश हुआ है, जो आत्मीक घरमें निवास पानेका साधन है (सर्वंग सु उत्तउ स्वामी सुन्न निवासा) जिस ज्ञानको सर्वांग शून्य भावमें अर्थात् रागादि रहित वीतराग भावमें रहनेवाला स्वामीने बताया है ॥ १ ॥

(हम बहुलो उमा हो स्वामी तुम्हरे उवएसा , हे स्वामी ! हमने आपका उपदेश बहुत अच्छी तरह स्वीकार किया है (अन्मोय सहावे समई मुक्ति पवेसा) आपका उपदेश है कि यह आत्मा आनन्द स्वभावमें होकर मुक्तिमें प्रवेश करता है ॥ २ ॥

(उव उवन हियया़र सहावे दिस्टि सुएसा) हितकारी आत्मीक स्वभावमें रमण करनेवाली ऐसी दृष्टिका प्रकाश हुआ है (हियया़र रस दिष्ट उवन पौ सह एपा एसा) उसके साथ साथ हितकारी आनन्दानुभव रसकी दृष्टि भी उदय हुई है (सहयार हियया़र रमन रस उवनो उवएसा) श्री जिनेन्द्रके उपदेशके अनुसार सहायकारी व हितकारी आत्मीक रमणका रस प्रगट होगया है (भय षिपनिक समय सहावे मुक्ति पवेसा) जिससे सर्व भय क्षय होजाता है और यह आत्मा अपने स्वभावमें होकर मुक्तिमें प्रवेश कर जाता है ॥ ३ ॥

(चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी अनेउ देसा) भव्यजन श्री अरहन्तकी भक्तिमें मगन होकर ऐसा कहता है कि हे जिनेन्द्र ! क्या हमारे साथ अपने मोक्षरूपी देशमें न चलोगे (उव उवनो हो विंद कमल रस मिलन सहेसा) उस मुक्तिसे मिलनेके लिये मेरे भीतर आत्मारूपी कमलके रसका अनुभव प्रगट होगया है (तं मिलियो हो अर्क विंद जिन उवनु उवएसा) मुझे श्री जिनेन्द्रका ऐसा उपदेश मिला है कि मैं आत्मारूपी सूर्यका अनुभव करूँ व वीतराग भावको प्रगट करूँ (हिययार सहयार मंजुत्तो मुक्ति प्रवेसा) उसी हितकारी सहायक भावसे यह जीव मुक्तिमें प्रवेश कर जाता है ॥ ४ ॥

(चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी अपनेउदेसा) हे जिनेन्द्र भगवान् ! क्या हमारे साथ अपने निज भेषमें न चलोगे ? अपना भेष तो सिद्ध महाराजकासा है । भावार्थ—क्या आपके प्रसादसे हम अपने मूल भेषको न पाएँगे । और उन कर्मकृत भेषोंका त्याग नहीं करेंगे ? (तुम्ह लषहु न हो इस्ट उवन पौ उव उवएसा) क्या तुम्हें नहीं पहिचानेंगे । आपमें परमेष्ठीपद प्रकाशित है। आप परम हितोपदेशी हैं (दर दर्सउ हो इस्ट उवन पौ उवन सहेसा) आपने प्रगट शुद्धात्माका प्रियरूप भलेप्रकार देख लिया है, आप ज्ञान स्वरूप हो (तं विंद कमल जिन उत्तउ मुक्ति प्रवेसा) जिनेन्द्रने कहा है कि जो कोई आत्मारूपी कमलका अनुभव करता है वह मुक्तिमें प्रवेश करता है ॥ ५ ॥

(चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी मिलन सहेसा) हे जिनेन्द्र भगवान् ! आप हमारे साथ मिलकर मुक्तिपुरीको न चलोगे अर्थात् जबतक हम मुक्तिके निकट न पहुँचें आपका आलम्बन व आपकी भक्ति व आपके स्वरूपका ध्यान आवश्यक है (तं मिलि हो हो मिलन मिली जिननाथ उवएसा) उस मुक्तिसे मिलना चाहिये तब जिनका अनादिसे मेल है, वे कर्म क्षय होजाते हैं ऐसा जिनेन्द्रका उपदेश है (जं जिनियो हो कम्मु अनन्तु अन्मोय सहेसा) जो आनन्द सहित मुक्तिका ध्यान करते हैं, वे अनन्त कर्मोंको जीत लेते हैं (भय षिपनिक हो भाव स उत्तउ समय सहेसा वे भव्यजीव सर्व भय रहित होकर शुद्ध आत्मा होजाते हैं, ऐसा कहा है ॥६॥

(चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी अपनेउ सेजए) हे जिनेन्द्र भगवान् ! क्या आप मेरे साथ अपनी शय्यापर नहीं चलोगे ? अपनी शय्या सिद्ध पर्याय है जिसको पाकर यह आत्मा अनन्त कालके लिये परमानन्द सहित विश्राम करता है (सिंहासन हो सुषिम सहियो जै जै जिनेसा) वहांपर आत्माके शुद्ध अतीन्द्रिय सूक्ष्म प्रदेशोंका सिंहासन है, जो विजयका आसन है। वहीं श्री जिनेन्द्र सिद्ध भगवान विश्राम करते हैं

(तं विंद कमल रस रमनो मिलन सहेमा) **उस शय्याके पास जानेसे आत्मारूपी कमलके अनुभवसे आत्मीक आनन्दके रसमें मगनता होती है** (अं जिनवर हो उवनो स्वामी मुक्ति प्रवेसा) **तब आत्मा जिनेन्द्र भगवान होकर मुक्तिमें प्रवेश करता है ॥ ७ ॥**

(चलि चल्हु न हो जिनवर स्वामी अपनेउ साथा) **हे जिनेन्द्र ! क्या आप मेरे साथ नहीं चलोगे। क्या आप मुझे मुक्ति पहुँचनेमें मदद न देंगे** (सहकार हो स्थान सुयं सुइ मिलन सहेमा) **आप सहकारी हैं। आपकी मददसे मैं स्वयं उस मोक्षस्थानको मिलाऊँगा** (स्थानह हो स्थान सुयं जिन न्यान निवासा) **वह स्थान ऐसा है जहां वीतराग आत्मा स्वयं अपने शुद्ध ज्ञानके भीतर निवास करता है** (सुइ कमल सुइ विंद रमन जिन विलय निवासा) **वही कमल है, वही ज्ञान चेतनामें रमण है, वही वीतरागताका घर है व रहनेका ठिकाना है ।८॥**

(चलि चलहु न हो जिनवर स्वामी सिद्ध सहेमा) **हे जिनेन्द्र ! क्या आप मेरे साथ सिद्ध भगवानके पास न चलेंगे** (सुइ सिद्ध सुयं जिन उवने उवन सहेमा) **वे ही स्वयं सिद्ध हैं वे स्वयं अपने वीतरागमई ज्ञान स्वभावमें प्रकाश कर रहे हैं** (भय षिपनिक हो समय सहावे जिनय जिनेसा) **वे सर्व भय रहित हैं, वे ही आत्मीक स्वभावमें हैं, वे ही जिन हैं, वे ही जिनेश हैं** (सुइ विंद कमल रस रमने मुक्ति महेसा) **वे ही स्वयं स्वानुभवरूपी कमलके रसमें रमण कर रहे हैं, वे मुक्ति सहित हैं ॥ ९ ॥**

(तं तारन हो तरन सहावे तरन उइवसा) **वे सिद्ध भगवान तारण स्वरूप है। जो उनका ध्यान करता है वह भवसमुद्रसे तर जाता है, वे स्वयं सिद्ध हुए हैं इससे तरण स्वभाव हैं, वे अपने स्वभावसे यही उपदेश देरहे हैं कि भवसागरसे तरना चाहिये** (तं दिस्टिहि दिष्टि सब्द पिउ मुक्ति सहेसा) **उनके भीतर ज्ञान दृष्टि चमक रही है। उनका शब्द अर्थात् उनका सिद्ध नाम प्यारा है, वे मुक्तिरूप हैं** (विवान जुहो विंद कमल सुइ समय सुएमा) **वही भवसमुद्रसे तरनेको जहाज है, वे ही ज्ञानचेतना धारी कमल है, वही यथार्थ शुद्ध आत्मा है** (भय षिपनिक हो भव्यु सहावे मुक्ति प्रवेसा) **वे सर्व भयसे रहित हैं, भव्यत्व स्वभावके धारी मुक्तिमें प्रवेश कर जाते हैं ॥ १० ॥**

(पंचाइनु हो पंच न्यान मय उवन उवएमा) **पंचमगति निवासी श्री सिद्ध भगवान पंचम ज्ञान केवलज्ञानके धारी हैं। उनका स्वरूप ही भव्यजीवोंको उनके समान होनेकी शिक्षा देता है** (भय षिपनिक हो अमिय रमन जिन ममल सहेसा) **वे सर्व भयसे रहित हैं, आनन्दामृतमें रमण करनेवाले वीतराग परम शुद्ध जिन हैं**

(तं विंद विन्यान कमल रस रमन जिनेसा) वे ज्ञानचेतनाके धारी आत्मीक कमलके रसमें रमण करनेवाले जिनेश हैं (चतुष्टय हो विशेन तरन जिन मुक्ति प्रवेसा) वे अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य चार चतुष्टयके धारी हैं, तारण तरण जिन हैं, मुक्तिमें सदा रहनेवाले हैं ॥ ११ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें एक सम्यग्दृष्टी सिद्धगति पानेकी या मुक्तिमें जानेकी भावना कर रहा है तथा साथमें श्री अरहन्त भगवानकी भक्ति भी कर रहा है और यह भावना भाता है कि जबतक वहां न पहुँचूँ आप साथ साथ चलें अर्थात् आपके स्वरूपका व उपदेशका आलम्बन रहे, जिससे मैं आत्मोन्नति करता चला जाऊँ, पीछे पग न रक्खूँ। वह उस सिद्ध क्षेत्रको ही अपना देश कहता है, सिद्ध पर्यायको ही अपना भेष कहता है, सिद्ध भगवानको ही अपना स्वामी या नाथ कहता है, सिद्ध स्थानको ही अपना स्थान कहता है, सिद्ध सुखको ही अपना शय्याका विश्राम मानता है। जबतक सातवें अप्रमत्तविरत गुणस्थान द्वारा श्रेणी पथपर न चढ़े तबतक छठे गुणस्थानमें या और नीचे भी आना होसक्ता है। एक साधु छठे व नीचेके गुणस्थानोंमें अरहन्तकी भक्तिको बड़ा भारी आलम्बन मानता है। सविकल्प ध्यानमें अरहन्त व सिद्ध परमात्माके स्वरूपका विचार परम हितकारी है। निर्विकल्प ध्यानमें या शुद्धोपयोगमें केवल आत्माका ही ध्यान है। मोक्षका साधन सम्यग्दर्शन पूर्वक व आत्मज्ञान सहित अपने आनन्दमई स्वभावमें रमण है। आत्मानुभव ही मोक्षका कारण है। शिष्यको श्री तारणतरणस्वामीने प्रेरणा की है कि तू निश्चिन्त हो एक आत्मानुभवका अभ्यास कर। इसी जहाजपर चढ़कर तू मोक्षद्वीपमें पहुँचेगा। आत्मानुभवकी बड़ी महिमा है। आत्मानुभवमें सब कुछ है।

परमात्मप्रकाशमें कहते हैं—

अप्पा संजम सीलतउ, अप्पा दंसण णाण। अप्पा सासय मुक्ख पउ, जाणंतउ अप्पाण ॥ ९३ ॥

अण्णुजि दंसण अत्थिणवि, अण्णुजि अत्थि ण णाण। अण्णुजि चरणु ण अत्थिजिय, मिल्लवि अप्पा जाण ॥ ९४ ॥

अण्णुजि तित्थ म जाहि जिय, अण्णुजि गुरउ म सेव। अण्णुजि देव म चिंत तुहुं अप्पा विमल मुएवि ॥ ९५ ॥

भावार्थ—आत्मा ही संयम है, शील है, तप है, आत्मा ही दर्शन और ज्ञान है। आत्माका जो अनुभव करता है, उसके लिये आत्मा ही अविनाशी मोक्षका मार्ग है। हे जीव! आत्माको छोड़कर न दूसरा कोई दर्शन है, न दूसरा कोई ज्ञान है, न दूसरा कोई चारित्र है। इसलिये तू आत्माका अनुभव

कर। हे जीव! तू दूसरे तीर्थको मत जा, दूसरे गुरुको न सेवे, दूसरे देवको मत ध्यावे। रागादि रहित आत्मा ही तीर्थ, गुरु व देव जाने, इसे छोड़कर औरकी सेवा न कर।

(७२) मेवाडा छन्द गाथा १४५४ से १४७७ तक।

उव उवन उवन पौ सहियो, उव उवनो है दाता देउ।
अलष जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १ ॥

जिन जिनयति जिनय सु जिनय जिनु, जिन जिनियो कम्मु उवन्नु।
रमन जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ २ ॥

जं कम्मु उवन उव उवन सुई, त जिनियो न्यान उवन्नु।
उवन जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ ३ ॥

जं लषन लषिय सुइ अलष पओ, तं अलष लषिय जिन उत्तु।
उत्त जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ ४ ॥

जं गमन गमिय सुइ अगम पौ, तं अगम अगम दर्सतु।
दर्स जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ ५ ॥

जं ढलन ढलिय जिन ढलन पौ, तं ढलन समय सिधि रत्तु।
सिद्ध जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ ६ ॥

जं धरन धरिय सुइ जिन धरन, तं धरन समय सिधि रत्तु।
समय जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ ७ ॥

जं दिप्ति दिष्टि जिन दिप्ति पओ, त दिप्ति समय संजुत्तु ।
जिनय जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ ८ ॥

जं दिष्टि इष्टि सुइ उवन पौ, त दिस्टि समय सम उत्तु ।
षिपक जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ ९ ॥

जं सब्द कमल जिन उवन पौ, त कर्न समय प्रवेसु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १० ॥

जं दिष्टि दिप्ति जिनय पौ तं समय सहज प्रवेसु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ ११ ॥

जं दिप्ति दिष्टि जिन नन्त पओ, तं समय अनन्त प्रवेसु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १२ ॥

जं उवन उवन उव उवन पौ, तं उवन समय सम उत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १३ ॥

जं उवन कमल सुइ चरन पौ, त उवन कर्न साहंतु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १४ ॥

तं कमल कलन पौ उवन मौ, पय उवन कंन सिय उत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १५ ॥

जं कलन कमल सिय उत्त पौ, तं कर्न समय सिय नित्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १६ ॥

जं कलन कमल चर उवनु जिनु, तं उवन कर्न सम उत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १७ ॥
जं कमल विसेष सु नन्त जिन, तं उवन कर्न सुइ नन्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १८ ॥
जं सब्द कमल हिय नन्त पौ, तं उवन कर्न हुव इत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ १९ ॥
जं कमल कन हिय जिनय पौ, तं कन हुव कमल जिनुत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ २० ॥
धुव कमल उवन सिय धुव रमनु, धुव कन समय सिय उत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ २१ ॥
जं कर्न हियार सिय उवन पौ, तं कमल चरन धुव उत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ २२ ॥
धुव उवन उवन सिय साहियो, सिय उवन समय धुव उत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ २३ ॥
जं अवलवली सिय तिहुवयौ, अन्मोय सिद्धि सम्पत्तु ।
स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ ॥ २४ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन उवन पौ सहियो) सम्यग्दर्शनके उदयसे आत्माकी उन्नतिका पद साधा गया है (उव उवनो हो दाता देउ) तब श्री अरहन्त भगवानका उदय हुआ है जो धर्मोपदेशके दाता देव हैं (अलष जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ) वे ही अलष जिन हैं। उन अरहन्तकी आत्माका ज्ञान इंद्रियोंसे व मनसे नहीं होसक्ता है। वे ही तारण तरण जहाज हैं व मुक्तिकी तरफ जारहे हैं ॥ १ ॥

(जिन जिनवति जिनव सु जिनव जिनु) श्री जिनेन्द्र भगवान जीतनेवाले वीतराग जिन हैं (जिन जिनियो कम्मु अनंत) जिन्होंने आत्माके घातक अनन्त कर्मोंको जीत लिया है (रमन जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ) वे ही आपमें रमण करनेवाले तारण तरण जिन हैं जो मुक्तिको जारहे हैं ॥ २ ॥

(जं कम्म उवन उव उवन सुई) जो कर्म आकरके एकत्र हुए थे (तं जिनियो न्यान उवनु) उन सर्व कर्मोंको उन्होंने अपने आत्मज्ञानके प्रकाशसे जीत लिया है (उवन जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ) वे प्रकाश-मान जिन तारण तरण मुक्तिको जारहे हैं ॥ ३ ॥

(तं लषन लषिय सुइ अलष पओ) जो ज्ञानोपयोग लक्षणसे जानने योग्य इंद्रिय व मनसे अतीत अलक्ष्य पद परमात्माका है (तं अलष लषिय जिन उत्तु) उस अलक्ष्य परमात्माके पदको श्री जिनेन्द्रने अनुभव कर लिया है ऐसा कहा गया है (उत्त जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ) वे ही जिन तारण तरण मुक्तिको जानेवाले कहे गए हैं ॥ ४ ॥

(जं गमन गमिव सुइ अगम पौ) जो ज्ञानगम्य अतीन्द्रि परमात्माका पद है (तं अगम अगम दर्सेतु) उस अतीन्द्रिय पदको अतीन्द्रिय भावसे वे अरहन्त देखनेवाले हैं (दर्स जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ) वे आत्म-दर्शी तारण तरण जिन मुक्तिको जारहे हैं ॥ ५ ॥

(जं ढलन ढलिय जिन ढलन पौ) जो आत्मानुभव करते २ उन्नति स्वरूप जिनेन्द्रका पद प्रगट होता है (तं ढलन समय सिधि रतु) उसी पदको अनुभव करनेवाला अरहन्तका आत्मा है जो सिद्ध स्वभावमें लीन है (सिद्ध जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ) वे सिद्ध स्वरूपी तारण तरण जिन मुक्तिको जारहे हैं ॥ ६ ॥

(जं धरन धरिय सुइ जिन धरन) जो धारण करने योग्य पद है उसको श्री जिनेन्द्रने धारण किया है (तं धरन समय सिधि रतु) वे आत्मीक धर्मके धारनेवाले अरहन्त परमात्मा सिद्ध स्वभावमें लीन हैं (समय जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ) वे ही परमात्मा जिन तारण तरण मुक्तिको जारहे हैं ॥ ७ ॥

(जं दिप्ति दिष्टि जिन दिप्ति पओ) जहां आत्माका दर्शन प्रगट होजाता है ऐसा केवलज्ञानमई पद है (तं दिप्ति समय संजुत्तु) अरहन्तका आत्मा उस केवलज्ञानका धारी है (जिनय जिन तरन विवान सु मुक्ति पओ) वे वीतराग जिन तारण तरण मुक्तिको जारहे हैं ॥ ८ ॥

(जं दिप्ति इष्टि सुइ उवन पौ) जहां अनन्त सुखका प्रकाश होजाता है वही उदय स्वरूप पद है (तं दिष्टि समय सम उत्तु) उस आत्मप्रकाशके धारी समभावमें लीन अरहन्त परमात्मा कहे गए हैं (षिपक जिन तरन विवान सु मुक्ति पत्तो) वे ही क्षायिक भावके धारी तारण तरण जिन मुक्तिको जारहे हैं ॥ ९ ॥

(जं सब्द कमल जिन उवन पौ) जिस कमल समान वीतराग अरहन्तसे दिव्य वाणीका प्रकाश होता है (तं कर्न समय प्रवेसु) वही वाणी आत्मामें प्रवेश तथा अनुभव करनेका साधन है (स्वामी जिन तरन विवान सु मुक्ति पत्तो) ऐसे जिनेन्द्रस्वामी तारण तरण मुक्तिको जारहे हैं ॥ १० ॥

(जं दिप्ति दिष्टि जिन उवन पौ) जिस वीतराग पदमें अनन्त दर्शनका प्रकाश है (तं समय सहज प्रवेसु) वे परमात्मा अरहन्त अपने सहज स्वभावमें लीन हैं ऐसे जिनेन्द्रस्वामी तारण तरण मुक्तिको जारहे हैं। ११॥

(जं दिष्टि दिप्ति जिन नंत पत्तो) जहां अनन्त ज्ञानका प्रकाश है ऐसे वीतराग जिन अनन्त गुणरूपी पदके धारी हैं (तं समय अनंत प्रवेसु) वे ही अनन्त गुण स्वरूप आत्माके भीतर लीन हैं ऐसे जिनेन्द्र भगवान तारण तरण मुक्तिको जारहे हैं ॥ १२ ॥

(जं उवन उवन उव उवन पौ) जो प्रकाशमान रहनेवाला आत्माका क्षायिक सम्यग्दर्शन पद है (तं उवन समय सम उत्तु) वही उदय रूप आत्माका समभाव धारी पद कहा गया है अर्थात् जहां क्षायिक सम्यक्त है वहीं सम भाव रूप क्षायिक चारित्र है। ऐसे पदके धारी जिनेन्द्र भगवान तारण तरण हैं ॥१३॥

(जं उवन कमल सुइ चरन पौ) जो कमल समान आत्माका उदय है वही सम्यक्चारित्र मई वीतराग पद है (तं उवन कर्न साहंतु) उसी उदयरूप पदसे जो मुक्तिका साधन कर रहे हैं ऐसे जिनेन्द्र भगवान तारण तरण हैं ॥ १४ ॥

(जं कमल कलन पौ उवन पौ) जो कमल समान आत्माका अनुभव रूपी प्रकाशमान पद है (पय उवन कर्न सिय उत्तु) उसी पदको शुद्धोपयोग रूप भाव मोक्षका साधन कहा गया है। ऐसे पदके धारी जिनेन्द्र भगवान तारण तरण हैं ॥ १५ ॥

(जं कलन कमल सिय उत्त पौ) जो कमल समान आत्माका अनुभव रूप शुद्धोपयोग पद कहा गया है (तं कर्न समय सिय निन्तु) वही नित्य अविनाशी शुद्ध आत्माका साधन है ऐसे पदके धारी जिनेन्द्र० ॥१६॥

(जं कलन कमल चर उवनु जिनु) जो कमल समान आत्माके अनुभव रूपी चारित्रको प्रकाश करने-वाले जिन हैं (तं उवन कर्न मम उनु) उन्हींको पूर्ण समभावका प्रकाशमान साधन कहा गया है। ऐसे जिनेन्द्र भगवान तारण तरण हैं ॥ १७ ॥

(जं कमल विदेष सु नंत जिन) जो अनन्त गुणोंके धारी वीतराग अरहन्त जिन कमलके समान हैं (तं उवन कर्न सुइ नंतु) वे ही अनन्त सिद्ध स्वभावके प्रगट साधन हैं। ऐसे जिनेन्द्र भगवान तारण तरण हैं ॥१८॥

(जं सब्द कमल हिय नंत पौ) जो आत्माके लिये कमल शब्दका व्यवहार है वह हितकारी अनन्त गुणधारी आत्मीक वीतरागताका प्रकाशक है (तं उवन कर्न हुव उत्तु) उसी पदको सिद्धपदका प्रगट साधन कहा गया है। ऐसे पदके धारी जिनेन्द्र भगवान तारणतरण हैं ॥ १९ ॥

(जं कमल कर्न हिय जिनय पौ) जो हितकारी कमल समान जिनेन्द्रका पद है वही मोक्षका साधन है (तं कर्न हुव कमल जिनतु) वही साधन कमल समान विकसित सिद्ध पदका साधन है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है। उस साधनके धारी जिनेन्द्र भगवान तारण तरण मुक्तिको जारहे हैं ॥ २० ॥

(धुव कमल उवन मिय धुव रमनु) जब ध्रुव कमल समान आत्माका प्रकाश होजाता है तब वह ध्रुव रूपसे शुद्धोपयोगमें रमण करता रहता है (धुव कर्न ममय मिय रत्तु) उसीको ध्रुव शुद्ध आत्माका साधन कहा गया है। ऐसे साधनके धारी जिनेन्द्र भगवान तारण तरण हैं ॥ २१ ॥

(जं कर्न हियार मिय उवन पौ) जो हितकारी शुद्ध भावका प्रकाशरूपी पद है वही साधन है (तं कमल चरन धुव उत्तु) उसीको कमल समान ध्रुव आत्माका चारित्र कहा गया है। ऐसे चारित्रके धारी जिनेन्द्र० ॥२२॥

(धुव उवन उवन मिय मारियो) ध्रुव आत्माका जैसे २ अनुभव होता है वैसे वैसे मोक्षका साधन होता जाता है (मिय उवन समय धुव उत्त) उस स्वानुभवको शुद्धोपयोगका प्रकाश या ध्रुव परमात्मारूप कहा गया है। ऐसे स्वानुभवके धारी जिनेन्द्र भगवान० ॥ २३ ॥

(जं अबल बली मिय तिहुव मौ) यह जो शुद्धोपयोग है वह तीन भवनमें बहुत बलवान है। उसके समान किसीका बल नहीं है (अन्मोय सिद्धि संपत्तु) इसी भावमें आनन्द है। उस आनन्दको लिये हुए आत्मा सिद्धिको पालेता है, ऐसे आनन्दके धारी जिनेन्द्र भगवान तारण तरण मुक्तिको जारहे हैं ॥ २४ ॥

भावार्थ—इस छन्दमें श्री तारणतरणस्वामीने तारणतरण अरहन्तका गुण गाया है। और अरहन्त-पदको ही मोक्षका निकटतम साधन बताया है। अरहन्त भगवानमें कषायोंका उदय नहीं है, इसीसे शुद्धोपयोग भाव है। उनके मिथ्यात्वका उदय नहीं है इससे क्षायिक सम्यक्त प्रगट है उनमें न ज्ञानावरण है न दर्शनावरण है न अन्तराय कर्म है। इसलिये अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य तथा अनन्तसुख प्रगट है। अरहन्तका आत्मा निश्चयसे तथा ध्रुवरूपसे अविनाशी अमूर्तीक आत्माका जो स्वरूप है उसको प्रत्यक्ष अनुभव करनेवाला है। वे नित्य आनन्दस्वरूप है। उनको कोई चिन्ता या कोई खेद या कोई दोष नहीं है। वे वीतराग सर्वज्ञ प्रभु भव्यजीवोंके पुण्यके उदयसे अपनी दिव्यवाणी द्वारा तत्वोपदेशको प्रगट करते हैं, उसे सुनकर भव्यजीव तृप्त होजाते हैं। और मोक्षमार्गको पाकर आत्म-कल्याण करते हैं, इसीको अरहन्त या तारणतरण कहा गया है। भव्य आत्मा सम्यग्दर्शनके प्रतापसे स्वानुभवके मार्गपर चलकर ही श्रेणी पथ द्वारा अरहन्तपदमें पहुँचता है भव्यजीवोंके लिये यही उपदेश है कि तुम भी रागद्वेष मोह छोड़कर आत्मानुभवकी प्राप्तिका पुरुषार्थ करो, यही परम आनन्दका देनेवाला है। आत्मानुभवसे यहां भी आनन्द है व परलोकमें भी आनन्द होगा। श्री परमात्मप्रकाशमें कहा है—

अप्पा दंसणु केवलु वि, अण्ण सरा ववहारु। एक्कुजि जोइय झाइयइ, जोतियलोकहिं सारु ॥ ९६ ॥

अप्पा झायहि णिम्मलउ, किं बहुएं अण्णेण। जो झायंतहिं परमपउ, लब्भइ एक्कु खणेन ॥ ९७ ॥

अप्पा णियमणि णिम्मलउ, णिय में वसइ ण जासु। सत्थ पुराणइ तवयरण, मुक्खुजि काहिं कितासु ॥ ९८ ॥

भावार्थ—केवल एक आत्मा हीका श्रद्धान सम्यग्दर्शन है, और सब व्यवहार है। इसलिये हे योगी! एक आत्माको ही ध्यानमें ले। यही तीन लोकमें सार है। हे योगी! तू एक निर्मल आत्माका ही ध्यान कर और बहुत विकल्प जालोंसे व रागद्वेषोंसे क्या लाभ है। इसी आत्माके ध्यानको जो अनुभवमें लेते हैं उनको क्षणमात्रमें परमपद प्राप्त होजाता है। जिसके मनमें निर्मल आत्मा नियमसे नहीं बसता है अर्थात् जो आत्माका अनुभव नहीं करता है उसके लिये शास्त्र पुराण पढ़ना, तप करना, क्या मोक्षको प्राप्त करा सक्ते हैं? कभी नहीं करा सक्ते। अतएव एक आत्मानुभव ही मोक्षका साधन है।

(७३) संसर्ग सोलही गाथा १४७८ से १४९३ तक।

पर्म परम जिनं पर्म सुममयं, पर्म सिवं सासुतं।
परमं परम पदं पदर्थ ममलं, अर्थ ति अर्थ समं॥
कमलं कमल सुभाउ विदंति सुममयं, अचष्यं अचष्ये बुधैः।
अवध्ये केवल दर्स दिस्टि ममलं, न्यानं च चरनं समं॥ १॥
तत्वं विंदति अर्थ सुद्ध महजं, महजोपनीतं बुधैः।
सुद्धं सम्यक्दर्शन च ममलं, मम्यक्त सुद्धं परं॥
न्यानं न्यान दिगन्तरं सु सुरयं, नन्तानन्त ऊपमं।
नन्तानन्त चतुस्टयं च ममलं, सर्वन्यं सिद्धं नमं॥ २॥
वारम्वार वियारनं सु समयं, पूजं च पूर्व ध्रुवं।
पिच्छं सुद्धं न्यान दिस्टि ममलं, तारं तु तरनं सुयं॥
वापं त्वं च पिता ति अर्थ सु समयं, सार्धति सुद्धात्मनं।
लोकालोक विलोकि तत्त ममलं, वापं पिता संस्थितं॥ ३॥
माता मान प्रमान माम ममलं, ना संति कम्मं कुरं।
मै मूर्ति अर्थति अर्थ सुद्ध सु समयं, हर्यं च मुक्ति पयं॥
तारं तत्तु विसेष नन्त ममलं, रीयंति रीर्जं सुयं।
माता सुद्ध सुभाव सुपंच सुरयं, महतारि मुक्ति वरं॥ ४॥
इस्टं इस्ट संजोय अनिस्ट विलयं, जानं च न्यानं वरं।
अवध्य दर्सन दर्सयन्ति ममलं, ईर्जं पथं सास्तुतं॥

आराध्यं च सुभाव ति अर्थ सुसमयं, ऐय्यं च सुद्धं ध्रुवं ।
ईर्ज नन्त विसेष समर्थ कमलं, सर्वन्य सार्धं ध्रुवं ॥ ५ ॥
न्यानं अर्थ समर्थ जयं च रवनं, जैनोक्त सार्धं ध्रुवं ।
नमनं सजन सुकी सुभाव सहजं, नीलं च न्यानं सुरं ॥
जं नित्यं च विसेष कम्म षिपनं, न्यानं च अन्मोदिनं ।
सुद्धं सुद्ध विबोध न्यान ममल, अर्थति अर्थ सुयं ॥ ६ ॥
भावं भाव विसेष सुयं सुरयं, भयं च नीलुरन सुयं ।
रैवं इर्ज सुभाव सुद्ध सुरयं भाई च भव्यात्मन् परं ॥
भगिनी भद्र मनोन्य सु न्यान ममलं, भगिनी च अन्नं ध्रुवं ।
भगिनी भय विनस्य सुदिष्टि ममलं, न्यानं च अन्मोदिनं सुयं ॥ ७ ॥
ग्रहिनी ग्रहन सुयं सु न्यान ममलं, हर्ष च परमं पदे ।
नीलं सुद्ध सुकिय सुभाव ग्रहनं, स्त्रियं ति अथ सुयं ॥
स्त्री अस्ति ति अर्थ अर्थ ममलं, न्यानं च अन्मोदिनं ।
रौनं कम्म कलंक मिथ्य मिलयं, न्यानेन न्यान ममलं ध्रुवं ॥ ८ ॥
पुत्रं पूर्व विसेष उक्त सहजं, सहजोपनीत बुधैः ।
पुत्र्यं परम सुभाव सुद्ध सुरयं, कम्मं च निर्लूरनं ॥
पुत्रं अर्थ ति अर्थ अर्थ ममलं, सर्वन्य सार्धं ध्रुवं ।
पुत्रं परम पदं तिअथ कमलं, विन्यान न्यानं सुरं ॥ ९ ॥

वेयत्वं च विन्यान न्यान सु समय, टंकोत्कीर्न सुरं ।
वेटा विंदति लोकलोक सुरयं, न्यानं च अवलोकनं ॥
वेटी सहज सुकीय दिस्टि ममलं, वेदति लोकं धुवं ।
वेटी सहज विसेष कम्म षिपन, न्यानं च अन्मोयं सुरं ॥१०॥
सुसरं सुयं ति अथ अथ समयं, सुरतं च सुरयं पदं ।
सुरयं न्यान सुयं च सुदिष्टि ममलं, रंजंति न्यानं पदं ॥
सास्वत् सुद्ध सरूव सुद्ध ममलं, सार्धं च सास्वत पदं ।
सारीसार तिलोय सल्य रहितं, सुद्धं च सुद्धात्मनं ॥११॥
सारी सहज सुकीय सुदिस्टि ममलं, संसार विषयं षिपं ।
सारी सल्य विमुक्कु संक रहियं, कम्मस्य निर्लूरनं ॥
सहकारं रमनं सु न्यान ममलं, रीन च कम्मं कुरं ।
सारी सहज सुभाव अर्थ सुसमयं, न्यानं च अन्मोदिन परं ॥१२॥
मित्रं मिलित न्यान पंच ममलं, पंचार्थ पंच दिस्तियं ।
मिष्टं इष्ट ति अर्थ सुद्ध ममलं, इस्टं च इस्टं पदं ॥
समयं सहज सुयं सु लष्य लषियं, सहजोपनीतं बुधैः ।
मै मूर्ति ममल ममात्म परमं, समयं च साध धुवं ॥१३॥
सहकारं सहज सु पंच रुचितं, सहकारं सार्धं धुवं ।
हृदयं इस्टति नन्त नन्त ममलं, कमलं सुभावं सुरं ॥

रीन कम्म कलंक राग विलय, साध च सुद्धात्मन ।
सहकारं सहजोपनीत ति अर्थ समयं, संपूर्ण सास्वत पद ॥ १४ ॥

अन्मोदं नन्तानन्त सु दिस्टि ममलं, नृतंति नृतात्मनं ।
अप्पा अप्प विसेष सु न्यान समयं, सार्धं च सुद्धात्मन ॥
न्यानं न्यान अन्मोय सुद्ध ममलं, दर्संति भुवन त्रयं ।
सहकारं धुव निस्व सास्वत पदं, कम्मस्य विलयं सुयं ॥ १५ ॥

एतत्सुद्ध समयं च समयं, साध च भव्यात्मनं ।
संसर्ग सहजं सुयं च ममलं, कम्मस्य त्रिविधं गलं ॥
अप्पा अप्प सुरं सुयं च सुरयं, सुद्धात्म परमात्मनं ।
न्यानं न्यान अन्मोय सुद्ध ममलं, सार्धं च मुक्ति पयं ॥ १६ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(परम परम जिनं परं सु समयं) **परमात्मा सर्वसे श्रेष्ठ वीतराग आत्मा है** (पर्मं सिवं सासुतं) **वही उत्तम सुखधारी है अविनाशी है** (परमं परम पदं पदर्थ ममलं) **वह श्रेष्ठ है उत्तम पदधारी है वही सर्व रागादि दोष रहित पदार्थ है** (अर्थति अर्थ समं) **वह रत्नत्रयकी एकतारूप है, वही समभावरूप है** (कमल कमल सुभाव विंदति सु समयं) **वही कमलके समान प्रफुल्लित आत्मा है, यही उसका स्वभाव है, वह अपने आत्माका अनुभव कर रहा है** (अचष्यं बुधैः अचष्ये) **वह इंद्रियातीत है। वही तत्वज्ञानियों द्वारा अतीन्द्रिय ज्ञानसे अनुभव योग्य है** (अवध्ये केवल दर्स दिष्टि ममलं) **वह सर्व बाधा रहित है, वही केवलदर्शन व क्षायिक सम्यग्दर्शनरूप है व निर्मल है** (न्यानं च चरनं समं) **वही ज्ञानरूप है, वही चारित्ररूप है, वही समभावरूप है ॥ १ ॥**

(तत्वं विंदति अर्थ सुद्ध सहजं) **जो शुद्ध स्वाभाविक आत्मतत्व तथा पदार्थका अनुभव कर रहा है** (बुधैः सहजोपनीतं) **वह तत्वज्ञानियोंके द्वारा सहजमें अनुभव करनेयोग्य है** (सुद्धं सम्यग्दर्शनं च ममलं, **वहीं शुद्ध**

व क्षायिक सम्यग्दर्शन है (सम्यक्त सुद्धं परं) वहीं शुद्ध व उत्कृष्ट सम्यग्दर्शन है (न्यानं न्यान विगतं सु सुयं) वहां सर्वव्यापी ज्ञान सूर्यके प्रकाश समान है। उस ज्ञानमें सर्व जाननेयोग्य ज्ञेय झलक रहे हैं (नन्तानन्त ऊामं) उस ज्ञानमें अनन्तानन्त शक्ति है वह अपने लिये आप ही उपमा है (नन्तानन्त चतुस्टयं च ममलं) उस परमात्मामें अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य चार चतुष्टय बिराजमान हैं, वे रागादि मल रहित वीतराग हैं (सर्वन्यं सिद्धं नमं) वे ही सर्वज्ञ हैं, वे अपना आत्म कार्य सिद्ध कर चुके हैं, वे ही नमस्कार करने योग्य हैं ॥ २ ॥

(वारम्वार विचारनं सु समयं) शुद्ध आत्माका वारवार विचार करना योग्य है (पूजं च पूर्व धुवं) तथा उस ध्रुव परमात्माका पहली अवस्थामें पूजना या भक्ति करना योग्य है (पिच्छं सुद्धं न्यान दिष्टि ममलं) पीछे शुद्ध ज्ञान दृष्टिसे वीतराग आत्माका अनुभव करना योग्य है (तारन्तु तरनं स्वयं) तब यह शुद्धोपयोगी साधु स्वयं तारण तरण अरहन्त होजाता है (वापं त्वं च पिता ति अर्थ सु ममयं) हे परमात्मा ! तू ही मेरा पालन-कर्ता बाप है, तू ही पिता है, तू ही रत्नत्रय स्वरूप परमात्मा है (स.धेति सुद्धात्मनं) आप शुद्धात्माको साधन कर चुके हैं (लोकालोक विलोकि तत्व ममलं) आपके भीतर लोक तथा अलोकको देखनेवाला शुद्ध ज्ञान तत्व बिराजित है (वापं पिता संस्थितं) आप अपने स्वरूपमें स्थित हमारे लिये रक्षक बाप हैं या पिता हैं अर्थात् जो आपको पिताके समान उपकारी जानकर आपके उपदेशके अनुसार चलता है व आपकी भक्ति करता है वही सच्चा पुत्र है, वह शीघ्र ही पिताके समान महान् और पूज्य हो जायगा ॥ ३ ॥

(माता मान प्रमान माम ममलं) प्रमाण रूप शुद्ध ज्ञानकी परिणति ही मेरी माता है क्योंकि उसीके द्वारा परमात्मा पदका जन्म होता है। (नासंति कम्मं कुं) उसी ज्ञान परिणतिके आराधन करनेसे दुष्ट घातीय कर्म नाश होते हैं (मै मूर्ति अर्थति अर्थ सुद्ध समयं) शुद्ध आत्मा ज्ञान मूर्ति तथा रत्नत्रय स्वरूप पदार्थ है (हर्ष च मुक्ति पयं) जिसने मुक्ति पदको प्राप्त कर लिया है (तारं तत्त विसेष नंत ममल) वे ही भव्य जीवोंको पार उतारनेके लिये विशेष तत्व हैं जो अनन्त गुण स्वरूप व निर्मल है (गेयंति गेजं सुयं) वे स्वयं अपने सहज स्वभावमें परिणमन करते रहते हैं (माता सुद्ध सुभाव सुयं च सुयं) स्वयं सूर्य समान परमात्माकी माता शुद्धो-पयोग परिणति है (महतारि मुक्ति वरं) जो श्रेष्ठ मोक्षरूप परमात्म पदकी माता है ॥ ४ ॥

(इस्टं इस्ट संजोय अनिस्ट विलयं) परमात्माका स्वरूप इष्ट है उस इष्ट परमात्म स्वरूपका संजोग हुआ

है, तब सब रागादि अनिष्ट भाव विला गया है (जानं च न्यानं वरं) आत्माके श्रेष्ठ ज्ञान स्वरूपका जानपना हुआ है (अवध्य दर्सन दर्सयंति ममलं) बाधा रहित शुद्ध आत्मदर्शनका दर्शन हुआ है, निर्मल आत्माका श्रद्धान उदय हुआ है (इर्जं पथं सास्रुतं) अविनाशी मोक्षमार्ग पर गमन हुआ है (आराध्यं च सुभाव ति अर्थ सु समयं) रत्नत्रयमई पदार्थ जो शुद्धात्मा है उसके स्वभावका आराधन किया गया है (ऐर्य्यं च शुद्ध ध्रुवं) शुद्ध ध्रुव आत्माका स्मरण हुआ है। (इर्जं नंत विसेष समर्थ कमलं) अनन्त गुण व बलधारी कमल समान आत्माके भीतर परिणमन हुआ है (सर्वन्य सार्धं ध्रुवं) वही सर्वज्ञ हैं, वही अविनाशी हैं ॥ ५ ॥

(न्यानं अर्थ समर्थ जयं च रवनं) सम्यग्ज्ञान पदार्थोंके जाननेमें समर्थ है। कर्मोंको जीतनेमें तेज है (जैनोक्त सार्धं ध्रुवं) वह श्री जिनेन्द्रोंका कहा हुआ प्रवाह रूपसे अविनाशी है (नमनं मजन सुकी सुभाव सहजं) उसे सज्जन नमस्कार करते हैं वह निश्चयसे अपना ही सहज स्वभाव है (नीलं च न्यानं सुरं) यह ज्ञानका खजाना है तथा वही सूर्यसम प्रकाशमान है (जं निस्यं च विसेष कम्म षिपनं) जिस आत्मानुभवरूप सम्यग्ज्ञानके आराधनसे नित्य ही विशेष विशेष कर्मोंका क्षय होता है (न्यानं च अन्मोदिनं) वह ज्ञान आत्मानन्द स्वरूप है अर्थात् ज्ञानके साथ आनन्दका भी प्रकाश है (सुद्ध सुद्ध विबोध न्यान ममलं) वह परम शुद्ध निर्मल आत्मबोधरूपी ज्ञान है (अर्थति अर्थ सुयं) वही ज्ञान स्वयं रत्नत्रयरूपी आत्म पदार्थ है अर्थात् आत्मासे भिन्न नहीं है। उस आत्मज्ञानमें सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र गर्भित हैं ॥ ६ ॥

(भावं भाव विसेष सुयं सुरयं) शुद्धोपयोगरूप विशेष भावकी भावना करनी योग्य है, जो स्वयं सूर्यके समान है (भयं च नीलुरनं सुयं) जिस भावके जागृत होनेसे स्वयं दूर होजाता है (दैवं ईजं सुभाव सुद्ध सुयं) वही सरल स्वभावका खजाना है, वही शुद्ध सूर्यके समान है (भाई च भव्यात्मनु परं) वह शुद्धोपयोग भाईके समान सहायक है, भव्य आत्माका स्वभाव है उत्तम है (भगिनी भद्र मनोन्य सुन्यान ममलं) निर्मल सम्यग्ज्ञानकी परिणति भद्र स्वभावको धारनेवाली सुन्दर बहन है जो आत्माका उपकार करती है (भगिनी च अग्रं ध्रुवं) यही ज्ञानकी परिणति आत्माकी मुख्य व ध्रुव उपकार करनेवाली बहन है (भगिनी भय विनस्य सुदिष्टि ममलं) यह निर्मल आत्माकी दृष्टिरूपी बहन सर्व भयको नाश करनेवाली है (न्यानं च अन्मोदनं सुयं) यह स्वयं ज्ञान व आनन्दरूप है ॥ ७ ॥

(ग्रहिनी ग्रहन सुयं सु न्यान ममलं) आत्मानुभूति रूपी स्त्रीने अपने निर्मल सम्यग्ज्ञानको स्वयं वरा है

या स्वीकार किया है (हर्यं च परम पदं) मानो उसने परम पदको वश कर लिया है (नीलं सुद्ध सुकिय सु भाव प्रहनं) वह आत्मानुभूति शुद्ध भावका भंडार है, वह अपने ही आत्माके स्वभावको ग्रहण किये हुए है (स्त्रिय ति अर्थ सुयं) जिस आत्मानुभूतिने स्वयं तीन रत्नोंकी रक्षा की है अर्थात् जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र रत्नोंको भलेप्रकार सम्हालकर रखनेवाली है (स्त्री अस्ति ति अर्थ अर्थ ममलं) यह आत्मानुभूतिरूपी स्त्री अपने भीतर शुद्ध रत्नत्रयरूपी पदार्थको रखनेवाली है (न्यानं च अन्मोदिनं) वहां ज्ञान भी है आनन्द भी है (रीनं कम्मकलंक मिथ्यविलयं) इस आत्मानुभूतिने कर्मोंके कलंकको बहा डाला है व सर्व मिथ्यात्वको क्षय कर दिया है (न्यानेन न्यान ममलं धुवं) ज्ञानके द्वारा शुद्ध ध्रुव ज्ञानका स्वाद लेना ही आत्मानुभूति है ॥८॥

(पुत्रं पूर्व विसेष उक्त सहजं) उस आत्मानुभूतिमें रमण करनेसे सहज ही अपूर्व परमात्म स्वरूप रूपी पुत्रकी उत्पत्ति होगई है (बुधै-सहजोपनीतं) जिस परमात्म स्वरूपका अनुभव बुद्धिमान तत्व ज्ञानियोंको स्वयं सहजमें होता है (पुलयं परम सुभाव सुद्ध सुयं) जिसमें परम स्वभाव उच्चतासे झलक रहा है वह निर्मल सूर्य समान प्रकाशमान है (कम्मं च निर्लूरनं) उसके सर्व कर्म क्षय होगए हैं (पुत्रं अर्थ तिअर्थ अर्थ ममलं) यह परमात्मा रूपी पुत्र रत्नत्रयमई पदार्थ शुद्ध है (सर्वन्य सार्धं धुवं) इसको ध्रुव सर्वज्ञ कहते हैं (पुत्रं परम पदं ति अर्थ कमलं) वह परमात्मारूपी पुत्र परमपदमें रहनेवाला है, रत्नत्रयमई विकसित कमल समान प्रफुल्लित है (विन्यान न्यान सुरं) यही केवलज्ञानमई सूर्य है ॥ ९ ॥

(वेयत्वं च विन्यान न्यान सु ममयं) शुद्ध आत्माका केवलज्ञान मनन करने योग्य है (टंकोत्कीर्ण सुरं) वह केवलज्ञान टंकोत्कीर्ण है। टांकीमें उकेरी हुई मूर्तिके समान ध्रुव है तथा सूर्यके समान वीतरागतासे स्वपर प्रकाशित है (बेटा विदंति लोकालोक सुरयं) वही शुद्धोपयोगका बेटा या पुत्र है अर्थात् शुद्धोपयोगसे केवलज्ञानका जन्म होता है, यह ज्ञान सूर्यके समान लोकालोकको जाननेवाला है (न्यानं च अवलोकनं) यह ज्ञान दर्पणके समान सब देखता है (बेटी सहज सुकीय दिष्टि ममलं) शुद्धोपयोगकी बेटी सहज स्वाभाविक अपनी ही निर्मल दृष्टि है (वेदंति लोकं धुवं) जो इस लोकको ध्रुव रूपसे जान रही है, जो छः द्रव्योंके यथार्थ स्वरूपको पहचान रही है, किसीमें रागी नहीं है (बेटी सहज विसेष कम्म षिपनं) यह सहज आत्मदृष्टि-रूपी बेटी विशेष रूपसे कर्मोंकी निर्जरा करती है। जहां आत्मानुभव है वहां विशेष कर्म झड़ते हैं (न्यानं च अन्मोयं सुरं) तथा तब ज्ञानानन्दमई सूर्यका प्रकाश होता है ॥ १० ॥

(ससुरं सुयं ति अर्थ समयं) यहां ससुर इस आत्माका विकसित आत्मारूपी सूर्य है उसीसे शुद्धात्म परिणति या स्वानुभूति पैदा होती है जिसमें यह साधक आत्मा रमण करता है। यह ससुर स्वयं रत्नत्रय मई पदार्थ आत्मा है (सुरतं च सुयं पदं) यह स्वभावमें लवलीन सूर्य समान पदधारी है (सुयं न्यान सुयं च सु दिस्टि ममलं) यह स्वयं ज्ञान सूर्य है या शुद्ध क्षायिक सम्यग्दर्शन है (रंजंति न्यान पदं) जो अपने ज्ञानमई पदमें मगन हैं (सास्वत् सुद्ध सरूव सुद्ध ममलं) यही अविनाशी शुद्ध स्वरूप है, यही कर्ममल रहित वीतराग है (सार्थ च सास्वत पदं) यहां सदा अविनाशी पद रहता है (सारी सार तिलोय सल्य रहितं) तथा इस आत्माकी साली शल्य रहित तीन लोकमें सार शुद्ध परिणति है (सुद्धं च सुद्धात्मनं) जो शुद्धात्माका रूप धारण करनेवाली है ॥ ११ ॥

(सारी सहज सुभीय सु दिस्टि ममलं) आत्माकी साली सहज स्वानुभवमें रमनेवाली अपनी ही शुद्ध वीतराग आत्मदृष्टि है (संसार विषयं षिपं) जिस दृष्टिने आत्माके सन्मुख होकर संसार सम्बन्धी भावोंको दूर कर दिया है (सारी सल्य विमुक्कु भय रहियं) इस आत्मदृष्टिरूपी सालीमें कोई मिथ्या, माया, निदान शल्य नहीं है न कोई शङ्का या भय है (कम्मस्य निल्लोनं) यह आत्माकी तरफ रंजायमान होनेवाली दृष्टि कर्मोंको क्षय करनेवाली है (सहकारं रमन सु न्यान ममलं) इसकी सहायतासे आत्मा अपने निर्मल ज्ञानमें रमण करता रहता है (रीन च कम्मं कुरं) इसने कर्मोंके अंकुर या उत्पादक मोहको बहा दिया है (सारी सहज सुभाव अर्थ सु ममयं) शुद्धात्माके सहज सुभावमें मगन यह साली है (न्यानं च अन्मोदिनं वरं) जो उत्कृष्ट ज्ञानके आनन्दमें तृप्त है ॥ १२ ॥

(मित्रं मिलित न्यान पच ममलं) निर्मल केवलज्ञानका मिलाप सो ही आत्माका मित्र है (पंचार्थं पंच दिस्तियं) जिसमें मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल पांचों ही ज्ञानोंके पांचों ही प्रकाश गर्भित हैं अर्थात् आत्माके स्वाभाविक ज्ञानमें ही पांच भेद हैं (मिष्ट इष्ट ति अर्थ सुद्ध ममलं) इस केवलज्ञान रूपी मित्रको रत्नत्रयका शुद्ध निर्मल प्रकाश परम इष्ट है अर्थात् जहां केवलज्ञान है वहां रत्नत्रयका शुद्ध प्रकाश है (इस्टं स्व इस्टं पदं) यही परम इष्ट परमेष्ठी पद है (समयं सहज सुयं सुलष लषियं) जिस केवलज्ञान मित्रके प्रतापसे आत्माने अपने सहज अनुभव करनेयोग्य स्वभावको स्वयं अनुभव कर लिया है (बुधैः सहजोऽनीतं) जो स्वभाव तत्वज्ञानियोंके द्वारा सहजमें अनुभव करने योग्य है (मै मूर्ति ममल ममात्म परमं) इसी मित्रके प्रतापसे मेरा

आत्मा ज्ञानमूर्ति वीतराग परमात्मा होरहा है (ममयं च सार्धं धुवं) वही ध्रुव आत्माका स्वभाव है ॥१३॥

(सहकारं सहज सुयं च रुचिनं) आत्माकी उन्नतिमें सहकारी स्वयं अपने आत्माके सहज स्वभावकी रुचि या निश्चय सम्यग्दर्शन है (सहकार सार्धं धुवं) यह सहकार सदा ध्रुवरूपसे साथ रहता है। सम्यग्दर्शन आत्माका स्वभाव है (हृदय इस्तति नन्तनन्त ममलं) जिसके प्रतापसे मनमें स्वच्छ अनन्तानन्त गुणधारी आत्माको प्रेम हो रहा है (कमलं सुभवं सुयं) यह निश्चय है कि आत्माका स्वभाव प्रफुल्लित कमलके समान है या तेजस्वी सूर्यके समान है (रीनं कम्म कलंक राग विरयं) उसी सम्यक्तके प्रभावसे कर्म कलंक बह गया है व रागद्वेष विला गया है (सार्धं च सुद्धात्मन) तथा शुद्धात्माका अनुभव होरहा है (सहकार सहजोरनीत ति अर्थ ममयं) इस ही सहकारके मददसे सहजमें रत्नत्रयमई पदार्थ आत्माका अनुभव होरहा है (संपूर्ण सास्वत पदं) जो पूर्ण अविनाशी आत्माका पद है ॥ १४ ॥

(अन्मोदं नन्तानन्त सुदिष्टि ममल) अनन्तानंत गुणधारी आत्माकी तरफ निर्मल श्रद्धासे जो आनन्द होरहा है (नृनंति नृनात्मनं) वह सत्य है व रत्नत्रयमई सत्यार्थ आत्माका स्वभाव है (अप्पा अप्प विसेष सु न्यान ममय) इस आनन्दके होते हुए आत्मा अपने ज्ञानमई आत्मीक पदार्थमें लीन है (सार्धं च सुद्धात्मन) साथमें शुद्धात्मीक भाव है (न्यानं न्यान अन्मोय सुद्ध ममलं) ज्ञानमें ज्ञानका शुद्ध वीतराग आनन्द आरहा है (दर्सति भुवनत्रयं) इस निर्मल ज्ञानमें तीन लोक दिखलाई पड़ते हैं (सहकारं धुव निम्व सास्वतपदं) इस आनन्दकी सहायतासे ध्रुव व केवल परालम्बन रहित अविनाशी आत्मपद प्राप्त होता है (कम्मस्य विरयं सुयं) कर्मोंका स्वयं क्षय होजाता है ॥ १५ ॥

(एनत्सुद्ध समयं समयं) इस तरह शुद्ध आत्मारूपी पदार्थ है (सार्धं च भव्यात्मनं) ऐसा शुद्ध आत्म पदार्थका लाभ भव्य जीवको होता है (संमर्ग सहज सुयं च ममलं) आत्माके साथ स्वाभाविक सहज ही स्वयं रहनेवाला शुद्ध गुणोंका ही सङ्ग है (कम्मस्य त्रिविधं मलं) इसके द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म तीनों प्रकार कर्म गल गए हैं (अप्पा अप्प सुयं सुयं स्व सुयं) आत्मा आपसे ही स्वयं सूर्य सम प्रकाशित होगया है मानो यह स्वपर प्रकाशक सूर्य है (सुद्धात्म परमात्मनं) यही शुद्धात्मा है, यही परमात्मा है (न्यानं न्यान अन्मोय सुद्ध ममल) यहां ज्ञान ज्ञानके शुद्ध आनन्दमें मगन है, प्रफुल्लित कमलके समान आत्मा होरहा है (सार्धं च मुक्तियं) इस शुद्ध स्वभावके साथ यह मुक्तिपदमें विराजित है ॥ १६ ॥

भावार्थ—इस संसर्ग सोलहीमें श्री तारणतरणस्वामीने आत्मीक तत्वका अनेक प्रकारसे मनन किया है। पहले तो परमात्माकी महिमा करके शुद्ध सम्यग्दर्शनका गुण गान किया है, फिर यह बताया है कि सम्यक्ती जीव प्रथमावस्थामें आत्मीक तत्वका वार वार विचार करता है, परमात्माकी पूजा भक्ति करता है, फिर स्वानुभवका अभ्यास करता हुआ शीघ्र ही तारणतरण अरहन्त पद पालेता है। फिर यह बताया है कि आत्माका पालक या रक्षक पिता परमात्मा ही है, उसीके ध्यानसे ही व सच्ची भक्तिसे ही यह आत्मा रूपी पुत्र अपने पिताके समान परमात्मा होजाता है। फिर शुद्ध ज्ञानकी परिणतिको माताकी उपमा देकर स्मरण किया है कि शुद्धोपयोग रूप परिणतिसे ही मोक्षरूप परमात्म पदका जन्म होता है। परमात्म पदको उत्पन्न करनेवाली शुद्धोपयोग परिणति ही है। फिर शुद्धोपयोगको भाईकी उपमा दी है व आत्मज्ञानकी परिणतिको भगिनी कहा है, जिनकी परम सहायता मोक्षमार्गीको मिलती है। फिर आत्मानुभूतिको गृहिणी या स्त्रीकी उपमा दी है, इसीके भीतर आत्मा रमण करता है। फिर इस गृहिणीके संसर्गसे परमात्म पदकी प्राप्ति होती है, इसलिये इस परमात्मपदको पुत्रकी उपमा दी है व उसीके साथ जो केवलज्ञान होता है इसको वेटा शब्दसे स्मरण किया गया है तथा सामायिक आत्मदृष्टिको वेटीकी उपमा दी है। फिर शुद्धात्माको श्वसुरकी उपमा दी है व वीतराग आत्मदृष्टिको सालीकी उपमा दी है। फिर केवलज्ञानको मित्रकी उपमा दी है। फिर सहकारी सेवकके समान निश्चय सम्यग्दर्शनको कहा है इत्यादि कुटुम्ब बताकर यह झलकाया है कि यह आत्मा ऐसे अपूर्व संसर्गको पाकर मुक्तिपदको पालेता है और सदा आत्मानन्दमें मगन रहता है। भाव यह है कि जो भव्य जीव अविनाशी आनन्द रूप मोक्षरूपी पदकी प्राप्ति करना चाहे उनको ऐसे ही संसर्ग मिलाने चाहिये। शुद्धात्माकी वेटी आत्मानुभूतिको जो विवाहेगा व उसमें रमण करेगा वही परमात्मपदरूपी पुत्रको जन्म देगा। सम्यग्दर्शनको प्राप्त करके भव्य जीवको निरन्तर आत्म मनन ही कर्तव्य है। आत्माका जिन्होंने ध्यान किया है उन्होंने ही निजपद झलका लिया है। इस सालेहीसे विदित है कि पन्द्रहवीं शताब्दीमें जब श्री तारणस्वामीने इसकी रचना की है तब वेटा, वेटी, बाप, महतारी, ससुर, साली, भाई आदि शब्द प्रचलित थे। प्राचीन हिन्दीकी छटा इस पदसे विदित होती है।

श्री परमात्मप्रकाशमें इसी आत्मदृष्टिकी महिमा कही है:—

जइ णिविसद्धु वि कु वि करइ, परमप्पइ अणुराउ। अग्गिकणी जिम कट्ठगिरी, डहइ असेसु वि पाउ ॥ ११४ ॥

मेल्लिवि सयल अवक्खडी, जिय णिच्चिंतउ होइ। चित्तु णिवेसहि परमपए देउ णिरंजणु जोइ ॥ ११५ ॥

जं सिव दंसणि परम सुहु, पावहि झाणु करन्तु। तं सुहु भुवणि वि अत्थि णवि, मेल्लिवि देउ अणंतु ॥ ११६ ॥

भावार्थ—जो कोई अर्द्ध क्षण भी परमात्मासे प्रीति करता है वह सब पापको उसी तरह जला देता है जैसे आग काठके पर्वतको भस्म कर देती है। हे जीव! सर्व चिंता छोड़कर तू निश्चिंत होकर अपने चित्तको परमात्माके पदमें जोड़ और निरञ्जन शुद्ध आत्मारूपी देवका दर्शन कर। ध्यान करते हुए शुद्धात्माके दर्शन या अनुभवसे जो परमानन्द हे भाई! तू पावेगा वह सुख अनन्त परमात्मा देवको छोड़कर और कहीं तीनलोकमें नहीं मिल सक्ता है।

---

(७४) कल्यानक फूलना गाथा १४९४ से १५३५ तक।

(१)

जव जिनु गर्भवास अवतरियो, ऊर्ध ध्यान मनु लायो।
दर्सन न्यान चरन तव धरियो, उव उवन सिधि चितु लायो ॥ १ ॥
अरि मैं समत्तु रयन धरियो, जिहि मुक्ति रमनि लहिये।
अरि मैं समय सरनि मिलिये, अरि मैं जिनवयनु हिए धरिये ॥ २ ॥
अरि मैं जिन उत्तु उत्तु धरिये, अरि मैं जिन दर्स दर्स दरसिये।
अरि मैं दिप्ति दिष्टि सिधिए, अरि मैं जिन अर्थ अर्थ मिलिये ॥ ३ ॥
अरि मैं अलष लष्य लषिये, अरि मैं मुक्ति रमनि मिलिये।
अरि मैं समत्तु रमनु धरिये, अरि मैं ति अर्थ अर्थ मिलिये ॥ ४ ॥

अरि मैं ममल भाव रहिये, अरि मैं समत्तु रमनु धरिये ।
अरि मैं उवन न्यान मिलिये, अरि मैं समसमय सुद्ध मिलि[illegible] ।। [illegible] ।।

अरि मैं न्यान रमन रमिये, अरि मैं सिद्धि मुक्ति मिलिये ।
अरि मैं समत्तु रयनु धरिये, अरि मैं सुयं मुक्ति मिलिये ।। ६ ।।

(२)

जव जिनु उवनु उवनु सुइ उवने, उवनु उवनु चितु लायो ।
उवन हिययार सहयार उवन पौ, उव उवनु मुक्ति दरसायो ।। ७ ।।

हां जिन उवन उवन मिलिये, जिहि उवन सिद्धि चलिये ।
हां जिन समय सरनि सरिये, जिहि उवन मुक्ति मिलिये ।। ८ ।।

हां जिन ममल ममल रमिये, जिहि सहज सिद्धि मिलिये ।
हां जिन समय समय रमिये, जिहि रमन मुक्ति मिलिये ।। ९ ।।

हां जिन सहयार सहज मिलिये, सहयार कम्मु गलिये ।
हां जिन गुप्ति न्यान मिलिये, जिहि मुक्ति रमन रमिये ।।१०।।

हां जिन षिपक भाव षिपिये, हां जिन विंद रमन रमिये ।
जिन कमल कलन मिलिये, जिहि मुक्ति रमन रमिये ।।११।।

अन्मोय तरन मिलिये, तं विंद कमल रमिये ।
अरि मैं न्यान रमन रमिये, जिननाथ सिद्धि मिलिये ।।
सम समय मुक्ति मिलिये, हां जिनु उत्तु वयन धरिये ।।१२।।

(३)

जव जिनु रयन रमन जिन उवने, अन्मोय न्यान चितु लायो ।
त दिसि दिस्टि पिउ सब्द रमन जिनु, सह समय मुक्ति सिहु पाए ॥१३॥
अब मैं पाए हैं स्वामी, तं तारन तरन समर्थु ।
अब मैं पाए हैं स्वामी, अर्क अर्क दर्संतु ॥ अब मैं पाए हैं स्वामी ॥१४॥
तं अर्क विंदु संजुत्तु, अब मैं० । अब परम अगम दर्संतु । अब मैं० ।
अब समउ न विहडै सोई, अब मैं पाए हैं स्वामी० ॥१५॥
उत्पन्न मुक्ति संजुत्तु, अब मैं० । तं विंदु कमल संजुत्तु । अब मैं० ॥१६॥
उत्पन्न अर्क संजुत्तु, अब मैं० । अर्क अनन्तानन्तु । अब मैं० ॥१७॥

(४)

उत्पन्नं रंजु भय षिपक रमन जिनु, नन्द नन्द सुइ पाए ।
हिययार रंजु तं अमिय रमनु जिनु, आनन्द मुक्ति रमि पाए ॥ अब मैं पाए हैं स्वामी ॥१८॥
जिन जिनपति जिनय जिनेंदु, अब मैं० । अब समउन विहडै सोइ । अब मैं० ॥१९॥
नन्द आनन्द संजुत्तु, अब मैं० । अन्मोय न्यान संजुत्तु । अब मैं० ॥२०॥
अलषु लषु जिन देउ, अब मैं० । अगमु गभिय जिन नन्दु । अब मैं० ॥२१॥
जं गुप्ति रमन जिन नन्दु, अब मैं० । उत्पन्न नन्त दर्संतु । अब मैं० ॥२२॥
उव उवन मुक्ति संजुत्तु, अब मैं० । उव उवन कमल जिन रत्तु । अब मैं० ॥२३॥
कमल कमल रस उत्तु, अब मैं० । त विंदु रमन संजुत्तु । अब मैं० ॥२४॥

(५)

सहयार रंजु वै दिप्ति रमन जिनु, अगमु अगमु दिपि पाए।
अगमु अगोचर अलष रमन जिनु, त सिद्धि रमन जिन राए ॥२५॥
सुइ मोलहि संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी। तित्थपर भाउ उवलदु। अब मैं० ॥२६॥
जिन जिनयति जिनय जिनत्तु, अब मैं०। विंद कमल रस रत्तु। अब मैं० ॥२७॥
सुइ लष्यन कमल संजुत्तु, अब मैं०। सिधिरमन दिप्ति जिन उत्तु। अब मैं० ॥२८॥
आयार रंजु सुइ उत्तु, अब मैं०। मुक्ति रमनि सिधि रत्तु। अब मैं० ॥२९॥
सहयार रंज वै दिप्ति रमनु जिनु, चेय नन्द सुइ राए।
विन्यान रंजु जिन रमन जिनय जिनु, सहजानन्द सुइ पाए। अब मैं० ॥३०॥
तित्थयर उवन जिन उत्तु, अब मैं०। तारन तरन समक्षु। अब मैं० ॥३१॥
विंद कमल सुइ उत्तु, अब मैं०। अगमु अगमु दर्संतु। अब मैं० ॥ ३२ ॥
तरन विवान जिनय जिन उत्तु, अब मैं०। सुयं रमन जिन उत्तु। अब मैं० ॥३३॥
सहज सुयं दर्संतु, अब मैं०। जिन जिनय रंजु जिननाथ रमन जिनु।
रमन मुक्ति सुइ राए, परमानन्द तं परम रमन जिनु।
तं विंद कमल सिधि रत्तु। अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ ३४ ॥
अर्क विंद संजुत्तु, अब मैं०। अब समउ न विहड़ै सोइ। अब मैं० ॥३५॥

(६)

विंद विन्यान रस रमनु जिनय जिनु पाए हैं, तरन विवान जिनय जिनउत्तु तरन जिन पाए हैं।
अर्क विंद दर्संतु, अलष जिन पाए हैं ॥ ३६ ॥

सम समय सिद्धि सम्पत्तु रमन जिन पाए हैं, भय सल्य संक विलयंतु ममल जिन पाए हैं ॥३७॥
अपर परम दर्संतु सहज जिनु पाए हैं, पर्म गुप्ति उत्पन्न केवली पाए हैं।
अन्मोय न्यान सिधि रत्तु सुय जिन पाए हैं, तं विंद कमल सिध रत्त सिद्ध जिन पाए हैं ॥३८॥
सुइ समय समय सिधि रत्तु समय जिनु पाए हैं, उववन्नु नन्त दर्संतु, नन्त जिन पाए हैं।
पर्म भाव उवलद्धु, लब्धि जिन पाए हैं ॥ ३९ ॥
पर्म दर्स दर्संतु जिनु पाए हैं, जिननाथ रमन रे जुतु रमनु जिनु पाए हैं।
पर्म मुक्ति सिधि रत्तु, नन्द जिनु पाए हैं ॥ ४० ॥
दिपि दिस्टि सब्द पिउ उत्तु सहज जिनु पाए हैं, विंद कमल रस अर्क समय जिनु पाए हैं।
तारन तरन समर्थु, तरन जिनु पाए हैं ॥ ४१ ॥
सिद्ध समय सिद्धि संपत्तु, सिद्ध जिन पाए हैं, अन्मोय नंद आनंद समय जिनु पाए हैं।
सिद्ध समय सिद्धि संपत्तु तरन जिन पाए हैं ॥ ४२ ॥

(१)

अन्वय सहित अर्थ—(जब जिन गर्भवास अवतरियो) जब श्री जिनेन्द्र भगवान सम्यग्दृष्टी श्रद्धावान भव्यजीवके मनरूपी गर्भके भीतर आकर वास करते हैं। यहां निश्चयनयकी अपेक्षासे श्री तीर्थंकर भगवानके गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान, मोक्ष पांचों कल्याणकोंका वर्णन है। भव्यात्माका मन ही गर्भ है उसमें जब परमात्माका मनन होता है (ऊर्ध ध्यान मनु कायो) तब मनकी एकाग्रता होकर उत्तम धर्मध्यान जम जाता है (दर्सन न्यान चरन तव परियो) उस समय निश्चय सम्यग्दर्शन, निश्चय सम्यग्ज्ञान, निश्चय सम्यक्चारित्र, निश्चय सम्यक्त्व चारों ही आराधनाओंका आराधन होजाता है अर्थात् आत्मध्यानमें दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप, चारों ही गर्भित हैं (उव उवन सिधु चित कायो) उस समय प्रकाशमान सिद्ध भगवानका स्वभाव अनुभवमें आता है। शुद्धात्मारूप परिणति होजाती है ॥ १ ॥

(अरि मैं समत्त रयनु धरियो) हे भाई ! मैंने सम्यग्दर्शनरूपी रत्नको धारण किया है । मेरे भीतर शुद्धात्माकी प्रतीति प्रगट है (जिहि मुक्ति रयन लहियै) इसी सम्यग्दर्शनके प्रतापसे आत्मामें रमणरूप मुक्तिका लाभ होता है (अरि मैं समय मरनि मिलिये) अरे भाई ! मुझे अब आत्मीक मार्ग या निश्चय मोक्षमार्ग मिल गया है (अरि मैं जिन वयनु हिए धरियें) अरे भाई ! मैंने श्री जिनवाणीको मनमें धारण किया है ॥ २ ॥

(अरि मैं जिन उत्त उत्तु धरियें) हे भाई ! मैंने जिनेन्द्र भगवानके कहे गये उपदेशको मनमें धारण किया है (अरि मैं जिन दर्स दर्स रमिये) हे भाई ! मैं अब जिनेन्द्र भगवानके शुद्ध स्वभावके दर्शनका प्रेमी होरहा हूँ (अरि मैं दिप्ति दिष्ट सिधिए) हे भाई ! मुझे आत्मज्ञानकी दृष्टिकी प्राप्ति होगई है (अरि मैं जिन अर्थ अर्थ मिलिये) हे भाई ! मुझे श्री वीतराग जिनका तत्व स्वरूप मिल गया है ॥ ३ ॥

(अरि मैं अलष लष्व लषिये) हे भाई ! मैंने मन व इंद्रियोंसे अगोचर अलष व अनुभव करने योग्य आत्माका अनुभव पालिया है (अरि मैं मुक्ति रमनि मिलिये) हे भाई ! मुझे मुक्तिके भीतर रमण करनेवाले परमात्मा मिल गये हैं (अरि मैं समत्त रयनु धरिये) हे भाई ! मैंने सम्यक्त रूपी रत्नको धारण किया है । (अरि मैं ति अर्थ अर्थ मिलिये) हे भाई ! मुझे रत्नत्रयमई पदार्थ मिल गया है ॥ ४ ॥

(अरि मैं ममल भाव रडिये) हे भाई ! मैं अब निर्मल शुद्ध भावमें तिष्ठता हूं (अरि मैं समत्तु रमनु धरिये) हे भाई ! मैंने तो सम्यग्दर्शन रूपी रत्नको धारण किया है (अरि मैं उवन न्यान मिलिये) हे भाई ! मैं प्रकाशमान सम्यग्ज्ञानसे मिल गया हूं—मैं सम्यग्ज्ञानी होगया हूं (अरि मैं सम समय सुद्ध मिलिये) हे भाई ! मुझे समभावके भीतर शुद्ध आत्माका लाभ होगया है ॥ ५ ॥

(अरि मैं न्यान रमन रमिये) हे भाई ! मैं अब ज्ञानके भीतर ही रमण कर रहा हूं! मैं ज्ञानचेतना रूप हूं (अरि मैं सिद्धि मुक्ति मिलिये) मानो मुझे हे भाई ! अब सिद्धि या मुक्तिका लाभ ही होगया है—मैं अपनेको जीवनमुक्त अनुभव कर रहा हूं (अरि मैं समत्तु रयनु धरिये) हे भाई ! मैंने सम्यग्दर्शन रूपी रत्नको धारण किया है (अरि मैं सुय मुक्ति मिलिये) हे भाई! मैं इसीके प्रतापसे स्वयं मुक्तिसे जाकर मिल जाऊंगा ॥६॥

(२)

(जव जिन उवनु उवनु सुइ उवने) अब यहां जन्मकल्याणककी तरफ लक्ष्य है । जब प्रकाशरूप श्री तीर्थंकर भगवान भव्य जीवके भावोंमें स्वयं उत्पन्न होगए अर्थात् जब परमात्म तत्वका झलकाव भव्य

ज्ञानीके मनमें होने लगा (उवनु उवनु चिन लयो) तब ज्ञानीका मन प्रकाशित होगया। (उवन हिययार सहयार उवन पो) तब वह प्रकाशमान आत्मीक पद बड़ा ही हितकारी व सहकारी प्रगट होरहा है (उव उवनु मुक्ति दासायो) उस आत्मीक भावमें रमण करनेसे मानो मुक्तिका दर्शन ही होरहा है ॥ ७ ॥

हां जिन उवन उवन मिलिये) हां भाई! अब तो मुझे प्रकाशमान सम्यग्ज्ञानका लाभ होगया है (जिहि उवन सिद्धि चलिये) इस आत्मज्ञानके साथमें ही सिद्धपदको चलना है (हां जिन समय सरनि सरिये) हां भाई! मैं तो वीतराग आत्माके मार्गमें या वीतराग विज्ञानमई मोक्षमार्गमें चलूंगा (जिहि उवन मुक्ति मिलिये) इसी मार्गपर चलनेसे प्रकाशमान मुक्ति मिल जायगी ॥ ८ ॥

(हां जिन ममल ममल रमिये) हां भाई! मैं तो वीतराग व कर्ममलरहित शुद्ध आत्मामें रमण करूंगा (जिहि सहज सिद्धि मिलिये) जिसमें सहजमें ही सिद्धगति प्राप्त होजायगी (हां जिन समय समय रमिये) हां भाई! मैं तो वीतराग आत्मा हीमें आत्माके द्वारा रमण करूंगा (जिहि रमन मुक्ति मिलिये) जिसमें रमण करनेसे मुक्तिका लाभ होजायगा ॥ ९ ॥

(हां जिन सहयार सहज मिलिये) हां भाई! मुझे तो परम सहकारी जिनेन्द्र भगवान् सहजमें मिल गये हैं (सहयार कम्मु गलिये) इनकी सहायतासे मेरे भाव शुद्ध हुए हैं जिससे मेरे कर्म गल रहे हैं (हां जिन गुप्ति न्यान मिलिये) हां भाई! मुझे श्री जिनेन्द्र भगवानसे गुप्त तत्वज्ञान मिल गया है (जिहि मुक्ति रमन रमिये) इससे मैं मुक्तिमें रमण करनेवाले परमात्माके स्वभावमें रमण कर रहा हूं ॥ १० ॥

(हां जिन षिपक भाव षिपिये) हां भाई! अब मैं वीतराग क्षायिक सम्यक्तके भावोंके द्वारा कर्मोंका क्षय करूंगा (हां जिन विंद रमन रमिये) हां भाई! मैं वीतराग स्वरूप ज्ञान चेतनामें रमण करूंगा (जिन कमल कलन मिलिये) इससे मुझे परमात्मारूपी कमलकी प्राप्ति होजायगी जो परमात्मा आपसे आपमें रमण कर रहे हैं (जिहि मुक्ति रमनि रमिये) जो परमात्मा मुक्तिरूपी रमणीमें रमण कर रहे हैं ॥ ११ ॥

(अन्मोय तरन मिलिये) मुझे अब आनन्दमई रत्नत्रयरूपी जहाज मिल गया है (तं विंद कमल रमिये) मैं अब ज्ञानानुभवरूपी कमलमें रमण करता हूं (अरि मैं न्यान रमन रमिये) हे भाई! मैं तो ज्ञान चेतनाहीमें रमण करता हूं (जिननाथ सिद्धि मिलिये) इसीसे मुझे श्री जिनेन्द्र पदकी सिद्धि मिल जायगी। मैं परमात्मा सिद्ध होजाउंगा (सम समय मुक्ति मिलिये) मुझे समभावमई आत्माकी प्राप्ति मुक्तिमें होजायगी (हां जिन उत्तु

वमन धरिये) हां भाई! जब मैं जिनेन्द्र कथित वाणीको धारण करूंगा, जिनेंद्रके उपदेशके अनुसार चलूंगा ॥१२॥

(३)

(जब जिनु रयन रमन जिन उवने) अब यहां तप कल्याणक पर लक्ष्य है। जब श्री तीर्थङ्कर भगवान रत्नत्रयमें रमणरूप तपको धारकर प्रगट होते हुए अर्थात् जब मेरे भीतर निश्चय रत्नत्रयरूपी आत्मानुभूतिमई तपके धारी परमात्माका उदय होगया (कम्मोय न्यान चितु लायो) तब मेरे चित्तमें ज्ञानानन्दका प्रकाश होगया (त दिप्ति दिस्टि पिउ सब्द रमन जिनु) तब मैं आत्मज्ञान प्रकाशक परमप्रिय ॐ आदि शब्दोंके द्वारा शुद्ध भावमें रमण करने लगा (सह समय मुक्ति सिहु पाए) जिनकी सहायतासे आत्मा मुक्तिको स्वयं प्राप्त कर लेता है ॥ १३ ॥

(अब मैं पाए हैं स्वामी तं तारन तरन समर्थु) अब मैंने तारणतरणस्वामीको अर्थात् श्री अरहन्त परमात्माको पालिया है। जो आप भी संसारसे पार होते हैं व दूसरोंको भी संसार सागरसे पार करनेको समर्थ हैं (अब मैं पाए हैं स्वामी अर्क अर्क दर्सेतु) अब मैंने सूर्यके समान स्वपर प्रकाशक अरहन्त भगवानको पालिया है, जो सूर्य समान आत्माका दर्शन कराते हैं अर्थात् शुद्धात्माका स्वभाव प्रगट करते हैं ॥१४॥

(त अर्क विंद संजुत्तु) वे परमात्मा आत्मारूपी सूर्यका अनुभव करनेवाले हैं (अब परम अगम दर्सेतु) वे उस आत्मतत्वको दर्शाते हैं जो बहुत ही गहन है, मन व इंद्रियोंका विषय नहीं है (अब समउ न पिहिरे सोई) अब इस अपूर्व समयको नहीं खोना चाहिये। मुझे जब परमात्माका दर्शन होगया है तब मुझे अपना आत्मकल्याण कर लेना चाहिये ॥ १५ ॥

(उत्पन्न मुक्ति संजुत्तु) इस अरहन्त परमात्मामें मुक्तिका संयोग होगया है (तं विंद कमल संजुत्तु) वे आत्मारूपी कमलके भीतर स्वाद लेरहे हैं ऐसे प्रभुका मुझे लाभ हुआ है ॥ १६ ॥

(उत्पन्न अर्क संजुत्तु) श्री अरहन्त परमात्मामें ज्ञान सूर्यका संयोग है (अर्क अनन्तानन्तु) यह ज्ञान सूर्य अनन्तानन्त पदार्थोंका जाननेवाला है। ऐसे प्रभुका मुझे लाभ हुआ है ॥ १७ ॥

(४)

(उत्पन्न रंजु भय विपिय रमन जिन नन्द नन्द सुइ पाए) अब यहां ज्ञान कल्याणक पर लक्ष्य है जिस परमात्मामें अनन्त सुख प्रगट है, जिनका सब भय क्षय होगया है, जो वीतरागभावमें रमण करते हैं, जो

निजानन्दमें मग्न हैं ऐसे प्रभुका मुझे दर्शन होगया है। (हिययार रजु तं अमिय रमनु जिनु आनंद मुक्ति रमियाए) मुझे अपने परमात्मा मिल गए हैं जो मेरे बड़े हितकारी हैं, जो आनन्दामृतके स्वादको लेरहे हैं, जो बड़े आनन्दसे मुक्तिके भीतर रमण कर रहे हैं ॥ १८ ॥

(जिन जिनयति जिनय जिनेन्दु अब मैं पाए हैं स्वामी) जो वीतराग भगवान कर्मोंके जीतनेवाले हैं व जो वीर जिनेन्द्र हैं ऐसे स्वामीका मुझे लाभ हुआ है। (अब समउ न विहडै सोई) अब मुझे समयको नहीं खोना है। ऐसा समय वारवार नहीं मिलता है ॥ १९ ॥

(नंद आनंद संजुतु) यह भगवान परमानन्दमें मग्न हैं (अमोय न्यान संजुतु) यह ज्ञानानन्दके धारी हैं।

(अगमु कमु जिन देउ) श्री जिनदेवने मन व इन्द्रियोंसे अगोचर आत्माको अनुभव किया है (अगमु गमिय जिन नंदु) वहां स्थूल बुद्धिकी पहुँच नहीं है उस सूक्ष्म तत्वको जानकर वे जिनेन्द्र उसीमें आनन्दित होरहे हैं ॥ २१ ॥

(जं गुपि रमन जिन नंदु) वे भगवान परम गुप्त निज आत्मामें रमण कर आनन्द लेरहे हैं (उवन नंत दर्सेनु) उनको अनन्त दर्शनका प्रकाश होगया है ॥ २२ ॥

(उव उवन मुक्ति संजुतु) उनमें मुक्तिका भाव झलक रहा है (उव उवन कमल जिन रत्तु) वे श्री जिनेन्द्र प्रफुल्लित कमल समान आत्मामें रत हैं ॥ २३ ॥

(कमल कमल रस उव) आत्मारूपी कमलमें आत्माका रस भरा हुआ है (तं विंद रमन संजुत्तु) उसी रसका वे स्वाद लेरहे हैं ॥ २४ ॥

(५)

(सहयार जु जिन दिपि रमन जिन अगम अगम दिपियाए) अब वहां मोक्षकल्याणककी तरफ लक्ष्य है। श्री जिनेन्द्र भगवान वीतरागभाव व केवलज्ञान तथा आनन्दमें रमण करते हुए अब उस सिद्धपदको पहुंच गए हैं जो बहुत ही सूक्ष्म है जहां मन व इंद्रियोंकी गम्य नहीं है (अगमु अगोचर अलख रमन जिनु तं सिद्ध रमन जिनयाए) वे सिद्ध जिनेन्द्र सिद्धभावमें रमण करनेवाले हैं, वे वचन व मनके अगोचर शुद्ध आत्मामें रमण करनेवाले हैं ॥ २५ ॥

(सुइ सोलह संजुत्त अब मैं पाए हैं स्वामी) अब मैंने श्री सिद्धभगवानको पा लिया है या जान लिया है

जो सोलह पाणीके सुवर्ण समान अर्थात् कुन्दनके समान परम शुद्ध होगए हैं (तित्थयर भव उवन्न) यथार्थ तीर्थंकर भावको उन्होंने पा लिया है क्योंकि जो सिद्ध समान आत्माको ध्याता है वही भवसागरके पार होजाता है इसलिये श्री सिद्ध भगवान यथार्थ तीर्थंकर हैं ॥ २६ ॥

(जिन जिनयति जिनय जिनुत्तु) श्री जिनेन्द्रने कहा है वे ही कर्मोंको जीतनेवाले वीतराग जिन हैं (विंद कमल रस रत्तु) वे ज्ञानस्वरूपी आत्मारूपी कमलके रसमें लीन हैं ॥ २७ ॥

(सुइ कलरन कलस संजुत्तु) वे सिद्ध भगवान पूर्ण कलशाके समान आत्मीक गुणोंसे परिपूर्ण हैं (निधि रमन दिप्ति जिन उत्तु) वे अपनी आत्मीक सम्पदामें रमण करते हुए प्रकाशित हैं ऐसा जिनेन्द्रने कहा है ॥ २८ ॥

(आयार रंजु सुइ उत्तु) उन्हींको परम यथाख्यात शुद्ध चारित्रमें रमण कर्ता कहा गया है (मुक्ति रमन सिधि रत्त) वे ही मुक्तिमें रमण करते हैं, वे ही सिद्ध भावमें लीन हैं ॥ २९ ॥

(सहयार रंजु वै दिप्ति रमन जिनु) वे सिद्ध हमारे लिये सहायक हैं, वे आनन्द स्वरूप हैं, आत्मज्ञानमें रमण करनेवाले जिन हैं (चेयनंद सुइ गए) वे ही चिदानन्द हैं व तीन लोकके भूप हैं (विन्यान रंजु जिन रमन जिनय जिन) वे ही ज्ञानमें मगन हैं, वे ही वीतराग भावमें रमण करते हैं, वे ही वीर जिन भगवान हैं (सहजनंद सुइ पाए) वे ही सहजानन्द स्वरूप हैं। ऐसे सिद्धोंको मैंने पालिया है ॥ ३० ॥

(तित्थयर उवन जिन उत्तु) उन्हींको तीर्थंकर सिद्ध जिन कहा गया है (तारन तरन समत्थु) क्योंकि वे तारण तरण समर्थ हैं, वे आप भवसागरसे पार हुए हैं व जो उनका ध्यान करता है उसे भवसागरसे पार कर देते हैं ॥ ३१ ॥

(विंद कमल सुइ उत्तु) उन्हींको स्वानुभवरूप विकसित कमल समान कहा गया है (अगम अगम दर्सेतु) वे अपने स्वभावसे ही सूक्ष्म, अतींद्रिय व मन अगोचर आत्माके स्वभावको दिखला रहे हैं ॥ ३२ ॥

(तारन विवान जिनय जिन उत्तु) उनहीको तारनेवाला जहाज व वीतराग जिन कहा गया है (सुयं रमन जिनु उत्तु) उन्हींको स्वयं आपसे आपमें रमनेवाला कहा गया है ॥ ३३ ॥

(सहज सुयं दर्सेतु) वे अपने स्वभावको स्वयं दर्शा रहे हैं (जिन जिनय रंजु जिननाथ रमन जिउ) वे ही वीतराग शुद्ध भावमें मगन हैं, वे ही जिनेन्द्रपदमें रमनेवाले जिन हैं (रमन मुक्ति सुइ गए) वे ही मुक्तिमें रमण करते हैं, वे ही प्रभु हैं व त्रिलोक भूप हैं (परमानंद तं परम रमन जिनु) वे परमानन्दमें उत्तम प्रकारसे

रमण करनेवाले जिन हैं (तं विंद कमल सिद्ध रत्तु) वे ही प्रफुल्लित कमल समान स्वानुभव स्वरूप सिद्धभावमें लीन हैं, ऐसे सिद्ध भगवानको मैंने पाया है ॥ ३४ ॥

(अर्क विंद संजुत्तु) वे ही सूर्य समान अपने ज्ञानमें प्रकाशित हैं (अब समउ न बिगड़े सोइ) अब समय न खोना चाहिये—उनको पाकर तुझे सिद्धपदको प्राप्त करनेका उद्यम करना चाहिये ॥ ३५ ॥

(६)

(विंद विन्यान रम रमनु जिनय जिनु पाए हैं) यहां समुच्चयरूपसे शुद्धात्माकी स्तुति है। ज्ञानचेतनाके रसमें रमण करनेवाले वीतराग जिन भगवानको मैंने पा लिया है (तरन विन्यान जिनय जिन उत्तु तरन जिन पाए हैं) श्री जिनेन्द्रने जैसा कहा है वैसा मैंने भवसागरसे तारनेवाले जहाज रूप वीतराग जिनेन्द्ररूपी जहाजको पालिया है (अर्क विंद दर्सेतु अलष जिन पाए हैं) मैंने सूर्य समान तेजस्वी ज्ञानके दिखानेवाले मन व इंद्रियोंसे अगोचर श्री वीतराग भगवानको पालिया है ॥ ३६ ॥

(सम समय सिद्धि संजुत्तु रमन जिन पाए हैं) समभाव सहित आत्माकी सिद्धिको प्राप्त करनेवाले व स्वरूपमें रमनेवाले भगवान जिनको मैंने पालिया है (भव सल्य संक विलयंतु ममल जिन पए हैं) अब मुझे शुद्धात्मा जिनेन्द्र मिल गये हैं । मेरे सब भय, शल्य व शङ्काएँ विला गई हैं ॥ ३७ ॥

(अयर परम दर्सेतु सहज जिनु पाए हैं) परम आत्मज्ञानको दिखानेवाले सहज स्वभावी जिनको मैंने पालिया है (परम गुप्ति उत्पन्न केवली पाए हैं) मन, वचन, कायके बाहर आत्माके भीतर गुप्त रहनेसे केवलज्ञानको पानेवाले भगवानको मैंने पालिया है (अन्मोय न्यान सिधि रत्तु सुयं जिन पाए हैं) जो स्वयं ज्ञानानन्दकी सिद्धिमें लीन हैं ऐसे जिनको मैंने पाया है (तं विंद कमल सिधि रत्तु सिद्ध जिन पाए हैं) जो ज्ञानरूपी कमलकी सिद्धिमें लीन हैं ऐसे सिद्ध जिनको मैंने पाया है ॥ ३८ ॥

(सुद्द ममय समय सिधि रत्त ममय जिन पाए हैं) जो आत्मारूपी पदार्थकी सिद्धिमें लीन हैं ऐसे जिन परमात्माको मैंने पालिया है (उववन्न नंत दर्सेतु नंत जिन पए हैं) जिनमें अनन्तदर्शनका प्रकाश है ऐसे गुणधारी जिनको मैंने पालिया है (परम भाव उवलद्ध रूद्धि जिन पाए हैं) जिन्होंने शुद्धोपयोगके उत्कृष्ट भावको पालिया है ऐसे ऋद्धिके धारी जिनको मैंने पालिया है ॥ ३९ ॥

(परम दर्स दर्सेतु दर्स जिनु पाए हैं) श्रेष्ठ आत्मदर्शनको देखनेवाले सर्वदर्शी जिनको मैंने पालिया है

(जिननाथ रमन रे जुत्त रमन जिन पाए हैं) जो जिनेन्द्र परमात्माके गुणरूपी धनमें रमण करनेवाले हैं ऐसे रमण जिनको मैंने पालिया है (परम मुक्ति सिधि रत्त नंद जिनु पाए हैं) जो परम मुक्तिकी सिद्धिमें रत हैं ऐसे आनन्दमई जिनको मैंने पालिया है ॥ ४० ॥

(दिपि दिष्टि मऽद्द विउ उत्तु सहज जिनु पाए हैं) परमात्माके ज्ञान स्वभावको झलकानेवाले ॐ आदि शब्दोंसे जिस इष्ट परमात्माका बोध होता है उस स्वाभाविक जिन भगवानको मैंने पालिया है (विंद ममल रय अक ममय जिनु पाए हैं) जो ज्ञानमई कमलके रसमें मगन हैं ऐसे सूर्य समान परमात्मा जिनको मैंने पालिया है (तारन तरन समर्थ तरन जिनु पाए है) जो आप तर गये हैं व दूसरोंको तारनेको समर्थ हैं ऐसे श्री जिनेन्द्ररूपी जहाजको मैंने पालिया है ॥ ४१ ॥

(सिद्ध समय सिद्ध संपत्तु सिद्ध जिन पाए हैं) जो स्वयं आत्मासे सिद्धपदको पहुँचे हैं ऐसे सिद्ध जिनको मैंने पालिया है (अन्मोय नंद आनंद ममय जिन पाए हैं) जो आनन्दरूप हैं व आनन्दमें मगन हैं ऐसे परमात्मा जिनको मैंने पालिया है (सिद्ध समय सिद्धि संपत्तु तरन जिन पाए हैं) जो स्वयं आत्मासे सिद्धिपदको पहुँचे हैं ऐसे जहाजके समान सिद्ध जिनेन्द्रको मैंने पालिया है।

भावार्थ—यहां तीर्थंकरोंके गर्भादि पांचों कल्याणकोंको निश्चय नयकी अपेक्षासे आत्माके भीतर घटाकर वर्णन किया है। व्यवहारमें तो तीर्थंकर जब गर्भमें आते हैं तब इन्द्रादिक देव गर्भकल्याणककी भक्ति करते हैं। जब उनका जन्म होता है तब सुमेरु पर्वतपर इंद्र लेजाता है और क्षीरसमुद्रके जलसे १००८ कलश भरकर प्रभुका अभिषेक करता है। जब तीर्थंकरको वैराग्य होता है तब इंद्रादिक देव पालकीपर बिठाकर बनमें लेजाते हैं, वहां वस्त्राभूषण त्यागकर प्रभु सिद्धोंको नमनकर मुनि दीक्षाको धारण करते हैं। फिर जब ध्यानके योगसे केवलज्ञान होता है तब इंद्रादिदेव समवसरणकी रचना करते हैं। वहां देव मानव व पशुओंकी सभामें प्रभुका धर्मोपदेश होता है। प्रभुका विहार होता है। अनेक भव्यजीव धर्ममार्गको पाकर अपना हित करते हैं। जब आयुके अन्तमें प्रभुका निर्वाण होता है तब इंद्रादि देव आते हैं, शरीरकी दग्ध क्रिया करते हैं व निर्वाण स्थानपर चिह्न कर देते हैं। यह सर्व व्यवहार रूपसे कथन है।

यहां निश्चयसे वर्णन करते हुए गर्भकल्याणक उसे कहा है जब किसी भव्य जीवके हृदयमें तत्व प्रतीति होकर सम्यग्दर्शनका उदय होता है। परमात्माका स्वभाव ग्रहण करने योग्य है, मैं भी निश्चयसे वैसा ही

हूँ यह श्रद्धा सम्यक्त है। इस श्रद्धाका होना ही मोक्षमार्गका गर्भ रहना है, मोक्षमार्गीका प्रारम्भ सम्यक्तप्राप्तिसे होता है। फिर वह सम्यक्ती चौथे गुणस्थानसे ही शुद्धात्माके अनुभवका अभ्यास प्रारम्भ कर देता है। इस आत्मानुभवमें चारों ही दर्शन ज्ञान चारित्र तप आराधनाएं गर्भित हैं। यह आत्मानुभवसे धीरे २ बढता जाता है जैसे गर्भ बढता है। फिर जब यह साधुपदमें क्षायिक सम्यग्दृष्टि होकर प्रवेश करता है अप्रत्तविरत गुणस्थानमें ध्यानस्थ होता है तब मोक्षके साक्षात् कारण वीतराग सम्यक्तका या शुद्धोपयोगके निर्मल भावका, या स्वसंवेदन ज्ञानकी उच्चताका, या सामायिक नामके चारित्रका जन्म होता है, वही जन्मकल्याणक है।

फिर वह क्षपकश्रेणीपर चढ़कर तप करता है, शुक्लध्यानको जगाता है, मोहको नाश करता है। फिर तीन घातीय कर्मोंका क्षयकर केवलज्ञानी होजाता है तब ज्ञानकल्याणकमें प्रबन्ध करता है। उस समय चार अनन्त चतुष्टय पैदा होजाते हैं–अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख और अनन्तवीर्य। प्रभु आपसे ही आपमें मगन रहते हैं। मुक्ति–लक्ष्मी बिलकुल निकट रह गई है। फिर चार अघातीय कर्मोंको भी क्षय करके सिद्ध परमात्मा होजाते हैं तब निर्वाण कल्याणकमें प्रवेश होता है। तब आत्मा शुद्ध सुवर्णके समान सर्व कर्म रहित परम शुद्ध होता है। ये सिद्ध निरन्तर आत्मानन्दमें मगन रहते हैं। उनको कोई शरीरादि भाव कोई रागादिका व कर्मका सम्बन्ध नहीं है। ऐसे शुद्धात्माका स्वभाव प्रगट होता है। वह आत्मा अनादिकालसे सहज अपने स्वभाव हीमें हैं। परन्तु आठों कर्मोंके संयोगमें होते रहनेसे इसका स्वभाव गुप्त है। मिथ्यात्वके अन्धकारमें पड़ा हुआ है। जब सम्यक्तका उदय होता है तब यह मोक्षमार्गको गर्भमें धारण करता है। तब यह आत्मानुभवकी कलाको पा लेता है। यही वह कला है जो दूइजके चन्द्रमाके समय होती है। वही आत्मानुभव बढ़ते बढ़ते जब पूर्णपनेको पहुँचता है तब वह कला पूर्णमासीके चन्द्रमाके समान पूर्ण होजाती है। वास्तवमें आत्मानुभव ही मोक्षमार्ग है व आत्मानुभव ही मोक्ष है। अपूर्ण आत्मानुभव कारण है, पूर्ण आत्मानुभव कार्य है। हम सबको चाहिये कि आत्मानुभवको सड़कपर चलकर आत्मानुभवरूपी मोक्षपदमें पहुँच जावें, संसारीसे सिद्ध होजावें। देहके भीतर आत्माको परमात्माके समान जानकर उसका ध्यान या अनुभव करना चाहिये! ऐसा ही परमात्मप्रकाशमें कहा है—

जेहउ णिम्मलु णाणमउ, सिद्धिहिं णिवसइ देउ। तेहउ णिवसइ बंभु परु, देहहं मं करि भेउ ॥ २६ ॥

जें दिट्ठें तुट्टंति लहु, कम्मइं पुव्व कियाइं । सोपरु जाणहि जोइया, देहि वसंतु ण काइं ॥ २७ ॥

जित्थु ण इंदिय सुह दुहइं, जित्थु ण मण वावारु । सो अप्पा मुणि जीव तुहुं, अण्णु परि अवहारु ॥ २८ ॥

जीवाजीव म एक्कु करि लक्खण भेए भेउ । जो परु सो परु भणमि मुणि, अप्पा अप्पु अभेउ ॥ ३० ॥

भावार्थ—**जैसा निर्मल ज्ञानमई सिद्ध परमात्मादेव मुक्तिमें विराजते हैं, वैसा ही परब्रह्म स्वरूप परमात्मा अपने शरीरके भीतर विराजमान है । सिद्ध भगवानमें और अपने आत्मामें गुणोंकी अपेक्षा भेद मत कर । जिस परमात्माको ज्ञानानन्द स्वरूप देखनेसे पूर्वमें बांधे कर्म शीघ्र ही क्षय होजाते हैं । हे योगी ! इस परमात्माको अपनी देहमें वसते हुये भी तू क्यों नहीं जानता है ! जिस शुद्ध आत्माके स्वभावमें इंद्रियोंके द्वारा होनेवाले सुख दु:ख नहीं हैं न जहां मनका संकल्प विकल्परूप कोई व्यवहार है। हे जीव ! तू उस आत्माका अनुभव कर और सब विभावोंको त्यागकर । हे जीव ! तू जीव और अजीवको एक मत कर । इन दोनोंके लक्षणमें भेद है इससे दोनों भिन्न २ हैं । जो रागादि पर हैं उनको तू अपनेसे पर है ऐसा मान तथा अपने आत्माको अपने आत्माके द्वारा अनुभवमें लाकर अभेद रूपसे ध्यान कर उसीमें तन्मय होजा ।**

---

(७९) बडवाईकी चाल गाथा १५३६ से १५४६ तक ।

जिनयति जिनय जिनेन्दु जिनुत्तु, जिनयति नन्द नन्द जिन रत्तु ।
जिन चेय नन्दु चेयन जिन मारु, पर्म नन्द तं मुक्ति वियारु ॥ १ ॥

जिनयति जिनय जिनय अनिवारा, जिन अन्मोय सु मुक्ति पियारा ।
तरन जिन दिप्ति दिष्टि विंद रमना, कमल सब्द पिउ सिद्ध सु गमना ॥ २ ॥ (आचरी)

जिनु सहज नन्द सहजोति जिनुत्तु, मुक्ति सुभावे सिद्धि संपत्तु ।
जिनयति नन्द नन्द सम उत्तु, अन्मोय न्यान जिन सिद्धि संपत्तु ॥ जिनयति० ॥३॥

जिनवरु जिनय जिन उत्तु स उत्तु, जिन संसारह सरनि विरत्तु ।
जिनु उवनु लषु लषिय जिन तत्तु, जिन समय संजुत्तु सिद्धि सपत्तु ॥ जिनयति० ॥४॥
जिन परम तत्तु परमप्प स उत्तु, परम समय तं सिद्ध सुभाउ ।
जिन परम लष्य परिनाम उवन्नु, परम निरंजन न्यान विन्यानु ॥ जिनयति० ॥५॥
जिनवर उत्तउ समय संजुत्तु, संसर्गह जिन कम्मु गलन्तु ।
जिनवर दिट्ठउ दिष्टि सु दिष्टु, अमिय रमन त्रं मुक्ति सु इस्टु ॥ जिनयति० ॥६॥
जिन तत्तु अतत्तु विवान संजुत्तु, जिन इस्ट संजोए सिद्धि संपत्तु ।
अन्मोय न्यान जिन जिनय अपारु, जिन विंद सजोए मुक्ति पियारु ॥ जिनयति० ॥७॥
जिन जिनयति जिनतत्तु पदर्थ संजुत्तु, जिन दिव्य दिष्टि जिनदेउ स उत्तु ।
जिन काय वंधु तं अस्ति जिनुत्तु, जिन विंद संजोए मुक्ति पहुत्तु ॥ जिनयति० ॥८॥
जिन काय क्रांति मम कमल संजुत्तु, जिन परिनाम ममल जिन उत्तु ।
जिन सहाव सम समय स उत्तु, जिन विंद संजोए सिद्धि संपत्तु ॥ जिनयति० ॥९॥
जिनु अगदि अंग न्यान विन्यानु, जिन हितमित परिनै समय संजुत्तु ।
जिन पद परम तत्तु पद उत्तु, जिन विंद संजोए मुक्ति पहुत्तु ॥ जिनयति० ॥१०॥
जिन ममल सहावे ममल स उत्तु, जिन तारन तरन विवान संजुत्तु ।
जिन समय ममल अन्मोय स उत्तु, जिन विंद अन्मोए सिद्धि संपत्तु ॥ जिनयति० ॥११॥

अन्वय सहित अर्थ—(जिनयति जिनय जिनेन्दु जिनुत्तु) श्री जिनेन्द्र भगवान वीतराग जयवन्त रहो। उनका स्वरूप जिनेन्द्रने कहा है (जिनयति नन्द नन्द जिन रत्तु) वे जिनेन्द्र कर्म विजयी हैं निजानन्दमें मगन हैं वीत-राग स्वभावमें लीन हैं (जिन चेय नन्द चेयन जिन सारु) वे जिनेन्द्र चिदानन्दमई हैं, अपने चेतन स्वभावमें

आनन्द भोग रहे हैं, वे वीतरागता सहित चेतन स्वरूप हैं (पर्म नंद तं मुक्ति पियारु) वे परम सुखी हैं, उनको मुक्ति ही प्यारी है ॥ १ ॥

(जिनयति जिनय जिनय अनिवारा) वे श्री वीतराग जिन जयवंत है जिनका स्वभाव कभी दूर नहीं होसक्ता (जिन अन्मोय सु मुक्ति पियारा) वे जिन आनन्दमई हैं उनको मुक्ति ही प्यारी है (तरन जिन दिप्ति दिष्ट जिन रमना) वे तरनेवाले जहाज हैं। श्री जिनने आत्माके प्रकाशको पालिया है तथा वे जिन उसी स्वभावमें रमण कर रहे है (कमल सब्द पिउ सिद्ध सुगमना) कमल शब्दको प्रिय अर्थात कमल शब्दसे प्रफुल्लित कमलके समान कहे जानेवाले श्री सिद्ध पदको वे प्राप्त होगये हैं ॥ २ ॥

(जिनु सहज नन्द सहजोति जिनुत्तु) जिनेन्द्र भगवान सहजानन्द स्वरूप हैं, जिनेन्द्र भगवानने सहजानन्द स्वभाव कहा है (मुक्ति सुभावे सिद्धि संपत्तु) यही सहजानन्द स्वरूप मुक्तिका स्वभाव है और यही सिद्धोंकी सम्पत्ति है (जिनयति नन्द नन्द मम उत्तु) जिन्होंने आनन्द स्वरूपकी प्राप्ति की है वे जिनेन्द्र जयवन्त हों (अन्मोय न्यान जिन सिद्धि संपत्त) श्री जिनेन्द्र भगवान आनन्द और ज्ञान स्वरूप मुक्तिसम्पत्तिके धनी हैं ॥३॥

(जिनवरु जिनय जिन उत्तु स उत्तु) श्री जिनेन्द्रने उसीको जिनवर या जिनेन्द्र कहा है (जिन संसारह सरनि विरत्तु) जो संसारके मार्गसे छूट गये हैं (जिन उवनु तषु लषिय जिन तत्त) जिन्होंने जैनके तत्वोंको जानकर दिखलाया है (जिन समय संजुत्तु सिद्धि संपत्तु) जो जिनेन्द्र भगवान शुद्धात्मीक भावके साथ ही सिद्धिको पाते हैं ॥ ४ ॥

(जिन परम तत्तु परमप्पा स उत्तु) जिनको परम तत्व तथा परमात्मा कहा गया है (परम समय तं सिद्धि सुभाउ) वे ही समयसार हैं, वे ही सिद्ध स्वभावमें रमण करते हैं (जिन परम लष्य परिनाम उवन्नु) जिनके भीतर परमात्माको देखनेवाला शुद्ध भाव प्रकाशित है (परम निरंजन न्यान विन्यानु) जो रागादि मल व कर्म मलसे रहित निरञ्जन हैं, जो ज्ञान स्वरूप है ॥ ५ ॥

(जिनवर उत्तउ समय संजुत्तु) श्री जिनेन्द्र भगवानने कहा है जो आत्मज्ञानका धारी है (संसर्गह जिन कम्मु गलनु) वह श्री जिनेन्द्रकी संगतिसे व उनकी एकाग्र भक्तिसे व ध्यानसे कर्मोंका क्षय करता है (जिनवर दिट्ठउ दिष्टि सुदिष्टउ) श्री जिनेन्द्रने ज्ञानदृष्टिसे आत्माके यथार्थ स्वरूपको देखा है (अमिय रमन तं मुक्ति सुइस्टु) जो आनन्दमें रमण करनेवाले हैं व जिनको मुक्ति ही इष्ट है या प्यारी है ॥ ६ ॥

(जिन ततु अतत्त विभान संजुत्तु) श्री जिनेन्द्र भगवान तारण तरण जहाजके समान हैं जिन्होंने सुतत्व और कुतत्वका भेद बताया है (जिन इश्ट संजोए सिद्धि संपत्तु) जो कोई परम प्रिय श्री जिनेन्द्रकी भक्ति करता है वह सिद्धगतिको पा लेता है (अन्मोय न्यान जिन विनय अयारु) श्री जिनेन्द्र भगवानमें अपार ज्ञानानन्द भरा है (जिनविंद संजोए मुक्ति विभारु) जो जिनेन्द्रके स्वरूपका ज्ञान प्राप्त करते हैं उनको मुक्ति ही प्यारी लगती है ॥ ७ ॥

(जिन जिनयति जिनतत्तु पदर्थ संजुत्त श्री जिनेन्द्र भगवान ही सर्व तत्वोंमें व सर्व पदार्थोंमें सार तत्व व सार पदार्थ हैं । (जिन दिव्यं दिष्टि जिनदेव म उत्तु) उनमें अलौकिक आत्माकी दृष्टि है वे ही जिनदेव कहे गए हैं । (जिन काय बंधु तं अस्ति जिनुत) श्री जिनेन्द्र ही छः कायोंमें मुख्य पूजनेयोग्य त्रस कायधारी हैं वे ही सच्चे मित्र हैं, वे ही पांच अस्तिकायोंमें मुख्य अस्तिकाय हैं ऐसा जिनेन्द्रने कहा है । (जिन विंद संजोए मुक्ति पहुत्तु) ऐसे श्री जिनेन्द्रका ज्ञान जो रखता है वह मुक्तिको प्राप्त कर लेता है ॥ ८ ॥

(जिन काय कांतमम कमरु संजुत्तु) श्री जिनेन्द्रका परमोपकारक शरीर बड़ा ही शोभायमान कमलके समान कोमल पद्मासन रूप है । (जिन परिनाम ममल जिन उत्त) श्री जिनेन्द्रके भाव शुद्धोपयोगरूप श्री जिनेन्द्रने कहे हैं । (जिन सहाव सम समय म उत्तु) जिनेन्द्र भगवानका स्वभाव समताभावमय आत्मा रूप है (जिन विंद संजोए सिद्धि संपत्तु) जो श्री जिनेन्द्रका ज्ञान रखता है वह सिद्धिको पा लेता है ॥ ९ ॥

(जिन अंगदि अंग न्यान विन्यान) जिनके आत्म प्रदेशोंमें केवलज्ञान व्याप्त है (जिन हितमित परिनै समय स उत्तु) जो परम हितकारी अपने गुणोंकी मर्यादामें परिणमन करनेवाले आत्मा कहे गए हैं (जिनपद परम तत्तु पद उत्तु) ऐसे श्री जिनेन्द्रका पद ही परम तत्वका पद कहा गया है (जिनविंद सजोए मुक्ति पहुत्त) जो श्री जिनेन्द्रके ज्ञानका अनुभव करता है वह मुक्तिको जाता है ॥ १० ॥

(जिन ममल सहावे ममल स उत्तु) श्री जिनेन्द्र शुद्ध स्वभावमें रमण करने वाले शुद्ध कहे गये हैं (जिन तारन तरन विभान संजुत्तु) वे ही जिनेन्द्र तारणतरण जहाज कहे गए हैं (जिन समय ममल अन्मोय स उत्तु) उनहीको शुद्ध आननन्दमय आत्मा कहा गया है (जिन विंद अन्मोए सिद्धि संपत्त) जो श्री जिनेन्द्रके ज्ञानमें आनन्द अनुभव करता है वही मुक्तिको जाता है ॥ ११ ॥

भावार्थ—इस छन्दमें श्री अरहन्त परमात्माकी गुणावली है। वे अरहन्त परमात्मा परमोपकारी व परम हितोपदेशी हैं। उनके उपदेशसे अनेक भव्यजीव मोक्षमार्गको पाकर आत्मकल्याण करते हैं। उनमें व सिद्ध परमात्मामें केवल शरीर रहने मात्रका अन्तर है। अरहन्त परमौदारिक शरीरमें विराजमान हैं। चार अघातीय कर्म जली हुई रस्सीके समान रह गए हैं। आत्मा श्री अरहन्त भगवानका परम शुद्ध होगया है, वे वीतराग हैं। केवलज्ञान-केवलदर्शनके धारी हैं, आनन्द स्वरूप हैं, सर्व रागादि विकारोंसे रहित हैं। उनका आत्मा परमात्मा कहलाता है। जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, मोक्ष इन सात तत्वोंमें व पुण्य पाप सहित सात पदार्थोंमें व जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल छः द्रव्योंमें व काल रहित पांच अस्तिकायोंमें व सर्व त्रसोंमें मुख्य शुद्ध आत्मतत्व, शुद्ध आत्म पदार्थ, शुद्ध आत्म द्रव्य, शुद्ध आत्मकाय, व शुद्ध त्रसकाय धारी श्री अरहन्त परमात्मा ही हैं। इनकी भक्ति करनेसे व इनके स्वरूपका ध्यान करनेसे परिणाम विकार रहित शुद्ध होते हैं। सम्यग्दृष्टी अरहन्तकी भक्तिसे उत्पत्ति करता हुआ साधु पदधारी है। क्षपकश्रेणी चढ़कर केवलज्ञानी होजाता है और फिर सिद्ध होजाता है।

श्री परमात्मप्रकाशमें अरहन्तका स्वरूप बताया है—

सयल वियप्पहं तुट्टाइं, सिवपिय मग्गि वसंतु। कम्म चउक्कइं विलयगइ, अप्पा होइ अरहंतु ॥ ३२३ ॥

केवल णाणहं अणवरउ, लोयालोय मुणंतु। णियमें परमाणंद मउ, अप्पा होइ अरहन्तु ॥ ३२४ ॥

जो जिणु केवलणाण मउ परमाणंद सहाउ। सो परमप्पउ परमपउ, सो जिय अप्प सहाउ ॥ ३२५ ॥

भावार्थ—मोक्षमार्गका साधन करते हुए जब सब संकल्प विकल्प टूट जाते हैं, निर्विकल्प समाधि जग जाती है तब चार घातीय कर्मोंके क्षयसे आत्मा अरहन्त होजाता है। केवलज्ञानसे जो निरन्तर लोकालोक जानते हैं, व जो नियमसे परमानन्दमई हैं वही आत्मा अरहन्त हैं। जो जिन केवलज्ञानमई हैं, परमानन्द स्वभावके धारी हैं वे ही संसारियोंसे उत्कृष्ट परमपदधारी परमात्मा भगवान अरहन्त हैं तथा ऐसा ही आत्माका स्वभाव है। जो स्वभावको प्रकाश कर चुके हैं वे ही अरहन्त हैं।

(७६) फुटकर गाथा १५४७ से १५६७ तक ।

उदिस्ट द्दस्टि दिस्ट, दिस्टी बंधान विक्त दिलयं च ।
उ.दिस्टि नन्त नन्तं, दिस्टि मोहंध षिपक रूवेन ॥ १ ॥
संसार अनिस्ट सुभावं, पर्जय भय विलय न्यान विन्यानं ।
नयनं न्यान सु रमनं, तारन अन्मोय सिद्धि सम्पत्तु ॥ २ ॥
उवन झियार हयारं, सहयारं हिययार उवन विन्यान ।
तरन विवान अन्मोयं, न्यानहं सुयं सहज निर्वानं ॥ ३ ॥
हिययार उवन सहयारं, नन्द आनन्द तत्तहं ममल ।
भय षिपनिक अमिय रस रवनं, अन्मोय तरन न्यान निर्वान ॥ ४ ॥
दिपि दिस्टि उवन हिययारं, दिपि दिष्टि सहयार लंकृतं ममलं ।
भय षिपिय अमिय रस रवनं, अन्मोय तरन सिद्धि सम्पत्तं ॥ ५ ॥
जिन असम समय सुइ उवनं, उवनं हिययार सस्वत जुत्तं ।
तित्थयर अर्थ आयरनं, सहिय सम समय सिद्धि सम्पत्तं ॥ ६ ॥
गम अगम समय सुइ उवनं, सहिय गम अगम भव्य संजुत्तं ।
गम अगम न्यान सुइ उवनं, साहिय सुइ समयं सिद्धि सम्पत्त ॥ ७ ॥
तं तारन तरन अन्मोय, भय विलयं अभय भव्वु उव उवनं ।
अन्मोय तरन सुइ समयं, दिपि दिस्टि सब्द पिउ सिद्धि सम्पत्तं ॥ ८ ॥
आयरन कोड सुइ उवनं, भय रहियं भव्य अभय संजुत्तं ।
सम समय साह भवयानं, रंज रमन नन्द सिद्धि सम्पत्तं ॥ ९ ॥

तारन तरन सु उवनं, उवनं सुइ नन्द कोड सुइ उवनं ।
अन्यान विरोह विनन्दं, सुय सुवन रंजु विनन्द विलयंती ॥ १० ॥
अवयास उवन उव उवन, उवन अन्मोय तारनं तरनं ।
सुवे सुवन रंज जिन रमनं, कलनं अन्मोय सिद्धि सम्पत्तं ॥ ११ ॥
किंतिय दिप्ति उवनं, केय स्थान दिपि दिपिय ।
के पिय दिप्ति धन बिंभ्रो, के पि स्थान न्यान पीयं च ॥ १२ ॥
किं तय दिष्टि उवनं, केय स्थान दिष्टि इष्टं च ।
के दिस्टि इस्ट सुइ पीओ, के स्थान दिष्टि इष्टि उवनं च ॥ १३ ॥
दिप्ति दिस्टि संजोय, सब्द सहावेन केय उप्पत्ती ।
के सब्द इष्ट उववन्नं, के संजोय मुक्ति गमनं च ॥ १४ ॥
दिप्ति दिष्टि सुइ सब्दं, पीओ सभाव इस्ट उवनं च ।
के अमिय रमन विष विलयं, के सहकार मुक्ति गमनं च ॥ १५ ॥
के रंज रमन आनन्द, के अर्क सु अर्क अर्क जिन अर्क ।
के अर्क विंद सुइ सुवनं, के अर्क सि अर्क मुक्ति गमनं च ॥ १६ ॥
के अर्क गम्य जिन गमनं, के अर्क अगम्य नन्त जिन नाहं ।
के अर्क सुयं सुइ ममलं, के अर्क उवन मुक्ति गमनं च ॥ १७ ॥
जय उवन धुवं उव उवन सुयं, तं अर्क विंद जिननाथ जयं ।
उव उवन समं उव समय सुयं, सिद्ध समय उवन सुइ सिद्धि जयं ॥ १८ ॥

उव उवन जयं उव उवन समं, उव उवन सु नन्तानन्त रयं ।
उव उवन सुरं उत्पन्न ग्रहं, उव उवन सलष्य अलष्य पयं ॥ १९ ॥
उव उवन पयं दिपि दिस्टि रयं, उत्पन्न सब्द पिउ नन्त सुयं ।
उत्पन्न साहि उत्पन्न ग्रहं उव उवन अनन्तानन्त सुहं ॥ २० ॥
जं उवन उवन उत्पन्न उवनं, तं दिष्टि सब्द पिउ उवन उवं ।
उव उवन सुयं उव समय समं, सिद्ध समय उवन सुइ सिद्धि जयं ॥ २१ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उद्दिस्ट इस्टि दिस्टं) अब मैंने उस इष्ट प्रिय वस्तुको देख लिया है जिसके लिये मेरा उद्देश्य था, जिसके लिये मेरी चाह थी, अर्थात् मैं शुद्ध स्वरूपका अनुभव चाहता था। सो मुझे सम्यग्दर्शनके लाभसे शुद्धात्माका दर्शन या अनुभव होगया है (दिस्टी बंधान विक्त विलयं च) आत्माका दर्शन होते ही मानो मेरे सर्व प्रगट बन्धन विला गये हैं अर्थात् मैंने शरीर व कर्मोंके बन्धनोंको पर अनुभव किया है, निश्चयनयसे मुझे मेरेमें यह बन्धन दिखते ही नहीं, मैं अपनेको बन्ध मुक्त अनुभव कर रहा हूं (उदिस्टि नन्त नन्त) अनन्त गुणधारी आत्माकी रुचि होनेहीसे (दिष्ट मोहं च षिपकत्वेन) दर्शनमोहनीय कर्मका अन्धकार दूर होगया है ॥ १ ॥

(संसार अनिष्ट सुभावं) मुझे यह प्रतीत होगया है कि चार गतिरूप संसार या द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव रूप पंच परावर्तन रूप संसार यह आत्माके लिये हितकर नहीं है (पर्जय भय विलय न्यान विन्यानं) आत्मज्ञानके उदयसे मेरा शरीर सम्बन्धी सर्व भय दूर होगया है। रोगका, मरणका, इष्ट वियोगका, अनिष्ट संयोगका ऐसा मेरा सर्व भय मिट गया है। मैं निर्भय व अमर हूं यह प्रतीति होगई है (नवनं न्यान सु रमनं) मेरी दृष्टि आत्मज्ञानमें रमण कर रही है (तारन अन्मोय सिद्ध संपत्तु) संसारसे पार उतारनेवाले इस रत्नत्रय मई धर्ममें आनन्द लाभ करनेसे ही सिद्ध गति प्राप्त होजाती है ॥ २ ॥

(उवय हिययार सहयारं) यह सम्यग्दर्शनका उदय हितकारी है व सहकारी है (सहयारं हिययार उवन विन्यानं) इसकी सहायतासे ही परम हितकारी सम्यग्ज्ञानका उदय हुआ है (तरन विवान अन्मोय) तारणतरण

परमात्माके स्वभावमें आनन्द लेनेसे ही (न्यानह सुयं सहज निर्वानं) ज्ञानी स्वयं सहजमें निर्वाणका लाभ कर लेता है ॥ ३ ॥

(हिययार उवन सहयारं) यह सम्यग्दर्शनका उदय हितकारी है व सहकारी है (नंद आनंद तचहं ममलं) इसीके प्रभावसे शुद्ध आत्मतत्वके आनन्दमें मगनता प्राप्त होती है (भय विपनिक अमिय रसरवनं) सर्व भय मिट जाता है, आनन्दामृत-रसका तीव्र स्वाद आता है (अन्मोय तरन न्यान निर्वानं) इस संसारसे तरनेवाले परमात्मामें ज्ञान व आनन्द होनेसे ही निर्वाण प्राप्त होजाता है ॥ ४ ॥

(दिपि दिष्टि उवन हियया) हितकारी सम्यग्दर्शनकी दीप्तिका प्रकाश हुआ है (दिपि दिष्टि सहयार लंकृत ममलं) इस प्रकाशमान सहकारी आत्मदृष्टिसे शोभायमान आत्मा निर्मल दीखता है (भय विपिय अमियरस रवनं) इससे सर्व भय दूर होगया है, आनन्दामृत रसका तेज स्वाद आरहा है (अन्मोय तरन सिद्धि संपत्तं) परमात्माके स्वभावमें आनन्द आनेसे ही सिद्धगतिका लाभ होता है ॥ ५ ॥

(जिन असम ममय सुई उवनं) अनुपम वीतराग स्वरूप आत्माका स्वयं प्रकाश हुआ है (उवनं हिययार सस्वनं जुत) यह आत्माका प्रकाश हितकारी है व सदा रहनेवाला है (तित्थयर अर्थ आवरनं) तीर्थंकर भगवान भी इसी शुद्ध आत्म पदार्थका आचरण करते हैं इसीका अनुभव करते हैं (साहिय सम समय सिद्धि संपत्तं) जो समभाव सहित आत्माका साधन करता है वह सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ ६ ॥

(गम अगम समय सुइ उवनं) मन व इंद्रियोंसे अगोचर आत्माका अनुभव होना सो ही आत्माका प्रकाश है (साहिय गम अगम भव्व संजुत्तं) भव्यजीव ही इस अगम्य आत्माके अनुभवका साधन करता है (गम अगम न्यान सुइ उवनं) इंद्रियातीत केवलज्ञानका प्राप्त होना ही आत्माका प्रकाश है (साहिय सुइ समय सिद्धि संपत्तं) इसी स्वानुभवके साधनसे आत्मा सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ ७ ॥

(तं तारन तरन अन्मोयं) वह अरहन्तपद तारणतरण है व आनन्दरूप है (भव विलयं अभय भव्वु उव उवनं) ऐसा पद भव्यजीवको ही निर्भय होनेपर प्राप्त होता है, जब उसका सर्व भय विला जाता है (अन्मोय तरन सुइ समयं) यह आनन्दमई परमात्मा ही अरहन्तका आत्मा है (दिपि दिष्टि सब्द पिउ सिद्धि संपत्तं) सम्यग्दृष्टी जीव ॐ आदि प्रिय शब्दोंके द्वारा ध्यानका अभ्यास करके सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ ८ ॥

(आवरन कोड सुइ उवनं) चारित्रका एकत्र होना सो ही यथाख्यात चारित्रका उदय है या वीतराग-

भावका प्रकाश है (भयरहियं भव भमव संजुत्तं) इसी चारित्रके लाभसे सर्व भय मिट जाता है, भव्य जीवको निर्भय पदका लाभ होजाता है (सम न्मय साह भवयानं) भव्य जीवोंका साधन समताभाव सहित आत्माका अनुभव है (रंज रमन नंद सिद्ध संपत्तं) आनन्दमें रमण करनेहीसे सिद्धगतिका लाभ होता है ॥ ९ ॥

(तारन तरन सु उवनं) तारण तरण अरहन्त आत्माका उदय हुआ है (उवनं सुइ नंद कोड सुइ उवनं) साथमें अनन्त ज्ञान व सुखका भी उदय हुआ है (अन्यान विरोह विनन्दं) अज्ञान विरोध व दुःख सब मिट गया है, ज्ञान, वीतरागता, व परम सुख पैदा होगया है (सुव सुवन रंजु विनन्द विलयंती) निजानन्दमें परिणमन करनेसे सर्व आकुलता मिट जाती है ॥ १० ॥

(अवयास उवन उव उवनं) अनन्त ज्ञानका प्रकाश होगया है (उवनं अन्मोय तारनं तरनं) तब ही तारण तरण आनन्द स्वरूप आत्माका उदय हुआ है (सुव सुवन रंजु जिन रमनं) तब श्री जिनेन्द्र अपने आनन्दमें आप ही परिणमन करते हुए रमण कर रहे हैं (कलनं अन्मोय सिद्ध संपत्त) परमानन्दका अनुभव होना ही सिद्धपदका लाभ है ॥ ११ ॥

(किं तिय दिप्त उवनं) क्या रत्नत्रयमय प्रकाश झलक गया है ? (केय स्थान केय दिपि दिपियं) इसके झलकनेसे कितने ही स्थान ज्ञानके प्रकाश होगए हैं अर्थात् ज्ञान निर्मल होता जाता है। इसीसे केवलज्ञान प्रगट होगा (केपिय दिप्ति घन पिओ) कितने ही आत्माके स्थान ज्ञान-समूहको पी रहे हैं अर्थात् ज्ञानका बहुत अधिक क्षयोपशम हुआ है (केपि स्थान न्यान पीयं) अर्थात् कितने ही स्थान ज्ञानके प्रगट हैं ॥ १२ ॥

(किंतिय दिष्टि उवनं) क्या तीनों रत्नत्रयमई दृष्टियोंका उदय होगया है (केयि स्थान दिष्टि इष्टं च) कितने ही स्थान आत्माके भीतर परम प्रिय सम्यग्दर्शनसे चमक रहे हैं अर्थात् सम्यग्दर्शन गाढ होरहा है, परभाव गाढ़ होनेवाला है (के दिस्टि इस्टि सुइ पीओ) कितने ही स्थान आत्मदृष्टि इष्ट आनन्द रसको पी रही है अर्थात् वीतराग सुखका अंश प्रगट है (के स्थान दिष्टि इष्टि उवनं च) कितने ही स्थान आत्मज्ञान व सुखके प्रगट हैं, अनन्ते स्थान प्रगट होंगे ॥ १३ ॥

(दिप्ति दिस्टि संजोय) सम्यग्दर्शन तथा सम्यग्ज्ञानका संयोग है (सब्द सहावेन केय उपपत्ती) ॐ श्रां ह्रीं मन्त्रोंकी सहायतासे आत्माकी दृष्टि बढती जाती है (के सब्द इष्ट उववन्नं) कितने ही शब्दोंके मननसे प्रिय

आत्मानुभवका लाभ होता है (के संजोय मुक्ति गमनं च) सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्रके पूर्ण संयोगसे आत्मा मुक्तिको गमन करता है ॥ १४ ॥

(दिप्ति दिष्टि सुइ सव्दं) शब्द वे ही योग्य हैं जिनसे आत्मज्ञानका प्रकाश हो (पीओ समाव इष्ट उवनं च) जिससे अपने आत्माका इष्ट प्यारा स्वभाव आत्मानुभव प्रगट होजावे (के अमिय रमन विष विलयं) या जिससे आनन्दामृतमें रमन होजावे तथा विषयोंका विष दूर होजावे (के सहकार मुक्ति गमनं च) जिसकी सहायतासे आत्मा मोक्षमें चला जाता है ॥ १५ ॥

(के रंज रमन आनंदं) आत्माके आनन्दमें मगन होना है (के अर्क सु अर्क अर्क जिन अर्क) सोही आत्मारूपी सूर्यका प्रकाश है वे ही यथार्थ सूर्य समान है, वे ही श्री जिनेन्द्र सूर्य परम प्रकाशमान है (के अर्क विंद सुइ सुवनं) सूर्य समान आत्माका अपने प्रकाशमें आनन्द लाभ करना सो ही आपका आपमें परिणमन है (के अर्कसि अर्क मुक्ति गमनं च) यही सूर्य समान प्रकाशमान आत्मा मुक्तिको चला जाता है ॥ १६ ॥

(के अर्क गम्य जिन गमनं) जो ज्ञान सूर्यको प्रगट कर लेते हैं, वे ही जिनपदको पालेते हैं (के अर्क अगम्य अनन्त जिननाहं) वे ही सूर्य अनन्त गुणधारी आत्मा जिनेन्द्र हैं (के अर्क सुयं सुइ ममलं) वे ही निर्मल कर्म मल रहित सूर्य हैं (के अर्क उवन मुक्ति गमनं च) जब केवलज्ञान सूर्यका प्रकाश होजाता है तब आत्म-मोक्षको चला जाता है ॥ १७ ॥

(त्रिय उवन धुवं उव उवन सुयं) स्वयं प्रकाशमान ध्रुव अविनाशी परमात्माकी जय हो (तं अर्क विंद जिननाथ जयं) वे ही ज्ञान सूर्य है, वे ही जिनेन्द्र हैं उनकी जय हो (उव उवन समं उव समय सुयं) वहीं साम्यभाव प्रकाशित है, वहां आत्मा स्वयं प्रकाशमान है (सिद्ध समय उवन सुइ सिद्धि जयं) जहां आत्मा अपने स्वभावमें प्रगट होजाता है वह सिद्धगतिको विजय कर लेता है ॥ १८ ॥

(उव उवन जयं उव उवन समं) जहां समभाव झलक रहा है, उस प्रकाशमान आत्माकी जय हो (उव उवन सु नन्तानन्त यं) वहीं अनन्त ज्ञानका प्रकाश है (उव उवन सुहं उत्पन्न ग्रहं) वहींपर अनन्त सुख प्रगट है, वहीं सूर्य ग्रहके समान आत्माका प्रकाश है (उव उवन सलष्य अलष्य पयं) वहीं इंद्रियातीत आत्माका अनुभव करने योग्य पद प्रगट है ॥ १९ ॥

(उव उवन पयं दिप्ति दिष्टि यं) जहां आत्माका पद ऐसा प्रकाशित है जिसमें ज्ञान दृष्टि झलक रही

हो (उत्पन्न दर्स पिउ नन्त सुयं) व जिस पदसे प्रिय दिव्यध्वनिका स्वयं प्रकाश होता है जिसमें अनन्तज्ञान भरा है (उत न्न साह उत्पन्न महं) ऐसा परमात्माका पद ही साधने योग्य पद है सो प्रगट होगया है मानो ज्ञान सूर्यका उदय हुआ है (उव उवन अनंन नंत सुइं) साथमें अनन्तसुख प्रगट है ॥ २० ॥

(जं उवन उवन उवन उवनं) जो आत्माका ज्ञान झलकते २ केवलज्ञान होगया है (तं दिस्टि सहर पिउ उवन उवं) उसी ही प्रकाशके होनेपर दिव्यध्वनिका उदय होता है (उव उवन सुयं उव उवन सवं) उसी अरहन्त पदमें स्वयं झलकते २ पूर्ण समभाव प्रगट है (सिद्ध समय उवन सुइ सिद्धि जयं) ऐसा ही आत्मा स्वयं प्रकाश करता है तथा सिद्ध भावको विजय कर लेता है ॥ २१ ॥

भावार्थ—इसमें सम्यग्दर्शनका महात्म्य वर्णन किया है। सम्यग्दर्शनके प्रगट होनेपर आत्माका साक्षात्कार या अनुभव पैदा होता है तब ही ज्ञान सम्यग्ज्ञान व चारित्र सम्यक्चारित्र कहलाता है। सम्यक्तके जगते ही ज्ञानीका सर्व संसारका भय मिट जाता है वह अपनेको जीवन्मुक्त ही अनुभव करता है। उसको निश्चय होजाता है कि अब मैं अवश्य मुक्त होजाऊँगा। सम्यग्दर्शनके प्रगट होनेपर आत्मीक सुखका भी झलकाव होजाता है, मुक्ति पथमें सम्यग्दर्शन परमोपकारी है। यही सच्चा भवसे पार करनेवाला है। सम्यग्दर्शनके प्रतापसे ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्मका जितना क्षयोपशम होता है उनका ज्ञानदर्शन गुण बढ़ता जाता है व जितना अन्तराय कर्मका क्षयोपशम होता है उतना आत्मबल बढ़ता जाता है। इसीके प्रतापसे यह भव्यजीव गुणस्थानोंके द्वारा चढ़कर चार घातीय कर्मोंसे रहित हो केवलज्ञानी होजाते हैं, तब अरहन्त भगवान अनन्त सुखमें मग्न रहते हैं, उनकी दिव्यध्वनिसे भव्य जीवोंको मोक्षमार्गका उपदेश मिलता है। वे केवली सूर्यके समान वीतरागता सहित स्व-पर प्रकाशक हैं, वे शीघ्र ही मुक्त हो जाते हैं। अतएव यदि हमको निर्वाणका भाव है तो हमको उचित है कि हम जिसतरह होसके सम्यग्दर्शनका लाभ प्राप्त करें। सम्यक्त परम उपकारी है।

सम्यग्दृष्टी अपने आत्माको इसतरह जानता है जैसा परमात्मप्रकाशमें कहा है—

एहु जो अप्पा सो परमप्पा, कम्म विसेसें जायउ जप्पा। जामइं जाणइ अप्पें अप्पा, तामइं सो जी देउ परमप्पा ॥ ३०२ ॥

जो परमप्पा णाणमउ, सो हउ देउ अणंतु। जो हउ सो परमप्पु परू, एहउ भावि णिभंतु ॥ ३०३ ॥

णिम्मल फलिहहं जेम जिय, भिण्णउ परकिय भाउ। अप्प सहावहं तेम मुणि, सयलुवि कम्म सहाउ ॥ ३०४ ॥

द्वि० भा० ॥२०१॥

भावार्थ—यही आत्मा निश्चय नयसे परमात्मा है। व्यवहार नयसे अनादि कर्मोंके बन्धनके कारण यह पराधीन होकर दूसरोंकी जाप करता है परन्तु जब यह निश्चयसे अपने आत्माको जाने तो यही परमात्मा देव है। जो परमात्मा ज्ञान स्वरूप है वही मैं अविनाशी देव हूं। जो मैं हूं सो ही उत्कृष्ट परमात्मा है। इसतरह तू निःशङ्क होकर भावना कर। हे जीव! जैसे निर्मल स्फटिकमणिसे उसके नीचे लगे सब डाक भिन्न हैं वैसे ही इस आत्माके स्वभावसे सर्व ही शुभ व अशुभ कर्मके स्वभाव भिन्न है ऐसा मान।

(७७) चित नौटा फूलना गाथा १५६८ से १५८७ तक।

जिन उवएसिउ न्यान मौ, अर्थति अथह जोइ।
यहु पंच दिप्ति परमेष्टि मउ हो, है न्यान पंच संजुत्तु ॥१॥
चित नौटा मेरे मन रहियोरे, यह उपजिउ है ममल सुभाउ।
चित नौटा मेरे मन रहियोरे, यह भय षिपनिकु है भव्वु ॥ चित नौटा० ॥
सवगह जोति कराइ। चित०। पद विदह केवल न्यानु। चित० ॥
मैं जानी अलष निरजन देउ। चित० ॥ २ ॥ (आचरी) ॥ २ ॥
यह पंचाचार सु चारु न मौ हो, सम्पत्तह सहियो उत्तु।
यह न्यान दिष्टि सम चित्त मौ हो, है न्यानी य न्यान स उत्तु ॥ चित० ॥ ३ ॥
यह लषियो लष्य अलष्य रुई हो, है लोयालोय प्रमानु।
यह अप्प सहावे परिनवै हो, है सुद्ध सचे यन सारू ॥ चित० ॥ ४ ॥
यह ममल अन्मोयह पूरियो है, परमप्पय ममल सुभाउ।
यह परमानन्द परमेस्टि मौहो, है मुक्ति रमनि सुभाव ॥ चित० ॥ ५ ॥

यह अंगदिगंतह न्यान मउ हो, सर्वंगह ममल सुभाउ ।
यह न्यान अन्मोयह नृत मऊ हो, है न्यानी न्यान स उत्तु ॥ चित० ॥ ६ ॥
यह दर्सन दर्सिउ चष्य मौहो, अदसन गलिय सुभाव ।
यह न्यान दिस्टि परिनाम मउ हो, अन्यान दिस्टि विलगन्तु ॥ चित० ॥ ७ ॥
अचष्य सु दर्सन दर्सियउ रे, दर्सिउ है ममल सहाउ ।
अन्यान सुहाउ न ऊवजे हो, यह न्यान सहाउ अन्मोय ॥ चित० ॥ ८ ॥
यह अवधिहि ऊर्ध अंकुरेउ हो, बीर्ज है नन्तानन्तु ।
यह न्यान दिस्टि नित्य सहियोरे, अन्यान अनिष्ट गलंतु ॥ चित० ॥ ९ ॥
यह केवल ममल सहाउ मउ हो, है नन्तानन्त सुदिष्ट ।
जं भय विनास तं सहियोरे, सो मुक्ति रमनि संजुत्तु ॥ चित० ॥ १० ॥
निसंक संक रहियो मुनहुरे, यह भय षिपनिकु है भव्वु ।
अन्यान दिस्टि विलयन्त सुईरे, है कम्मु कलंक विमुक्क ॥ चित० ॥ ११ ॥
यह मति कमलासन दिस्टि मउरे, है कमल सहाउ संजुत्तु ।
श्रींकारह अवहि उवन पौ हो, है ऊध सुकीय सुभाउ ॥ चित० ॥ १२ ॥
हिजु विपुलह सहियो विवान पऊरे, है मन पज्जै संजुत्तु ।
पद विंदह केवल ममल मऊरे, है परम तत्तु दसतु ॥ चित० ॥ १३ ॥
यह न्यान अन्मोयह निपजैरे, जिन तारन तरन समर्थु ।
सो कम्मु कलंकु विमुक्कु सुइरे, है सिवपुरि ममल रमंतु ॥ चित० ॥ १४ ॥

जनरंजन रागु विवित्त मऊरे, कलरंजनु दोष गलन्तु ।
मनरंजन गारौ सु विलिऊरे, यह मुक्ति पंथ दसतु ॥ चित० ॥ १५ ॥
दर्सन मोहंध सु दिष्टि गलिउरे, आवर्न न्यान विलयन्तु ।
दसन आवन न ऊवजेरे, मोह आवरन विमुक्कु ॥ चित० ॥ १६ ॥
यह न्यानंतरु न हु दिट्ठि सुइरे, है न्यान विन्यान संजुत्तु ।
यह परम तत्तु दरसंतु सुइरे, यह परम निरञ्जनु उत्तु ॥ चित० ॥ १७ ॥
यह उवनौ दाता देउ सुइरे, यह पर्म उवनु दसंतु ।
यह परम देउ स भावियोरे, हे परम तत्तु सम उत्तु ॥ चित० ॥ १८ ॥
यह न्यान अन्मोयह ममल मउ हो, है तारन तरन समर्थु ।
यह ममलह ममल महाउ मउ हो, है भय षिपनिक स उत्तु ॥ चित० ॥ १९ ॥
यह निर्मल ममल स उत्तु सुइरे, है संक मल्य विलयन्तु ।
यह ममल न्यान केवल सहिउरे, यह मुक्ति रमनि विलसन्तु ॥ चित- ॥ २० ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जिन उवएसिउ न्यान मौ अर्थति अर्थह जोइ) **श्री जिनेन्द्रने रत्नत्रयमई ज्ञानस्वरूप आत्मपदार्थका उपदेश किया है** (यहु पच दिप्ति परमेष्ठी मउ हो) **यही आत्माका स्वरूप पांचों ज्ञानोंके धारी परमेष्ठी पदोंका प्रकाशक है। अर्थात् आत्मानुभव करनेसे मतिज्ञानादि पांचों ज्ञान प्रगट होते हैं। आचार्य, उपाध्याय साधुके चार ज्ञान तक व अरहन्त व सिद्धके केवलज्ञान होता है** (न्यान च मंजुत्तए) **आत्माके सहज ज्ञानमें पांचों ज्ञान गर्भित हैं ॥ १ ॥**

(चित नौटा मेरे मन रहियो रे) **हे चञ्चल भ्रमणकारी मन ! अब तू मेरे वशमें रह** (यह उपजिउ है ममल सुभाउ) **मेरे भीतर आत्माका शुद्ध भाव झलक गया है** (भय षिपनिक है भव्वु) **हे भव्य ! यह आत्माका**

शुद्ध स्वभाव मेरे सब भयोंको दूर करनेवाला है (सर्वंगह जोति कम्ई) इस शुद्ध स्वभावके अनुभवसे मेरे सर्व अङ्गमें प्रकाश होरहा है (पदविंदह केवल न्यानु) तथा केवलज्ञान पद्का अनुभव होरहा है (मैं जानी अलष निरंजन देउ) मैंने अब अतीन्द्रिय व कर्ममल रहित निरञ्जन परमात्मा देवको जान लिया है ॥ २ ॥

(यह पंचाचार सुचारु न मौहो सम्मत्तह सहियो उत्तु) मैं सम्यग्दर्शन सहित दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपाचार, वीर्याचार इन सुन्दर पांचों आचारोंको नमन करता हूं जिनको आचार्य परमेष्ठी स्वयं पालते हैं व दूसरे साधुओंसे पलवाते हैं (यह न्यान दिष्टि सम चित्त मौहो) यह पांचों ही आचार ज्ञानदृष्टिके द्वारा विचारनेसे चित्तको समताभावमें रखनेवाले हैं (है न्यानी य न्यान म उत्तु) इन्हींको तत्वज्ञानियोंने एक आत्मज्ञानके नामसे कहा है ॥ ३ ॥

(यह कषियो लष्य अलष्य रुई हो) मैंने इंद्रियातीत आत्मारूपी लक्ष्यको रूचिपूर्वक देख लिया है (है लोय लोय प्रम नु) यह आत्मा स्वभावसे ज्ञानकी अपेक्षा लोक अलोकके प्रमाण है अर्थात् आत्माके सहज ज्ञानमें लोकालोक सब झलकते हैं। ऐसे आत्माका मैंने श्रद्धापूर्वक अनुभव किया है (यह अन्य सहावे परिनवे हो) यह आत्मा अपने स्वभावमें परिणमन कर रहा है (है सुद्ध स चेयन सारु) यह शुद्ध चेतनस्वरूप सार पदार्थ है ॥ ४ ॥

(यह ममल अन्मोयह पूरियो है) यह शुद्ध आत्मा आनन्द गुणसे पूर्ण है (परमप्पय ममल सुभाउ) यह शुद्ध स्वभावधारी परमात्मा है (यह परमानंद परमेष्टि मौ हो) यही परमानन्दमई है, यह परम पदमें तिष्ठनेवाला परमेष्ठी है (है मुक्ति रमनि सुभाउ) इसका स्वभाव ही मुक्तिमें रमणशील है—यह सदा निश्चयसे मुक्ति स्वरूप है ॥ ५ ॥

(यह अंग दिगंतह न्यान मउ हो) यह चारों तरफ अपने प्रदेशोंमें ज्ञान स्वरूप है (सर्वंगह ममल सुभाउ) यह सर्वांग शुद्ध स्वभावका धारी है (यह न्यान अन्मोयह नन्त मउ हो) यह ज्ञानानन्दमई सत्य स्वभावका धारी है (है न्यानी न्यान स उत्तु) इसीको ज्ञानी व ज्ञान स्वरूप कहा है ॥ ६ ॥

(यह दर्सन दर्सिउ चष्य मउ हो) इसने ज्ञान चक्षुके द्वारा आत्माका दर्शन कर लिया है (अदर्सन गलिय सुभाव) मिथ्यादर्शनका स्वभाव गल गया है (यह न्यान दिष्टि परिनाम मउ हो) यह ज्ञानदृष्टिसे आपमें परिणमन कर रहा है (अन्यान दिष्टि विलयंतु) इसकी मिथ्याज्ञानकी दृष्टि विला गई है ॥ ७ ॥

(अचष्य सु दर्सन दर्सिओरे) इसने इंद्रियरहित अतीन्द्रिय दृष्टिसे आत्माका भलेप्रकार दर्शन किया है (दर्सिउ है ममल सुभाउ) यह देखा कि यह आत्मा शुद्ध स्वभावका धारी है (अन्यान महाउ न ऊपजे हो) इसके प्रकाशके होते हुए अज्ञानके स्वभावका या रागद्वेषका विभाव नहीं पैदा होता है (यह न्यान सहाव अन्मोय) यह तो स्वभावसे ज्ञान व आनन्दमई है ॥ ८ ॥

(यह अवधिहि ऊर्ध अंकुरेउ हो) इसी आत्माके ज्ञान स्वभावमें सर्वावधि नामके उत्कृष्ट अवधिज्ञानके पैदा होनेका अंकुर है। अर्थात् ज्ञान स्वभावमें रमण करनेसे उत्कृष्ट अवधिज्ञान उपज आता है (वीर्ज है अनंतानंत) इस आत्मज्ञानमें अनन्त बल है, केवलज्ञान भी इसीमें झलकता है (यह न्यान दृष्टि नित्य सहियोरे) यह सदा ज्ञान दृष्टिका धारी है (अन्यान अनिष्ट गलंतु) इस आत्मज्ञानमें रमण करनेसे सर्व दुःखदाई अज्ञान गल जाता है ॥ ९ ॥

यह केवल ममल सहाव मउ रे) यह आत्माका सहज ज्ञान निर्मल केवलज्ञानके स्वभावको रखनेवाला है (है अनंतानंत सुदिष्ट) जो केवलज्ञान अनन्तानन्त पदार्थोंके स्वभावको भलेप्रकार देखनेवाला है (जं भाव विनाम तं सहियो रे) जो सर्व भयोंको दूर करनेवाला है इसका ज्ञान इसी आत्मज्ञानके अनुभवसे होता है (मो मुक्ति रमनि मंजुत्तु यह आत्मज्ञान मुक्तिके स्वभावमें रमण करनेवाला है ॥ १० ॥

(निसंक सक गहियो सुनह रे) हे भाई ! इस आत्माके ज्ञान स्वभावका मनन निःशङ्क होकर सब शङ्का या भय दूर करके करो (यह भय पिपनिकु है भव्वु) हे भव्य! यह आत्मज्ञान सर्व भयोंको क्षय करनेवाला है (अन्यान दिष्टि विलयंन सुई रे) इसके प्रभावसे सर्व अज्ञानकी दृष्टि विला जाती है (है कम्म कलंक विमुक्का) व सब कर्म कलंक धुल जाता है ॥ ११ ॥

(यह मति कमलासन दिप्टि मउ रे) यह आत्मज्ञान मुक्तिरूपी लक्ष्मीको देखनेवाला है (रे कमल सहाउ मंजुत्तु) इसके भीतर प्रफुल्लित कमलके समान आत्माका स्वभाव झलक रहा है (श्रींकारह अवहि उवन पौ हो) परम ऐश्वर्य सहित अवधिज्ञान भी इसीके द्वारा पैदा होता है (है ऊर्ध सुक्रीय सुभाउ) वहां श्रेष्ठ आत्माका स्वभाव ही अनुभवमें आरहा है ॥ १२ ॥

(रिजु विपुरह सहियो विशय मऊ रे है मन पज्जव मंजुत्तु) इस जहाजके समान आत्मज्ञानमें ऐसी शक्ति है कि इसके द्वारा ऋजुमति तथा विपुलमति मनःपर्यय ज्ञानकी प्राप्ति होजाती है (पद विंदह केवल ममल मऊ रे)

इसीसे शुद्ध केवलज्ञानपदकी प्राप्ति होजाती है (है परम तत्तु दर्संतु) इसीसे श्रेष्ठ आत्मतत्वका ही दर्शन होता है॥

(यह न्यान अन्मोयह निपजै रे) जब ज्ञान तथा आनन्द प्रगट होजाता है (जिन तारन तरन समर्थ) तब यह आत्मा अरहन्त जिन होजाता है। जो आप संसारसे तरते हैं व दूसरोंको उपदेश देकर तारते हैं (सो कम्मु कलंक विमुक्त मारे) फिर वे ही सर्व कर्म-कलंकसे मुक्त होजाते हैं (है सिवपुरि ममल रमंतु) और शुद्ध मोक्ष नगरमें जाकर रमण करते हैं ॥ १४ ॥

(जन रे जनराग विविक्त मऊ रे) श्री अरहन्त भगवानकी आत्मासे यह सब राग नष्ट होगया है, जो आत्मज्ञानियोंके भीतर होता है कि मैं दूसरोंके मनको प्रसन्न करूँ। कोई मुझसे असंतुष्ट न रहे (कल रंजनु दोष गलंतु) श्री अरहन्त भगवानकी आत्मासे शरीरमें राग करनेका सर्व दोष गल गया है (मनरंजन गारौ सु विलऊ रे) तथा उनके भीतरसे मनको राजी करनेवाला मद या अहंकार सब चला गया है (यह मुक्तिपंथ दर्संतु) वे मोक्षमार्गको दिखलाते हैं ॥ १५ ॥

(दर्सन मोहंध सु दिस्टि गलिउ रे) उनकी आत्माके भीतरसे दर्शन मोहनीय कर्मके उदयसे होनेवाली मिथ्यात्व दृष्टि दूर होगई है। वे अरहन्त क्षायिक सम्यग्दृष्टी हैं (आवर्न न्यान विलयंतु) ज्ञानावरण कर्मका भी क्षय होगया है जिससे अनन्तज्ञान प्रगट होगया है (दर्सन आवर्न न ऊरजे रे) तथा दर्शनावरण कर्मका नाश होनेसे उनके अनन्तदर्शन प्रगट होगया है। अब दर्शनपर आवरण नहीं पड़ेगा (मोह आवरन विमुक्कु) चारित्र मोहका आवरण भी छूट गया है जिससे वे परम वीतराग हैं ॥ १६ ॥

(यह न्यानं तरु नहु दिट्ठि सुइ रे) और अरहन्तके अन्तराय कर्मका क्षय होगया है जिससे उनके ज्ञानके भोगमें कोई अन्तराय नहीं पड़ सक्ता है (है न्यान विन्यान संजुत्त) वे सदा ही ज्ञान स्वभावमें प्रकाशमान हैं (यह परम तत्तु दरसतु सुइ रे) यही अरहन्त भगवान परमात्मतत्वको दिखलाते हैं (यह परम निरंजन उत्त) उनके आत्माको रागादि मैल व कर्म मैलसे शून्य निरंजन कहा गया है ॥ १७ ॥

(यह उवनौ दाता देउ सुइ रे) यह अरहन्त परमात्मदेव प्रगट हुए हैं जो सच्चे दातार हैं जिनसे ज्ञानका दान मिलता है (यह परम उवनु दर्संतु) यह भगवान श्रेष्ठ स्व भावके लाभके उपायको दिखलाते हैं (यह परम देउ स भावियो रे) ऐसे परमात्मदेवकी भलेप्रकार भावना करनी योग्य है (है परम तत्तु सम उत्त) इसी परमात्मतत्वको समभाव धारी कहा गया है ॥ १८ ॥

(यह न्यान अन्मोयह ममल पउ हो) यह ज्ञान व आनन्दके धारी वीतराग प्रभु हैं (है तारन तरन समर्थ) यही अरहन्त भगवान स्वयं तरनेको और दूसरोंको तारनेको समर्थ हैं (यह ममलह ममल सहाउ मउ हो) यह परम शुद्ध स्वभावके धारी हैं (है भय षिपनिक स उत्तु) उन्होंको सर्व भय रहित निर्भय कहा गया है ॥१९॥

(यह निर्मल ममल म उत्तु सुद्ध रे) इन्हींको निर्मल व अमल सर्व दोष रहित शुद्ध वीतराग कहा गया है (है संक सल्य विलयतु) उनकी आत्मासे सर्व शंकाएँ व सर्व शल्य दूर होगये हैं (यह ममल न्यान केवल सहिउ रे) यह शुद्ध केवलज्ञानके धारी हैं (यह मुक्ति रमनि विलसंतु) यही भगवान मुक्तिरूपी स्त्रीके साथ आनन्द भोग रहे हैं ॥ २० ॥

भावार्थ—एक आत्माका श्रद्धालु भक्त ऐसी भावना करता है कि हे मन! अब तू संसारके झगड़ोंमें मत भ्रमण कर। अब तू मेरे वशमें रह। मैंने सम्यग्दर्शन सहित सम्यग्ज्ञानको या आत्मज्ञानको झलका लिया है। जहां यह श्रद्धान या ज्ञान होता है कि आत्मा अनन्त शक्तिका धारी परमात्मा तुल्य है इसमें मतिज्ञानादि पांचों ज्ञानोंकी शक्ति है, यह स्वयं परमात्मरूप है, कर्मोंके आवरणसे शक्ति प्रगट नहीं है, स्वभावसे यह परम शुद्ध ज्ञानानन्दमय है, वहां उस श्रद्धान या ज्ञानको अल्पज्ञानके नामसे कहते हैं। आत्मज्ञानका अनुभव करना ही कर्म कलङ्क धोनेका उपाय है। आत्माकी शुद्ध भूमिकामें चलना ही चारित्र है। यही निश्चय चारित्र है जो आत्माकी उन्नति करता है इसीके लिये निमित्त कारण व्यवहार चारित्र है जो परिग्रहको त्यागकर साधुपदमें रहकर सम्यग्दर्शनको पचीस दोष रहित निर्मल पालता है। ज्ञानका आराधन संशय विपर्यय अनध्यवसाय रहित करता है। पांच महाव्रतादि चारित्र पालता है। अनशनादि बारह तपोंका अभ्यास करता है, आत्मवीर्यको प्रगट कर मोक्षमार्ग साधन करता है। वह दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप व वीर्य इन पांच आचारोंके द्वारा आत्मानुभवका अभ्यास करते २ क्षपकश्रेणी चढ़कर चार घातीय कर्म क्षय करके केवलज्ञानी अरहन्त परमात्मा होजाता है तब तारणतरण पद प्रगट होजाता है। उस समय श्री अरहन्तके उपदेशसे अनेक भव्यजीव भवसागरसे पार होनेका मार्ग पाकर उसपर चलते हैं तथा जो कोई अरहन्त परमात्माकी भावना करता है वह भी उनके समान होजाता है। अर्हत परमात्मा अनन्त सुखके धनी होजाते हैं, उनकी महिमा अपार है, वे शीघ्र ही सिद्ध गतिको पालेते हैं। आत्मज्ञानमें अपूर्व शक्ति है, इसीके ध्यानसे अवधि व मनःपर्यय ज्ञानकी ऋद्धियें भी सिद्ध होजाती हैं। अतएव

जो अपना सच्चा हित करना चाहें उनको उचित है कि विषय कषायोंसे बुद्धि हटाकर व ख्याति, लाभ, पूजादिकी चाह छोड़कर एकाग्र मन होकर आत्माका अनुभव करें, समभावका अभ्यास करें इसीसे परमात्मपद प्राप्त होगा। अज्ञानकी महिमा श्री परमात्मप्रकाशमें कही है—

अप्पहं णाणु परिच्चइवि, अण्णु ण अत्थि सहाउ। इहु जाणेविणु जोइयहो परहं म बंधहु राउ ॥ २८३ ॥
विसय कसायहिं मण सलिलु, णवि डहुलिज्जइ जासु। अप्पा णिम्मलु होइ लहु, वढ पच्चक्खु वि तासु ॥ २८४ ॥
अप्पा मिल्लिवि णाणमउ, अण्णुजि झायहिं झाणु। वढ अण्णाण वियंभियहं तहं केवल णाणु ॥ २८६ ॥

भावार्थ—ज्ञानको छोड़कर आत्माका स्वभाव कोई दूसरा नहीं है। ऐसा जानकर हे योगी! आत्मज्ञानके सिवाय परवस्तुमें रागको न बांध। जिसका मनरूपी जल विषय व कषायोंसे नहीं चलायमान होता है। हे वत्स! उसीका आत्मा निर्मल होजाता है और वह शीघ्र आप अपनेको प्रत्यक्ष दीखने लग जाता है। जो कोई ज्ञानमई आत्माको छोड़कर अन्य किसीका ध्यान करते हैं, हे वत्स! वे अज्ञानमें रमते हैं उनको केवलज्ञान कहांसे होगा?

(७८) फुटकल गाथा १५८८ से १६०७ तक।

भुक्तं संसार सुभावं, न्यानी दिष्टन्ति बंक सभावं।
वंकं अनिष्ट मइओ, न्यान अन्मोय भुक्त विलयन्ती ॥ १ ॥
पर्जय विओय विनन्दं, पर्जय सहकार सरनि ससारं।
जिन उत्त वंक रूवं, न्यान अन्मोय विनन्द विलयन्ति ॥ २ ॥
जिन अन्मोय सहावं, उववन्न नन्द सीह सभावं।
विनन्द गज विलयं, जिन अन्मोय अवल बलियं च ॥ ३ ॥
विषय सुभाव अनन्तं, विषयं अनेय विंद विष सहियं।
विषयं विष घट उत्तं, न्यान अन्मोय विषय गलियं च ॥ ४ ॥

भुक्त विनन्द सुभावं, जिन उत्पन्न नन्त नन्त भव यानं ।
सूषिम परिनाम विसेषं, जिन अन्मोय विनन्द विलय न्त ॥ ५ ॥
विषय सुभाव अनन्तं, विषयं परिनाम विविह भेयं च ।
अमिय पयोहर रसियं, अन्मोय वसिय सिद्ध सम्पन्नं ॥ ६ ॥

इति मुक्तावली गाथा ।

यं तारन तं विनयं, अहं पर्जय अनिष्ट रूवेन ।
निगुन नन्त विसेषं, तुम्हं अन्मोय सगुन पिच्छंति ॥ ७ ॥
अहं पर्जावं सहियं, तिविह दोषं च नन्त संजुत्तं ।
तव स्रवन पिसुन स उत्तु, तुम्हं अन्मोय अहं दोष विलयंति ॥ ८ ॥
पर्जावं अहं विसेषं, नन्त दोषं च पिसुन विच्छरियं ।
संसय तु व उववन्नं, तुम्ह अन्मोय दोष सगलियं ॥ ९ ॥
हं पर्जाव असुद्धं, पिसुनं केनापि पयंपिय तुम्हं ।
तुम्ह विप्रियं स सयनं, तुम्ह अन्मोय अहं ममलं च ॥ १० ॥

इति पात्र गाथा ।

चौरं चरपट नन्त नन्त उवनं, अन्यान न्यानं विलं ।
आवन सुइ रयनि रमन सुवनं, दुष्टं च साहू गुनं ॥ ११ ॥
चौरं चरपट गुनह साहु सुवनं, मरनं सुयं साहुवं ।
चौरं अनु परिवर्तनं दिप्ति रयनं, पारं परं जीवनं ॥ १२ ॥

इति चौर चरपट गाथा ।

चेला चेली जाल जंजालाः, चेला चेली परतक्ष काला ।
चेला चेली दुहु कुल सुद्धा, हीरा मानिक रयन अवेधाः ॥
रसह गलहि जे विरस रसेइ, गुरके वयन अवध कर लेई ।
रूसे तूसे मनह अभंगा, ऐसे चेला लाओ संगा ॥ १३ ॥

इति चेला चेली गाथा ।

जुगयं षड् सुधार रेनु अगुवा, निमषं सु समयं जयं ।
घटयंतु जु मुहूर्त प्रहर प्रहरं. दुति प्रहरं चतु प्रहरं ॥
दिप्ति रयनी वर्ष सुभाव जिनं–
वर्षं षिपति आउ काल कलन, जिन दिप्ति मुक्ति जयं ॥ १४ ॥

इति जुगवं खण्ड गाथा ।

उवन उवन उवन्न उव सु रवनं, दिप्तिं च दिस्टिं मयं ।
हिययारं त अर्क विंद रयन रमन, सब्दं च प्रियं जुतं ॥
सहयारं सह नन्त नन्त रमन ममलं उववन्न साहं धुवं ।
सुत देवं उवन्न जय जयं च जयनं, उत्पन्न मुक्ति जयं ॥ १५ ॥

इति आसीर्वाद गाथा ।

उव उवन उवन उव उवन जिनय जिनु, अगमु अगोचर अलष जिनू ।
मैं नृप्तत ही जिन अपनो पावो, छोड़ न सकौ एकु षनु ॥ १६ ॥
मैं पाए हैं जिनु तार पियारे, अहु कमल रमन आधार हमारे ।
मैं पाए हैं जिननाथ पियारे ॥१७॥ (आचरी)

अहु अन्तरु ध्यान रहेइ जिनय जिनु, षट् कमल रमन तं अरुह जिनु ।
उव उवन उवन दर्सन्तु सहज जिनु, सह समय उवन जिन मुक्ति जयं ॥ मैं पाए० हैं ॥१८॥

इति उव उवन गाथा ।

जं उवन उवन पौ भरिउ मऊ, त हो गर्भे जिन उत्तु ।
स्वामी जिम भरियो तिम आवरियो, जिन गर्भ उत्त जिन उत्तु ॥
जिन उत्तु वयन जिन आवरियो, जिन उत्तु सिद्धि सम्पत्तु ॥ १९ ॥
जिन उवन उवन पौ भरिउ सुयं, ले गर्भ नन्तानन्तु ।
आयरन चरन तं परम पओ, जिन कोड मुक्ति दर्सन्तु ॥
जिन उत्तु वयन जिन आवरिओ० ॥ २० ॥

इति उव उवन भरिउ मऊ गाथा ।

अन्वय सहित अर्थ—(मुक्त संसार सुभावं) कर्मोंके फलको भोगना ही संसारका स्वभाव है । संसारमें कर्मोंके उदयसे ये जीव चारों गतियोंमें दुःख भोगते रहते हैं (ग्यानी दिष्टं तिवंक सुभावं) तत्वज्ञानी इस संसा- [illegible] वक्र अर्थात् कुटिल या दुःखरूप देखते हैं, यह संसार एकसा सीधा नहीं चलता है, जन्मके [illegible] । संयोगके साथ वियोग है (बंक अनिष्ट मइओ) यह टेढ़ा संसार आत्माको दुःखदाई है, पद [illegible] है (ग्यान अन्मोय मुक्ति विलयंति) आत्मज्ञानकी अनुमोदना करनेसे संसारके भोगोंका [illegible] होजाता है । ज्ञानीको कर्मोंके [illegible]यमें रागद्वेष नहीं होता है, समभावसे भोग लेता है ॥ १ ॥

(पर्जय वि ओग विनंद) इस [illegible] वर्तमान पर्याय या शरीर छूटता है तो बड़ा दुःख होता है (पर्जय सहकार सरनि संसारे) उसी [illegible]की संगतिमें ही यह जीव संसारमें भ्रमण करता रहता है, एक शरीरको छोड़कर दूसरा [illegible] कर्म संयोग है जन्म मरण छूटता नहीं है (जिन उक्त बंक रूपं) जिनेन्द्र भगवानने इस [illegible] कहा है (ग्यान अन्मोय विनंद विलयंति) परंतु जो आत्मज्ञानमें मगन है [illegible] शरीरके वियोगका दुःख नहीं होता ॥२॥

[illegible] स्वरूपमें आनन्दमय होनेका यह स्वभाव [illegible]
[illegible] होता है (उववन्न मंद सीह सहावं) तब वहां
[illegible] (विनंद गज विलयं) उस स्वात्मानंद सिंहके
[illegible] अन्मोय अवलि वलियं च) वीतरागमय आनन्द
[illegible] ॥

[illegible] अनन्त प्रकार स्वभाव हैं (विषयं अनेय विंद विष सहियं)
[illegible] पीनेके समान है (विषयं विष घट उत्तं) इन विषयोंको
[illegible] विष पीने [illegible] होता है, विषयोंके भीतर रमनेसे बार बार जन्म
[illegible] स्वभावमें मगन होनेसे विषयोंका राग गल जाता है ॥४॥

[illegible] दुःखोंका स्वभाव रखता है (जिन उत्पन्न अनंत भव वानं) इनही
विषयोंमें रमण करनेसे [illegible] मगन होता है (सुषिम परिनाम विमेषं) इन विषयोंका बहुत सूक्ष्म भाव होता है जो केवलीगम्य है, द्रव्यलिंगी मुनिके भीतर ऐसा सूक्ष्म राग होता है जो उसको भी विदित नहीं होता है (जिन अन्मोय विनंद विलयंति) वीतराग विज्ञान स्वभावमें आनन्दित होनेसे यह विषयका क्लेश विला जाता है ॥ ५ ॥

(विषय सुभाव अनन्तं) विषय भोगोंका स्वभाव अनन्त प्रकारका है (विषयं परिनाम विविह भेयं च) विषयोंका राग भाव अनेक प्रकारका होता है (अमिय पयोहर गमिय) परंतु आनन्दामृतके समुद्रका रसिक होजाता है, आत्मीक आनन्द रसका पान करता है (अन्मोय अमिय सिद्ध संपत्तं) वह इस आत्मानन्दके वशसे सिद्धिको पालेता है ॥ ६ ॥

(यं तारन तं विनय) जो अर्हन्त भगवान संसारसे तारनेवाले हैं उनकी विनय करनी चाहिये (अहं पर्जय अनिष्ट रूवं) शरीरका अहंकार बहुत बुरा है, शरीर रूप मैं हूं यही मिथ्यात्व महान अनिष्टकारी है (निगुनं नन्त विमेषं) इस अनादि पर्याय बुद्धिके अहंकाररूपी मिथ्यात्वसे अनन्त प्रकारके दोष रागद्वेष मोहादि विभाव भाव व आर्तरौद्र ध्यानादि पैदा होते हैं (तुम्हं अन्मोय सगुन पिच्छंति) परन्तु जो हे प्रभु ! आपके भीतर राग करता है वह आत्मीक गुणोंको या सुगुणोंको अनुभव करता है ॥ ७ ॥

अहु अन्तरु ध्यान रहेइ जिनय जिनु, षट् कमल रमन तं अरुह जिनु ।
उव उवन उवन दर्सन्तु सहज जिनु, सह समय उवन जिन मुक्ति जयं ॥ मैं पाए० हैं ॥१८॥

इति उव उवन गाथा ।

जं उवन उवन पौ मरिउ मऊ त हो गर्भे जिन उत्तु ।
स्वामी जिम भरियो तिम आवरियो, जिन गर्भ उत्त जिन उत्तु ॥
जिन उत्तु वयन जिन आवरियो, जिन उत्तु सिद्धि सम्पत्तु ॥ १९ ॥
जिन उवन उवन पौ भरिउ सुयं, ले गर्भ नन्तानन्तु ।
आयरन चरन तं परम पओ, जिन कोड मुक्ति दर्सन्तु ॥
जिन उत्तु वयन जिन आवरिओ० ॥ २० ॥

इति उव उवन भरिउ मऊ गाथा ।

अन्वय सहित अर्थ—(भुक्त संसार सुभावं) **कर्मोंके फलको भोगना ही संसारका स्वभाव है । संसारमें कर्मोंके उदयसे ये जीव चारों गतियोंमें दुःख भोगते रहते हैं** (ग्यानी दिष्टं निवंक सुभावं) **तत्वज्ञानी इस संसारके स्वभावको वंक अर्थात् कुटिल या दुःखरूप देखते हैं, यह संसार एकसा सीधा नहीं चलता है, जन्मके साथ मरण है । संयोगके साथ वियोग है** (वंक अनिष्ट सहओ) **यह टेढ़ा संसार आत्माको दुःखदाई है, पद पद पर दुःख देनेवाला है** (ग्यान अन्मोय मुक्ति विलयंति) **आत्मज्ञानकी अनुमोदना करनेसे संसारके भोगोंका कष्ट नाश होजाता है । ज्ञानीको कर्मोंके उदयमें रागद्वेष नहीं होता है, समभावसे भोग लेता है ॥ १ ॥**

(पर्जय वि ओय विनंद) **इस संसारमें जब वर्तमान पर्याय या शरीर छूटता है तो बड़ा दुःख होता है** (पर्जय महकार सरनि संसारे) **उसी शरीररूपी पर्यायकी संगतिमें ही यह जीव संसारमें भ्रमण करता रहता है, एक शरीरको छोड़कर दूसरा पाता है । जबतक कर्म संयोग है जन्म मरण छूटता नहीं है** (जिन उक्त वंक रूपं) **जिनेन्द्र भगवानने इस संसारको ही असार या नाशवंत कुटिल कहा है** (ग्यान अन्मोय विनंद विलयंति) **परंतु जो आत्मज्ञानमें मगन है उसका सब क्लेश नष्ट होजाता है । उसको शरीरके वियोगका दुःख नहीं होता है ॥ २ ॥**

(जिन अन्मोय सहावं) श्री वीतराग जिनेन्द्र परमात्माके स्वरूपमें आनन्दमय होनेका यह स्वभाव है अर्थात् जो अपने वीतराग विज्ञानमय शुद्ध स्वभावमें आनंदित होता है (उववन्न मंद सीह सहावं) तब वहां जो स्वात्मानन्द प्रगट होता है वह सिंहके समान तेजस्वी होता है (विनंद गज विलयं) उस स्वात्मानंद सिंहके प्रगट होते ही संसारके क्लेशरूपी हाथी भाग जाते हैं (जिन अन्मोय अवलि वलियं च) वीतरागमय आनन्द बड़ा बलवान है उसके समान किसीका बल नहीं है ॥ ३ ॥

(विषय सुभाव अनंतं) पांचों इंद्रियोंके विषयोंके अनन्त प्रकार स्वभाव हैं (विषयं अनेय विंद विष सहियं) उन अनेक प्रकारके विषयोंमें रमण करना विषको पीनेके समान है (विषयं विष घट उत्तं) इन विषयोंको विषका घड़ा कहा गया है, विष पीनेसे एक भवमें मरण होता है, विषयोंके भीतर रमनेसे बार बार जन्म मरण होता है (न्यान अन्मोय विषय गलियं च) परन्तु ज्ञान स्वभावमें मगन होनेसे विषयोंका राग गल जाता है ॥४॥

(भुक्त विनंद सुभावं) विषयोंका भोग दुःखोंका स्वभाव रखता है (जिन उत्पन्न अनंत भव बानं) इनही विषयोंमें रमण करनेसे अनन्त जन्मोंमें गमन होता है (सूषिम परिनाम विसेषं) इन विषयोंका बहुत सूक्ष्म भाव होता है जो केवलीगम्य है, द्रव्यलिंगी मुनिके भीतर ऐसा सूक्ष्म राग होता है जो उसको भी विदित नहीं होता है (जिन अन्मोय विनंद विलयति) वीतराग विज्ञान स्वभावमें आनन्दित होनेसे यह विषयका क्लेश विला जाता है ॥ ५ ॥

(विषय सुभाव अनन्तं) विषय भोगोंका स्वभाव अनन्त प्रकारका है (विषयं परिनाम विविह भेयं च) विषयोंका राग भाव अनेक प्रकारका होता है (अमिय पयोहर रमिय) परंतु आनन्दामृतके समुद्रका रसिक होजाता है, आत्मीक आनन्द रसका पान करता है (अन्मोय अमिय सिद्ध संपत्तं) वह इस आत्मानन्दके वशसे सिद्धिको पालेता है ॥ ६ ॥

(यं तारन तं विनय) जो अर्हन्त भगवान संसारसे तारनेवाले हैं उनकी विनय करनी चाहिये (अहं पर्जय अनिष्ट रूवं) शरीरका अहंकार बहुत बुरा है, शरीर रूप मैं हूं यही मिथ्यात्व महान अनिष्टकारी है (निगुनं नन्त विसेषं) इस अनादि पर्याय बुद्धिके अहंकाररूपी मिथ्यात्वसे अनन्त प्रकारके दोष रागद्वेष मोहादि विभाव भाव व आर्तरौद्र ध्यानादि पैदा होते हैं (तुम्हं अन्मोय सगुन पिच्छंति) परन्तु जो हे प्रभु! आपके भीतर राग करता है वह आत्मीक गुणोंको या सुगुणोंको अनुभव करता है ॥ ७ ॥

(अ॰ पर्याय सहियं) इस शरीरमें अहङ्कार भावको जो रखता है, जो शरीरको ही मैं हूँ ऐसा अनुभव करता है (तिविह दोषं च नन्त संयुतं) वह राग, द्वेष, मोह इन तीन प्रकार दोषोंके अनेक भेदोंको रखता है (तुव सुवन पिसुन स उत्तु) आपकी वाणीको सुनकर भी दुष्टभाव उसके भीतर रहता है। आपकी वाणीको भी मायाचारका दोष लगाता है (तुम्हं अन्मोय अहं दोष विलयन्ति) परन्तु जो आपके गुणोंमें मगन होता है उसका सब बहिरात्म बुद्धिका अहङ्कारका दोष विला जाता है ॥ ८ ॥

(पर्जावं अहं विमेषं) शरीरमें अहंकार रखनेके अनेक भेद होसकते हैं (नन्त दोषं च पिसुन विच्छरियं) अनन्त दोषसे भरा हुआ क्रूर भावका विस्तार उसके भीतर रहता है। वह धर्मको द्वेषभावसे और अधर्मको रागभावसे देखता है (संसय तुव उववन्नं) वह आपके भीतर भी संशय रखता है, उसकी श्रद्धा आपके गुणोंमें नहीं होती है (तुम्ह अन्मोय दोष मंत लियं) परन्तु जो आपके गुणोंमें मगन होजाता है उसके सर्व दोष गल जाते हैं, वह सच्चा सम्यग्दृष्टी होजाता है ॥ ९ ॥

(हं पर्जाव असुद्धं) पर्याय बुद्धिका अहंकार अशुद्ध भाव है (पिसुनं केनापि पयं पिय तुम्हं) वह दुष्टभाव है। ऐसे भावका धारी किसी भी तरह आपके पदसे प्रेम नहीं करता रहता है (तुम्ह विप्रियं स सयनं) आपके साथ प्रेम नहीं करता हुआ वह मोहकी निद्रामें शयन करता रहता है (तुम्ह अन्मोय अहं ममलं च) परन्तु जो आपके गुणोंमें प्रेमी होजाता है वह अहंकाररूपी मलसे रहित शुद्ध सम्यग्दृष्टी होजाता है ॥१०॥

(चौरं चारपट नन्त नन्त उवनं) आत्मीक गुणोंके ठहरनेवाले घातीय कर्मरूप चोर जो आते जाते हैं आच्छादन करते हैं वे अनन्तानन्त रूपसे प्रगट होते हैं, अर्थात् आत्माके साथ अनन्तानन्त कर्मवर्गणाओंका संयोग है (अन्यान न्यायं विलं) उन्हींके उदयसे अज्ञानभाव रहता है, आत्मज्ञानका लोप होरहा है (आवर्नं सुइ रयनि रमन सुवनं) कर्मका आवरण सो ही रात्रि है, अन्धकार है, उसमें ही यह अज्ञानी प्राणी रमण करता रहता है (दुष्टं च माहू गुनं) इनहीके कारण मोक्षमार्गको साधनेवाले रत्नत्रय भाव दोषी होरहे हैं ॥ ११ ॥

(चौरं चारपट गुनइ माहु सुवनं) ये कर्मरूपी चोर आत्मीक गुणोंके आच्छादन करनेवाले हैं। जिनसे मोक्षका साधन हो उनको रोकने वाले हैं (मानं सुय माहुवं) इनके प्रभावसे उन मोक्ष साधक भावोंका मानो मरण-नाश ही होरहा है (चौरं भ्रम परिवर्तनं दिप्ति रयनं) उनमें मुख्य चोर मिथ्यात्व है। जब इसको भगा

दिया जाता है व इसका स्वभाव बदल दिया जाता है तब सम्यग्दर्शनरूप रत्न प्रगट होजाता है (पारं परं जीवनं) तब यह जीव कर्मोंको नाश कर संसारसे पार होजाता है ॥ १२ ॥

(चेला चेली जाल जंजाला:) मोक्षमार्गके साधकके लिये शिष्य साधु व आर्जिका साध्वी या श्रावक श्राविका चेला चेली सब जाल है जंजाल है, मनमें संकल्प विकल्पका कारण है (चेला चेली परतक्ष काला) ये चेला चेली प्रत्यक्ष कालके समान है, आत्मानुभवको घात करनेवाले है चेला चेली दुहु कुल सुद्धा) वे ही चेला चेली है जिनके दोनों कुल शुद्ध हो अर्थात् जिनके भीतरी भाव व बाहरी प्रवृत्ति सब शुद्ध हो। भीतर भाव चेला है बाहरी प्रवृत्ति चेली हैं (हीरा मानिक रयनि अभेया:) तथा जिनके पास रत्नत्रय धर्मरूपी हीरा मानिक हो, जिनको कोई खण्डन नहीं कर सक्ता, जिनको कोई छीन नहीं सक्ता (रसह गलहि जे विरस रमेइ) जिनके भीतरसे संसार रागका रस गल गया है तथा संसार रससे विरुद्ध वैराग्यभावका रस प्रगट होगया है (गुरुके वयन श्रद्ध कर लेइ) जो अपने आत्मज्ञानी गुरुके वचनोंको स्वीकार कर लेता है, गुरुकी वाणीपर श्रद्धा कर लेता है (हमे तुमे मनह अभंगा) कोई उनसे क्रोध करे व कोई उनपर प्रसन्न हो तौ भी जिनका मन विकारी नहीं होता है (ऐसे चेला लाओ संगा) हे भाई ! ऐसे वीतरागभावरूपी चेलेको अपने संग रक्खो जिससे मोक्षमार्गमें चलकर मोक्ष पहुंच जाओ ॥ १३ ॥

(जुगयं षड् सुधार रेनु अणुवा) उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालकी छः धाराओंको रखनेवाला कालाणुकी पर्यायों रूप व्यवहार काल है अर्थात् निश्चय कालके अणु लोकाकाश व्यापी असंख्यात है, उनहीकी सूक्ष्म पर्याय समय है। इस भरतक्षेत्रके आर्यखण्डकी अपेक्षा उस व्यवहार कालकी छः धाराएँ हैं–अवसर्पिणी कालकी छः धारा हैं। १–सुखमा सुखमा काल, २–सुखमा काल, ३–सुखमा दुखमा काल, ४–दुखमा सुखमा काल, ५–दुखमा काल, ६–दुखमा दुखमा काल। ये दस कोड़ाकोड़ी सागर वर्षोंका होता है उसका उल्टा छः धारारूप उत्सर्पिणी काल है वह भी १० कोड़ाकोड़ी सागरका है। इस तरहके कालके कल्प अनन्त वीत चुके हैं व वीतेंगे (निमिष सु समयं जयं) उस व्यवहार कालके भेद हैं–समय, आवली आदि क (घटयंतु जु मुहूर्त पहर प्रहरं दुति प्रहरं चतु प्रहरं दिसि रयनी वर्ष सुभावं जिनं) घड़ी तथा मुहूर्त पहर दो पहर चार पहर दिनरात वर्ष इत्यादि व्यवहार कालका स्वभाव जिनेन्द्रने कहा है (वर्ष षिरति आउ काल कलनं) इस तरह वर्ष वर्ष करके बड़ी २ आयुका क्षय होजाता है। अनन्तकाल गया यह जीव अनेक प्रकार छोटी बड़ी आयु

धार करके जन्मा व मरा है। संसारमें भ्रमता ही रहा (जिन दिप्ति मुक्ति जयं) परन्तु जिनके भीतर अरहन्तका सर्वज्ञ वीतराग पद प्रकाशित होजाता है, वे मुक्तिको जीत लेते हैं। फिर वे संसारमें भ्रमण नहीं करते हैं, अनन्तकाल तक स्वभावमें रहते हैं॥ १४ ॥

(उवन उवन उवन्न उव सु रवनं दिप्ति च दिप्टि मयं) अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शनसे पूर्ण श्री अरहन्त भगवानकी दिव्य वाणीका प्रकाश हुआ है (हिययारं तं अर्क विंद रयन रमनं सर्ध च प्रियं जुनं) यह वाणी परम मिष्ट है इसीके द्वारा हितकारी आत्मसूर्यके ज्ञानको करानेवाला रत्नत्रयमें रमणरूप मोक्षमार्गका प्रकाश होता है (सहयारं सह नन्त नन्त रमन ममलं उववन्न साइं धुवं) इसीकी सहायतासे अनन्तानन्त शक्ति धारी ध्रुव शुद्ध आत्मारूपी साध्यमें रमण होता है, अर्थात् स्वानुभव उत्पन्न होता है जो अरहन्त व सिद्धपदका साधन है (सुन देवं उवन्न जय जयं च जयनं उत्पन्न मुक्ति जयं) इसी दिव्यवाणीके द्वारा श्रुतदेवता या सरस्वतीकी उत्पत्ति होती है। उस श्रुतज्ञान धारी जिनवाणीकी वार वार जय हो, उसीके सेवनसे मुक्तिका राज्य लिया जाता है ॥ १५ ॥

(उव उवन उवन उव उवन जिनय जिन) अब श्री वीतराग सर्वज्ञ देव जिनेन्द्रका प्रकाश हुआ है (मैं नृसत ही जिन अवनो पावो छोड न सक्को एकु षनु) इस संसार वनमें भ्रमण करते करते अब मैंने श्री जिनेन्द्रको पालिया है जो मेरे परम उपकारी है। अब मैं एक क्षण भी उनका संग नहीं छोडूँगा ॥ १६ ॥

(मैं पाए हैं जिनु तार पियारे) मैंने अपने परम प्रिय, संसार–समुद्रसे तारनेवाले भगवानको पालिया है (अहु कमल रयन आधार हमरे मैं पाए हैं जिननाथ पियारे) अहो! यही भगवान हमारे आधार हैं, हमारे रक्षक हैं यह प्रफुल्लित कमलके समान आत्माके भीतर रमण करता है ऐसे जिनेन्द्रको मैंने पाया है ॥ १७ ॥

(अहु अन्तरु ध्यान रहेइ जिनय जिनु) अहो! अब मेरे भीतर ऐसे वीतराग भगवानका ध्यान रहा करे (षट् कमल रमन तं अरुह जिनु) वे ही छः मन्त्रयुक्त कमलमें रमनेवाले अरहंत जिन हैं अर्थात् एक छः पत्तेके कमलमें ॐ ह्राँ ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः। इस मंत्रको बिराजमान करके जब ध्यान किया जाता है तो इनमें श्री अरहन्त परमेष्ठीका ही स्वरूप झलकता है (उव उवन उवन दर्सेतु सहज जिनु) उस अरहन्तके ध्यानसे सहज ही श्री वीतराग जिनेन्द्रके स्वभावका दर्शन या अनुभव होजाता है (सह समय उवन जिन मुक्ति जयं) जब आत्मध्यानसे आत्माका पूर्ण प्रकाश होता है तब यह जिन स्वरूप होकर मुक्तिको प्राप्त कर लेता है ॥ १८ ॥

(कं उवन उवन पौ मरिउ मऊ) यह आत्मीक पद प्रकाशित है जो गुणोंसे भरपूर है (तं के गर्भ जिन उत्तु) जिनेन्द्रने कहा है कि इस पदको अपने मनके गर्भमें धारण कर (स्वामी जिम मरियो तिम आचरिओ) जैसा श्री जिनेन्द्र भगवानका स्वरूप श्रद्धामें धारण किया है वैसा ही उसका आचरण करना चाहिये या उसका ध्यान करना चाहिये (जिन गर्भ उत्तु जिन उत्तु) इसीको जिनेन्द्रका कहा हुआ जिन गर्भ कहा गया है, अर्थात् अपने भीतर स्वानुभव होजाना ही जिन गर्भ है (जिन उत्त वयन जिन आचरिओ जिन उत्तु सिद्धि संउत्तु) जो जिनेन्द्रके उपदेशके अनुसार जिनपदका साधन करता है वह जिनोक्त सिद्धपदको पालेता है ॥ १९ ॥

(जिन उवन उवन पौ मरिउ सुयं) जिनेन्द्रका प्रकाशित स्वरूप स्वयं अपने भीतर भर गया है, अर्थात् जिन समान मेरे आत्माका भाव होगया है (के गर्भ नन्तानन्तु) तब अनन्तानन्त शक्ति इस गर्भमें प्रगट होगई है (अचरन चरन तं परम पओ) जब स्वरूपाचरण चारित्रको पाला जाता है तब परम पद निकट आता है (जिन कौउ मुक्ति दर्संतु) तब अरहन्त भगवान होकर मुक्तिको देख लेता है (जिन रत्तु वयन जिन आचरिओ) जिसने श्री जिनेन्द्रके उपदेशके अनुसार जिनपदका साधन किया है वह मुक्त होजाता है ॥ २० ॥

भावार्थ—इस गाथावलीमें पहले ही संसारका व विषय भोगोंका दुखदाई व क्षणिक स्वरूप बताया है। जो इस संसारमें व विषयोंमें रमण करता है वह सदा संसारके क्लेश उठाता रहता है। उनसे बचनेका उपाय स्वात्मानुभव है। उससे परम आनन्दका अनुभव होता है तब विषय सुख विषके समान झलकता है व संसारका सब क्लेश मिट जाता है। फिर पर्यायबुद्धिके अहंकारका दोष बताया है जो शरीर रूप ही आत्माको मानता है व शरीरके रागमें उन्मत्त होकर शरीरको सुखदाई पदार्थोंमें राग व दुखदाई पदार्थोंमें द्वेष कर लेता है। उसका प्रेम वीतराग धर्मपर नहीं होता है, वह अधर्मको ही धर्म मान लेता है। जो आत्माको आत्मा समझता है, अन्तरात्मा होजाता है उसका यह बहिरात्मभाव मिट जाता है।

फिर आत्मीक गुणोंके चोर चार घातीय कर्मोंको बताया है उसमें सबसे प्रबल मिथ्यात्वको दिखाया है। सम्यग्दर्शनके प्रकाशसे मिथ्यात्व कर्म चला जाता है तब धीरे २ सर्व कर्म क्षय होजाते हैं और आत्मा परमात्मा होजाता है।

फिर उन साधुओंको शिक्षा दी है जो शिष्योंके बढ़ानेमें ही राजी हैं। अनेक शिष्योंको, नर-नारिओंको भक्ति करते देखकर प्रसन्न होते हैं। समझाया है कि ये सब जंजाल हैं, कालके समान आत्माका

घात करनेवाले हैं, इनके भीतर मोह न कर। अपने वीतराग भावपर दृष्टि दे–संसारका राग मिटा। भीतर बाहर शुद्ध भाव, रख वीतराग भावको ही सच्चा चेला मान, आत्मानुभूतिको ही चेली मान। इनहीके साथ मोक्ष जासकेगा।

फिर दिखाया है कि काल अनन्त है, अनन्त भव धारण करके इस जीवने काल गमाया है। अब तो इसे भवभ्रमणसे उदास होकर श्री अरहन्त भगवानके शासनको ग्रहण करना चाहिये जिससे भवका भ्रमण मिटे और मुक्ति प्राप्त हो।

फिर भगवानकी दिव्यध्वनिके अनुसार रचित श्रुतज्ञानकी व जिनवाणीकी स्तुति की है कि जो इसकी शरण लेता है व उसके अनुसार स्वात्मानुभव करता है वह मुक्त होजाता है। फिर अपनी भक्ति प्रकट की है कि मैंने जब परमात्माको अपने भीतर पालिया है तब मैं नहीं छोड़ूँगा। उनकी भक्तिसे व उनके ध्यानसे मैं मुक्तिको प्राप्त कर लूंगा।

फिर बताया है कि जो जिनेन्द्रके उपदेशको धारणकर उसके अनुसार निश्चय रत्नत्रयको या आत्माको ध्याता है वह अवश्य मुक्तिपद पालेता है। परमात्मप्रकाशमें कहा है–

सो णथित्ति पएसो चउरासी लक्ख जोणि मज्झम्मि। जिणवयणं ण लहंतो जत्थण डुलिडुलिओ जीवो ॥ ६६ ॥

देहहि उप्जउ जर मरण, देहहि वण्ण विचित्त। देहहिं रोय वियाण तुहुं देहहिं लिंग विचित्त ॥ ७० ॥

देहहि पिक्खवि जर मरण, मा भउ जीवकरोहि। जो अजरामरु बंभुपरु, सो अप्पाणु मुणेहि ॥ ७१ ॥

जं मुणि लहइ अणंतु सुहु, णिय अप्पा झायंतु। तं सुहु इन्दुवि णवि लहइ देविहिं कोडि रमंतु ॥ ११७ ॥

भावार्थ—जिनवाणीको न समझकर मिथ्याभावके कारण चौरासीलाख योनियोंमें कोई स्थान बाकी नहीं है जहां इसने भ्रमण न किया हो। शरीरके ही जन्म जरा मरण है, शरीरके ही नानाप्रकार भेष जानो। हे जीव! शरीरके जरा व मरणको देखकर तू भय मत कर। जो अजर अमर है, परम ब्रह्म है, वही तू आत्मा है, उसीका तू अनुभव कर। मुनि निज आत्माको ध्यान करते हुए जिस अनन्त सुखका अनुभव करते हैं उस सुखको इंद्र भी करोड़ देवियोंके साथ रमण करता हुआ नहीं पासक्ता है।

प्रयोजन यह है कि निज आत्माके श्रद्धानसे व निज आत्माके अनुभवसे सर्व मिथ्याभाव मिट जाता है और यह जीव मुक्तिपदको शीघ्र पालेता है।

(७९) कलसोंकी गाथा १६०८ से १६१४ तक ।

चौ उववन्न सुभावं, दिगंतरं नन्त नन्ताइ जिन दिट्ठं ।
पयकमलं सहकारं, क्रांति सहकार कलस जिन ढलियं ॥ १ ॥

सहकारं अर्थति अर्थं, अथ सहकार कलस जिन उत्तं ।
सुर विंजन परिनामं, सहसं अट्ठमि चौ उवन चौवीसं ॥ २ ॥

इस्टं दर्संति इन्द्रं, अप्प सहावेन इच्छ अच्छरियं ।
ऐरावति आवरनं, कमलं सहकार जिनेन्द विंदानं ॥ ३ ॥

कलस सहाउ उत्तं, कमल सरुवं च ममल सहकारं ।
भय विनस्व भवियानं, धम्मं सहकार सिद्धि सम्पत्तं ॥ ४ ॥

सिद्ध सरूवं रूवं, सिद्ध गुन विसेष ममल महकारं ।
भय षिपिय कम्म गलियं, धम्म पय पयडि मुक्ति गमनं च ॥ ५ ॥

जन्म जैवन्त सुभावं, जाता उववन्न जयकार ममलं च ।
भय षिपनिक भवियानं, जै जै जयवन्त जन्म तित्थयरं ॥ ६ ॥

धम्म सहाव संजुत्तं, तारन तरनं च उवन ममलं च ।
लोया लोये येमं, ति अथ आयरन सिद्धि सम्पत्तं ॥ ७ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(चौ उववन्न सुभावं) चार स्वभाव प्रगट होगए हैं, अर्थात् अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य चार चतुष्टय प्रकाशित होगए हैं (दिगन्तरं नन्त नन्ताइ जिन दिट्ठं) इनके द्वारा श्री जिनेन्द्रने अनन्तानन्त आकाशको व लोकाकाशके पदार्थोंको देख लिया है (पयकमलं सहकारं) इस

स्वरूपके प्रकाशमें पदोंके द्वारा आत्मारूपी कमलका अनुभव है (कांति सहकार कलस जिन ढलियं) आत्म-ज्योतिका प्रकाश होना यही मानों कलशोंके द्वारा तीर्थंकरका न्हवन है ॥ १ ॥

(सहकार अर्थति अर्थं) चार अनन्त चतुष्टयके प्रकाशमें सहकारी रत्नत्रयरूपी आत्मा पदार्थ है (अर्थ सहकार कलस जिन उत्तं) इसी आत्मानुभवरूप आत्माको जिनेन्द्रने कलश कहा है (सुर विंजन परिनामं स्वर व्यंजनरूपी श्रुतज्ञानका यह फल है कि आत्माका अनुभव हो (महसं अट्ठमिम चौ उवन चौवीसं) ऐसे आत्मानु-भवरूपी १००८ कलशोंके द्वारा चौवीस तीर्थंकरोंका अभिषेक होनेसे चार चतुष्टय पैदा होगये हैं ॥२॥

(इस्टं दर्सति इन्द्रं) इन्द्ररूपी आत्मा तीर्थंकर स्वरूप इष्ट परमात्माका दर्शन करता है (सत्य सहावेन इच्छ अच्छरियं) इंद्र समान आत्मा अपने आत्मीक स्वभावसे परमात्मारूपी अपने तीर्थंकरको देखता हुआ आश्चर्यको प्राप्त होरहा है अर्थात् वारवार अनुभव करके तृप्त नहीं होता है (ऐरावति आचरन) शुद्धात्माका आचरण यही ऐरावत हाथी हैं, इसपर इन्द्र आत्मा तीर्थंकररूपी परमात्माको आरूढ़ करता है (कमल सहकार जिनेन्द विं[illegible] न) श्री जिनेन्द्रोंके स्वरूपका प्रकाश अपने कमल समान विकसित आत्माके स्वरूपसे ही होता है ॥ ३ ॥

(कलस सहाउ स उत्तं) आत्मानुभवरूपी कलशका स्वभाव कहा गया है (कमल सहवं च मनल सहकारं) यही प्रफुल्लित कमल समान आत्माका स्वरूप है इसी कलशके न्हवनसे आत्मा पवित्र होता है (भय विलय भवियानं) तब भव्य जीवोंका सांसारिक भय मिट जाता है (धम्मं सहकार सिद्धि संपत्त) यही आत्मानुभव धर्म है । इसी धर्मके सेवनसे सिद्धगति प्राप्त होती है ॥ ४ ॥

(सिद्ध सरूवं रूवं) जो सिद्ध भगवानका शुद्ध स्वभाव है वैसा ही इस आत्माका स्वभाव है (सिद्ध गुन विसेष ममल सहकारं) सिद्धोंके अनन्त दर्शन, ज्ञान, सुख, वीर्यादि गुणोंका मनन करनेसे आत्माका मैल दूर होता है (भय षिपिय कम्म गलियं) सर्व भय दूर होजाता है व कर्मोंका क्षय होजाता है (धम्म पय पयउ मुक्ति गमनं च) धर्मके पद पर सीढी सीढी चलनेसे अर्थात् गुणस्थानोंके द्वारा चढनेसे आत्मा मोक्षको चला जाता है ॥ ५ ॥

(जन्म जैयंत सुभावं) आत्मानुभवरूपी मोक्षमार्गका जन्म होना आत्माका स्वभाव ही है (जाता उववन्न जैकार ममलं च) आत्मानुभवके जगनेसे आत्माका शुद्ध स्वरूप झलक जाता है जब कर्मोंपर विजय

होजाती है (भय विरनिक भवियानं) तब भव्योंका सर्व भय क्षय होजाता है (जै जै जयवंत जन्म तित्थयरं) ऐसे तीर्थकरके जन्मकी जय हो। भावार्थ–आत्मानुभवका जन्म होना तीर्थंकरका जन्म है। यही आत्मानुभव अरहन्तरूप होकर सिद्ध होजाता है ॥ ६ ॥

(धम्म महाव संजुत्तं) जो इस आत्मानुभव धर्मकी सहायता लेना है (तारन तरणं च उवन ममलं च) उसका घातीय कर्ममल धुल जाता है, वह तारनतरन अरहन्त होजाता है (लोयालोए येमं) वह लोकालोकको देख लेता है (निमर्थ आयरन सिद्ध संपत्तं) रत्नत्रयके आचरणसे हो सिद्धगति प्राप्त होती है ॥ ७ ॥

भावार्थ—इन कलशोंकी गाथाओंमें निश्चय रत्नत्रयमई आत्मानुभवको ही धर्म कहा है। इसीके सेवनसे यह आत्मा शुद्ध होकर अरहन्त तथा सिद्ध परमात्मा होजाता है। यहांपर तीर्थंकरोंके जन्मकल्याणकको निश्चयनयसे घटाया गया है। जैसे इंद्र तीर्थंकरको ऐरावत हाथीपर आरूढ करके मेरुपर लाता है और १००८ कलशोंसे न्हवन करता है वैसे यहां यह आत्मा ही इन्द्र है सो परमात्म स्वभावधारी तीर्थंकर स्वरूप आत्माको देखकर तृप्त नहीं होता है और उन्हें शुद्धाचरण रूपी ऐरावत हाथीपर विराजमान करता है और आत्मारूप ही मेरु पर्वतके भीतर जो शुद्ध परिणति रूपी पांडुकशिला है उसपर विराजित करके आत्मानुभवके १००८ कलशोंसे अभिषेक करता है, इन कलशोंमें आत्मानन्द रूपी जल भरा हुआ है। इसप्रकार न्हवन करनेसे अर्थात् आत्मानुभवके वारवार अभ्यास करनेसे आत्मा चार घातीय कर्मोंको हरकर अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनंत सुख, अनन्त वीर्य रूप चार चतुष्टयसे शोभित होकर अरहन्त परमात्मा होजाता है। फिर यही शेष अघातीय कर्मोंका नाश करके सिद्धगति पालेता है।

आत्मानुभव ही धर्म है जैसा परमात्मप्रकाशमें कहा है—

सुणउ पउ झायंताइं, बलिबलि जोइयडाइं। समरसि भाउ परेण सहु, पुण्णु वि पाउ ण जाहं ॥ २८७ ॥

उव्वसि वसिया जो करइ, वसिया करइ जो सुण्णु। बलि किज्जउ तसु जोइयहिं, जासु ण पाउ ण पुण्णु ॥ २८८ ॥

मोहु विलिज्जइ मणु मरइ, तुट्टइ सासु णिसासु। केवलणाणु वि परिणवइ, अंबरि जाहं णिवासु ॥ २९१ ॥

भावार्थ—निर्विकल्प या शून्य ब्रह्मपद ध्यानेवाले योगियोंकी मैं वारवार मस्तक नमाकर पूजा करता हूँ, जिन योगियोंको अन्य पदार्थोंके साथ समरसी भाव है और जो पुण्य तथा पाप दोनोंको ग्रहण योग्य

होजाती है (भय खिपनिक भवियानं) तब भव्योंका सर्व भय क्षय होजाता है (जै जै जयवंत जन्म तित्थयरं) ऐसे तीर्थंकरके जन्मकी जय हो। भावार्थ–आत्मानुभवका जन्म होना तीर्थंकरका जन्म है। यही आत्मानुभव अरहन्तरूप होकर सिद्ध होजाता है ॥ ६ ॥

(धम्म सहाव संजुत्तं) जो इस आत्मानुभव धर्मकी सहायता लेता है (तारन तरणं च उवन ममलं च) उसका घातीय कर्ममल धुल जाता है, वह तारनतरन अरहन्त होजाता है (लोयालोए पेम्म) वह लोकालोकको देख लेता है (निमर्थ आयरन सिद्ध संपत्तं) रत्नत्रयके आचरणसे ही सिद्धगति प्राप्त होती है ॥ ७ ॥

भावार्थ—इन कलशोंकी गाथाओंमें निश्चय रत्नत्रयमई आत्मानुभवको ही धर्म कहा है। इसीके सेवनसे यह आत्मा शुद्ध होकर अरहन्त तथा सिद्ध परमात्मा होजाता है। यहांपर तीर्थंकरोंके जन्मकल्याणकको निश्चयनयसे घटाया गया है। जैसे इंद्र तीर्थंकरको ऐरावत हाथीपर आरूढ करके मेरुपर लाता है और १००८ कलशोंसे न्हवन करता है वैसे यहां यह आत्मा ही इन्द्र है सो परमात्म स्वभावधारी तीर्थंकर स्वरूप आत्माको देखकर तृप्त नहीं होता है और उन्हें शुद्धाचरण रूपी ऐरावत हाथीपर विराजमान करता है और आत्मारूप ही मेरु पर्वतके भीतर जो शुद्ध परिणति रूपी पांडुकशिला है उसपर विराजित करके आत्मानुभवके १००८ कलशोंसे अभिषेक करता है, इन कलशोंमें आत्मानन्द रूपी जल भरा हुआ है। इसप्रकार न्हवन करनेसे अर्थात् आत्मानुभवके वारवार अभ्यास करनेसे आत्मा चार घातीय कर्मोंको हरकर अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनंत सुख, अनन्त वीर्य रूप चार चतुष्टयसे शोभित होकर अरहन्त परमात्मा होजाता है। फिर यही शेष अघातीय कर्मोंका नाश करके सिद्धगति पालेता है।

आत्मानुभव ही धर्म है जैसा परमात्मप्रकाशमें कहा है—

सुण्णउ पउ झायंताइं, बलिबलि जोइयडाइं। समरसि भाउ परेण सहु पुण्णु वि पाउ ण जाहं ॥ २८७ ॥

उव्वसि वसिया जो करइ, वसिया करइ जो सुण्णु। बलि किज्जउ तसु जोइयहिं, जासु ण पाउ ण पुण्णु ॥ २८८ ॥

मोहु विलिज्जइ मणु मरइ, तुट्टइ सासु णिसासु। केवलणाणु वि परिणवइ, अंबरि जाहं णिवासु ॥ २९१ ॥

भावार्थ—निर्विकल्प या शून्य ब्रह्मपद ध्यानेवाले योगियोंकी मैं वारवार मस्तक नमाकर पूजा करता हूँ, जिन योगियोंको अन्य पदार्थोंके साथ समरसी भाव है और जो पुण्य तथा पाप दोनोंको ग्रहण योग्य

नहीं मानते हैं। जो ऊजड़को बसाता है अर्थात् शुद्धोपयोग रूप परिणामोंको स्वसंवेदन ज्ञानके बलसे हृदयमें स्थापन करता है और जो रागद्वेष मोहादि भावोंको ऊजड़ करता है, निकाल देता है उस योगीकी मैं पूजा करता हूँ। न वहां पाप है न पुण्य है। जिन मुनियोंका परम समाधिमें निवास है उनका मोह नाश होजाता है, मन मर जाता है, श्वास रुक जाता है, केवलज्ञान पैदा होजाता है।

(८०) चतुर्विध संघ गाथा १६१९ से १६५८ तक।

जय जय जयवंत सुभावं, जै जै जै जयो जयो जिन उवनं।
जय उवनं जय रमन, जै जै जयवन्त जयो सिद्धानं ॥ १ ॥
जय इष्टं जय उत्तं, जय मै जय सहाव उव उत्तं।
जय ढलन जय उवनं, जै जै जयवन्त जयो जय उवनं ॥ २ ॥
जय रमन जय गमनं, जै तत्काल उवन जिन रमनं।
जय गम्य अगम्य जय गमनं, जय नृतं जयो जयो जय उवनं ॥ ३ ॥
जय इस्ट दर्स दर्स, जै उवन दर्स दर्संति।
जय दर्स जय लषनं, जै लषिय अलष्य उवन जिन जिनय ॥ ४ ॥
जिन मैयं जिन सुइयं, जय मै जै सुइ उवन उवन निधि जैयं।
जय जयो जयो मन पर्जय, जै जै जैवंत केवलं ममलं ॥ ५ ॥
जय कमलं जय कलनं, जै जै जै जयो कमल ठह ठवनं।
जय कण्ठ कमल चर चरनं, चरनं सिय जयो जयो सिय रमनं ॥ ६ ॥

जय उवन उवन मिय रमनं, जय सिय जै सुइ सुयं जय उवनं ।
जय नन्त नन्त उव उवनं, जै जै जयवन्त जयो सिय रमनं ॥ ७ ॥

जय उवन उवन सिय जैयं, जै सिय जै उवन उवन ममलं च ।
जय उवन उवन सिय जैयं, धुव कमलं कमल कलन धुव वयुनं ॥ ८ ॥

धुव सिय धुव धुव उत्तं, जय धुव जय उत्तु जयो धुव वयुनं ।
जै नन्त वयुन जय उवनं, उवनं जय जयो कर्न सिय सुवनं ॥ ९ ॥

उव उवन उवन धुव उवनं, धुव सिय उवनन्त कर्न सिय समयं ।
जय उवन जयं सिय उवनं, जै धुव उवनन्त कन जै समयं ॥ १० ॥

धुव कमल कलन सिय उवनं, जै जै जयवन्त कर्न जै समयं ।
जय कर्न जय स्रवनं, जै सुवनं सुवन नन्त जय सुवनं ॥ ११ ॥

जय नन्त नन्त सुव कर्नं, कर्न सुइ जयं जयो हिय उवनं ।
जै हिय हुव उवन मिय उवनं, ज सिय उवन अरुह हिय रमनं ॥ १२ ॥

हिय रमनं जय रमनं, जाता उववन्न जयो षट् रमनं ।
हिय हुव जय सहयारं, सहयार जयो जयो हिय उवनं ॥ १३ ॥

जै हिय हुव जय उवनं, जय सहयार जै उवन अवयासं ।
अवयास जयं जय उवनं, उवनं अवयास माहि सिय कमलं ॥ १४ ॥

जय कमलं जय कलनं, जय उवनं कमल केवलं ममलं ।
कमल ममल जय जयनं, कमलं जै जयो कर्न जै समयं ॥ १५ ॥

जिन उत्त कमल जय उवनं, जाता उववन्न अर्क जय रमनं ।
अर्क अर्क अनन्तं, कमल सुइ अर्क कर्न जै समयं ॥ १६ ॥
कमल उवन जय अर्क अर्क सुइ समय जयं जय कर्नं ।
कर्न जयं जय हियनं, हिय हुव जय कमल कर्न निर्वानं ॥ १७ ॥
जय कमलं जय कर्न, जय हिय अर्क हुव अर्क अवयासं ।
जय महयार मि रमनं, जय जय जय उवन समय निर्वानं ॥ १८ ॥
समयं जय जय समयं, समय सुइ जयो उवन जय रमनं ।
समय संघ जय रमनं, जय रमनं उवन समय निर्वानं ॥ १९ ॥
उवन समय चौ संघं, संघं सुइ जयो उवन जय सुवनं ।
उवन जयं जय समयं, समयं सुइ उवन जयो निर्वानं ॥ २० ॥
जय जय संघ उवन्नं, रिसि जति मुनि अनयार उवन जै रमनं ।
दिसिनो दिसि जै उवनं, दिसियो सुइ रमन दिप्ति दिस्टं च ॥ २१ ॥
दिप्ति दिष्टि जय ममलं, ममलं जय दिष्टि दिप्ति सुइ नन्तं ।
दिप्ति दिष्ट जय जयनं, जय जय जय रिसिय सब्द पिय रमनं ॥ २२ ॥
सब्द प्रिये जै रमनं, प्रिय सहकारन जयो जय सब्दं सिद्धं ।
सब्द प्रियं पिय सब्दं, उवनं जय रमिय समय निर्वानं ॥ २३ ॥
रिसियं दिहि जय रिद्धियं, अबल बलेन जयं रिसि रिद्धियं ।
उवन कर्न हिय कमलं, कमलं सुइ कर्न रिसिय निर्वानं ॥ २४ ॥

जय जय जैवन्तं, जय जय दिप्ति दिष्टि जय सब्द ।
जय सुवन जय हियनं, जय हुव जय अवयाम जय कमलं ॥ २५ ॥
कमल कर्न सुइ जयनं, जय उववन्न विषय सुइ विलयं ।
बाधा अवध सु सहजं, उवनं जिन विषय विलय जिन जयनं ॥ २६ ॥
जय रमनं जय उवनं, जैं सुवन जय हिय उवन जय कमलं ।
रमन कसाय सु विलय जय उवनं जिन वरन्द जिन वपुनं ॥ २७ ॥
जय उत्त जय वयनं, जै कर्नं सहाव जय रमनं ।
जय अर्क अर्क जय कमलं, कमलं सुइ कर्न जयं निर्वानं ॥ २८ ॥
मुनि सिय धुव सुइ रमनं, दिप्ति सुइ दिष्टि सब्द पिय जयनं ।
जय न्यान विन्यान सु सुवनं, मै उवनं उवन केवलं न्यानं ॥ २९ ॥
जै सिय जै धुव जे कलनं, जै कमल जय कर्न मुनिय जै रमनं ।
जय अर्क अर्क सुइ ममलं, सिय धुव मुनी अक समय निर्वानं ॥ ३० ॥
हिय हुव अक सु मुनियं, अवयास उवन अक जे कमलं ।
कमल कलन सुइ कर्नं, कर्नं सुइ विंद कमल निर्वानं ॥ ३१ ॥
अवयार अर्क जय उवनं, कय विकय विलय जय उवनं ।
अन्मोय विरोह सु विलय, विलय सुइ सरनि जिनय जय उवनं ॥ ३२ ॥
जिन जय उवन सहावं, जिन दिप्ति दिस्टि जयं जिन सुवनं ।
जिन सब्द प्रियो जिन जयनं, उवनं जय उवन साहि जिन वयनं ॥ ३३ ॥

जनमन गार सु विलयं, दर्सन मोहंध आवरन विलयं ।
जय जय जयवन्त सु जैयं, जैयं सुइ कमल कन निर्वानं ॥ ३४ ॥
अनयार जय जय उवनं, आयरनं उवन अगम गम गमनं ।
लोयलोय जय उवनं, अनयारं सुर समय जयो निर्वानं ॥ ३५ ॥
जय रमनं अनयार, जय कमल कर्न उवन अवयासं ।
जय सुवनं जय सुवनं, जय कलनं कमल कन निर्वानं ॥ ३६ ॥
संघ साहु सुइ जैयं, संघ सुइ जयो उवन जय समयं ।
समय उवन जय रमनं, उवनं जय समय सुयं निर्वानं ॥ ३७ ॥
भय विलय भव्व सुइ उवनं, जै उवनं कमल कर्न ममलं च ।
कमल विंद सुइ उवनं, कर्नं सुइ विंद समय निर्वानं ॥ ३८ ॥
समय समय जय उवनं, उवनं जय समय कलन कमलं च ।
कलन कमल जय उत्तं, कमलं जय कर्न समय निर्वानं ॥ ३९ ॥
जय रंज रमन जय नन्दं, रंजं जै उवन रमन हिय जैयं ।
जय नंद नंद जिन नंदं, जय जयो जैवंत जय सिद्धं ॥ ४० ॥
रंज उवन हिय सहनं, विन्यान रंज रंज जिन जिनयं ।
भय विलय रमन जै उवनं, अमिय वै दिप्ति रमन जिन रमनं ॥ ४१ ॥
जिन रमन जयं जय उवनं, रमन जिननाय जयं जय जयनं ।
नन्द नन्द जय नंदं, चेयन सुइ नन्द जयं जिन जिनयं ॥ ४२ ॥

जिन सहज नन्द जै उवनं, जय उवनं परमनन्द जिननाहं।
जिननाहं जय उवनं, जिन उवन समय सिद्धि रमनं च ॥ ४३ ॥
जिन उवनं जिन गमनं, जिन समयं जिन जिनय जिन रमनं।
तारनतरन अन्मोय, कलनं जय कर्न समय निर्वानं ॥ ४४ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जय जय जयवंत सुभावं) आत्माका स्वभाव जयवंत रहो। आत्माके शुद्ध स्वभावकी हम जय मनाते हैं (जै जै जै जयो जयो जिन उवनं) वीतरागताके प्रकाशकी जय हो। हम उसकी जय मनाते हैं (जय उवनं जय रमनं) आत्म-प्रकाशकी जय हो, आत्म रमणकी जय हो (जै जै जयवंत जयो सिद्धानं) श्री सिद्ध परमात्माओंकी जय हो जो स्वभावको प्रकाश कर चुके हैं व जो स्वभावमें रमण कर रहे हैं ॥१॥

(जय इष्टं जय उत्तं) अपने इष्ट अनुभवने योग्य स्वभावकी जय हो, इसीको पाना ही विजय कहा गया है (जय मै जय सहाव उव उत्तं) ज्ञान स्वभावकी जय हो, यही ज्ञान आत्माका स्वभाव कहा गया है (जय दलनं जय उवनं) आत्माकी कर्मोंके विजयकी तरफ उन्नति करनेसे ही आत्माका प्रकाश होता है (जै जै जयवंत जयो जय उवनं) इस आत्माके प्रकाशकी जय हो, यह सदा आत्माके भीतर बना रहे ॥ २ ॥

(जय रमनं जय गमनं) आत्मामें रमणकी या आत्मानुभवकी जय हो, आत्माके भीतर चर्या करनेकी या स्वरूपाचरण चारित्रकी जय हो (जै तत्काल उव जिन रमनं) जिस समय आत्मामें रमण होता है उसी समय श्री वीतराग जिनके स्वभावमें रमण होता है (जय गम्य अगम्य जय गमनं) उस भावकी जय हो, जो अनुभवगम्य व मन व इन्द्रियोंसे अगम्य ऐसे आत्माके भीतर रमण करता है (जय नृतं जयो जयो जय उवनं) उसी सत्य भावकी जय हो, आत्म-प्रकाशकी सदा जय हो ॥ ३ ॥

(जय इस्ट दर्स दर्स) परम इष्ट आत्माका दर्शन देख लिया है ऐसे आत्म दर्शनकी जय हो (जय उवन जय उवन दर्स दर्संति) उस आत्म प्रकाशकी जय हो जो आत्माके दर्शनीय स्वभावको देख रहा है (जय उवन जय उवन दर्स दर्संति) उस आत्म प्रकाशकी जय हो जो अपने प्रकाशको अनुभव कर रहा है (जय दर्स नय लषनं) आत्माका प्रकाश सो ही आत्माको पहचानता है (जे लषिय अलष्य उवन जिन जिनयं) मन व इन्द्रियोंसे अगोचर आत्माको देख लेना है, वही वीतराग जिन स्वभावका उदय है ॥ ४ ॥

(जिन मैयं जिन सुइयं) वीतराग भगवान ही जानने योग्य हैं वीतराग भगवान ही अनुभव करने योग्य हैं (जय मै जै सुइ उवन उवन निधि जैयं) ज्ञानकी जय हो, स्वयं प्रकाशकी जय हो, ज्ञानके भण्डारकी जय हो (जय जयो जयो मनपर्जय) मनःपर्यय ज्ञानकी जय हो (जै जै जैवंत उवनं ममल) शुद्ध केवलज्ञानकी जय हो ॥५॥

(जय कमलं जय कलनं) प्रफुल्लित कमल समान शुद्ध आत्माकी जय हो, आत्मानुभवकी जय हो (जै न जयो कमल ठइ ठवनं) कमल समान आत्माकी जय हो, चन्द्रमाके समान शांतिधारी आत्माकी जय हो (जय कण्ठ कमल चर चरनं) अपने ही पास कमल समान शुद्धात्मामें चलना ही चारित्र है (चरनं सिय जयो जयो सिव रमनं) यह चारित्र जब शुद्ध होता है अर्थात् परम यथाख्यात होता है तब यह मोक्षको जीतकर उसीका रमण करता है ॥ ६ ॥

(जय उवन उवन सिय रमनं) आत्मप्रकाश रूप शुद्धोपयोगमें रमनकी जय हो (जय सिय जै सुइ सुयं जय उवनं) शुद्ध भावकी जय हो, आपसे आपमें प्रकाशित आत्माकी जय हो (जय नन्त नन्त उव उवनं) अनन्तानन्त ज्ञानके प्रकाशकी जय हो (जै जै जयवन्त जयो सिय रमनं) शुद्धात्मामें रमण करनेकी जय हो ॥ ७ ॥

(जय उवन उवन सिय जैयं) प्रकाशमान शुद्धोपयोगकी जय हो (जै सिय जै उवन उवन ममल च) रागादि मलसे रहित शुद्ध भावकी जय हो (जय उवन उवन सिय जैयं) उदयरूप शुद्धोपयोगकी जय हो (धुव कमलं कमल कलन धुव वयुनं) अविनाशी आत्मा कमल समान है जो प्रफुल्लित कमल समान आत्माका अनुभव कर रहा है जहां अविनाशी ज्ञान है ॥ ८ ॥

(धुव सिय धुव धुव उत्तं) ध्रुव शुद्धोपयोगको ध्रुव कहा गया है (जय धुव जय उत्तं जयो धुव वयुनं) उस अविनाशी शुद्धोपयोगकी जय हो, तथा उस अविनाशी ज्ञानकी जय हो (जै नन्त वयुन जय उवनं) अनन्त ज्ञानके प्रकाशकी जय हो (उवनं जय जयो कर्न सिय सुवनं) शुद्ध आत्माके प्रकाशकी जय हो। यह शुद्ध परिणतिका साधन है ॥ ९ ॥

(उव उवन उवन धुव उवनं) उदयरूप अविनाशी आत्म प्रकाशकी जय हो (धुव सिय उव नन्त कर्न सिय समयं) अविनाशी शुद्ध अनन्त ज्ञानका अनुभव शुद्धात्माका साधन है (जय उवन जयं सिय उवनं) शुद्धोपयोगके प्रकाशकी जय हो (जै धुव नन्त कर्न जै समयं) अविनाशी अनन्त ज्ञानकी जय हो जो विजयस्वरूप आत्माका साधन है ॥ १० ॥

(धुव कमल कलन मिय उवनं) ध्रुव कमल समान आत्माका अनुभव करनेसे शुद्ध भाव पैदा होता है (जै जै जयवन्त कर्न जै समयं) यही भाव विजयी आत्माका साधक है, उस शुद्ध भावकी जय हो (जय कर्न जय सवनं) इसी साधनकी जय हो, इस परिणतिकी जय हो (जै सुवनं सुवन नन्त जय सुवनं) उस परिणतिकी जय हो जो परिणति अनन्त गुणोंमें रमण कर रही है ॥ ११ ॥

(जय नन्त नन्त सुव कर्न) अनन्तानन्त गुण धारी आत्मामें रमण करनेरूप साधनकी जय हो (कर्न सुइ जयं जयो हिय उवनं) इस साधनकी जय हो जो आत्माके हितरूप मोक्षके प्रकाशको करनेवाला है उस हितकारी मोक्षकी जय हो (जै हिय हुव उवन सिय उवनं) हितकारी शुद्ध भावके प्रकाशकी जय हो (जै मिय उवन अरुह हिय रमनं) इसीसे हितका प्रकाश होता है तब अरहन्त होकर अपने इष्ट मोक्षभावमें रमण करता है ॥ १२ ॥

(हिय रमनं जय रमनं) हितकारी मोक्षभावमें रमण करना ही आत्माकी विजयमें रमण करना है (ज्ञाता उववन्न जयो षट् रमनं) जो प्रकाश होनेवाला था सो प्रकाशित हो गया—छः द्रव्योंका समुदाय लोक है सो जिस ज्ञानमें झलकता है उस ज्ञानमें वे रमण कर रहे हैं (हिय हुव जय सहयारं) हितकारी शुद्धात्माकी जय हो, यही मोक्षका सहायक है (सहयार जयो जयो हिय उवनं) उस सहायककी जय हो जिससे आत्महित-रूपी मोक्ष प्रगट होना है ॥ १३ ॥

(जै हिय हुव जय उवनं) हितकारी शुद्धात्मानुभवकी जय हो (जय सहयार ज उवन अवयासं) जिसकी सहायतासे अनन्तानन्त ज्ञेयोंको जगह लेनेवाले ज्ञानका प्रकाश होता है, उस अनन्त ज्ञानकी जय हो (अवयाप जयं जय उवनं) उस प्रकाशरूप अनन्त ज्ञानकी जय हो (उवनं अवयाप साहि मिय कमलं) इस केवल-ज्ञानके होनेसे ही शुद्ध कमल समान आत्माकी सिद्धि होजाती है ॥ १४ ॥

(जय कमलं जय कलनं) कमलसम आत्माकी जय हो, आत्मानुभवकी जय हो (जय उवनं कमल केवलं ममलं) शुद्ध केवल प्रफुल्लित कमल समान आत्माके प्रकाशकी जय हो (कमल ममल जय जयनं) रागादि रहित वीतराग कमल समान आत्माकी जय हो (कमलं जै जयो कर्न जै समयं) उस प्रफुल्लित आत्मारूपी कमलकी जय हो इसीसे विजयी आत्माका साधन होता है ॥ १५ ॥

(जिन उत्त कमल जय उवनं) जैसा जिनेन्द्रने कहा था वैसा यह कमल समान आत्मा प्रकाशित होगया

है उसकी जय हो (जाता उवन्न अर्क जय रमनं) जो प्रगट होनेवाला था सो प्रगट होगया है । अब यह सूर्य समान आत्मा आपमें रमण कर रहा है इसकी जय हो (अर्क अर्क अनन्तं) इस सूर्यमें अनन्त ज्ञानरूपी किरणें हैं (कमल सुइ अर्क कर्न जै ममयं) कमल है वही सूर्य है, दोनों ही आत्माकी उपमाएँ हैं। इसीका रमण आत्माकी विजयका साधन है ॥ १६ ॥

(कमल उवन जय कर्न) प्रकाशित कमल समान आत्माका अनुभव सो ही साधन है उसकी जय हो (अर्क सुइ समय जयं जय कर्न) आत्म सूर्य है सो ही आत्मा है उसकी जय हो व उसके साधक शुद्धात्मानुभवकी जय हो (कर्न जयं जय हियनं) इस साधनकी जय हो, इस हितकारीकी जय हो (हिय हुव जय कमल कर्न निर्वानं) इस हितकारी कमल समान आत्माके अनुभवकी जय हो, यही निर्वाणका साधन है ॥ १७ ॥

(जय कमलं जय कर्नं) कमलसम आत्माकी जय हो, आत्माके साधनकी जय हो (जय हिय अर्क हुव अर्क अवयासं) हितकारी सूर्यसम आत्माकी जय हो जिसमें अनन्त ज्ञानकी किरणोंका अवकाश है (जय महयार सि रमनं) शुद्धात्मानुभवमें रमण ही सहकारी है इसकी जय हो (जै जै जै उवन समय निर्वानं) निर्वाणकी जय हो, जहां आत्मा पूर्णपने प्रगट रहता है ॥ १८ ॥

(समयं जय जय ममयं) प्रेमके शुद्धात्माकी जय हो (ममयं सुइ जयो उवन जय रमनं) उस प्रकाशमान आत्माकी जय हो, जो आपमें रमण कर रहे हैं (समय संघ जय रमनं) इस शुद्ध आत्माओंके संघकी जय हो, जो आपमें रमण कर रहे हैं जय रमन उवन समय निर्वानं) उस निर्वाणकी जय हो, जहां आत्मरमण है व जहां आत्माका पूर्ण प्रकाश है ॥ १९ ॥

(उवन समय चौ संघं) यहां ऋषि, यति, मुनि, अनगार चार संघरूप आत्माओंका प्रकाश है (संघं सुइ जयो उवन जय सुवनं) इस शुद्धात्माओंके संघकी जय हो, जो आत्माके प्रकाशमें परिणमन कर रहे हैं इस प्रकाशकी व परिणमनकी जय हो (उवनो जय जय ममयं) प्रकाशमान आत्माकी जय हो (समयं सुइ उवन जयो निर्वानं) उस निर्वाणकी जय हो जहां आत्मा स्वयं प्रकाशित है । भावार्थ—यहां सिद्ध समूहको जो सिद्धक्षेत्रमें विराजमान हैं व अलग अलग अपने अपने पद्मासन व खड्गासन आदि आकारमें ज्ञान स्वरूप हैं उनके ध्यानमई स्वरूपको मुनियोंके चार प्रकार संघकी उपमा दी है ॥ २० ॥

(जय जय संघ उवनं) इस प्रकाशमान सिद्ध समूहके संघकी जय हो (रिसि जति मुनि अनगार उवन जै

रमनं) ये ही ऋषि, यति, मुनि, व अनगार हैं ये सब अपने प्रकाशमें रमण कर रहे हैं (रिसिनो रिसि जै उवनं) ये सिद्ध साक्षात् ऋषि हैं, ये अपनेमें ही गमन या परिणमन कर रहे हैं या ये अनन्त ज्ञानी हैं इससे ऋषि हैं (नोट-धातुके अर्थ गति हैं) इनके प्रकाशकी जय हो (रिसियो सुइ रमन दिप्ति दिस्टं च) ये सिद्ध ऋषिगण अनन्त दर्शन व अनन्त ज्ञान स्वभावमें रमण कर रहे हैं ॥ २१ ॥

(दिप्ति दिष्टि जय ममलं) ज्ञान तथा शुद्ध दर्शनकी जय हो (ममलं जय दिष्टि दिप्ति सुइ नन्तं) यह आवरण रहित दर्शन तथा ज्ञान अनन्त शक्तिधारी है (दिप्ति दिष्टि जय जयनं) इस अनन्त ज्ञान व दर्शनकी जय हो (जय जय जय रिसि सब्द पिय रमनं) ऋषि शब्द द्वारा कहे जानेवाले सिद्धोंकी जय हो जो अपने प्रिय स्वभावमें रमण कर रहे हैं ॥ २२ ॥

(सब्द प्रिये जै रमनं) इस प्रिय शब्दसे प्रगट योग्य आत्मरमी सिद्ध ऋषियोंकी जय हो (प्रिय सहकारेन जयो जय सब्दं) इस परम प्रिय सिद्धभावका सहकारी होनेसे इस ऋषि शब्दकी जय हो (सब्द प्रियं पिय मब्दं) प्रिय शब्द प्रिय तत्वको बतानेवाला होता है (उवनं जय रसिय समय निर्वानं) जो निर्वाणमें प्रकाशित हैं और आत्माका रस लेरहे हैं उन सिद्धोंकी जय हो ॥ २३ ॥

(रिसियं रिहि जय रिहियं) उन ऋषिसम सिद्धोंकी जय हो जो अपने शुद्ध प्रवाहमें सदा वर्तन कर रहे हैं (अनल बलेन जय रिसि रिहियं) अपूर्व आत्मवीर्यके साथ वे ऋषि स्वभावमें परिणमन कर रहे हैं उनकी जय हो (उवन कर्न हिय कमलं) वहां शुद्धात्मानुभव रूपी साधनसे साध्य हितकारी कमल समान आत्मा प्रकाशित है (कमलं सुइ कर्न रिसिय निर्वानं) आत्मारूपी कमल आप ही साधन है, आप ही निर्वाणमें विराजित ऋषि हैं ॥ २४ ॥

(जय जय जयवन्तो सु जैयं) भलेप्रकार रागादि विजयीकी जय हो (जय जय दिप्ति दिष्टि जय सब्दं) अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शन शब्दकी जय हो, यति शब्दकी जय हो जो सिद्धका बोध कराता है (जय सुवन जय हियनं) हितकारी आत्माके भीतर परिणमनकी जय हो (जय हुवयार अयवास जय कमलं) अनन्त ज्ञानरूपी आकाशकी व कमल समान आत्माकी जय हो। भावार्थ—यहां यति शब्दको सिद्धमें घटाया है। जो यतन करके कर्मोंको व रागादिको जीत लेता है सो यति है। सिद्धोंमें यथार्थ यतिपना है ॥ २५ ॥

(कमल कर्न सुइ जयनं) आत्माका साधन करना सो ही यतन है। सिद्ध भगवान आत्माका निरन्तर

अनुभव करते हैं (जय उववन्न विषय सुइ विलयं) यहां साक्षात् जयपनेका प्रकाश है। विषयोंकी इच्छाका यहाँ अभाव है (बाव अवध सु महजं) सिद्धोंमें सहज ही बाधासे रहित अव्याबाध गुण है (उवनं जिन विषय विलय जिन जयनं यहां विषयोंसे रहित होनेसे वीतराग यति पदका प्रकाश है। ऐसे सिद्ध यतियोंकी जय हो॥२६॥

(जय रमनं जय उवनं) आत्माके रमनकी जय हो (जय सुवनं जय हिय उवन जय कमल) आत्मामें परिणमनकी जय हो, मोक्षरूप हितके उदयकी जय हो, कमल समान आत्माकी जय हो (रमन कसाय सु विलयं) यहां क्रोधादि कषायोंका रमन क्षय होगया है (जय उवनं जिन वरेन्द जिन वपुनं) श्री जिनवरोंके इंद्र सिद्धोंके प्रकाशित वीतराग सहित ज्ञानकी जय हो॥ २७॥

(जय उन जय वयन) केवलीके कथनकी जय हो—जिनवाणीकी जय हो (जय कर्न सहाव जय रमनं) स्वाभाविक साधनकी जय हो, स्वात्मरमणकी जय हो (जय अर्क अर्क जय कमलं) सूर्य समान तेजस्वी आत्माकी जय हो, कमल समान प्रफुल्लित आत्माकी जय हो (कमलं सुइ कर्न अयं निर्वाणं) आत्मा आप ही साधन होकर निर्वाणको जीत लेता है॥ २८॥

(मुनि सिय धुव सुइ रमनं) मुनि वही है जो शुद्ध हो, ध्रुव हो व आत्मामें रमण करता हो (दिसि सुइ दिष्टि सब्द पिय जयनं) जिसके भीतर अनन्तज्ञान व अनन्तदर्शन हो, मुनि शब्द प्यारा है जो सिद्धोंकी विजयको बता रहा है (जय न्यान विन्यान सु सुवनं) केवलज्ञानमें स्वयं परिणमन करनेवाले सिद्धोंकी जय हो (मैं उवन उवन केवल न्यानं) आत्मज्ञानके प्रकाशसे ही उनमें केवलज्ञानका प्रकाश हुआ है। भावार्थ—यहां मुनि शब्दको सिद्धमें घटाया है। जो जाने उसे मुनि कहते हैं। सिद्धोंमें अनन्तज्ञान है इससे मुनि हैं॥ २९॥

(जय सिय जय धुव स कलनं शुद्ध भावकी जय हो, ध्रुव अविनाशी स्वभावकी जय हो, शुद्धात्मानुभवकी जय हो (जय कलनं जय कर्न मुनिय जै रमनं) स्वानुभवकी जय हो, मोक्षके साधनकी जय हो, श्री सिद्ध समान मुनिकी जय हो, आत्मरमणकी जय हो (जय अर्क अर्क सुइ ममलं) सूर्य समान आत्माकी जय हो। जो सूर्य है वही शुद्धात्मा है (सिय धुव मुनी अर्क समय निर्वानं) वही निर्वाण है जहां सिद्ध विराजित है। वे शुद्ध हैं, ध्रुव हैं, ज्ञानरूप हैं, सूर्य समान हैं तथा स्वयं आत्मारूप हैं॥ ३०॥

(हिय हुव अर्क सु मुनियं) परम हितकारी सूर्य समान स्वपर प्रकाशक ज्ञानी मुनिरूपधारी सिद्ध हैं (अवयास उवन अर्क जय कमलं) उनमें अनन्त ज्ञान प्रकाशित है। अतएव वे सूर्य समान हैं व कमल समान

है उनकी जय हो (कमल कलन सुई कर्न) आत्मारूपी कमलमें मगनता है सो ही साधन है (कर्न सुइ विंद कमल निर्वानं) साधन है सो ही ज्ञान है। आत्मारूपी कमल है सो ही निर्वाण रूप है॥ ३१ ॥

(अनयार अर्क जय उवनं) अनगाररूप सिद्ध भगवानकी जय हो, जो सूर्य समान प्रकाशित है। अनगार घर रहितको कहते हैं, सिद्धोंके कोई पर घर नहीं है, उनका घर उनका ही आत्मा है (कय-विकय विलय जय उवनं) घरमें रहते हुए संकल्प विकल्प होते हैं उन सर्व संकल्प विकल्पोंसे रहित सिद्ध भगवान प्रकाशमान हैं उनकी जय हो (अन्मोय विरोय सु विलयं) घरमें रहते हुए आत्मानन्दका विरोधी सांसारिक सुख तथा दुःख होता था व क्रोधादि कषाय होता था सो सिद्धोंके नहीं रहा है (क्रियं सुइ सरनि जिनयजिन उवनं) घरमें रहते हुए संसार भ्रमण होता, सिद्ध अनगार हैं। उनका संसार भ्रमण मिट गया है, वे कर्मोंके जीतनेवाले जिन प्रकाशित हैं॥ ३२ ॥

(जिन जय उवन सहावं) प्रकाशित स्वभावधारी सिद्ध जिनकी जय हो (जिन दिप्ति दिष्टि जिन सुवनं) वे सिद्ध जिन अनन्तज्ञान व दर्शनके धारी वीतराग भावमें परिणमन करनेवाले हैं (जिन सब्द प्रियो जिन जयनं) जिन शब्द बहुत ही प्यारा है इससे कर्मोंको जीतनेवाले जिनका बोध होता है (उवनं जय उवन सो हि जिन बयनं) इस सिद्ध प्रकाशकी जय हो जो जिनवाणीके अनुसार साधने योग्य था वह साध लिया गया॥३३॥

(जिन मन गार सु विलयं) मनुष्योंके मनमें रहनेवाला गारव या मद सो भी सिद्ध अनगारके विला गया है। यहां अनगारके अर्थ गार या गारव या मद रहितके लिये हैं (दर्शन मोहंध आवरन विलयं) दर्शन मोहनीय कर्मका आवरण भी क्षय होगया है। श्री सिद्ध भगवान क्षायिक सम्यग्दृष्टी हैं (जय जय जयवंत सु जैयं) श्री कर्मविजयी जिनकी वारवार जय हो (जैयं सुइ कमल कर्न निर्वानं) जीतनेवाले सिद्ध ही प्रफुल्लित कमल हैं। यही आत्मासे साधने योग्य निर्वाण स्वरूप हैं॥ ३४ ॥

(अनयार अर्यं जय उवनं) अनयार अर्थात् अनगार सिद्धकी जय हो या अनयार अर्थात् परमें रमनको जीतनेवाले प्रकाशमान सिद्धकी जय हो (आयरनं उवन अगम गम गमनं) जो यथाख्यात चारित्रके प्रकाशसे इंद्रिय व मनके अगोचर अनुभवगम्य आत्मामें चल रहे हैं अर्थात् आत्माको अनुभव कर रहे हैं (लोय लोय जय उवनं) जिनके प्रकाशने लोकालोकको जीत लिया है अर्थात् लोकालोक उनके ज्ञानमें है (अनयार सुइ समय जियो निर्वानं) अनगार है सो ही आत्मा है, सोई निर्वाण है उसकी जय हो॥ ३५ ॥

(जय रमनं अनयारं) आत्मामें रमण करनेवाले अनगारकी जय हो (जय कमल कर्न उवन अनयारं) कमल समान आत्माकी जय हो, जो अपने अनंत ज्ञानके लिये आप ही साधक है (जय सुवनं जय सवनं) आपमें परिणमन करनेवालेकी जय हो । अमृतके प्रवाहकी जय हो (जय कलनं कमल कर्न निर्वानं) आत्मानुभव करनेवालेकी जय हो, यह आत्मा आप ही निर्वाणका साधन है ॥ ३६ ॥

(संघ साहु सु जैयं) ऐसे चार प्रकार साधु संघ रूप सिद्धोंकी जय हो (संघं सुइ जयो उवन जय समयं) इस साधु संघकी जय हो जो आपमें प्रकाशमान है। शुद्ध आत्माओंकी जय हो (समय उवन जय रमनं) आत्माके प्रकाशमें रमन करनेवालोंकी जय हो (उवनं जय समय सुयं निर्वानं) उस ज्ञान प्रकाशकी जय हो जिससे आत्मा स्वयं निर्वाणका लाभ कर लेता है ॥ ३७ ॥

(भय विलय भव्व सुइ उवनं) भव्य जीवोंका सब भय दूर होगया है जब उनमें ज्ञानका प्रकाश हुआ है (जय उवनं कमल कर्न ममलं च) उस आत्म प्रकाशकी जय हो जिससे कमल समान आत्मा अपनी शुद्धिका आप ही कारण होता है (कमल विंद सुइ उवनं) आत्मारूपी कमलका अनुभव होना ही आत्माका प्रकाश है (कर्न सुइ विंद समय निर्वानं) वही आत्मज्ञान साधक है जिससे आत्मा निर्वाणको पा लेता है ॥ ३८ ॥

(समय समय जय उवनं) आत्मासे आत्माको प्रकाश करनेवालेकी जय हो (उवनं जय समय कलन कमलं च) उस आत्म प्रकाशकी जय हो जिससे आत्मा अपने आत्मारूपी कमलका स्वाद लेता है (कलन कमल जय उत्तं) आत्मानुभव रूप कमलसे ही आत्माकी विजय कही गई है (कमलं जय कर्न समय निर्वानं) उस आत्मा कमलकी जय हो जो आत्माके निर्वाणका साधन है ॥ ३९ ॥

(जय रंग रमन जय नंदं) आत्माके आनन्दमें मगन होनेवालेकी जय हो । आत्मानन्दकी जय हो (रंज जय उवन रमन हिय जैयं) आनंदके प्रकाशकी जय हो, मोक्षरूपी हितमें रमणकी जय हो (जय नंद नंद जिनं नंदं) आनंदमें मगन आनन्दमई जिनेन्द्रकी जय हो (जय जयो जैवंत जय सिद्धं) कर्म विजयी व संसार विजयी सिद्धोंकी जय हो ॥ ४० ॥

(रंज उवन हिय सहनं) आनन्दका प्रकाश होना ही अपने हितका प्राप्त करना है (विन्यान रंज रंज जिन जिनयं) ज्ञानानन्दमें मगन जिनेन्द्र ही वीतरागी वीर हैं (भव विलय रमन जै उवनं) निर्भय स्वरूपमें रमण

करनेवाले प्रकाशमान सिद्धोंकी जय हो (अमिय वैदिप्ति रमन जिन रमनं) आनन्दामृतसे पूर्ण ज्ञानमें रमण करनेवाले वीतराग भावमें रमण करनेवाले है ॥ ४१ ॥

(जिन रमन जयं जय उवनं) जिन स्वभावमें रमण करनेवालेकी जय हो । आत्माके प्रकाशकी जय हो (रमन जिननाथ जयं जय जयनं) आत्मरमी जिनेन्द्रकी जय हो। कर्मके विजयकी जय हो (नंद नंद जय नंदं) परमानन्दमई सुखकी जय हो (चेयन सुइ नंद जयं जिन जिनयं) चिदानन्दमई वीतरागी जिनकी जय हो ॥ ४२ ॥

(जिन सहज नंद जय उवनं) सहजानन्दमई प्रकाशमान जिनकी जय हो (जय उवनं परम नंद जिननाहं) प्रकाशमान परमानन्दमई जिननाथकी जय हो (जिननाहं जय उवनं) जिननाथके आत्म प्रकाशकी जय हो (जिन उवन समय सिद्धि रमनं च) वीतरागी ज्ञानमय आत्मा ही सिद्धगतिमें रमण करते हैं ॥ ४३ ॥

(जिन उवनं जिन गमनं) जिन स्वभावका प्रकाश सो ही जिन स्वभावका परिणमन है (जिन समयं जिन जिनय जिन रमनं) विजयी आत्मा ही वीतराग जिन है जो वीतराग भावमें रमण करता है (तारन तरन अन्मोयं) वही तारण तरण है, वही आनन्दमय है (कमलं जय कर्न समय निर्वानं) उस आत्मारूपी कमलकी जय हो जो आत्माके निर्वाणका आप ही साधन है ॥ ४४ ॥

भावार्थ—इन गाथाओंमें सिद्धोंका ही गुणगान है। उनको चार प्रकार साधुसंघकी उपमा दी है। रिषि, यति, मुनि, अनगार ये चार संघ प्रसिद्ध हैं। जैन सिद्धांतमें ऋद्धिधारी मुनियोंको ऋषि कहते हैं। उपशम या क्षपकश्रेणीपर आरूढ़ ध्यानी मुनियोंको यति कहते है, अवधि व मनःपर्ययज्ञानी साधुओंको मुनि कहते हैं, गृहरहित सामान्य साधुओंको अनगार कहते है।

यहां शब्दार्थ लेकर सिद्धोंमें घटाया है। जो अपने स्वरूपमें गमन करें, परिणमन करें वे रिषि हैं। जो अपने स्वरूपका पतन करके विजय प्राप्त करें सो यति हैं। जो ज्ञानमई हो वे मुनि हैं। जो गृहरहित-परके आधार रहित दिगम्बर दिशारूपी वस्त्रको धारण करनेवाले सर्व द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म रहित हों वे अनगार हैं। इन चारों ही नामोंके अनुसार गुणोंके धारी सिद्ध भगवान हैं। सिद्ध समूह पृथक २ सत्ताको लिये हुए सिद्धक्षेत्रमें बिराजमान हैं। मानो चार सघ ही साधकोंके हैं। वे पूर्वावस्था अपेक्षा भी साधक हैं। वर्तमानमें भी आत्मानन्दका साधन कर रहे हैं। वे सिद्ध ही सच्चे साधु हैं। वे आत्मामें रमण करनेवाले हैं, परमानन्दमई हैं, शुद्धात्मा हैं, निर्विकार हैं, अमूर्तीक हैं, परमानन्दी हैं। केवल ज्ञान,

केवल दर्शन, क्षायिक सम्यक्त, परम यथाख्यात चारित्रके धारी हैं। सिद्ध भावका साधक शुद्धात्मानुभव है। आत्मा आत्माहीके द्वारा आत्माको प्रकाश करता है, मोक्षमार्ग आत्माहीमें है, आत्माका आत्मारूप श्रद्धान सम्यग्दर्शन है। आत्माका आत्मारूप ज्ञान सम्यग्ज्ञान है। आत्माका आत्मामें चलना सम्यक्चारित्र है। तीन स्वरूप आत्मा ही है। आपकी सिद्धि आपसे ही होती है। अतएव जो सिद्ध गतिको प्राप्त करना चाहे उसको एक आत्माकी ही शरण लेकर उसीका ध्यान करना चाहिये। परमात्म-प्रकाशमें कहा है—

जे परमप्पहं भत्तियर, विसय ण जे वि रमंति। ते परमप्प-पयासयहं, मुणिवर जोग्ग हवंति ॥ ३३६ ॥

जं तच्चं णाणरूवं परममुणिगणा णिच्च झायंति चित्ते। जं तच्चं देहचत्तं णिवसइ भुवणे सव्वदेहीण देहे ॥

जं तत्त दिव्व देहं तिहुवण-गुरुवं सिज्झए संत जीवे। तं तच्चं जस्स सुद्धं फुरइ णियमणे पावए सो हु सिद्धिं ॥३४१॥

भावार्थ—जो परमात्माके भक्त भव्यजीव मुनि इंद्रियोंके विषयोंमें नहीं रमते हैं, वे ही मुनिवर परमात्माके प्रकाशके योग्य होते हैं। जो तत्वज्ञान स्वरूप है, जिसको परम मुनिगण सदा चित्तमें ध्याते हैं, जो तत्व शरीरसे रहित है, अमूर्तीक है और इस लोकमें सर्व देहधारियोंकी देहमें विराजित है। जो तत्व स्वयं ज्ञानानन्दमई अपूर्व देहको रखनेवाला है और तीन लोकमें बड़ा है व जिनका आराधन करके शांत परिणामी जीव सिद्धिको पाते हैं। वह आत्मतत्व परम शुद्ध जिसके मनमें प्रकाशमान होता है वही सिद्धिको निश्चयसे पाता है।

(८१) हिय डोरिनी फूलना गाथा १६६९ से १६७३ तक।

उव उवनौ उवन उवनपओ, उव उवनौ उवनौ समय संजुत्तु ॥ हिय डोरिनी० ॥ १ ॥
सम समय सहावे साहियो। जिन साहियो उवन स उत्तु ॥ हिय डोरिनी० ॥ २ ॥
उव उवन स उत्तउ जिनय पओ। जिन जिनियो नन्त अनन्तु ॥ हिय डोरिनी० ॥ ३ ॥
उव उवन अर्क सुइ उवन पओ। जिन उवनौ उवन उवन दसंतु ॥ हिय डोरिनी० ॥ ४ ॥

उव उवन झडप सुइ मरनि पौ। जिन उवनो उवन न्यान विलयंतु ॥हिय डोरिनी०॥ ५ ॥
उव उवन दिप्ति दिपि दिप्ति मौ। जिन उवनो उव उवन दिप्ति जिन उत्तु ॥हिय डोरिनी०॥ ६ ॥
दिपि दिप्ति दिस्टि सम साहियो। जिन दिष्टि हि दिस्टि दिप्ति संजुत्तु ॥हिय डोरिनी०॥ ७ ॥
उव उवन सब्द पिय जिनय जिनु। जिन विंद सुइ विंद कमल जिन उत्तु ॥हिय० ॥ ८ ॥
जिन कमल सब्द जिन उवन मौ। जिन विंद सुइ विंद सहय जिन उत्तु ॥ हिय० ॥ ९ ॥
हिययार उवन जिन उवन मौ। जिन कमलह कमल कलन जिन उत्तु ॥ हिय० ॥ १० ॥
दिपि दिप्ति दिस्टि पिउ सब्द मौ। जिन हिययुव हिययुव कमल कलंतु ॥ हिय० ॥ ११ ॥
अन्मोय कलन कलि कमल मौ। जिन हिय सहयार जिन उत्तु ॥ हिय० ॥ १२ ॥
जं तारन तरन सहाउ मौ। जिन उवने जिन उवने रयन जिनुत्तु ॥ हिय० ॥ १३ ॥
जं पूर्व तरन कलि कमल मओ। जिन अन्मोय अन्मोय समय जिनुत्तु ॥ हिय० ॥१४॥
जिन उवन समय सुइ सहज जिनु। जिनु समय सिद्ध समय सिद्धि सम्पत्तु ॥हिय०॥१५॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनो उवन उवन पओ) **प्रकाशमान आत्म प्रतीति रूप सम्यग्दर्शनका उदय हुआ है** (उव उवनो उवनो समय संजुत्तु) **आत्मानुभव रूप प्रकाशका उदय हुआ है** (हिय डोरिनी) **यही हितकारी डोर है जो मोक्षनगर तरफ लेजायगी ॥ १ ॥**

(सम समय सहावे साहियो) **समतारूप आत्मीक स्वभावसे मुक्तिका साधन होता है** (जिन सहियो उवन स उत्तु) **उसीको वीतराग भाव सहित प्रकाश कहते हैं ॥ २ ॥**

(उव उवन स उत्तउ जिनय पउ) **इसी साधनसे जिनेन्द्रका पद प्रकाशमान होता है** (जिन जिनियो नंत अनंतु) **श्री जिनेन्द्र अनंतानंत कर्मोंको जीत लेते हैं ॥ ३ ॥**

(उव उवन अर्क सुइ उवन पओ) **श्री जिनेन्द्रका पद सो ही प्रकाशमान सूर्यका उदय है** (जिन उवनो उवन उवन दर्संतु) **श्री जिनेन्द्र प्रगट हैं। वे अपने स्वभावसे आत्म प्रकाशके उदयको दिखा रहे हैं ॥ ४ ॥**

(उव उवन झड़ा सुइ मग्नि पौ) जो संसारका मार्ग चला आरहा है उसको शीघ्र ही (उवन न्यान विलयंतु जिन ऊवनौ) आत्मज्ञानका प्रकाश दूर कर देता है। वीतराग अरहंत पद प्रगट होजाता है ॥ ५ ॥

(उव उवन दिप्ति दिपि दिप्ति मौ) तब अनंत ज्ञानमई चमकती ज्योति प्रगट होजाती है (जिन उवनौ उव उवन दिष्टि जिन उत्त) अरहंतपदके होते ही अनंतदर्शन प्रगट होजाता है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है ॥ ६ ॥

(दिपि दिप्ति दिष्टि मम महियो) अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन व समभाव रूप वीतरागतासे अरहन्त-पदका साधन है। अरहन्त पदमें ये गुण होते हैं (जिन दिष्टिहि दिप्टि दिप्ति मंजुत्तु) जिनेन्द्रका दर्शन या प्रकाश ज्ञानदर्शन सहित ही होता है ॥ ७ ॥

(उव उवन सब्दपिय जिनय जिनु) प्रिय जो जिन शब्द है उसीके अनुसार कर्म विजयी जिनपद प्रगट होगया है (जिन विंद सुइ विंद कमल जिन उत्तु) वीतराग विज्ञानमई अरहन्त है सो ही ज्ञानमई कमल है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है ॥ ८ ॥

(जिन कमल सब्द जिन उवन मौ) कमल शब्दसे जाननेयोग्य श्री जिनेन्द्र अपने गुणोंको विकास करके प्रगट है (जिन विंद सुइ विंद महय जिन उत्तु) वे ही वीतराग विज्ञानमय हैं, उनहीको क्षायिक सम्यग्दर्शनका अनुभव करनेवाला जिनेन्द्रने कहा है ॥ ९ ॥

(हिययार उवन जिन उवन पौ) श्री जिनेन्द्रका प्रकाशित पद परम हितकारी है, उनके उपदेशसे मोक्ष-मार्ग प्रगट होता है (जिन कमलह कमल कलन जिन उत्त) श्री जिनेन्द्र कमल समान विकसित हैं, उसी कमलका स्वाद लेनेवाला उन्हे श्री जिनेन्द्रने कहा है ॥ १० ॥

(दिपि दिप्ति दिप्ति पिउ सब्द मौ) दर्शन व ज्ञानके जो प्रिय शब्द हैं उनके अनुसार ही वे अनंतदर्शन अनंत ज्ञानमें उदय रूप हैं (जिन हिय हुव हिय हुव कमल कलंतु) वे जिनेन्द्र स्वपर हितकारी आत्मारूपी कम-लका स्वाद लेते रहते हैं ॥ ११ ॥

(अन्मोय कलन कल कमल मौ) वे जिनेन्द्र आनन्दानुभवकी कलीके धारक कमल स्वरूप हैं (जिन हिय सहयार हिय सहयार जिन उत्त) उन ही जिनेन्द्रको आत्माके हितमें सहकारी ऐसा हित सहकारी श्री जिनेन्द्रने कहा है ॥ १२ ॥

(जं तारन तरन सहाउ मौ) वे ही अरहन्त तारणतरण स्वभावके धारी हैं (जिन उवने जिन उवने रयन

जिनुत्त) श्री जिनेन्द्रके प्रकाशमें श्री जिनेन्द्रके भीतर विराजित रत्नत्रय शोभायमान है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है । अर्थात् अरहन्तमें अभेद या निश्चय रत्नत्रय विराजमान हैं ॥ १३ ॥

(जं पूर्व तरन कलि कमल ममो) श्री अरहन्त भगवान पूर्ण जहाज हैं । आप तरते हैं व दूसरोंको तारते हैं तथा वे ही ज्ञानकलासे पूर्ण कमल समान हैं (जिन अन्मोय अन्मोय समय जिनुत्तु) वे जिनेन्द्र आनन्दमय हैं। श्री जिनेन्द्रने उनको अनन्त सुखमई आत्मा कहा है ॥ १४ ॥

(जिन उवन समय सुइ सहज जिनु) श्री वीतराग प्रभुका विकसित आत्मा ही सहज या स्वभावसे ही जिन स्वरूप है (जिनु समय सिद्ध समय सिद्धि संपत्तु) वे ही जिनेन्द्र आत्मारूप हैं । वही अरहन्तका आत्मा सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ १५ ॥

भावार्थ—यहां यही बताया है कि सम्यग्दर्शनकी डोर जिसके हाथमें आजाती है वह अवश्य सिद्धपदको प्राप्त कर लेता है । सम्यग्दर्शन आत्माके शुद्ध स्वभावकी प्रतीतिका नाम है। इसके होते हुए आत्म साक्षात्कार होजाता है तब आत्माका अनुभव झलक जाता है। आत्मानुभवमें रत्नत्रयकी एकता है । यही मोक्ष मार्ग है । इसीके निरन्तर अभ्याससे आत्मा शुद्ध होता हुआ घातीय कर्मोंको नाशकर अरहन्त हो जाता है। वे अरहन्त अपने दिव्य उपदेशसे अनेक भव्यजीवोंको मोक्षमार्ग बताते हैं। वे तारणतरण जहाज हैं, वे ही सूर्य हैं, वे ही कमलके समान प्रफुल्लित हैं, स्वात्मानन्दमें मगन हैं, वे ही आयुको अन्तकर सर्व कर्मरहित सिद्ध परमेष्ठी होजाते हैं । वास्तवमें आत्मज्ञान ही मोक्षमार्ग है । परमात्मप्रकाशमें कहा है—

देउ णिरंजणु इउ भणइँ, णाणिं मुक्खु ण भंति । णाण विहूणउ जीवडा, चिरु संसार भमंति ॥ १९८ ॥

णाण विहीणहं मोक्खपउ, जीव म कासु वि जोइ । बहुयइ सलिल विरोलियइ, करु चोप्पडउ ण होइ ॥ १९९ ॥

तं णिय-णाणु जि होइ ण वि, जेण पवड्ढइ राउ । दिणयर किरणहिं पुरउ जिय, किं विलसइ तम-राउ ॥ २०१ ॥

भावार्थ—वीतराग सर्वज्ञ भगवान ऐसा कहते हैं कि आत्मज्ञानसे ही मोक्ष होती है । इसमें भ्रांति मत जान । जो आत्मज्ञान रहित जीव हैं वे दीर्घकाल तक संसारमें भ्रमण करते हैं । हे जीव ! आत्मज्ञानके बिना किसी जीवके भी मोक्षमार्ग तू मत देख । जैसे पानीके मन्थनेसे कभी हाथ चीकने नहीं होसक्ते। आत्मज्ञान बिना सर्व क्रिया मोक्षसाधक नहीं है । हे जीव ! जिससे रागकी वृद्धि हो वह आत्मज्ञान नहीं

होसक्ता जैसे-सूर्यके किरणोंके आगे अंधकारका विस्तार कैसे रह सक्ता है। वीतरागता सहित आत्मज्ञान ही मोक्षमार्ग है।

(८२) संजोय भक्ति पचीसी गाथा १६७४ से १६९८ तक।

उव उवनौ उवन उवन पओ, उव उवनौ रमन स उत्तु।
रमन सहावे रे पर्म पउ, सुइ रमन सिद्धि सम्पत्तु॥
जिन जिनयति जिनय जिनेन्द पओ, जिन जिनय कम्म विलयंतु।
जिन जिनय सहावे रे सोइ ममय मउ, जिनु समय सिद्धि संपत्तु॥ (आचरी)॥ १॥
जिन जिनय सहावे रे जिन कलन मओ, जिन कलन कमल जिन उत्तु।
जिन कलन चरन रे सुइ कन मओ, जिन कलन समय सिधि रत्तु॥ ३॥ जिन जिन०॥
जिन अन्मोए रे सुइ कलन पिओ, कलन उवन जिन उत्तु।
कलन अन्मोए रे सुइ चरन पओ, सुइ कलन कर्न संजुत्तु॥ ४॥जिन जिन०॥
सुइ कलन उवने दिपि दिप्ति मओ, सुइ रमन रयन संजुत्तु।
कल कलन रंजु जिन उवन पओ, जं उवन समय संजुत्तु॥ ५॥ जिन०॥
उव उवने उवन सहाउ मुनी, दिपि दिप्ति अनन्त अनन्तु।
दिपि परनामू सुइ दिप्ति मओ, दिपि दिप्ति दिस्टि संजुत्तु॥ ६॥ जिन०॥
मम समय उवनो दिप्ति दिष्टि सुइ, जिन नाह दिस्टि सुइ उत्तु।
अंगदि अंगह रे सुइ लब्धि मो, दिपि दिष्टि सिद्धि सम्पत्तु॥ ७॥ जिन०॥

रुइ रमन जिनय जिनु रे समय मओ, रुइ सब्द प्रिये जिन उत्तु ।
रुइ नन्त अनन्त हरे जिन रमन पौ, हर समय सिद्धि संपत्तु ॥ ८ ॥ जिन० ॥
कम कमल उवनो रे कलन पओ, कल कलन रंजु जिनु उत्तु ।
कल कलियो लोय अलोय पओ, परिनामु कलन जिन रंजु ॥ ९ ॥ जिन० ॥
कल कलनह कलियो हो कमल मओ, कम कमल कलिय जिन उत्तु ।
तरन सहावे रे कलन रंजु, कलि समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ १० ॥ जिन० ॥
कलियो कमलह हो कलन पओ, जिन कल्प अनन्तानन्तु ।
कलन सहावे कमल पौ, सुइ केवल कमल जिनुत्तु ॥ ११ ॥ जि
कमलह लियो हो चरन चरु, कमल कर्न सुइ उत्तु
कमलह चरियो हो चरन पओ, चरि कमल सिद्धि सम्पत्तु ॥ १२ ॥ जिन० ॥
कमल कलन चरु चरन पौ, कलन कर्न संजुत्तु ।
तरन सहावे कलन सुइ, अन्मोय सिद्धि संपत्तु ॥ १३ ॥ जिन० ॥
कमलह कलियो हो उवन पओ, सुइ सोलहि संजुत्तु ।
सुयं लब्धि सुइ समय मौ, सुइ समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ १४ ॥ जिन० ॥
सुयं अर्क सुइ अर्क जिनु, सुइ अर्क विंद जिन उत्तु ।
भय विलय अर्क ससहाउ मौ, सुइ अर्क कमल कलयन्तु ॥ १५ ॥ जिन० ॥
दिप्तिहि दिष्टिहि सुइ अर्क जिनू, सब्द हियार जिनुत्तु ।
सब्द सहावेरे सुइ अर्क पिओ, उव उवन साहि सिधि रत्तु ॥ १६ ॥ जिन० ॥

अवयास अर्क जिन उवन मओ, कमल कण्ठ सुइ अर्क।
अर्कह रमियो हो रमन पओ, सुइ कमल कलिय सिधि रत्तु ॥ १७ ॥ जिन० ॥
नो उत्पन्न रे सुइ अर्क जिनू, नो नृत उवन रमंतु।
नो उत्पन्न हो रमन पओ, सुइ न्यान रमन सिधि रत्तु ॥ १८ ॥ जिन० ॥
कमलह कलियो हो दर्स जिनू, कमल चतुर्दिस दिष्टि।
दानह दर्सिउ हो नन्त पओ, सुइ लब्धि सिद्ध सम्पत्तु ॥ १९ ॥ जिन० ॥
कमलह भुक्तउ हो कलन पओ, कलनह केवल उत्तु।
उव उवनह मुक्तेउ हो पर्म जिनु, सुइ समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ २० ॥ जिन० ॥
कमलह वीय विन्यान पउ, वीयह कल जिन उत्तु।
कलह सहावे रे मुक्ति पओ, उव कलन समय सिधि संपत्तु ॥ २१ ॥ जिन० ॥
कमलह कलियो हो जिन वयनु, सम समय उवन संजुत्तु।
उव उवन उवन हो समय पओ, सह समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ २२ ॥ जिन० ॥
कमलह कलियो हो चरन पओ, कर्नह चरन चरंतु।
तारन तरन सहाउ मउ, सह समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ २३ ॥ जिन० ॥
सुयं सहावे हो सुयं जिनु, सुयं लब्धि संजुत्तु।
षोढसु भावे हो परिनवै, सुइ कलन मुक्ति सम्पत्तु ॥ २४ ॥ जिन० ॥
सुइ सेवि सहावे हो कलन मओ, सुइ तार कमल जिन उत्तु।
अन्मोय सहावे हो पर्म जिनु, सह समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ २५ ॥ जिन० ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनो उवन हवन पओ) अब सम्यग्दर्शनरूपी पद्का प्रकाश होगया है (उव उवनो रमन स उत्त) इसहीको आत्मीक रमनका उदय कहते हैं (रमन सहावे रे पर्म पउ) आत्मीक रमनका स्वभाव ही परमपद् है (सुइ रमन सिद्धि संपत्तु) इसी आत्मरमणके स्वभावसे ही सिद्धि अवस्था प्राप्त होती है ॥ १ ॥

(जिन जिनयति जिनय जिनेन्द पओ) श्री जिनेन्द्रका अरहन्त पद कर्मोंको जीतनेवाला वीर पद है (जिन जिनय कम्म विलयन्तु) जिस जिनपद्के होते ही कर्मोंका क्षय होजाता है (जिन जिनय सहावे रे सोही समय मऊ) श्री जिनेन्द्रका अपने स्वभावमें रहना सो ही समयसार है (जिन समय सिद्धि संपत्त) ऐसा ही जिन स्वरूप आत्मा सिद्धिको पाता है ॥ २ ॥

(जिन जिनय सहावे रे जिन कलन मओ) श्री जिनेन्द्र अपने जिन स्वभावमें रहते हुए वीतराग भावका अनुभव करते हैं (जिन कलन कमल जिन उत्तु) उन्हींको श्री जिनेन्द्रने शुद्धात्मामें अनुभव करनेवाला प्रफुल्लित कमल समान आत्मा कहा है (जिन कलन चरन रे सुइ कर्न मओ) श्री वीतराग जिनका अनुभवरूप जो चारित्र है वही मोक्षका साधक है (जिन कलन समय सिद्धि रत्तु) जो वीतराग भावका अनुभव करनेवाला आत्मा है वही मानों सिद्ध स्वभावमें रमण करनेवाला है ॥ ३ ॥

(जिन अन्मोए रे सुइ कलन पिओ) जो वीतराग जिन स्वभावमें मगन हैं वही स्वानुभव रूप है (कलन उवन जिन उत्तु) उसीको शुद्धात्मानुभवका प्रकाश जिनेन्द्रने कहा है । (कलन अन्मोए रे सुइ चरन पओ) आत्मानुभवका आनंद् लेना सोही चारित्रपद है (सुइ कलन कर्न संजुत्त) सो ही स्वात्मानुभव मोक्षका साधक है ॥ ४ ॥

(सुइ कलन उवन दिपि दिप्ति पओ) जब शुद्धात्मानुभव होता है तब ज्ञानकी ज्योतिका प्रकाश होता है (सुइ रमन रयन संजुत्त) वही रत्नत्रयभावोंमें रमण करना है (कल कलन रजु जिन उवन पओ) आत्मानंदमें वार वार परिणमन करनेसे आत्मीक शुद्ध पद प्रगट होता है (जं उवन समय संजुत्तु) वह प्रकाश आत्मारूप है ॥ ५ ॥

(उव उवने उवन सहाव मुनी) अब मुनि महाराज अपने स्वभावमें प्रकाशित हैं (दिपि दिप्ति अनंत अनंतु) इस स्वभावके प्रकाशसे ही अनन्त ज्ञानकी ज्योति झलक गई है (दिपि परिन मू सुइ दिप्ति मओ) ज्ञानमई भाव ज्ञानरूप ही हो रहे हैं (दिपि दिप्ति दिष्टि सजुत्त) इस अनंत ज्ञानकी ज्योतिके साथ अनंतदर्शन भी है ॥ ६ ॥

(सम समय उवनो दिप्ति दिप्ति सुई) अब यहां समताभाव सहित आत्मा प्रकाशित है, जहां ज्ञान शुद्ध ज्ञानमई ही है उसमें रागद्वेष मलका अभाव है (जिन नाह दिष्टि संजुत्त) इसीको श्री अरहन्त जिनेन्द्रका

प्रकाश कहते हैं (अंगदि अंगह रे सुई लब्धि नौ) श्री अरहन्तकी आत्मामें नौ लब्धियोंका ग्रहण है। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्तभोग, अनन्त उपभोग, अनन्त दान, अनन्त लाभ, अनन्त वीर्य, क्षायिक सम्यक्त व क्षायिक चारित्र (दिपि दिष्टि सिद्धि संपत्तु) जहां आत्माका प्रत्यक्ष दर्शन होजाता है वहां आत्मा सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ ७ ॥

(रुइ रमन जिनय जिनु रे ममय मओ) आत्मरुचिरूप वीतराग सम्यग्दर्शनमें रमण करना ही वीतराग जिनपद है, सो ही समयसार है (रुइ मठ प्रिय जिन रुचु) श्री जिनेन्द्रने रुचिक शब्दको प्रिय या हितकारी कहा है। क्योंकि शुद्धात्माकी रुचि ही निर्वाणमें मुख्य कारण है (रुइ नन्त अनन्तह रे जिन रमन पौ) इस वीतराग रुचिसे या सम्यक्तसे अनन्तानन्त कर्मोंका क्षय होजाता है व वीतराग विज्ञानमई जिनपदमें रमण होता है (रुइ ममय मिद्धि संपतु) आत्माकी रुचिसे ही आत्मा सिद्धिको पाता है ॥ ८ ॥

(कम कमक उवनो रे कलन पओ) रे भाई ! स्वात्मानुभवरूपी रमणीक कमल समान आत्माका उदय हुआ है (कल कलन रंजु जिनु उत्त) इसीको जिनेन्द्र भगवानके आनन्दमें मगन रहना कहा है (कल कलियो लोय अलोय पओ) इसमें लोक तथा अलोकका ज्ञान विद्यमान है (परिनामु कलन जिन रंजु) यहीं वीतराग व आनन्दमई परिणामोंका प्रकाश है ॥ ९ ॥

(कल कलह कलियो हो कमल मओ) स्वरूपमें परिणमन करते हुए यह आत्मा प्रफुल्लित कमल समान होजाता (म कमल कलिय जिन उत्त) इसीको जिनेन्द्रने रमणीक कमलका प्रकाश कहा है। अर्थात् आत्मा अपने स्वभावमें शोभ रहा है (तरन सहावे रे कलन रंजु) यह भगवान आनन्दमगन होते हुए भव्यजीवोंके लिये जहाज के समान स्वभावधारी हैं (कलि समय सिद्धि संपतु) स्वानुभवमें परिणमन करनेवाला आत्मा ही सिद्धिपदको पाता है ॥ १० ॥

(कलियो कमलह हो कलन पओ) स्वानुभवमें मगन आत्मारूपी कमल स्वानुभवरूप है (जिन कलन अनंतानंतु) अनंतानंत गुणमई पर्यायमें श्री जिन भगवान मगन हैं (कलन सहावे कमल पौ) यह स्वानुभवरूप स्वभावधारी आत्माका कमल समान प्रफुल्लितपद है (सुइ केवल कमल जिनुत्त) इसीको जिनेन्द्रने केवलज्ञानी विकसित कमलसम आत्मा कहा है ॥ ११ ॥

(कमलह कलियो हो चरन चरु) आत्मारूपी कमलमें मगनता ही यथाख्यात चारित्र है (कमल कर्न सुइ

उत्तु) इसी चारित्रको आत्मारूपी कमलका साधन होगया है (कमलह चरियो हो चरन पओ) आत्मारूपी कमलमें परिणमन करना ही चारित्रका पद है (चरि कमल सिद्धि संजुत्तु) इस कमल समान आत्मामें चलनेसे ही अर्थात् आत्मीक रमणसे ही सिद्ध गतिकी प्राप्ति होती है ॥ १२ ॥

(कमल कलनह चरु चरन पओ) आत्मारूपी कमलमें मगनता ही यथाख्यात चारित्रका पद है (कलन कर्म संजुत्त) यही आत्माका साधन है (लगन महात्रे कलन सुइ) यह आत्मामें तल्लीनता ही मोक्षद्वीपके लिये जहाज है (अन्मोय सिद्धि संजुत्तु) आत्मानन्दमें मगनता ही सिद्धपदको प्रदान करती है ॥ १३ ॥

(कमलह कलियो हो उवन पओ) कमल समान आत्माके अनुभवसे शुद्धात्मपद प्रगट हुआ है (सुइ सोलह संजुत्तु) वह पद सोलह वाणीके शुद्ध सुवर्णके समान शुद्ध है (सुसंलग्नि सुइ समय मौ) वह स्वयं अपने स्वभावको प्राप्त है, वही समयसार है (सुइ समय सिद्धि संजुत्तु) वही आत्मा सिद्धगतिको पाता है ॥ १४ ॥

(सुयं अर्क सुइ अर्क जिनु) वही जिनेन्द्र सूर्यके समान परम तेजस्वी महान् सूर्य है (सुइ अर्क विंद जिन उत्तु) उसीको जिनेन्द्रने ज्ञानरूपी सूर्य कहा है (भय विलय अर्क स महाउ मौ) वहां सर्व भय क्षय होगया है वह अपने स्वभावमें है (सुइ अर्क कमल कलयन्तु) वही सूर्य है, वही स्वानुभव करनेवाला कमल समान विकसित आत्मा है ॥ १५ ॥

(दिप्तिहि दिष्टिहि सुइ अक जिनु) वे जिनेन्द्र सूर्य अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शन स्वरूप हैं (सब्द हियार जिनुत्त) जिनेन्द्रने कहा है कि जिनेन्द्र शब्द ही हितकारी है, उनके नाम लेनेसे भाव शुद्ध होता है (सब्द महावे रे सुइ अर्क पिओ) इस जिनेन्द्र शब्दके स्वभावसे ही उसीके द्वारा मनन करनेसे आनन्दरूपी अर्कका या रसका पान होता है (उव उवन साहि सिधि रत्तु) श्री अरहन्तमें साध्यका उदय होगया है, यहींपर आत्मा सिद्धभावमें रत है ॥ १६ ॥

(अवयाम अर्क जिन उवन मओ) श्री जिनेन्द्र भगवानका प्रकाशरूप ज्ञानमई सूर्य है (कमल कण्ठ सुइ अर्क) वही सूर्य समान आत्मा कमल समान प्रफुल्लित है (अर्कह रमियो रमन पओ) इस सूर्यमें रमण करना ही स्वानुभवमई पद है (सुइ कमल कलिय सिधि रत्तु) इसी कमलमें मगन होना सोही सिद्धस्वभावमें रति है॥१७॥

(नो उत्पन्न रे सुइ अर्क जिनु) वे सूर्य समान जिनेन्द्र द्रव्यकी अपेक्षा उत्पन्न नहीं होते हैं (नो नृत उवन रमंतु) न ऐसा है कि किसी सत्य गुणकी उत्पत्ति होती है जिसमें रमते हैं अर्थात् वे अपने अनादिकालीन

स्वभावमें ही रत हैं (नो उत्पन्न हो रमन पओ) न कभी वह आत्मरमण पद उत्पन्न हुआ है (सुइ न्यान रमन सिधि पत्तु) वे अपने स्वभावसे ही ज्ञानमें रमते हुए सिद्ध भावमें मगन हैं ॥ १८ ॥

(कमलइ कलियो हो दर्म जिनु) श्री जिनेन्द्र अरहन्त पद्मासनपर विराजित समोसरणमें दिखलाई पड़ते हैं (कमल चतुर्दिसि दिष्टि) वह पद्मासन सहित अरहन्त चारों दिशाओंमें भव्यजीवोंको दिखलाई पड़ते हैं, यह समवसरणका अतिशय है (दानह दर्सिओ हो अनन्त पओ) वे अनन्त गुणधारी अरहन्त ज्ञानदान देते हुए दिखलाई पड़ते हैं (सुइ लब्धि सिद्ध सम्पत्तु) ऐसी शक्तिके धारी अरहन्त भगवानकी सिद्ध गतिको ही पालेते हैं ॥ १९ ॥

(कमलइ भुक्तउ हो कलन पओ) स्वानुभव कर्ता अरहन्त अपने आत्मारूपी कमलका भोग करते हैं (कलनह केवल उत्तु) वहां केवलज्ञानमें तन्मयता कही गई है (उव उवनइ भुक्तउ हो परम जिन) वे परमात्मा जिन स्वभावसे उत्पन्न आनन्दको भोगनेवाले हैं (सुइ समय सिद्धि सम्पत्तु) वे ही आत्मा सिद्धगतिको पाते हैं॥२०॥

(कमलइ वीर्य विन्यान पउ) कमल समान आत्मा अनन्त वीर्य सहित अनन्त ज्ञानके धारी हैं (वीर्यहि कल जिन उत्त) अनन्त वीर्यका वहां अनुभव है, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (कलह सहावे रे मुक्त पओ) इस स्वात्म-रमण स्वभावसे ही वे मुक्तिको पाते हैं (उव कलन समय सिधि सम्पत्तु) ऐसे आत्मानुभवी अरहन्त आत्मा सिद्धगतिको पाते हैं ॥ २१ ॥

(कमलह कलियो हो हो जिन वयनु) जिनेन्द्रका वचन यही है कि आत्मारूपी कमलका अनुभव करो (मम समय उवन संजुत्तु) इसीसे ही समभाव सहित आत्माका प्रकाश होता है (उव उवन उवन हो समय पओ) प्रकाश होते होते आत्मा स्वयं परमात्म पदको पालेता है (मह समय सिद्धि संपत्तु) ऐसा अरहन्त आत्मा सिद्धिको पाता है ॥ २२ ॥

(कमलह कलियो हो चरन पौ) आत्मारूपी कमलमें तन्मय होना ही शुद्धाचरण है (कर्नह चरन चरंतु) मोक्षका साधन स्वचारित्रमें रमना है (तरन तरन सहाउ पउ) तब अरहन्त तारण तरन स्वभावधारी होजाते हैं (मह समय सिद्धि संपत्तु ऐसा ही आत्मा सिद्ध गति पालेते हैं ॥ २३ ॥

(सुयं सुहावे हो सुयं जिनु) यह जिन भगवान स्वयं अपने स्वभावमें मगन हैं (स्वयं लब्धि संजुत्तु) स्वयं अनन्त ज्ञानादि लब्धिके धारी हैं (षोडस भावे हो परिनवै) यह सोलह वाणीके सुवर्ण समान शुद्ध भावमें

परिणमन कर रहे हैं (सुइ कलन मुक्ति संपत्तु) ऐसा ही स्वानुभवकर्ता आत्मा मुक्तिको पालेता है ॥ २४ ॥

(सुइ सेनि सहावे हो कलन मओ) यह आत्मा क्षपकश्रेणी द्वारा चढ कर अरहन्त हो स्वात्मानुभवरूप है (सुइ तार कमल जिन उत्तु) इन्हीं अरहन्तको तारनेवाले कमल समान जिन कहा गया है (अन्मोय सहावे हो परम जिनु) यह जिनेन्द्र आनन्द स्वभावधारी हैं (सह मयय सिद्धि संपत्तु) यही आत्मा सिद्धिको पालेता है ॥२५॥

भावार्थ—इस पचीसीमें यह दिखलाया है कि मुक्तिका लाभ या सिद्धगतिका संयोग उसीको होगा जो सम्यग्दृष्टी होकर आत्मानुभव करेगा। जो क्षायिक सम्यक्ती होकर क्षपकश्रेणीपर चढेगा वही मोहको क्षय कर सकेगा, वही यथाख्यात चारित्रको पा सकेगा, वही फिर ज्ञानावरण दर्शनावरण व अन्तरायका भी क्षय करके नौ लब्धियोंका स्वामी अरहन्त परमात्मा होजायगा। वे अरहन्त स्वयं निर्भय हैं व प्राणीमात्रको अभयदान व ज्ञानदान देते हैं। वे सूर्यके समान तेजस्वी हैं। कमलके समान गुणोंमें प्रफुल्लित हैं। वे समताभावमें व वीतराग परिणतिमें परिणमन करते हुए अतीन्द्रिय आनन्दका निरन्तर भोग करते हैं। वे परम निरञ्जन हैं। वे धर्मोपदेश देते हैं तब समवसरणके सर्व प्राणी सुनते हैं। तथा चारों तरफ बैठे हुए मानवोंको ऐसा विदित होता है कि मानो अरहन्त तीर्थंकरका मुख हमारी ही तरफ है। वे मोक्षमार्गको बताकर अनेक भव्योंका हित करते हैं। वे अमुक अंशमें सर्व कर्मोंसे रहित होकर सिद्धपदको पा लेते हैं। मोक्षमार्ग एक स्वात्मानुभव है जिसमें सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्र तीनों गर्भित हैं। इसलिये जिसको मुक्तिका संयोग मिलाना हो उनको आत्मज्ञानका लाभ करके आत्मानुभवका अभ्यास करना योग्य है। परमात्मप्रकाशमें कहा है—

जो इय णियमणि णिम्मलए, पर दीसइ सिउसंतु। अंबरि णिम्मलि घण-रहिए, भाणु जिमि जेम फुरंतु ॥ ११९ ॥

राएं रंगिए हियवडए, देउ ण दीसइ संतु। दप्पणि मइलए बिंबु जिम, एहउ जाणि णिभंतु ॥ १२० ॥

णियमणि णिम्मलि णाणियहं, णिवसइ देउ अणाइ। हंसा सरवरि लीणु जिम, महु एहउ पडिहाइ ॥ १२२ ॥

भावार्थ—हे योगी! अपने निर्मल मनमें अपना ही परमात्मा परम शांत व आनन्दमई दिखलाई पड़ता है। जैसे बादलोंसे रहित निर्मल आकाशमें सूर्य प्रगट होता है। रागसे रंगे हुये मनमें शांत परमात्माका दर्शन नहीं होता है। जैसे मैले दर्पणमें मुख नहीं दीखता ऐसा तू सन्देह रहित जान। ज्ञानियोंके वीतरागमई अपने मनमें अनादि परमात्मादेव आराधने योग्य निवास कर रहा है। जैसे मानसरोवरमें

लीन हुआ हंस बसता है, मुझे ऐसा झलकता है। भाव यही है कि आत्माको परमात्मा समान अनुभव करनेसे ही सिद्धि होगी।

(८३) परमेष्ठी बत्तीसी गाथा १६९९ से १७३१ तक।

जिन उवन उवन मौ इष्ट उवन पौ, उवन सब्द दर्संतु।
जिंन उवन अर्क रै विंद समय सुइ, विन्यान विंद दर्संतु ॥ १ ॥
जिन उवन मओ उत्पन्न मओ, जिन उवन सब्द दर्संतु।
जिन हियइ रमनु सहयार गमनु, जिन गम्य अगमि विलसंतु ॥
जिननाथ अमिय रस सिद्धि पऊ ॥ २ ॥ (आचरी)
जिन उवन लषु उत्पन्न लषु, जिन परम लष्य लष्यंतो।
जिन गम्य गमु उत्पन्न गमु, जिन नन्त गम्य जिन उत्तु ॥ जिन उवन० ॥ ३ ॥
जिन इष्ट अर्क उत्पन्न अर्क, जिन अर्क समय सुइ उत्तु।
जिन बिंब मओ विन्यान मओ, परमेस्टि इस्टि जिन उत्तु ॥ जिन० ॥ ४ ॥
जिन हियइ इस्ट उत्पन्न दिस्तु, हिय गम्य अगम्य संजुत्तु।
हिययार रमनु हिय समय सरनु, हिय अव्वावाह अनन्तु ॥ जिन० ॥ ५ ॥
जिन उवन इस्टि हिययार दिष्टि, सहयार समय संजुत्तु।
जिन उवन लषु सह समय अलषु, सहयार हियार जिनुत्तु ॥ जिन० ॥ ६ ॥
जिन सहै समय सहयार रमैं, जिन गुप्ति दिस्टि दरसंतु।
जिन गुप्ति उवन पौ गुप्ति रमन मौ, हिययार उवन विलसंतु ॥ जिन० ॥ ७ ॥

जिन उवन सिरी उत्पन्न सिरी, हिययार सिरी रस उत्तु ।
जिन सहै समय हिययार रमै, महयार सिरी सिधि रत्तु ॥ जिन० ॥ ८ ॥
जिनु भय षिपियं जिनु अमिय पियं, जिन दिप्ति दिस्टि दसंतु ।
जिन उवन जई हिययार जई, सहयार जई जैवन्त ॥ जिन० ॥ ९ ॥
जिन इस्ट रमनु उत्पन्न रमनु, परमेष्टि रमन जिन उत्तु ।
जिन अवल वली अन्मोय मिली, विषुविलय सिद्धि सपत्तु ॥ जिन० ॥ १० ॥
जिन रमन उत्तु परमेस्टि जुत्तु, तं न्यान रमन संजुत्तु ।
अन्मोय अवल वलु विषय विलय षलु, जिनरूप मुक्ति संजुत्तु ॥ जिन० ॥ ११ ॥
जिन उवन विली उत्पन्न मिली, जिन मुक्त विली दसंतु ।
हिय रमन मिली हिय उवन विली, जिन सिद्ध मुक्ति दसंतु ॥ जिन० ॥ १२ ॥
जिन गुप्ति मिली विनन्द विली, जिन रमन न्यान संजुत्तु ।
अन्मोय वली विष विषय विली, जिन रमनं सिद्धि संपत्तु ॥ जिन० ॥ १३ ॥
जिन इष्ट इस्टु उत्पन्न उस्टु, जिन समय प्रमान सु इष्ट ।
जिन इस्ट दर्स उत्पन्न दर्स, जिन न्यान सिरी इष्टंतु–
परमेस्टि रमन तं मुक्ति पओ ॥ जिन० ॥ १४ ॥
अन्मोय न्यान सुइ सुद्ध जानु, उव उवन सब्द दिस्टतु ।
जिन अमिय पियं जिनरंज सुयं, जिननाथ सिद्धि संपत्तु ॥ जिन० ॥ १५ ॥
परमेस्टि इस्टि उत्पन्न इस्टि, परमेस्टि सुयं सुइ लपु ।
परमेस्टि दर्स उत्पन्न दर्स, तं दर्सिउ उवन अलपु ॥ जिन० ॥ १६ ॥

परमेस्टि पयं जिन न्यान मयं, तं न्यान आह्वान अनन्तु ।
जिन भय षिपियं जिन जीव पियं, आह्वान मुक्ति दर्संतु ॥ जिन० ॥ १७ ॥
परमेस्टि गमन तं न्यान रमनु, तं गम्य अगम्य विलसंतु ।
परमेस्टि इस्टिं उत्पन्न इस्टि, परमस्टि नृत दर्संतु ॥ जिन० ॥ १८ ॥
तं नृत नृत रे झडप गलिय सुइ, तं नृत दृष्टि मंजुत्तु ।
भय षिपिय भव्वु सहु ममल न्यान मौ, तं अमिय दिस्टि दर्संतु ॥ जिन० ॥ १९ ॥
जिन भय गलियं भय इस्ट गलं, भय उवन सुयं विलयंतु ।
परमेस्टि अभय उत्पन्न समय, परमस्टि सिद्धि संपत्तु ॥ जिन० ॥ २० ॥
परमेस्टि अर्क उत्पन्न अर्क, सर्वार्थ अर्क जिन उत्तु ।
परमस्टि रमन तं सिद्ध गमन, सर्वार्थ अर्क मंजुत्तु ॥ जिन० ॥ २१ ॥
परमेष्टि इस्टि उत्पन्न इस्टि, जिन अर्थ समर्थ मंजुत्तु ।
जिन अर्थ न्यानमय सर्वन्य अर्थमय, परमेस्टि रमन सिधि रत्तु ॥ जिन० ॥ २२ ॥
जिन विंद रमनु विन्यान गमनु, परमेस्टि रमन रम उत्तु ।
जिन मग्ग अगम रै मुक्ति रमन सुइ, जिन सुद्ध रमन मंजुत्तु ॥ जिन० ॥ २३ ॥
जिन सरन इस्टु उत्पन्न श्रस्टु, जिन विंद सजोय स उत्तु ।
परमेस्टि परम रै कम्म गलिय सुइ, अन्मोय विंद रस नन्तु ॥ जिन० ॥ २४ ॥
जिन षिपक इस्टु षिपि उवन इस्टु, परमेस्टि रमन जिन उत्तु ।
जिन समय सुवनु जिन न्यान रमनु, षिपि कम्म मुक्ति दसतु ॥ जिन० ॥ २५ ॥

स्थान इस्टु उत्पन्न दिष्टु, आवरन न्यान जिन उत्तु।
परमेस्टि रमन रै आयरन ममल पौ, परमस्टि अमिय संजुत्तु ॥ जिन० ॥ २६ ॥
स्थान रमनु हिययार गमनु, उत्पन्न इस्ट दसंतु।
परमेस्टि रमन रस ममल न्यान जस, भय षिपनिक मुक्ति संजुत्तु ॥ जिन० ॥ २७ ॥
जिन गहिर इस्टु उत्पन्न दिस्टु, परमेस्टि न्यान संजुत्तु।
जिन गुप्त मिलय उत्पन्न निलय, परमस्टि दर्स दसंतु ॥ जिन० ॥ २८ ॥
जिन गुपित गमनु तं अमिय रमनु, भय षिपनिक भव्वु स उत्तु।
जिन न्यान रमनु विन्यान गमनु, जिननाथ रमन जिन उत्तु ॥ जिन० ॥ २९ ॥
जिन जान इस्टु उत्पन्न दिस्टु, तं न्यान विन्यान संजुत्तु।
परमेस्टि इस्टि रय मन पर्यय रै, जिन लोय लोय दसंतु ॥ जिन० ॥ ३० ॥
जिन इस्ट पऊ उत्पन्न पऊ, जिनपद विंदह संजुत्तु।
परमेस्टि परम पय न्यान उवन मौ, पय विंद मुक्ति दसंतु ॥ जिन० ॥ ३१ ॥
अन्मोय न्यान सम समय जान, पय विंद विन्यान संजुत्तु।
तं तारन तरन मउ अमिय ममल रउ, सिद्ध समय सिद्धि संपत्तु ॥ जिन० ॥ ३२ ॥
जिन भय षिपियं जिन अमिय पिय, भय सल्य संक विलयनु।
जिन ममल ममल सुइ विंद रमन रै, परमेस्टि सिद्धि संपत्तु ॥ जिन० ॥ ३३ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जिन उवन उवन मौ इष्ट उवन पौ) श्री जिनेन्द्र प्रकाश स्वरूप हैं, परम इष्ट हैं, ज्ञानपदमें विराजित हैं (उवन स्बद दसंतु) उवन शब्द बताता है कि वे प्रकाशरूप हैं शुद्ध हैं (जिन उवन

अर्क रै विंद समय सुइ) श्री जिनेन्द्र भगवान सूर्य समान तेजस्वी हैं, ज्ञानरूपी धनके धारी आत्मा हैं (विन्यान विंद दसैंतु) वहां ज्ञानका अनुभव दीख रहा है या वे अपने स्वभावसे ज्ञानचेतनाको दिखा रहे हैं ॥ १ ॥

(जिन उवन मओ उत्पन्न मओ) श्री जिनेन्द्र भगवान उदयरूप हैं, चार घातीय कर्म क्षय करके प्रगट हुए हैं (जिन उवन मऊ दर्सतु) जिन उवन शब्द इसी बातको दिखाता है (जिन हिय रमनु सहयार गमनु) श्री जिनेन्द्र अपने भीतर रमण कर रहे हैं उनके रमणमें सहकारी ज्ञान है (जिन समय [illegible] विलसंत) श्री जिनेन्द्र इंद्रियगम्य स्थूल व इंद्रियोंसे अतीत सूक्ष्म पदार्थोंका ज्ञान धारी ऐसे ज्ञान स्वभावका आनन्द लेरहे हैं। (जिननाथ अमिय रम सिद्धि पऊ) श्री जिनेन्द्र आनन्द रसमें मगन होते हुए सिद्धगतिको पाते हैं ॥ २ ॥

(जिन उवन रूपु उत्पन्न रूपु) श्री जिनेन्द्र भगवानका प्रकाश देखने योग्य है। उनकी अरहन्त पर्याय जो प्रगट हुई है वह जानने योग्य है (जिन प म रूप्य लप्यनो) श्री जिनेन्द्र अनुभव करनेयोग्य परमात्म स्वरूपका अनुभव कर रहे हैं (जिन रम्य रमु उत्पन्न रमु) श्री जिनेन्द्र ज्ञानगम्य आत्मामें रमण करनेसे ही केवलज्ञानको प्राप्त हुए हैं (जिन नंत गम्य जिन उत्तु) वे अनन्त ज्ञानके धारी हैं ऐसा जिनेन्द्रने कहा है ॥ ३ ॥

(जिन इष्ट अर्क उत्पन्न अर्क) श्री जिनेन्द्रने आत्मारूपी सूर्यका अनुभव किया था, उसी अनुभवसे उनका आत्मारूपी सूर्य प्रगट हुआ है (जिन अर्क समय सुइ उत्तु) उनके आत्माको वीतराग व सूर्यसम ज्ञानी कहते हैं (जिन विंद मओ विन्यान मओ) वे जिनेन्द्र स्वानुभवरूप हैं व ज्ञान स्वरूप हैं (प म स्ट इष्ट जिन उत्तु) उनको ही परम पदमें रहनेवाला परमेष्ठी तथा परम हितकारी जिनेन्द्रोंने कहा है ॥ ४ ॥

(जिन हियइ इष्ट उत्पन्न दिप्टु) श्री जिनेन्द्रने अन्तरङ्गमें परम इष्ट परमात्मासे उपयोग लगाया था उसीसे अनंतदर्शनको प्रगट किया है (हिय गम्य अगम्य संजुत्तु) वे अपने ज्ञानसे स्थूल व सूक्ष्म पदार्थोंको जान रहे हैं (हिययार रमनु हिय मग्य मगनु) वे हितकारी आत्मीक पदमें रमण कर रहे हैं, वे हितकारी आत्माके स्वरूपमें परिणमन कर रहे हैं (हिय अव्वाबाह अनंतु) वे हितकारी व बाधा रहित अनन्त सुखमें विराजित हैं ॥ ५ ॥

(जिन उवन इष्टि हिययार दिष्टि) श्री जिनेन्द्रके भीतर जो इष्ट आत्मीक ज्ञानका प्रकाश है वह हितकारी खड्ग है जिससे चार अघातीय कर्मोंका क्षय होगा (सहयार समय संजुत्तु) वहां सहकारी आत्माका स्वभाव है (जिन उवन रूपु सह समय अरूपु) श्री जिनेन्द्रमें ज्ञानका लक्ष्य है उसीके साथ अतीन्द्रिय आत्मा

प्रगट है (सहयार हियार जिनुत्तु) वे ही भव्यजीवोंके लिये हितकारी हैं व सहायकारी हैं ऐसा जिनेन्द्रने कहा है अर्थात् भव्यजीव उनकी पूजा व भक्ति करके अपना हित करते हैं ॥ ६ ॥

(जिन सई ममय सहयार रमें) श्री जिनेन्द्र भगवान् परम धीर हैं, आत्माके साथ ही रमण करते हैं (जिन गुप्ति दिष्टि दर्मंतु) श्री जिनेन्द्र आत्माका गुप्त दर्शन कर रहे हैं, अथवा यह दिखलाते हैं कि आत्माका अनुभव मन, वचन, कायकी गुप्ति रखनेसे होगा (जिन गुप्ति उवन पौ गुप्ति रमन मौ) श्री जिनेन्द्र आत्माके गुप्त स्वभावको प्रगट कर चुके हैं। तथा उसी अनुभवगम्य गुप्त आत्मामें रमण कर रहे हैं (हिययार उवन विरमंतु) वे ज्ञानकी सहायतासे ही आनन्द लेरहे हैं ॥ ७ ॥

(जिन उवन सिरी उत्पन्न सिरी) श्री जिनेन्द्र भगवानके ज्ञान दर्शन वीर्य सुखादि लक्ष्मी उत्पन्न होगई है तथा वह लक्ष्मी सदा प्रकाशरूप है (हिययार सिरी रम उत्तु) वहां हितकारी आनन्दमई लक्ष्मीके रसका वेदन कहा गया है (जिन सई ममय हिययार रमें) श्री जिनेन्द्र भगवान आत्माके स्वभावको रखनेमें वीर हैं तथा हितकारी आनन्दमें रमण कर रहे हैं (सहयार सिधि रत्तु) इस आत्मीक लक्ष्मीके साथ वे सिद्ध भावमें मगन हैं ॥ ८ ॥

(जिन भय षिपियं जिन अमिय पियं) श्री जिनेन्द्रका सर्व भय क्षय होगया है। श्री जिनेन्द्र आनन्दरूपी अमृतका पान करते हैं (जिन दिप्ति दिस्टि दर्मंतु) श्री जिनेन्द्रमें अनन्तज्ञान व अनन्तदर्शन प्रगट है (जिन उवन जई हिययार जई) श्री जिनेन्द्रमें जयपना प्रगट है, वे हितकारी कर्मोंकी विजयको रखनेवाले हैं (सहयार जई जेवंत) यह सहकारी व आत्माको उपकारी रागादिक व कर्मकी विजय जयवंत हो ॥ ९ ॥

(जिन इष्ट रमन उत्पन्न रमनु) श्री जिनेन्द्र भगवान प्रिय आत्म-सुखमें रमण कर रहे हैं या अपने ज्ञानके प्रकाशमें रमण कररहे हैं (परमेस्टि रमन जिन उत्तु) वे परमेष्ठीपदमें रमण करनेवाले जिन कहे गये हैं (जिन अबल बली अन्मोय मिली) श्री जिनेन्द्र अनुपम वीर्यके धारी हैं जहां आनन्दका मेल है (विपु विलय सिद्धि संपत्तु) स्वात्माके आनन्दके भोगसे सर्व विषयभोगका विष दूर होगया है व ऐसे ही अरहन्त आत्मा सिद्धिको पाते हैं ॥ १० ॥

(जिन रमन उत्तु परमेस्टि जुत्तु) श्री जिनेन्द्र परमेष्ठी पदके धारी वीतराग भावमें रमण कर्ता कहे गये हैं (तं न्यान रमन संजुत्तु) वे ज्ञान स्वभावमें रमण कर रहे हैं (अन्मोय मबल बलु विषय विलय षलु) स्वात्मा-

नन्दके अनुपम बलसे उनके विषयभोगोंकी इच्छा निश्चयसे विला गई है (जिन रमन मुक्ति मंजुत्तु) ऐसे श्री जिनेन्द्र मोक्षके भीतर रमण कर रहे हैं ॥ ११ ॥

(जिन उवन विली उत्पन्न विली) श्री जिनेन्द्रके रागादिका उदय विला गया है व वीतराग भावका उदय प्राप्त होगया है (जिन मुक्त विलि दर्मंतु) श्री जिनेन्द्रके इंद्रियोंके द्वारा भोगका अभाव है ऐसा वे अपने स्वरूपसे प्रगट कर रहे हैं (हिय रमन मिली हिय उवन विली) हितकारी आत्मसुखकी रमणता प्राप्त है, उस हितकारी आत्म-सुखसे सर्व दुःखका उदय विला गया है (जिन सिद्ध मुक्ति दर्मंतु) श्री जिनेन्द्र भगवान सिद्धमय मुक्तिका स्वरूप देख रहे हैं ॥ १२ ॥

(जिन गुप्ति मिलि विनंद विली) श्री जिनेन्द्रको अपनी गुप्त आत्मनिधि मिल गई है तब सर्व दुःखका क्षय होगया है (जिन रमन न्यान मंजुत्त) श्री जिनेन्द्र भगवान ज्ञान स्वभावमें रमण कर रहे हैं (अन्मोय बली विष विषम विली) आत्मानन्दका स्वाद बलवान है, जिसके प्रतापसे भयानक विषयवासनाका विष दूर हो जाता है (जिन रमन सिद्धि संप्.) जो वीतराग भावमें रमण करता है वह सिद्धगतिको पाता है ॥ १३ ॥

(जिन इस्ट उत्तु उत्पन्न उष्टु) श्री जिनेन्द्रके वीतराग भावमें प्रेमालु होनेसे ज्ञानका प्रकाश होता है, उसी प्रकाशसे सर्व अन्धकार नाश होकर केवलज्ञानका प्रभात उदय होजाता है, सर्व अज्ञान अन्धकार मिट जाता है (जिन समय प्रमान सु इस्ट) वीतराग आत्माका केवलज्ञान प्रमाण ज्ञान है व वही इष्ट है। (जिन इष्ट दर्म उत्पन्न दर्म) श्री जिनेन्द्रने आत्मज्ञानके दर्शनसे ही अनन्त दर्शनको या अनन्त आत्मप्रकाशको प्राप्त किया है (जिन न्यान सिरी इष्टन्तु) और केवलज्ञान रूपी इष्ट लक्ष्मीको भी श्री जिनेन्द्रने प्राप्त कर लिया है (परमेस्टि रमन तं मुक्ति पओ) जो परमपदमें रमण करते हैं वे मुक्तिको पाते हैं ॥ १४ ॥

(अन्मोय न्यान सुइ सुद्ध जनु) अनन्त सुख सहित अनंतज्ञान सो ही शुद्ध ज्ञानानन्द स्वभाव जानो (उव उवन सब्द दिस्टंतु) यह बात 'उवन' शब्दसे प्रगट होती है, जिसका अर्थ उत्पन्न या उदय या प्रकाश है (जिन अमिय पियं जिन रंज सुयं) श्री जिनेन्द्रका आनन्दामृतका पान करना सो ही स्वयं वीतराग स्वभावमें मगन होना है (जिननाथ सिद्धि संपत्त) श्री जिनेन्द्र ही सिद्धिको पाते हैं ॥ १५ ॥

(परमेस्टि इस्टि उत्पन्न इस्टि) श्री अरहन्त व सिद्ध परमेष्ठीमें प्रेम करनेसे परमपद जो इष्ट मोक्ष है सो प्रगट होता है (परमेस्टि सुयं सुइ रुपु) ध्यानाका लक्ष्य स्वयं परमेष्ठी या परमात्मा होना चाहिये। उसी

लक्ष्यसे उस लक्ष्यपर पहुंच जाता है (परमेस्टि दर्म उत्पन्न दर्म) परमेष्ठी परमात्माके दर्शनसे आत्मदर्शन या आत्मानुभव प्रगट होता है (तं दर्सिउ उवन अलषु) इस आत्मानुभवके दर्शनसे अलक्ष्य-अतीन्द्रिय आत्माका प्रकाश होजाता है ॥ १६ ॥

(परमेस्टि पयं जिन न्यानमयं) परमेष्ठीका पद वीतराग विज्ञानमई है (तं न्यान आह्वान अनन्तु) उसी पदमें लीन होनेसे वह पद अनन्त ज्ञानको बुला लेता है अर्थात् वीतराग विज्ञानमई भावमें रमनेसे अनन्तज्ञान प्रगट होजाता है (जिन भय पिपिय जिन जीव पियं) जिनका भय दूर होजाता है व जो वीतराग आत्माका रस पान करते हैं (अह्वान मुक्ति दर्सेतु) वे मुक्तिको बुलाकर उसका दर्शन करते हैं ॥ १७ ॥

(परमेस्टि गमन तं न्यान रमनु) श्री अरहन्त व सिद्ध परमेष्ठीमें लीन होना सो ही आत्मज्ञानमें रमण है ! क्योंकि यह आत्मा निश्चयसे परमात्मा है (तं गम्य अगम्य विलसंतु) वहीं आत्माके ज्ञानका आनन्द है जो ज्ञान स्थूल व सूक्ष्म इंद्रियगोचर व अतीन्द्रिय गोचर सर्व पदार्थोंको जानता है (परमेस्टि इस्टि उत्पन्न इस्टि; परमेष्ठी परमात्मामें भक्ति ही इष्ट मोक्षपदको उत्पन्न करती है (परमेस्टि नृत दर्सेतु) परमेष्ठी अरहन्त भगवान ही सत्य वस्तु स्वरूपको दिखलाते हैं ॥ १८ ॥

(तं नृत नृत रे झडा गलिय सुइ) सत्य वस्तुको वारवार मनन करनेसे अज्ञानका व असत्यका सर्वथा नाश होजाता है (तं नृत दृष्टि संजुत्तु) तब सत्य सम्यग्दर्शन प्रगट होता है (भय षिपिय भव्वु सुइ ममल न्यान मौ; तब सर्व संसारका भय मिट जाता है और वह भव्यजीव शुद्ध ज्ञानमई भावका अनुभव करता है (तं अमिय दिस्टि दर्सेतु) तब वह आनन्दामृतसे पूर्ण आत्मदर्शनको देख लेता है ॥ १९ ॥

(जिन भय गलियं भय इस्ट गलं) श्री जिनेन्द्रका सर्व भय गल गया है, अपने इष्टपद मोक्षकी प्राप्तिकी शङ्का दूर होगई है (भयं उवन सुयं विलयंतु) भय उत्पत्तिका कारण भय नोकषाय स्वयं क्षय होगया है (परमेस्टि अभय उत्पन्न समय) अब तो सर्व भय रहित परमेष्ठी परमात्माका पद प्रगट है (परमेस्टि सिद्धि संपत्तु) यह अरहन्त परमेष्ठी सिद्धको पाते हैं ॥ २० ॥

(परमेस्टि अर्क उत्पन्न अर्क) अरहन्त परमेष्ठी सूर्यके समान सदा प्रकाशमान सूर्य हैं (सर्वार्थ अर्क जिन उत्तु) उन हीको श्री जिनेन्द्रने सर्व लोकालोक पदार्थोंका प्रकाशक सूर्य कहा है (परमेस्टि रमन तं सिद्ध गमन) परमेष्ठी

पदमें रमण करना सो ही सिद्धपदमें जाना है (सर्वार्थ अर्क मंजुत्त) सिद्ध पद सर्व प्रयोजनको सिद्ध किये हुए कृतकृत्य सदा प्रकाशमान सूर्य हैं ॥ २१ ॥

(परमेष्टि इष्टि उत्त त्र इष्टि) अरहन्त परमेष्टीमें प्रेम करने हीसे अरहन्तपदका प्रकाश होता है (जिन अर्थ समर्थ मजुत्त) वीतराग विज्ञानमई आत्मपदार्थ बड़ा बलवान है (जिन सर्थ न्यानमय सर्वज्ञ अर्थमय) श्री जिनेन्द्र ज्ञानमई पदार्थ हैं, सर्वज्ञ हैं, सर्व पदार्थोंके ज्ञाता हैं (परमेष्टि रमन सिधि रत्तु) परमेष्टी पदमें रमण करना है सो ही सिद्धपदमें रति करना है ॥ २२ ॥

(जिन विंद रमनु विन्यान रमनु) श्री वीतराग विज्ञान भावमें रमण करना सो ही ज्ञानका प्राप्त करना है (परमेष्टि रमन रस उत्तु) उसीको परमेष्ठी पदके रमणसे आनन्द रसका लाभ कहा गया है (जिन मग्ग आगम रे मुक्ति रमन सुइ) जिनेन्द्र कथित रत्नत्रयमई मार्ग मात्र अनुभव गम्य है। मन व इंद्रियोंसे अगम्य है। वही प्रवाह रूपसे चढ़कर मुक्तिके शुद्ध स्वभावमें रमणरूप है। स्वानुभव ही कारण है। अपूर्ण भाव कारण है, पूर्ण भाव कार्य है (जिन सुद्ध रमनु मजुत) श्री शुद्ध वीतराग जिन सिद्ध भगवान भी आत्मीक भावमें रमणरूप हैं ॥ २३ ॥

(जिन मग्ग इष्टु उत्त त्र श्रेष्टु) जो जिनेन्द्रके मार्गका प्यारा है वही श्रेष्ठ पद-परमात्मपदको झलका लेता है (जिन विंद ममोय म उत्तु) उसीको वीतरागभावका अनुभव कहा गया है (परमेष्टि परम रे कम्म गलिय सुइ) श्री परमात्मा परमेष्टीमें रमण करना-प्रवाह रूपसे जमे रहना कर्मोंको जलानेवाला है (ममोय विंद रस नन्तु) आनन्दका अनुभव अनन्त रसका स्वाद पाना है ॥ २४ ॥

(जिन षिपय इष्टु विपि उवन इष्टु) वीतरागरूप क्षपकश्रेणी परम प्रिय है, जो प्रगट मोहको क्षय कर देती है (परमेष्टि रमन जिन उत्तु) उस दशाको परमेष्टी पदमें रमण जिनेन्द्रने कहा है (जिन समय सुवनु जिन न्यान रमनु) वीतराग आत्मामें परिणमन करना है सो ही वीतराग विज्ञानमें रमण करना है (षिपि कम्मु मुक्ति दर्सतु) इसतरह कर्मोंको क्षय करके आत्मा मुक्तिको देख लेता है ॥ २५ ॥

(स्थान इष्ट उत्पन्न दिष्टु) जब मुक्तिस्थानसे प्रेम होजाता है तब सम्यग्दर्शन उत्पन्न होजाता है (आचरन न्यान जिन उत्तु) इसीको जिनेन्द्रोंने आत्मज्ञानमें आचरण करना कहा है (परमेष्टि रमन रे आयरन ममल

पी) परमेष्टीके स्वभावमें रमण करना है सो ही शुद्ध पदमें आचरण है (परमेस्टि अमिय मंजुत्तु) श्री अरहन्त परमेष्टी आनन्दामृतको सदा पान करते रहते हैं ॥ २६ ॥

(स्थानु रमन हिययार गमन) मुक्ति स्थानमें रमण करना है सो ही हितकारी भावमें प्रवेश करना है (उत्पन्न इस्ट दर्सतु) इसी प्रयोगसे परमेष्टीका इष्ट पद प्रगट होता है (परमेष्टि रमन रस ममल न्यान जस) परमेष्टी पदमें रमण करनेसे शुद्ध ज्ञानका रस प्रगट होता है जो यशका कारण है, इसीसे अरहन्तपदकी महिमा है (भय षिपनिक मुक्ति संजुत्तु) तब सर्व भय क्षय होजाता है व मुक्तिका संयोग होजाता है ॥ २७ ॥

(जिन गहिर इस्टु उत्पन्न दिस्टु) वीतरागभावकी गुफामें रमण करनेसे आत्मदर्शन या अनन्तदर्शन या क्षायिकभाव प्रगट होता है (परमेस्टि न्यान मंजुत्तु) तब अनन्त ज्ञान सहित परमेष्टी पद प्रगट होजाता है (जिन गुप्त मिलय उत्पन्न मिलय) जो शुद्धोपयोग गुप्त था सो मिल जाता है, परिणति आपमें ही मिल जाती है राग द्वेषकी चंचलता मिट जाती है (परमेष्टि दर्स दर्सतु) तब अरहन्त परमेष्टीको अपना दर्शन होजाता है॥२८॥

(जिन गुपित गमनु तं अमिय रमनु) वीतरागभावके दुर्गमें प्रवेश करना ही आनन्दामृतको भोगना है (भय षिपनिक भव्वु स उत्तु) उसी समय उस भव्यको निर्भय या अभय कहा गया है (जिन न्यान रमनु विन्यान गमनु) वीतराग विज्ञान भावमें रमण करना है सो ज्ञानका प्रकाश है (जिननाथ रमन जिन उत्त) उसीको जिनेन्द्रोंने जिनेन्द्रभावमें रमण करना कहा है ॥ २९ ॥

(जिन ज्ञान इस्टु उत्पन्न दिस्टु) वीतराग भावरूपी रथपर प्रेमसे बैठना है, सो ही आत्मदर्शनको झलकाता है (तं न्यान विन्यान संजुत्तु) वह आत्मदर्शन केवलज्ञान सहित है (परमेस्टि इस्ट रै मनपर्यय रै) परमेष्टी पदमें प्रेमसे वर्तन करना सो ही मनके संकल्प विकल्पोंके त्यागमें रहना है। जहां स्वात्मरमण है वहां मनका काम बन्द होजाता है (जिन लोय लोय दर्सतु) तब श्री जिनेन्द्र लोकालोकको देखते हैं ॥ ३० ॥

(जिन इस्ट पऊ उत्पन्न पऊ) श्री जिनराजका पद है सो प्रकाशरूप पद है (जिनपद विंदह मंजुत्तु) जहां जिनपदका साक्षात् अनुभव है (परमेस्टि परम पय न्यान उवन मौ) परमेष्टीका परमपद ऐसा है जहां ज्ञानका सदा प्रकाश है (पय विंद मुक्ति दर्सतु) जहां निज पदका अनुभव है वहीं मुक्तिका दर्शन है ॥ ३१ ॥

(आमोय न्यान सम समय जान) आनन्द और ज्ञान जहां है वहां समभाव रूप आत्माको जानो (पय विंद विन्यान संजुत्तु) वहां ही निजपदके ज्ञानका अनुभव है (तं तारन तरन मउ अमिय ममल रउ) वे ही अर-

हन्त तारण तरण हैं, शुद्ध आनन्दामृतका पान कर रहे हैं (सिद्ध समय संपत्तु) यही अरहन्त आत्मा मोक्षको पाता है ॥ ३२ ॥

(जिन भय षिपियं जिन अमिय पयं) श्री जिनेन्द्रने सर्व भयका क्षय कर दिया है। वे जिनेन्द्र सदा आनंदामृतका पान करते हैं (भय सल्य संक विरयंतु वहां न कोई भय है, न शल्य है, न शंका है (जिन ममल ममल सुइ विंद रमन रै) श्री जिनेन्द्र घाति कर्म रहित व रागादि रहित परम शुद्ध है तथा अपने ज्ञानमें सदा रमण करते हैं (परमेस्टि सिद्ध संपत्त) यही अरहन्त परमेष्ठी सिद्धगतिको पाते हैं ॥ ३३ ॥

भावार्थ—इस स्तोत्रमें श्री अरहन्त परमेष्टीकी महिमा गाई गई है। अरहन्त व सिद्धकी आत्मा अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य व क्षायिक सम्यग्दर्शन व क्षायिक चारित्र आदि गुणोंसे शोभायमान शुद्ध है। इसीरूप मैं हूँ ऐसी जो गाढ़ भक्ति व उनके स्वरूपका मनन करता है सो ही स्वानुभवकी प्राप्तिका कारण है। स्वानुभव निर्वाणपदका साक्षात् कारण है। जो ऐसी भावना करता है व ध्यानमें एकतान होता है वह स्वयं क्षपकश्रेणीपर चढ़कर प्रथम मोहका, फिर तीन घातिय कर्मोंका नाश कर वह केवलज्ञानी होजाता है। केवलज्ञानीकी अपूर्व महिमा है, वे परम निर्भय हैं, वे परमानन्द रसका सदा पान करते हैं। उनके भीतर परम वीतरागता है, वे क्षुधादि दोषोंसे रहित हैं, वे ही साम्यभावरूप हैं, वे ज्ञानचेतनाका स्वाद लेते हैं, वे कर्म व कर्मफलचेतनाके विकल्पोंसे दूर हैं, यही अरहन्त अघातीय कर्म नाशकर सिद्धपदको पालेते हैं। श्री अरहन्त परमेष्ठिकी भक्तिसे आत्माकी ही भक्ति है, अरहन्त परम सहायक है, अशरणको शरणरूप है, परम मंगल स्वरूप है। श्री ज्ञानलोचन स्तोत्रमें वादिराजजी कहते हैं—

तृणाय मत्वाखिललोकराज्यं निर्वेदमाप्तोऽसि विशुद्धभावैः । ध्यानैकतानेन च चेतनाभूः कैवल्यमासाद्य जिनेश ! मुक्तः ॥ ३ ॥

संसारकूपं पतितान् सुजंतून् यो धर्म रज्जूद्धरणेन मुक्तिम् । नयत्यनंत वागमादिरूपातस्मै स्वभावाय नमो नमस्तात् ॥ ८ ॥

अनाद्यविद्यामयमूर्छितांगं कामोदरक्रोधहुताशनतप्तम् । स्याद्वादपीयूषमहौषधेन त्रायस्व मां मोहमहाहिदष्टम् ॥ ३१ ॥

भावार्थ—आपने सर्व लोककी राज्य-सम्पदाको तृणके समान जानकर अपने शुद्ध भावोंसे वैराग्यको धारण किया और आत्मध्यानमें एकतान होकर केवलज्ञानको प्राप्त करके—हे जिनेन्द्र ! आप मुक्त होगये। मैं उस जिनेन्द्रके स्वभावको वारवार नमस्कार करता हूँ, जिस जिनेन्द्रने संसार-कूपमें पड़ते हुये

प्राणियोंको धमकी रस्सी डालकर व ऊपर निकाल कर मुक्तिमें पहुँचा दिया और जो अनन्त ज्ञानादि गुणोंके धारी हैं। हे जिनेन्द्र! मुझे महामोहरूपी सर्पने डंसा है जिससे मेरे भीतर कामभाव व क्रोध-भावकी अग्नि जल रही है व जिसके कारण अनादि अज्ञान व भयसे शरीर मूछित होरहा है। मुझे स्याद्वाद अमृतरूपी महा औषधिको पिलाकर मेरी रक्षा कर।

(८४) ग्यारह अंग फूलना गाथा १७३२ से १७४८।

उव उवन सुयं विंद सम ममय समं, नै ममल भयं सिय धुव रमनं।
सुर उवन सुयं सुइ रमन मयं, विंद विंज रमन जिन जिनय॥
भवियन मव्द उवन पै पर्म पयं॥ १॥

रै रंज उवन रै भय षिपिय रमन पै, सुइ नन्द ममल रम उवन जिनं।
हिय रंज उवन पै तं अमिय रमन मै, तं विंद रमन उव ममय समं॥
भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं॥ (आचरी)॥ २॥

पय उवन सुयं सुय अर्थ उवन पै, सोइ अर्थति अर्थ सम समयरयं।
सहकार अर्थ रय अवगास ममल पय, नंतनंत जिन रमन पयं॥
भवियन तं मव्द उवन पय पर्म पयं॥ रै रंज उवन०॥ ३॥

अन्मोय उवन पै तं न्यान रमन रै, अन्मोय अर्थ सुइ जिन रमनं।
अन्मोय न्यान पै तं अमिय रमन जय, भय षिपनिकु विलय सुकम्म पयं॥
भवियन ममल रमन जिनु सिद्धि जय॥ रै रंज०॥ ४॥

षिपि उवन षिपक पै अन्मोय मुक्ति रै, तं मुक्ति अर्थ जिन मुक्ति रमै।

सुषम सुइ रमन सु अनन्त दर्स जिन, सु अनन्त सौष्य जिननाथ सुयं ॥
भवियन तं विंद रमन जिन सिद्धि जयं ॥ रे रंज० ॥ ५ ॥

अर्थ ति अर्थ रे उवन कमल पै, कमल रमन जिन जिनय रयं।
अर्थङ्ग गमिय रे दिसि दिमिय अगम पय, पय अर्थ जिनय जिननाथ सुयं॥
भवियन उवमम षेम रमन सु मिद्धि जयं॥ रे रंज० ॥ ६ ॥

सुइ उवन उवन रे श्रुतंग रमन पय, श्रुतंग रमन जिन अर्थ सुयं।
श्रुत ममय समय पै उव उवन ममय रे, श्रुत उवन हियं सहयार जयं ॥
भवियन श्रुत रमन जयं श्रुत ममलं ॥ रे रंज० ॥ ७ ॥

सुइ मद्ध उवन पय हिय उवन असह मै, जिन गुपित मब्द सुइ रमन सुयं।
भय षिपिय षिपक रे तं अमिय रमन मय, जिनपद कमल जिन उत्तु सुयं॥
भवियन जिन सब्द दि त जिन दिस्टि मयं॥ रे रंज० ॥ ८ ॥

स्थान दिप्ति रे तं ममल दिस्टि मय, तं दिप्ति दिस्टि जिन रमन सुयं।
दिपि दिस्टि ममय मै मब्द महज रै, जिन गम्य अगम्य जिन मुक्ति जयं॥
भवियन दिपि दिस्टि मब्द रै मिद्धि जयं॥ रे रंज० ॥ ९ ॥

वय वयुन व्रत रै पय पदम कमल सुइ, जिन न्यान दिप्ति सुइ रमन पयं।
सुइ समय समय पय उव उवन हियार रै, महयार रमन जिन समय जिनं॥
भवियन अन्मोय तरन सम सिद्धि जयं॥ रे रंज० ॥ १० ॥

विन्यान ममल रै सुइ न्यान पर्म पै, पय दर्म नन्त जिन जिनय समं।
पय कमल कलिय सुइ पुलित गगन पै, म सिविंद भवन विन्यान रयं॥
भवियन पय नन्त नन्त केवलि उवनं॥ रै रंज०॥ ११॥
मम समय मरनु मम दिप्ति रमनु, मम दिष्टि मब्द रस रमन पयं।
सम उत्तु उवन पै सम समय मब्द रै. जिन समय महावे जिन रमन सुयं॥
भवियन मम समय जिनय जिन उवनरयं॥ रै रंज०॥ १२॥
अनन्त नन्त रै नन्त ममल पै, तं नन्त नन्त जिन दिप्ति रयं।
तं नन्त न्यान रै विन्यान वीर्य मै. तं नन्त सौष्य जिन रमन पयं॥
भवियन तं नन्त चतुस्टै मुक्ति रयं॥ रै रंज०॥ १३॥
नन्ता रंगु रमन पय तरल तरङ्ग मै, तं नन्त नन्त जिन दर्म रयं।
तं लोय लोय पय ममल रमन रय, तं नन्त अमिय रस रमन जिनं॥
भवियन तं नन्त समय जिन जिनय जिनं॥ रै रंज०॥ १४॥
पर पर्म परम पै सम समय रमन रय, मम दर्मि रमन जिनु मम उवन पयं।
परमेस्टि इस्टि रै उव उवन दिप्ति पै, उव उवन समय जिनु मुक्ति जयं॥
भवियन परमेस्टि समय तं परम पयं॥ रै रंज०॥ १५॥
तं सुयं रमन सुरू विन्यान विनय पुरू, तं अवध रमनु जिनु जिनय जिनं।
अन्मोय न्यान रै भय षिपिय अमिय रै, तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं।
भवियन जिनु अवध रमन सुइ सिद्धि जयं॥ रै रंज०॥ १६॥
जिन अंगु रमन जय जिन उत्तु जिनय पय, जिन विंद रमन उव उवन समं।

भय षिपिय अमिय रै अन्मोय तरन जय, तं ममल रमन जिन सिद्ध जयं ॥
भवियन अन्मोय न्यान मम सिद्धि जयं ॥ रै रंज० ॥ १७ ॥

अन्वयार्थ सहित अर्थ—(उव उवन सुयं विंद मम ममय समं) सम्यग्दर्शनका प्रकाश होते ही स्वयं आत्माका अनुभव होजाता है समता भाव आत्माके साथ झलक जाता है (नै ममल मयं सिय धुव रमनं) निश्चयसे आत्मा शुद्ध है, निर्मल है, ध्रुव रूपसे अपनेमें रमण करनेवाला है (सुइ उवन सुयं सुइ रमन मयं) यह ही प्रकाशरूप है, यह ही स्वयं रमणस्वरूप है (विंद विंज रमन जिन जिनय जिनं) यह ज्ञानचेतनामें रमण करता है। यही वीतराग कर्मविजयी जिन हैं (भवियन सब्द उवन पै पर्म पयं) हे भव्यजीवो! शब्दरूप वाणीके द्वारा परमात्माके पदका प्रकाश होता है ॥ १ ॥

(रै रंज उवन र भय षिपिय रमन पै) आनन्दकी मगनता प्रवाहरूपसे प्रकाशित है तब सर्व भय दूर होगया है, आत्मीक रमणपद प्रगट है (सुइ नन्द ममल रम उवन जिनं) उस जिनपदमें आनन्दका शुद्ध रस प्रगट है (हिय रंज उवन पै नं अमिय रमन मै) यही हितकारी आनन्दके प्रकाशका पद है, वही आनन्दामृतका रमण स्वरूप है (तं विंद रमन उव ममय समं) वही ज्ञानमें रमण है, यहीं आत्मा समभावरूप है (भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो! जो आनन्दमय आत्मा अर्हंत हैं वे ही वह जहाज हैं जो सीधा सिद्धपदके तरफ जाता है ॥ २ ॥

(पय उवन सुयं, सुय अर्थ उवन पै) आत्मीक पदका प्रकाश है सो ही श्रुतके अर्थका प्रकाश है। द्वादशांग वाणीका सार निज आत्माका यथार्थ ज्ञान है (सोइ अर्थति अर्थ मम ममय रयं) सो ही रत्नत्रय मय पदार्थका समभावके साथ अपने आत्मामें परिणमन है (सहकार अर्थ है अवयास ममल पय) आत्मीक पदार्थके प्रवाहरूप अनुभवसे अनंत ज्ञानका पद प्रगट होता है (नंत नंत जिन रमन पयं) वह अनंतानंत शक्तिधारी है तथा वही श्री जिनेंद्रके रमणका पद है अर्थात् जिन भगवान् उस ज्ञानमें ही मगन हैं (भवियन नं सब्द उवन पय पर्म पयं) हे भव्य जीवो! शब्दोंके प्रकाशसे ही परमात्माका पद झलक जाता है ॥ ३ ॥

(अन्मोय उवन पै तं ज्ञान रमन है) जहां आत्मीक आनन्दका प्रकाश है वहीं ज्ञानमें प्रवाहरूपसे रमण है (अन्मोय अर्थ सुइ जिन रमनं) आनन्दमई भावका होना ही जिन स्वभावमें रमण है (अन्मोय न्यान पै तं अमिय

रमन जय) ज्ञानानन्दका जो पद है वही रत्नत्रय मई अमृतका लाभ है (भय षिपनिक विलय सु कम्म पयं) तब सर्व भय दूर होजाता है और कर्मोंका समूह क्षय होजाता है (भवियन ममल रमन जिनु सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! जो वीतराग भावमें रमण करता है वही जिन वीर सिद्धि पदको जय करलेता है ॥ ४ ॥

(षिपि उवन षियक पै अन्मोय मुक्तिं) रागादि व कर्मादिको क्षय करनेसे वे क्षायिक पदमें है तथा वे आनन्दरूप मुक्तिमें रत हैं (नं मुक्ति अर्थ जिन मुक्ति रमै) वे परपदार्थसे रहित आत्मपदार्थ हैं इसलिये वे वीतरागमय मोक्षभावमें रमण कर रहे हैं (सुषम सुइ रमन सु अनंत दर्स जिन) वे इन्द्रिय व मनसे अगोचर सूक्ष्म हैं, उसीमें रमण करते हैं वे अनंत दर्शनके धारी वीतराग जिन हैं (सु अनंत सौष्यं जिननाथ सुयं) वे अनन्त सुखके धारी स्वयं जिनेन्द्र हैं (भवियन नं विंद रमन जिन सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे जिनेन्द्र ज्ञानमें रमण करते हुए सिद्धपदको लेलेते हैं ॥ ५ ॥

(अर्थ ति अर्थ है उवन कमल पै) वहां रत्नत्रयमई पदार्थमें परिणमन है, वे प्रकाशित कमलके समान प्रफुल्लित पदमें हैं (कमल रमन जिन जिनय रयं) वे उसी कमलमें रमण कर रहे हैं। वे जिनेन्द्र वीतरागभावमें रत हैं (अर्थंग गमिय है दिमि दिमिय अगम रय) वे द्वादशांगवाणीके भावके भीतर सदा रमण कर रहे हैं, उसीको देख रहे हैं अथवा इंद्रिय व मनसे अगोचर आत्मीक पदको देख रहे हैं (पय अर्थ जिनय जिननाथ सुय) वे द्वादशांग वाणीके पदके भावको प्राप्त हैं, वे स्वयं वीतराग जिनेन्द्र हैं (भवियन न्यमल पेम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतिमय व मङ्गलमल शुद्ध भावमें रमण करते हुए सिद्धिको पालेते हैं ॥ ६ ॥

(सुइ उवन उवन रै श्रुतंग रमन पय) वे ही सदा प्रकाशित हैं। द्वादशांगके सार आत्माके स्वभावमें रमण कर रहे हैं (श्रुतंग रमन जिन अर्थ सुयं) वे श्रुतज्ञानके भीतर रमण करते हुए स्वयं वीतराग पदार्थ हैं (श्रुत समय समय पै उव उवन ममय ै) श्रुतरूपी आगमसे आत्मीक पद प्रगट होता है उसीके अनुभवको करते हुए आत्मामें रत हैं (श्रुत उवन हियं सहयार जयं) श्रुतज्ञानकी जय हो जो ज्ञानके प्रकाशमें हितकारी है (भवियन श्रुत ममल जयं धुव ममलं) हे भव्यजीवो ! प्रवाहरूपसे चला आया हुआ अविनाशी यह निर्दोष श्रुतज्ञान जयवन्त हो ॥ ७ ॥

(सुइ सब्द उवन पय हिय उवने असब्द मै) जिनवाणीके वाक्य और वेदोंका ज्ञान बड़ा हितकारी है जिससे शब्दातीत ज्ञानमई आत्माका ज्ञान व अनुभव होता है (जिन गुपित सब्द सुइ रमन सुयं) शब्दोंमें

जिनेन्द्रका स्वरूप गुप्त है। उस गुप्त स्वरूपमें वे स्वयं रमण कर रहे हैं (भय विपिय विपक रै तं अमिय रमन मै) आत्मानुभवसे ही भय नाश होजाता है। क्षायिक भाव प्रवाहरूप बना रहता है, वही आनन्दमें रमण करता हुआ ज्ञान है (जिनपद कमल जिन उत्तु सुयं) वही जिनेन्द्र पदरूपी कमल है ऐसा स्वयं जिनेन्द्रने कहा है (भवियन जिन सब्द दिप्ति जिन दिष्ट मयं) हे भव्य जीवो! जिस शब्दके द्वारा ज्ञानमई जिनकी दीप्ति प्रगट होजाती है ॥८॥

(स्थान दिप्ति रै तं ममल दिस्टि मय) आत्मा ज्ञानप्रवाहका स्थान है, वही शुद्ध सम्यग्दर्शन स्वरूप है (तं दिप्ति दिष्टि जिन रमन सुयं) वहीं अनंतज्ञान व अनन्तदर्शन है उसीमें जिनेन्द्र स्वयं रमण कररहे हैं (दिपि दिस्टि ममय मै सब्द सहज रै) वहीं आत्मामई दृष्टिका प्रकाश है, शब्दोंके द्वारा सहज ही जाना जाता है (जिन गम्य अगम्य जिन मुक्ति जयं) श्री जिनेन्द्रका स्वरूप ज्ञानगोचर है, इन्द्रिय व मनके अगोचर है, यही जिनेन्द्र मुक्तिको जाते हैं (भवियन दिपि दिस्टि रै सिद्ध जयं) हे भव्य जीवो! शब्दोंके द्वारा ध्यानका अभ्यास करते हुए शुक्लध्यानके बलसे अनंतज्ञान व अनंतदर्शन प्रगट होजाता है फिर वे ही अरहंत सिद्ध होजाते हैं ॥९॥

(वय वयुन व्रत रै पय पदम कमल सुइ) ज्ञानमें परिणमन करना या रत होना सो ही व्रतका लगातार पालना है, श्री जिनेन्द्र ही कमलके चिह्नके समान प्रफुल्लित कमल है (जिन न्यान दिप्ति सुइ रमन पयं) वे ही जिनेन्द्र ज्ञानके प्रकाशरूप है, उसी ज्ञानपदमें ये रमण करते हैं (सुइ ममय ममय पै उव उवन हियार रै) वही आत्माका आत्मीक पद है वही प्रकाशमान है और हितकारी है (सहयार रमन जिन समय जिनं) इसीकी सहायतासे आत्मा वीतराग जिनके स्वभावमें रमण करके जिन होजाता है (भवियन अन्मोय तरन सम सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो! यह आनन्दमई जहाजरूप जिनेन्द्र समभावके द्वारा सिद्ध गतिको पालेते हैं ॥१०॥

(विन्यान ममल रै सुइ न्यान परम पय) शुद्ध ज्ञानमें परिणमन करना सो ही उत्कृष्ट ज्ञानका पद है (पय दर्स नंत जिन जितय मयं) वही अनन्तदर्शनका पद है, श्री जिन ही वीतराग हैं, समभावके धारी हैं (पय कमल कलिय सुइ पुल्लित गगन पै) कमल समान प्रफुल्लित आत्मीकपदमें रमण करना सो ही निर्मल आकाशमें द्वीपके समान है। जैसे समुद्रमें द्वीप शोभता है वैसे ही निर्मल ज्ञानके भीतर रमण करता हुआ आत्मारूपी द्वीप शोभता है (ममि विंद भवन विन्यान रयं) अथवा यह ज्ञानी आत्मा चन्द्रमाका विमान है जो अपनी ज्ञानकी कलामें प्रकाशमान है (भवियन पय नंत नंत नेवलि उवनं) हे भव्यजीवो! यहां ही अनन्तानन्त केवलज्ञान प्रगट है ॥ ११ ॥

(सम समय सरनु सम दिप्ति रमनु) समभाव सहित आत्मामें रहना ही समता सहित ज्ञानमें रमण करना है (सम दिष्टि सब्द रस रमन पयं) समदृष्टिधारी आत्मा ॐ आदि शब्दोंके द्वारा आत्मीक रसमें रमण करता है (सम उत्तु उवन पै सम समय सब्द रै) जो प्रकाशमान समभाव कहा गया है वह समभाव सहित आत्मारूपी शब्दके भावमें परिणमन करना है। अर्थात् आत्मा शब्दके द्वारा शुद्धात्माके भीतर रमण करना है (जिन समय सहावे जिन रमन सुयं) श्री जिनेन्द्र वीतरागी आत्माके स्वभावमें स्वयं रमण कर रहे हैं (भविअनु सम समय जिनय जिन उवनायं) हे भव्यजीवो ! समभाव सहित आत्मा ही वीतराग जिन सदा प्रकाशमान है ॥ १२ ॥

(अनंत नंत रै नंन ममल पै) अनन्त गुण धारी आत्मामें रमण करनेसे ही अनन्त शुद्ध अरहन्त पद प्रगट होता है (तं नन्त नन्त जिन दिप्ति ग्यं) तब वह अरहन्त जिन अनन्त ज्ञानमें रमण करते हैं (तं नंत न्यान रै विन्यान वीर्य मै) जहां अनन्त ज्ञानमें परिणमन है वहां ज्ञान अनन्त वीर्य सहित है (तं नंत सौख्य जिन रमन पयं) वहां ही अनन्त सुख है जिसमें जिनेन्द्र रमण करते हैं (भवियन तं नंत चतुरटै मुक्ति रयं) हे भव्य जीवो ! श्री अरहन्त अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य इन चार अनन्त चतुष्टयके धारी होते हुए मुक्तिको पहुंच जाते हैं ॥ १३ ॥

(नंता रंगु रमन पय तरल तरंग मै) अनन्त रंग समान गुणोंमें रमण करनेवाले श्री अरहन्तमें समुद्रकी चञ्चल तरंग समान अनन्त पर्यायें सूक्ष्म हुआ करती हैं। गुण सदा परिणमनशील हैं, शुद्ध गुणोंमें क्षीर-समुद्रकी शुद्ध तरंगके समान स्वभावमई शुद्ध पर्यायें होती रहती हैं (तं नंत नंत जिन दर्स रयं) वे अनन्तानंत पर्यायें श्री जिनेन्द्रके ज्ञान दर्शनमें होती रहती हैं (तं लोयालोय पय ममल रमन रय) लोकालोक उनके भीतर झलकता है तौभी वे शुद्ध आत्मामें रमण करते रहते हैं। जैसे दर्पणमें पदार्थ झलकनेसे दर्पण विकारी नहीं होता है वैसे ही ज्ञान दर्शनसे सामान्य विशेष रूप अनन्त पदार्थ झलकते हैं तौभी ज्ञानमें विकार नहीं होता है। जानने योग्य पदार्थोंमें जो समय समय अवस्थाएं बदलती हैं वे सब ज्ञानमें इसी तरह झलकती हैं। यह भी ज्ञानमें एक जातिका परिणमन है (तं नंत अमिय रस रमन जिनं) वे जिनेन्द्र अनन्त सुखरूपी अमृतके रसमें रमण करते रहते हैं (भवियन तं नंत समय जिन जिनय जिनं) हे भव्य जीवो ! वे अनन्त गुणधारी आत्मा श्री जिनेन्द्र वीतराग देव हैं ॥ १४ ॥

(पर पर्म परम पय सम समय रमन रे) परमात्माका परमपद समभाव सहित आत्मामें रमणरूप है (सम दर्स रमन जिनु सम उवन पयं) वे प्रभू समदर्शी हैं, समभावमें रमण करते हुए वीतरागतामें प्रकाशमान हैं (परमेस्टि इस्टि रे उव उवन दिप्ति पै) वे ही परमेष्टी हैं, परम प्रिय हैं, प्रकाशमान ज्योतिस्वरूप हैं (उव उवन समय जिन मुक्ति जयं) वे ही प्रकाशमान आत्मा जिनेन्द्र मुक्तिको जाते हैं (भवियन परमेस्टि समय तं परम पयं) हे भव्य जीवो ! यही परमेष्ठी अरहन्त आत्मा मुक्तिके परम पदका दाता है ॥ १५ ॥

(तं सुयं रमन सुरु विन्यान विनय पुरु) वे स्वयं स्वात्मरमण रूप सूर्य हैं, वे ज्ञान और जितेन्द्रिय भावसे पूर्ण हैं (तं अनन्त रमन जिनु जिनय जिन) वे बाधा रहित अविनाशी आत्मामें रमण करते हुए वीतरागी वीर जिन हैं (अन्मोय न्यान रे भय षिपिय अमिय रे) वे ज्ञान व आनन्दमें रत हैं, उनके सर्व भय क्षय होगया है वे आनन्दामृतका पान करते हैं (तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं) वे शुद्ध भावमें रमण करते हुए स्वयं सिद्धिको प्राप्त करते हैं (भवियन जिन अवय रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! अविनाशी आत्माके रमण करनेवाले जिनेन्द्र ही सिद्धगतिको पाते हैं ॥ १६ ॥

(जिन अंगु रमन जय जिन उत्तु जिनय पय) श्री जिन द्वादशांगवाणीमें रमणकी जय हो, उसीके प्रतापसे जिनेन्द्र कथित जिनपद प्राप्त होता है (जिन विंद रमन उव उवन समं) तब वीतराग विज्ञान भावमें रमण होता है जो प्रकाशरूप समभाव है (भय षिपिय अमिय रे अन्मोय तान जय) तब सर्व भय क्षय होजाता है, आनन्दामृतका लाभ होता है। इस आनन्दमय रत्नत्रयमई जहाजकी जय हो (तं ममल रमन जिन सिद्ध जयं) उसी शुद्धोपयोगके रमणसे सिद्धगति प्राप्त होती है (भवियन अन्मोय न्यान सम सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! आनन्दमई व समताभाव रूप ज्ञानके होनेपर आत्मा सिद्धिको प्राप्त कर लेता है ॥ १७ ॥

भावार्थ—इस छन्दमें श्री तारणस्वामीने श्रुतज्ञानकी महिमा गाई है। द्रव्य श्रुतज्ञान द्वादशांगवाणी शब्दरूप है व अक्षर रूप है। भावश्रुत ज्ञान अर्थ ज्ञान स्वरूप है। द्वादशांग वाणीका सार अपने आत्माके गुणपर्यायोंको जानता है। जो आत्माको जानकर आत्माको स्वसंवेदन द्वारा अनुभव करेगा वही धर्मध्यानी है व वही शुक्लध्यानी है। शुक्लध्यानमें श्रुतका आलम्बन होता है। इसी श्रुतके द्वारा शुद्धोपयोगका प्रकाश उपशम व क्षपकश्रेणी पर होता है। इसी कारण पहले शुक्लध्यानसे मोहनीय कर्मका नाश होता है तथा अति सूक्ष्म दूसरे शुक्लध्यानसे तीन घातीयकर्म नाश होजाते हैं तब अरहन्त परमात्मा

केवली होजाता है। वहां अनन्तचतुष्टय प्रगट होते हैं। परम समभाव होता है, आपकी आपमें मगनता है। वे अरहन्त द्वादशांगवाणीका उपदेश भी करते हैं, उस उपदेशके अनुसार जो मनन करके ध्यान करेगा वही अपने आत्मस्वरूपको समझ सकेगा। अतएव जिनवाणीके प्रतापसे आत्मानुभव हो, रत्नत्रय धर्मका लाभ हो उस वाणीका शरण सदा ग्रहण करो, उसीका मनन करो, उसीका सार मनमें संग्रह करो, जिनवाणी परम उपकार करनेवाली है। केवलज्ञानका साक्षात् कारण जो शुक्लध्यान है, उससे भी वितर्क या श्रुतका आलम्बन है। शुभचन्द्राचार्यकृत अंगपण्णत्तीमें कहा है—

सुदणाणं केवलमवि दोण्णि वि सरिसाणि होंति बोहादो। पच्चक्खं केवलमवि सुदं परोक्खं सया जाणे ॥ ४० ॥

इदि उसहेण वि भणियं पण्हादो उसहसेणजोइस्स। सेसावि जिणवरिंदा सगणिं पडि तह समक्खंति ॥ ४१ ॥

सिरिवड्ढमाणमुहकयविणिग्गयं बारहंगसुदणाणं। सिरिगोयमेण रइयं अविरुद्धं सुणह भवियजणा ॥ ४२ ॥

आयरियपरंपराइं आगदअंगोवदेसणं पढइ। सो चढइ मोक्खसउहं भव्वो बोहप्पहावेण ॥ ४९ ॥

भावार्थ—सम्यग्ज्ञानकी अपेक्षा श्रुतज्ञान और केवलज्ञान दोनों ही समान हैं। केवलज्ञान प्रत्यक्ष है श्रुतज्ञान परोक्ष है ऐसा जानो। जैसा वृषभसेन गणधरके प्रश्नसे श्री वृषभदेव प्रथम तीर्थंकरने धर्मका उपदेश किया था ऐसा ही धर्मोपदेश शेष तीर्थंकरोंने भी अपने२ गणधरोंके प्रश्नसे किया था। श्री वर्द्धमान भगवानके मुखसे जो ज्ञान प्रगट हुआ उसकी द्वादशांग श्रुतज्ञानकी रचना उसीके अनुसार श्री गौतम गणधरने रची, उसे ही सुनो। आचार्योंकी परम्परासे चले आये अंगोंके उपदेशको जो भव्यजीव पढ़ता है वह ज्ञानको पाकर उसके प्रभावसे मोक्षमहलपर चढ़ जाता है।

(८९) चौदापूर्व रासा गाथा १७४९ से १७६७ तक।

श्री जिन जिनयति जिनय जिनेन्दं, उव उवन अर्क अर्थ विंदं।
जं विंद रमन रस नन्दं, तं सिद्धि रमन सुद्ध परम जिनेन्दं ॥ १ ॥
जं न्यान अन्मोय पिओयं, तं दिस्ति दिष्टि रस जोयं।
जं सब्द दिस्ति दिष्टि मिलियं, जिननाथ रमन सिधि चलियं ॥ (आचरी) ॥२॥

उव उवन रंजु जिन रंजं, भय षिपिय अमिय रस नन्दं ।
हिय सहयार रंज सह रंजं, तं विंद रमन जिन नन्दं ॥ जं न्यान० ॥ ३ ॥
पूर्वं सुइ सुयं सु रमन, जं पूर्व पर्म गुन गमनं ।
तं उवन भाव उवलष्यं, तं वीय विन्यान स लष्यं ॥ जं न्यान० ॥ ४ ॥
जं लोयलोय अवयासं, भय षिपिय अमिय रम वासं ।
उव उवन हियारे रमियं, तं सहज रमन सिधि चलियं ॥ जं न्यान० ॥ ५ ॥
अस्ति जु न्यान विन्यानं, तं सहज सुभाव सु रमनं ।
जिन उत्तु वयनु जिन रमनं, तं ममल रमन सिधि रमन ॥ जं० ॥ ६ ॥
पर्जय भय नन्त अनन्तं, जन रज वयन जन उत्तं ।
तं नास्ति एय भय संक, अन्मोय न्यान सिधि रत्त ॥ जं० ॥ ७ ॥
पर परम तत्तु परमप्पं, पर पर्म सुभाव सुलष्यं ।
जं परम तत्तु उववन्नं, तं परम मुक्ति संमिलियं ॥ जं० ॥ ८ ॥
जं गुप्ति रमन जिन रयनं, हिय रमन उवन सुइ मिलियं ।
भय षविय अमिय रस मिलियं, प्रतक्ष्य मुक्ति सुइ चलियं ॥ जं० ॥ ९ ॥
ज नंत उवन हिययारं, सह रमन नंत सहयारं ।
भय सल्य संक सुइ विलयं, तं नंत धर्म सिधि मिलियं ॥ जं० ॥ १० ॥
जं दिप्ति दिष्टि सह रूवं, विन्यान विंद सुइ सुरयं ।
जं विद्यमान जिन उत्तं, तं वयन उत्त सिधि रत्तं ॥ जं० ॥ ११ ॥

जं कप्प वियप्प सु विलयं, तं कल्प न्यान रस रवनं ।
जं रमन विषय विष रमियं, तं न्यान रमन सुइ गलियं ॥ जं० ॥ १२ ॥
जं मध्यम पद पद विंदं, तं उवन अर्क जिन नन्दं ।
आगंतु विंद हुवयारं, तं रमन सुयं सिधि मिलियं ॥ जं० ॥ १३ ॥
जिन वयन व्रित्ति जिन रमनं, जिन समय सहाव सरयनं ।
जं इष्टि दिस्टि दिपि समयं, तं सब्द समय सिधि मिलियं ॥ जं० ॥ १४ ॥
जिन अर्क विंद हिय रमनं, ती अर्थ अर्थ सुइ सुवनं ।
जिन लष्य अलष्य सु ममलं, जिन उवन रमन सिधि मिलियं ॥ जं० ॥ १५ ॥
जं अर्थति अथ दिपि दिपियं, तं दिस्टि सब्द रस रैय्यं ।
भय सल्य संक सुइ विलयं, तं दिप्ति दिष्टि सिधि मिलियं ॥ जं० ॥ १६ ॥
जं लोक वेद अवलोकं, परिनाम सरीर संजोयं ।
सहयार सरीर सु कलियं, भय विलय सिद्धि सुइ मिलियं ॥ जं० ॥ १७ ॥
भय षिपनिक भव्वु स उत्तं, तं अमिय रमन रस जुत्तं ।
विन्यान विंद सुइ रमियं, तं ममल रमन सिधि मिलियं ॥ जं० ॥ १८ ॥
जं तारन तरन सुभावं, तं दिप्ति दिष्टि सु सहावं ।
तं सब्द कमल जिन उत्तं, तं समय सिद्धि संपत्तं ॥ जं० ॥ १९ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(श्री जिन जिनयति जिनय जिनेन्दं) कर्मविजयी व वीतरागी श्री जिनेन्द्र जयवन्त हो (उव उवन अर्क अर्थ विंदं) जो प्रकाशरूप सूर्य हैं व ज्ञानमई पदार्थ हैं (जं विंद रमन रस नंदं) जो ज्ञान

स्वभावमें रमण करते हुए आनन्दका रस ले रहे हैं (तं सिधि रमन सुइ परम जिनेंदं) वे ही परम जिनेन्द्र सिद्ध भावमें रमण कर रहे हैं ॥ १ ॥

(जं न्यान अन्मोय विओवं) जिसने ज्ञानानन्द रसका पान किया है (तं दिप्ति दिष्टि रस जोयं) उसने अनन्त ज्ञान व अनन्तदर्शनके रसको ढूँढ लिया है (जं सब्द दिप्ति दिष्टि मिलियं) जिस शब्दसे अनन्तज्ञान व दर्शनकी शक्ति प्रगट होती है वह शब्द मिल गया है (जिननाथ रम्नु सिधि चलियं) शुक्लध्यानमें श्रुतके शब्दका आलम्बन है। इस दूसरे शुक्लध्यानसे आत्मा केवलज्ञानी परमात्मा होजाता है तब अपने अरहन्त जिनेन्द्र पदमें रमण करता हुआ सिद्ध गतिकी तरफ चला जाता है ॥ २ ॥

(उव उवन रंजु जिन रंजं) प्रकाशमान आत्मीक आनन्दमें श्री जिनेन्द्र मगन हैं (भय षिपिय अमिय रस नंदं) उसका सर्व भय क्षय होगया है, वे आत्मानन्दरूपी अमृतरसमें संतुष्ट होरहे हैं (उव उवन हियारै रमियं) वे उदयरूप हितकारी शुद्धोपयोगमें रमण कर रहे हैं (तं सहज रमन सिधि चलियं) उसी स्वभावमें सहज स्वभावसे रमण करते हुए सिद्ध गतिको चले जाते हैं ॥ ३ ॥

(पूर्व सुइ सुयं सु रमनं) चौदा पूर्व रूप जो श्रुतज्ञान है उसके द्वारा प्रगट जो भाव श्रुतज्ञान रूप आत्मा उसमें वे रमण कर रहे हैं (जं पूर्व पर्म गुन गमनं) उन पूर्वोंसे जो प्रगट आत्माके उत्कृष्ट गुण हैं उनमें उनका परिणमन होरहा है (तं उवन भाव उवलब्यं) उन्होंने उदय रूप शुद्ध भावको जान लिया है (तं वीर्य विन्यान स लब्यं) अनन्त बल सहित ज्ञानकी तरफ ही जिनका लक्ष्य है ॥ ४ ॥

(जं लोयलोय अवयासं) जिनका ज्ञान लोकालोकका ज्ञाता है (भय षिपिय अमिय रस वासं) वह निर्भय है व आत्मानन्द रस उसके भीतर भरा है (उव उवन हियारे रमियं) वे प्रकाशमान शुद्ध भावमें रमण कर रहे हैं (तं सहज रमन सिधि मिलियं) वे सहज स्वभावमें रमण करते हुए सिद्धगतिको चले जाते हैं ॥ ५ ॥

(अस्ति गुन्यान विन्यानं) उनके पास केवलज्ञान प्रगट है (तं सहज सुभाव सु रमनं) वे अपने सहज स्वभावमें रमण कर रहे हैं (जिन उत्तु वयन जिनु रमनं) जैसा स्वरूप जिनेन्द्रकी वाणीने कहा है उसी स्वभावमें श्री जिनेन्द्र रमण कर रहे हैं (तं ममल रमन सिद्धि रमनं) वे शुद्ध भावमें रमण करते हुए सिद्धभावमें रमण कर रहे हैं ॥ ६ ॥

(पर्जय भय नंत अनन्तं) शरीरके संयोगसे संसारी प्राणियोंको अनन्तानन्त प्रकारका भय लगा रहता

है। इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोग, रोग, जरा, मरण आदिका बड़ा भय रहता है (जन रंज वयन जन उत्तं) कोई मनुष्य असन्तुष्ट होजाय इस भयसे ऐसी वाणी मानव कहता है जिससे लोग राजी रहें (जं नास्ति राय भय संकं) परन्तु अरहन्त भगवानमें न लोगोंसे राग है, न कोई उनका भय है, न कोई शङ्का है। उनका धर्मोपदेश परम वीतराग भावसे प्रगट आत्माका परम कल्याण करनेवाला है (अन्मोय न्यान सिधि रत्तं) वे ज्ञानानन्दमें मगन होते हुए सिद्ध भावमें रत रहते हैं ॥ ७ ॥

(पर परम तत्तु परमप्पं) सबसे उत्कृष्ट परम तत्व एक परमात्मा है (पर बर्ग सुभाव सुलष्यं) अपने ही उत्कृष्ट स्वभावके द्वारा वह पहचाना जाता है। निश्चयसे आत्मा जो है वही परमात्मा है (जं परमतत्तु उववन्नं) जिसके भीतर यह उत्तम तत्व प्रगट होजाता है (तं परम मुक्ति संमिलियं) वह उत्तम मुक्तिपदसे जाकर मिल जाता है ॥ ८ ॥

(जं गुप्ति रमन जिन रमनं) जो अतीन्द्रिय आत्मामें रमण करते हैं वे ही वीतरागरूप रत्नत्रय धर्ममें रमण करते हैं (हिय रमन उवन सुह मिलियं) वे अपने हितरूप शुद्धोपयोगमें रमण करते हैं, उनके भीतर आत्माकी शक्तिका प्रकाश होगया है (भय षिपिय अमिय रस मिलियं) वे निर्मल होगए हैं। उनको आनन्दामृत रसका स्वाद आगया है (प्रत्यक्ष मुक्ति सुइ चलियं) वे आत्माको प्रत्यक्ष देखते हुए मुक्तिपदमें स्वयं चले जाते हैं ॥ ९ ॥

(जं नंत उवय हिययारं) जो हितकारी अनन्त ज्ञानका प्रकाश है (सह रमन नंत सहयारं) उसमें रमण करते हुए अनन्त सहकारी गुण प्रगट रहते हैं (भय सल्य संक सुइ विलयं) उनके भय, शल्य व शङ्का सब विला गई हैं (तं नंत धर्म सिद्धि मिलियं) वे अनंत स्वभावके धारी अरहंत जिन सिद्धभावको प्राप्त होजाते हैं ॥१०॥ (जं विप्ति दिष्टि सह रूवं) श्री अरहन्तका स्वभाव अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शन स्वरूप है (विन्यान विंद सुइ सुयं) वे अपने ज्ञानमें मगन हैं, वे ही सूर्यसम प्रभावान हैं (जं विद्यमान जिन उत्तं) जैसा वर्तमानमें विदेह क्षेत्रमें रमण करनेवाले श्री श्रीमन्धर आदि बीस तीर्थंकरोंने कहा है (तं वयन उत्त सिधि रत्तं) उनकी वाणीके कहे अनुसार ही वे सिद्ध स्वभावमें लीन हैं ॥ ११ ॥

(जं कम्म विभाव सु विलयं) जहां मनके संकल्प विकल्प दूर होगए हों (तं कल्प न्यान रस रवनं) परन्तु कल्पित ज्ञानके रसमें लीनता हो, यथार्थ आत्मज्ञान हो। आत्माका स्वरूप जैन सिद्धांतानुसार न मानकर

और रूप मानकर ध्यान किया जाता हो या विषयवासनाको रखते हुए ध्यान किया जाता हो या मोक्ष-सुखको ठीक ठीक न जानकर ध्यान किया जाता हो (जं रमन विषय विष रमनं) या जो विषयोंके विषमें भावोंमें रमणता होरही है (तं न्यान रमन सुइ गलियं) यह सब अशुद्ध रमणता आत्माके यथार्थ ज्ञानमें रमण करनेसे विला जाती है ॥ १२ ॥

(जं मध्यम पद पद विंदं) जो मध्यम पदोंके द्वारा पूर्वोंके पदोंके ज्ञान है—मध्यमपद १६३३,८३,७८८८ अपुनरुक्त अक्षरोंका होता है (तं उवन अर्क जिन विंदं) उनके द्वारा शुद्ध ध्यानको साधन करनेसे केवलज्ञान-रूपी सूर्यका प्रकाश श्री जिनेन्द्रके होजाता है जिसको वे अनुभव करते हैं (आगंतु विंद उवयारं) पूर्वोंका ज्ञान आनेवाले केवलज्ञानके प्रकाशके लिये उपकारी है (तं रमन सुयं सिधि मिलियं) इस ज्ञानमें रमण करनेसे आत्मा स्वयं सिद्ध गतिको पालेता है ॥ १३ ॥

(जिन वयन ध्रिति जिन रमनं) श्री जिनवाणीके अनुसार वीतराग यथाख्यात चारित्रमें रमण करता है (जिन समय सहाव स रमनं) वही वीतराग आत्माके स्वभावमें रत्नत्रय सहित रमण करना है (जं इष्टि दिष्टि दिपि समयं) वहां परम प्रिय अनन्त दर्शन अनन्त ज्ञानरूप आत्मा होजाता है (तं सब्द समय सिधि मिलियं) तब समय शब्दसे कहने योग्य आत्मा सिद्धभावमें पहुँच जाता है ॥ १४ ॥

(जिन अर्क विंद हिय रमनं) श्री जिनका ज्ञान सूर्यमें एकतासे रमण करना है (ती अर्थ अर्थ सुइ सुवनं) वही रत्नत्रय सहित पदार्थमें स्वयं प्राप्त होना है (जिन लष्य अलष्य सु ममलं) श्री जिनेन्द्र भगवान कर्ममल रहित शुद्ध हैं जो आत्मा द्वारा निश्चयसे जानने योग्य है परन्तु मन व इंद्रियोंसे अतीत हैं (जिन उवन रमन सिधि मिलियं) वीतराग विज्ञानमें रमण करनेसे ही सिद्धगति प्राप्त होती है ॥ १५ ॥

(जं अर्थ तिअर्थ दिपि दिपियं) जो रत्नत्रय मई पदार्थके प्रकाशका झलकना है (तं दिष्टि सब्द रस रैयं) दिष्टि शब्दसे जानने योग्य क्षायिक सम्यग्दर्शनके रसमें रच जाना है (भय सल्य संक सुइ विलयं) तब सर्व भय, शल्य व शङ्काएं विला जाती हैं (तं दिप्ति दिष्टि सिधि मिलियं) परमावगाढ सम्यग्दर्शनका प्रकाश होना ही सिद्ध भावसे मिलना है ॥ १६ ॥

(जं लोक वेद अवलोकं) जो संसारके भोग्य व उपभोग्य पदार्थोंके ज्ञानका विचार है (परिनाम सरीर संजोयं) वह सर्व विचार इस नाशवान परिणमनशील शरीरके संयोगसे है अर्थात् शरीरके आश्रय कुटुंब,

ग्राम, धन, धान्य, महल, रत्नादि मम्पत्ति होती है। यह सर्व विचार पुद्गल शरीरके आश्रित है (सहयार सरीर सु लियं) इस सांसारिक मोहके कारण वारवार शरीरका लाभ होता है (भय विलय सिद्ध सुइ मिलियं) जब सर्व संसारका भय विला जाता है तब स्वयं सिद्ध भाव मिल जाता है ॥ १७ ॥

(भय षिपनिक भव्वु स उत्तं) निर्भय भव्य उसे ही कहा गया है (तं अमिय रमन रस जुत्तं) जो आनन्दामृतमें रमण करते हुए आत्मीक रस पान कर रहे हैं (विन्यान विंद सुइ रमियं) वे ही ज्ञानके अनुभवमें रमण करते हैं (तं ममल रमन सिधि मिलियं) शुद्ध रत्नत्रय रूप होना ही सिद्ध भावको प्राप्त होना है ॥ १८ ॥

(जं तारन तरन सुभावं) श्री अरहंत भगवानका जो तारण तरण स्वभाव है (तं दिपि दिष्टि सु सहावं) वह स्वभाव अनन्तज्ञान व अनन्तदर्शन स्वरूप है (तं मन्द कमल जिन उत्तं , श्री जिनेन्द्रने कमल शब्दसे कहनेयोग्य पूर्ण कमल समान प्रफुल्लित भावको वीतराग भाव कहा है (तं ममय सिद्धि संपत्तं) ऐसा आत्मा सिद्धगतिको पालेता है।

भावार्थ—श्रुतज्ञानमें १४ पूर्व प्रसिद्ध हैं। उन पूर्वोंके ज्ञाताको श्रुतकेवली कहते हैं। श्रुतकेवली छठे व सातवें गुणस्थानमें धर्मध्यान करते हैं, फिर आठवेंमें शुक्लध्यान प्रगट होजाता है। इसी शुक्लध्यानसे जब निर्भय हो आत्माको ध्याते हैं व शुद्धोपयोगमें लीन होते हैं तब क्षपकश्रेणी पर चढ़कर दशवें गुणस्थानके अन्तमें मोहनीयकर्मका नाश करते हैं। फिर बारहवें क्षीणमोह गुणस्थानमें शेष तीन घातीय कर्मोंका क्षय करके अरहन्त केवली होजाते हैं। अरहन्त भगवान यथार्थ तारणतरण जहाज हैं, आप भी सिद्ध भावमें लीन होते हुए सिद्ध होजाते हैं तथा बहुतसे भव्य जीवोंको भवसागरसे पार कर देते हैं। अर्थात् उनके बताए हुए रत्नत्रय मार्गपर चलनेसे वे स्वयं अरहन्त व सिद्ध होजाते हैं। अरहन्त भगवान वीतराग विज्ञानमें रमण करते हैं, ज्ञानानन्दका रस पान करते हैं। संसार सम्बन्धी सर्व रागद्वेष मोहसे रहित हैं। जो सर्व वांछा रहित हो केवल आत्मशुद्धिके हेतु ध्यान करते हैं उन हीका यथार्थ ध्यान है। जो मिथ्यात्व कर्मके उदयसे भव-सुख वांछाकी शल्य लिये रहते हैं वे यथार्थ ध्यानी नहीं हैं, उनको ज्ञानानन्दका लाभ नहीं होता है। इसलिये जो सिद्धगतिको प्राप्त करके सदा मुक्त होना चाहें उनको श्री जिनवाणीका शरण ग्रहण करना योग्य है।

ज्ञानसे ही समभाव प्राप्त होता है। परमात्मप्रकाशमें कहा है:—

बंधहं मोक्खहं हेउ णिउ, जो णवि जाणइ कोइ । मोक्खहं मोहिं करइ जिय, पुण्णु वि पाउ वि दोइ ॥ १७९ ॥

दंसण णाण-चरित्तमउ, जो णवि अप्प मुणेइ । मोक्खहं कारण भणिवि जिय, सो पर ताइं करेइ ॥ १८० ॥

जो णवि मण्णइ जीउ समु, पुण्ण वि पाउवि दोइ । सो चिरु दुक्खु सहन्तु जिय मोहें हिंडइ कोइ ॥ १८१ ॥

भावार्थ—जो कोई जीव बन्ध और मोक्षका कारण अपना विभाव व स्वभाव परिणाम है ऐसा भेद नहीं जानता है वही जीव पुण्य तथा पाप दोनोंको ही मोहसे करता है । जो सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रमई आत्माको नहीं जानता है वही हे जीव ! उन पुण्य पाप दोनोंको बन्ध और मोक्षका कारण जानकर पुण्यको करता है । जो जीव पुण्य तथा पाप दोनोंको समान नहीं मानता है वह जीव मोहसे मोहित हुआ बहुत काल तक दुःख सहता हुआ संसारमें भटकता है ।

(८६) सम्यक्त अष्ट गुण गाथा १७६८ से १७७९ तक ।

उव उवन कमल उववन्न परम पयं, परम तत्तु पद विंद सुयं ।
आयरन चरन आयरन सुयं जिनु, अर्थ ति अर्थ सु ममल पयं ॥
आयरन पर्म जिन परम सुयं ॥ १ ॥

आयरन उवन हिययार गुप्ति जिनु, आयरन अमिय रस मुक्ति जयं ।
भय षिपनिक सुइ ममल परम जिनु, तं विंद रमन रे जिनय जिनं ॥
भवियन अन्मोय तरन जिननाथ सुयं (आचरी) ॥ २ ॥

जै जै जयवन्तु जयं जय उवने, उव उवन जयं हिययार जयं ।
सहयार जयं जयवंत ममल रस, अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं ॥आयरन०॥ ३ ॥
सवेय सुयं सुइ उवन परम जिनु, पम तत्तु तं पर्म पयं ।
सवेओ हिय सहाइ सहज जिनु, भय मल्य मंक विलयन्तु सुयं ॥आयरन०॥ ४ ॥

निव्वेओ निरविक्त ममल जिनु, ममल रमनु ममल पयं ।
जं राग दोष गारव भय विलयं, पर पर्जय विलय सु मुक्ति पयं ॥आयरन०॥ ५ ॥
निंदा अन्यान दिप्ति नहु रमनं, दिष्टि गलिय भय मिच्छपयं ।
सुइ न्यान दिप्ति तं दिष्टि रमन जिनु, जन कल मल मोहंध विलं ॥आयरन०॥ ६ ॥
गम्य अगम्य तं गुहन उवन जिनु, हिययार उवन उव उवन सुयं ।
सहयार उवन तं उवन जान पौ, तं वज्र ग्रहन जिननाथ पयं ॥आयरन०॥ ७ ॥
उवसम संसार सरनि सुइ विलयं, षिपनिकु सुइ षिपिय सुयं जिनिगं ।
षे उवसम तं षिपक रमन जिनु, तं विंद रमन उत्पन्न ममं ॥आयरन०॥ ८ ॥
भय विनास तं भक्ति रमन जिनु, अर्थ तिअर्थ सु भत्ति सुयं ।
भय षिपनिकु तं ममल रमन जिनु, अमिय रमन तं विष विलयं ॥आयरन०॥ ९ ॥
वारंवार इच्छ जिन जिनयति, इच्छ रमन त न्यान रमं ।
न्यान रमन विन्यान ममल जिनु, वाच्छलु इच्छ तं पर्म पयं ॥आयरन०॥ १० ॥
अनुकम्पा अन्यान षिपक जिनु, न्यान अन्मोय सु रमन जिनु ।
न्यान दिप्ति तं दिष्टि रमन जिनु, तं न्यान दान अनुकम्प रयं ॥आयरन०॥ ११ ॥
इय अष्ट गुनं अष्टांग रमन जिनु, आयरन न्यान विन्यान सुयं ।
दिपि दिप्ति दिष्टि आवरन ममल पय, न्यान आयरन सु मुक्ति पयं ॥
आयरन परम जिन परम सुयं ॥ १२ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन कमल उववन्न परम पयं) **कमल समान प्रफुल्लित अरहन्तका आत्मा प्रकाशित है इसीमें परमात्माका पद झलक रहा है** (परम तत्तु पद विंद सुयं) **यही सब तत्वोंमें सार परम तत्व है।**

वहां स्वयं अपने पदका अनुभव है (आयरन चरन आयरन सुयं जिनु) चारित्राचार यही है कि वे जिन स्वयं आपमें आचरण कर रहे हैं (अर्थति अर्थ सु ममल पयं) वहीं रत्नत्रयमई पदार्थ है, वहीं परम शुद्ध पद है (आयरन परम जिन परम सुयं) उत्कृष्ट चारित्र यही है कि श्री जिनेन्द्र अपने परमपदमें आप विराजित हैं ॥१॥

(आयरन उवन हिययार गुप्ति जिन) चारित्रका जहां प्रकाश है वहां हितकारी स्वभावमें गुप्तभाव होता है यही जिनपद है (आयरन अमिय रस मुक्ति जयं) चारित्र द्वारा आत्मीक आनन्दका रस पीना ही मुक्तिको जीतना है (भय षिपनिक सुइ ममल परम जिनु) श्री जिनेन्द्र स्वयं अभय और शुद्ध हैं (नं विंद रमन रे जिनय जिन) श्री जिनेन्द्र ज्ञानमें प्रवाह रूपसे रमण कर रहे हैं। वे ही जीतनेवाले हैं (भवियन अन्मोय तरन जिननाथ सुयं) हे भव्य जीव ! श्री जिनेन्द्र ही स्वयं आनन्दमग्न जहाज हैं ॥ २ ॥

(जै जै जयवन्तु जयं जय उवने) जय हो, जय हो, जयवन्त रहो, श्री वीर जिनका प्रकाश हुआ है (उव उवन जयं हिययार जय) इस शुद्ध सम्यक्तके प्रकाशकी जय, हितकारी गुणोंकी जय हो (सहयार जयं जयवन्त ममल रस) सम्यक्तके सहकारी गुणोंकी जय हो, शुद्ध आत्मीक रसकी जय हो (अन्मोय रमन सुइ सिद्धि जयं) आनन्दमई अरहन्त ही जहाजके समान सीधे मोक्षद्वीपको चले जाते हैं ॥ ३ ॥

(संवेय सुय सुइ उवन परम जिनु) संवेग गुण परम जिनमें स्वयं उत्पन्न है वे स्वयं संवेगरूप हैं। संवेगका अर्थ धर्मानुराग है। निश्चय नयसे श्री अरहन्त अपने आत्मीक स्वभावरूपी तत्वमें रागी होरहे हैं अर्थात् परम वीतरागी हैं (परम तत्त नं परम पयं) संवेग गुण ही परम तत्व है यही परमपद है (संवेओ हिय सहाइ सहज जिनु) संवेग गुण हितकारी है। इसकी सहायतासे जिनका सहज स्वभाव प्रगट है (भय सल्य संक विलयतु सुयं) आत्मामें प्रेमालु होनेसे अर्थात् आत्ममग्न होनेसे सर्व भय, सर्व माया मिथ्या निदान शल्यें व सर्व शङ्काएं विला जाती हैं ॥ ४ ॥

(निर्वेओ निर्विक्त ममल जिनु) श्री जिनेन्द्रमें सम्यक्तका दूसरा गुण निर्वेद भी प्रगट है जिससे शुद्ध जिनेन्द्र भगवान सर्व पर भावसे विरक्त हैं, परम उपेक्षा भावके धारी है (ममल रमनु ममल पयं) वे भगवान वीतरागभावमें रमण कर रहे हैं वही एक निर्मल आत्मीकपद है (जं रागदोष गारव भय विलय) श्री जिनेन्द्रमें न राग है, न द्वेष है, न मद है, न कोई भय है, ये सब दोष विला गए हैं (पर पर्जय विलय सु मुक्ति पयं) सर्व पर पर्याय या परमें अहंबुद्धि बिलकुल चली गई है। श्री जिनेन्द्रने मुक्तिका परमपद पालिया है ॥ ५ ॥

(निंदा अन्यान दिप्त नहु रमनं) निन्दा रूप जो अज्ञानमई मिथ्यात्व है उसमें प्रभुका रमण नहीं है (दिष्टि गलिय मय मिच्छ एयं) क्योंकि भगवानने अहङ्कार रूप मिथ्यात्व पद्की दृष्टिको गला डाला है (सुद न्यान दिप्ति तं दिष्टि रमन जिन्) वे स्वयं ज्ञान दर्शन स्वभावमें वीतरागतासे रमण कर रहे हैं (जन कल मन मोहंघ विलं) न वहां लोगोंसे मोह है न शरीरसे मोह है, न मनके भीतर कोई विकल्प है। निन्दाके कारण मोहनीयकर्मका क्षय होगया है। सम्यक्तीका तीसरा गुण निन्दा है। अपनी निंदा परसे करना। निश्चय-नयसे प्रभुमें कोई सम्यक्त चारित्र सम्बन्धी दोष नहीं है जिससे निंदा करें ॥ ६ ॥

(ध्रुव अगम्य तं ग्रहन उवन जिनु) श्री जिनेन्द्रमें ऐसा ज्ञानका प्रकाश है जिसमें स्थूल सूक्ष्म सर्व पदार्थोंका ज्ञानमें ग्रहण है (हिययार उवन उव उवन सुयं) उनमें हितकारी सम्यक्तका स्वयं प्रकाश है, वे प्रकाश रूप ही हैं (सहयार उवन तं उवन जान पो) सहकारी सम्यक्तके कारण मोक्षमें लेजानेवाले रथका प्रकाश होगया है (तं वज्र ग्रहन जिननाथ सुयं) वे जिनेन्द्र भगवान स्वयं वज्रके समान परमावगाढ़ सम्यक्तके धारी हैं। गर्हाका अर्थ अपने आप अपनी निंदा करना है। यहां निश्चयनयसे गर्हाका अर्थ ग्रहण करके दिखाया है कि वे स्वयं परमावगाढ़ शुद्ध सम्यक्तके धारी हैं। उनमें गर्हाका कोई काम नहीं है ॥ ७ ॥

(उवसम संसार मगनि सुइ विलयं) जहांतक उपशमभाव है, केवल कषाय या मिथ्यात्व दबा हुआ है वहांतक संसारका भ्रमण है सो अरहन्तने इस उपशमभावका क्षय कर दिया है (षिपनिकु सुइ षिपिय सुयं जिनियं) उनमें क्षायिकभाव है, उन्होंने घातीय कर्मोंको स्वयं क्षय कर दिया है, वे वीतराग जिन हैं (षे उवसम तं षिपिय रमन जिनु) क्षयोपशमभावको भी प्रभूने क्षय कर दिया है, न वहां क्षयोपशम सम्यक्त है, न क्षयोपशम चारित्र है, न क्षयोपशम रूप ज्ञान, दर्शन व बल है, वे वीतरागभावमें रमण करते हैं (तं विंद रमन उत्पन्न समं) वे ज्ञानमें रमण करते हैं जिससे वहां समभाव या वीतरागभाव प्रगट है। सम्यक्तमें उप-शम गुण होता है, शांतभाव होता है, अरहन्तमें परम शांतरूप समताभाव है ॥ ८ ॥

(भय विनास तं भक्ति रमनु जिनु) श्री अरहन्तमें कोई भय नहीं है, ऐसे निर्भय पद्की भक्ति है सो ही वीतरागभावमें रमण है (अर्थ ति अर्थ सु भक्ति सुयं) आत्मीक रमणतामें स्वयं रत्नत्रय पदार्थकी सच्ची भक्ति होरही है (भय षिपनिक तं ममल रमनु जिनु) वे जिनेन्द्र सर्व भयरहित अपने शुद्ध पद्में रमण कर रहे हैं (अमिय रमन तं विष विलयं) वे आनन्दामृतमें रमण कररहे हैं, उनका विषयाकांक्षाका विष विला गया है ॥९॥

(वारंवार इच्छ जिन जिनयति) वारम्वार श्री अरहन्तको अपने ही जिनपदकी तरफ प्रेम है, उसीमें लय है (इच्छ रमन तं न्यान रमं) अपने इष्टपदमें रमण करना सो ही शुद्ध ज्ञानमें रमण है (न्यान रमन विन्यान रमनु जिन) ज्ञानमें रमण करना सो ही वीतराग केवलज्ञानमें रमण करना है (वाच्छल्लु इच्छ तं परम पयं) यही उनके वात्सल्यगुण है जो वे परमपदके ही भीतर मग्न हैं ॥ १० ॥

(अनुकम्पा अन्यान षिपक जिनु) श्री अरहन्तके अनुकम्पा गुण यह है कि आत्मापर दया करके सर्व अज्ञानको नाश कर डाला है (न्यान अन्मोय सु रमन जिनु) तथा वे जिनेन्द्र ज्ञानानन्दमें ही रमण कर रहे हैं जिससे उन्होंने कर्मोंका मैल हटा दिया है (न्यान दिप्ति तं दिष्टि रमन जिनु) वे वीतराग भगवान ज्ञान दर्शनमें रमण कर रहे हैं (तं न्यान दान अनुकम्प रयं) तथा वे दया करके अपनेको ही ज्ञान दान दे रहे हैं या वे भव्य जीवोंको ज्ञानका प्रकाश करते हैं यही अनुकम्पा भावमें मगनता है। सम्यक्ती व्यवहारसे प्राणीमात्र पर दया रखता है। श्री अरहंतके निश्चय दया यह है कि वे आपको व परको ज्ञानका दान करते हैं ॥ ११ ॥

(इय अष्ट गुनं अष्टांग रमन जिनु) श्री अरहन्त वीतराग सम्यक्तके आठ अंगरूप जो आठ गुण हैं उनमें निश्चयसे रमण कर रहे हैं (अयान न्यान विन्यान सुयं) यही ज्ञान चेतनारूप स्वयं आचरण है (दिपि दिप्ति दिष्टि आयरन ममल पयं) वे शुद्धपदके धारी अनन्तदर्शन व अनन्तज्ञानमें आचरण कर रहे हैं (न्यान आचरन सुमुक्ति पयं) इसी आत्मज्ञानमें आचरण करनेसे मुक्तिको पाते हैं ॥ १२ ॥

भावार्थ—इस छंदमें भी श्री अरहन्त भगवानके गुण गाये हैं व बताया है कि वे स्वरूपाचरण करते हुए परमानन्दको प्राप्त करते हैं। वे अपने स्वरूपमें मगन हैं। वे रत्नत्रय धर्मकी मूर्ति हैं। श्री अरहन्त परमात्मा क्षायिक परमावगाढ़ सम्यक्तके धारक हैं, इसलिये उनके सम्यक्तके संवेगादि आठों अंग प्रगट हैं। साधक सराग सम्यग्दृष्टीकी अपेक्षा आठ गुण इस तरह पर है—

संवेओ णिव्वेओ णिन्दा गर्हा उवसमो भत्ती। वाच्छल्लं अनुकम्पा गुणट्ठ सम्मत्त जुत्तस्स ॥

भावार्थ—सम्यक्तीके आठ गुण होते हैं–(१) संवेग—धर्मके कार्योंमें परम रुचि रखना, (२) निर्वेद–संसार-शरीर भोगोंसे वैराग्यभाव रखना, (३) निन्दा अपनेमें गुण होते हुये भी अपनी निंदा अपने मनमें करना, (४) गर्हा—अपनेमें गुण होते हुये भी अपनी निन्दा दूसरोंसे करना, (५) उपशम—

क्रोधादि कषायकी मंदता रखनी, शांतभाव करना, (६) वात्सल्य—धर्मात्मासे प्रीति, (७) अनुकम्पा—प्राणी मात्रपर दयाभाव!

अरहन्त परमात्मामें संवेग गुण यह है कि ये सर्व भय व शंकासे रहित हो, अपने परमात्म तत्वमें अनुरागी होरहे हैं। निर्वेद गुण यह है कि सर्व रागादि भावोंसे विरक्त परम वीतराग हैं। निन्दा-गुण यह है कि उनमें मिथ्यात्वभाव, अज्ञानभाव गल करके अनन्त ज्ञानदर्शनका प्रकाश है। इन्होंने सर्व दोषोंको छोड़ दिया है, यही अपने दोषोंका प्रकाश करना है। गर्हा—गुण यह है कि वे परमावगाढ़ सम्यक्तके ग्रहणसे सर्व दोष मुक्त हैं। उन्होंने अपने दोषोंको प्रगट करके छोड़ दिया है। उपशम-भाव यह है कि वे परम शांत वीतराग हैं। उनके क्षायिक भाव है। औपशमिक—क्षयोपशमिक भाव नहीं है। भक्ति-यह है कि वे अपने रत्नत्रय स्वभावमें रमण कर रहे हैं। वात्सल्य—गुण यह है कि उनको अपने ही परम पदसे प्रेम है। अनुकम्पा गुण यह है कि उन्होंने अपने आत्माकी दया करके ज्ञानानन्द प्रदान किया है व सर्व भक्तोंको ज्ञान दान देते हैं। इस तरह आठ गुणोंके धारी श्री अरहंत भगवान हैं।

आप्तस्वरूपमें कहा है—

निष्कलबोधविशुद्धसुदृष्टिः पश्यति लोकविभावस्वभावम्। सूक्ष्मनिरञ्जनजीवपुनोऽसौ तं प्रणमामि सदा परमात्मम् ॥ ६३ ॥

क्षपितदुरितपक्षक्षीणनिःशेषदोषो भवमरणविमुक्तः केवलज्ञानभानुः। परहृदयमतार्थग्राहकज्ञानकर्ता ह्यमलवचनवक्ता भव्यबन्धुर्जिनाप्तः ॥६४॥

भावार्थ—शुद्ध ज्ञान, शुद्ध दर्शनके धारी अरहंत लोकके विभाव व स्वभावके देखनेवाले हैं, जो स्थूल हैं, निरंजन हैं, वीतराग जिन हैं, जन्म मरण रहित हैं केवल ज्ञानरूपी सूर्य हैं। पापके समूहको जिन्होंने क्षय कर दिया है। सर्व दोष रहित हैं। दूसरोंके मनमें यथार्थ पदार्थोंको समझा कर ज्ञानके कर्ता हैं। शुद्ध वाणीके वक्ता हैं। भव्योंमें बन्धु हैं। ऐसे अरहंत जिनेन्द्र आप्त हैं, उनको सदा नमस्कार करता हूँ।

---

(८७) धर्माचरण फूलना गाथा १७७९ से १७९२ तक।

गुन आयरन धम्म आयरनं, आयरन न्यान पयं पर्म पयं।
तव आयरन जिन जिन उत्तं, आयरन ति अर्थ सु ममल पयं॥
उव सम षिम रमन सु ममल पयं॥ १॥

उव उवन पयं उवसमें ममं, तं विंद रमन उव सुन्न समं ।
उव उवन मरनि विष विषम रमनि. उत्पन्न पिपिय जिननाथ सुयं ॥
अवियन पय पिपिय अमिय रस मुक्ति जयं ॥ २ ॥ (आचरी)
उत्तम षिम उवन उवन जिनु रमनं, उववन कम्मु विलयंतु सुयं ।
उत्पन षिपिय भय पिपक रमनु जिनु, तं न्यान अमिय रम ममल पयं ॥ उव उवन० ॥ ३ ॥
मै मूर्ति तं अर्क रमनु जिनु, दर्स दर्स उत्पन्न रमं ।
वारावार अयार रमनु जिनु, दिष्टि मन्द उत्पन्न जिनं ॥ उव० ॥ ४ ॥
अर्जव आयरन सु चरन रमनु जिनु, उववन ममय मम समय जिनं ।
न्यान विन्यान सु आर्जव ममलं, न्यान अन्मोय सु विष विलयं ॥
उवसम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव उवन० ॥ ५ ॥
सत्यं तं सहजानन्द जिनु रमनं, रमन विंद रे उवन समं ।
भय सल्य संक विलयंतु जिनय जिनु, निसंक मन्द दिपि दिष्टि रमं ॥
उवसम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव० ॥ ६ ॥
सौच्य सहकार सहज जय रमनं, हिययार उवन पै उवन रमं ।
उव उवन मिलनु उव उवन विलओ, तं भुक्त उवन सुइ भुक्त विलं ॥
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव० ॥ ७ ॥
अन्मोय अवल बलि विषय विनन्द विली, सहयार उवन पै मुक्ति मिलं ।
संजम सुइ जयो जयो जय रमनं, जाता उववन्न सु मुक्ति जयं ॥
उवसम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव० ॥ ८ ॥

तव तत्काल उवन सुइ उवनं, उव उवन न्यान सुइ विपु विलयं।
उव उवन परम पय पर्म उवन जै, तं कम्मु विलय सुइ मुक्ति जयं ॥
उवसम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव० ॥ ९ ॥

त्यागं तं तिक्त तिक्त पर पर्जायं, भय सल्य संक विलयंतु सुयं।
दानं तं नन्त नन्त जिन रमन, त्यागं न्यान सुइ सिद्धि जयं ॥
उवसम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव० ॥ १० ॥

आकिंचन आयरन जिनय जिनु, अर्थति अर्थ सु ममल पयं।
षट् कमलह तह अंगदि अगह, आयरन धम्मु तं मुक्ति पयं ॥
उवसम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव० ॥ ११ ॥

बंभ चरन आयरन अरुह रुई, षट् रमन रयन सुई जिनय जिनं।
अबंभ रमन सुइ विलय सहज जिनु, अन्मोय न्यान सुइ बंभ पयं ॥
उवसम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव० ॥ १२ ॥

दह विह आयरन सुयं जिनु रमनं, भय षिपनिक सुइ अमिय रसं।
तारन तरन सुविंद रमन जिनु, अन्मोय समय सिद्ध सिद्धि जयं ॥
उवसम षिम रमन सु ममल पयं ॥ उव० ॥ १३ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(गुन आयरन धम्म आय नं) आत्माके गुणोंमें आचरण करना सो ही धर्मका आचरण है (आयरन न्यान वय परम पयं) स्वभावका आचरण ही ज्ञानमय पद है वही परम पद है (तव आयरन जिनय जिन उत्तं) उसी स्वभावमें आचरणको या स्वभावमें तन्मयताको वीतराग जिनने तपका आचरण कहा है

(आयरन ति अर्थ सु ममल पयं) वही रत्नत्रयमई धर्मका आचरण है, वही दोष रहित पद है (उवसम षिम रमन सु ममल पयं) वही उपशम या शांतभावमें तथा क्षमाभावमें रमणरूप शुद्ध आत्मीक पद है ॥ १ ॥

(उव उवन पयं उवममें समं) अब शांत भावरूप या समभावरूप पद प्रगट होगया है (तं विंद रमन उवसन समं) उसीको ज्ञानमें रमण या परसे शून्य भावमें रमण या समभाव कहते हैं (उव उवन सरनि विष विषम रमनि) जो भयानक विषके समान विषयोंके रमणसे संसार-भ्रमणकारक कर्म-बन्ध होता है (उत्पन्न षिपिय जिननाथ सुयं) उन सर्व घातीय कर्मोंको क्षय करके श्री जिनेन्द्र अरहन्त स्वयं प्रगट हुए हैं (भवियन भय षिपिय अमिय रस मुक्ति जयं) हे भव्यजीवो ! यह निर्भय पदधारी अरहन्त आनन्दामृत रसका पान करते हुए मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ २ ॥

(उत्तम षम उवन उवन जिनु रमन) श्री अरहन्तमें क्रोधके अभावसे उत्तमक्षमा गुण प्रगट है, उसी प्रगट गुणमें श्री जिनेन्द्र रमण कर रहे हैं (उववन कम्मु विनयंत सयं) उत्तम क्षमाके प्रकाश रहते हुए कर्मोंकी स्वयं निर्जरा होरही है। वीतराग जिनके प्रचुर कर्मोंकी निर्जरा होती है (उत्पन्न षिपिय भय षिपक रमनु जिनु) निर्भय आत्मरमी वीतराग अरहन्तके जो योगोंके कारण कर्म आते हैं, वे तुर्त क्षय होजाते हैं उनके ईर्या-पथ आस्रव है, कषाय न होनेसे, क्रोधादि भाव न होनेसे उत्तम क्षमाका ही प्रताप है। जो कर्म आते हैं वे झड़ जाते हैं उनमें स्थिति नहीं पड़ती है (तं न्यान अमिय रस ममल पयं) वे अरहन्त ज्ञानानन्दके रसको पान करते हुए मल रहित पदमें हैं ॥ ३ ॥

(मै मूर्ति तं अर्क रमनु जिनु) मार्दव गुणकी मूर्ति स्वरूप आनन्दमई जिन ज्ञानमई सूर्यमें रमण कर रहे हैं। उनमें पर कृत मान नहीं है (नर्म नर्म उत्पन्न रसं) निज स्वभावको वारवार अनुभव करनेसे वहां आनन्दका रस प्रगट है (वागवार अयार रमनु जिनु) श्री जिनेन्द्र अनन्त सुखमें रमण करते हैं (दिष्टि मध्य इस्तन्न जिनं) श्री जिनेन्द्रमें क्षायिक सम्यग्दर्शन है तथा उन्हींसे दिव्यवाणीका प्रकाश होता है ॥ ४ ॥

(अर्जव आयरन सु नरन रमनु जिनु) श्री जिनेन्द्र आर्जव धर्ममें आचरण कर रहे हैं। मायाके अभावसे परम सरलता है। वे परमें प्रवृत्तिको छोड़कर निजमें ही आचरण कर रहे हैं (उववन समय सम समय जिनं) श्री जिनेन्द्रमें आत्माका समभावरूप चारित्र प्रगट है (न्यान विन्यान सु आर्जव ममलं) केवलज्ञान ही वहां शुद्ध आर्जव धर्म है जिससे वे वस्तुस्वरूपको जैसाका तैसा विना किसी कपटके प्रगट कर रहे हैं (न्यान अन्मोय

सु विष विलयं) ज्ञानानन्दके प्रकाश होनेसे उनका सर्व विषयभोग सम्बन्धी विष दूर होगया है (उवमम षिम रमन सु ममल पयं) वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए शुद्ध पदके धारी हैं ॥ ५ ॥

(सत्यं तं सहज नन्द जिन रमनं) उत्तम सत्य यह है कि वे सत्य स्वाभाविक वीतराग आनन्दमें रमण कर रहे हैं (रमन विंद रै उवन समं) वे धारावाही ज्ञानमें रमण कर रहे हैं, उनमें समभाव प्रगट है (भय सल्य संक विलयंतु जिनय जिनु) उनके भावोंसे सर्व भय, शङ्काएँ व शल्यें दूर होगई हैं, वे वीतराग जिन हैं (निसंक सब्द दिपि दिष्टि रमं) उनकी वाणी शङ्का रहित है, सर्व श्रोताओंको सत्य भासती है, वे ज्ञानदर्शन स्वभावमें रमण करते हैं (उवमम षम रमन सु ममल पयं) वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए शुद्ध पदमें बिराजित हैं ॥ ६ ॥

(सौच्य सहकार सहज जय रमनं) लोभके अभावसे उत्तम शौच गुण प्रगट है, परम पवित्रता है। इस गुणकी सहायतासे वे सहज वीर भावमें रमण कर रहे हैं (हिययार उवन वैं उवन रमं) इसी गुणसे हितकारी पद प्रगट है, उसी प्रकाशमें रमण कर रहे हैं (उव उवन मिलनु उव उवन विलओ) जो कर्म आते हैं वे आते ही क्षय होजाते हैं, लोभकी चिकनई विना ठहरते नहीं (नं भुक्त उवन सुइ भुक्त विलं) जो कर्म उदय आकर रस देते हैं वे रस देकर या भोगे जाकर क्षय होजाते हैं (उवमम षिम रमन सु ममल पयं) वे शांत भावमें रमण करते हुए शुद्ध पदके धारी हैं ॥ ७

(अन्मोय अवल वलि विषय विनंद विली) आत्मानन्दरूपी अनुपम बलके कारण विषयोंका सुखाभास रूप दुःख सर्व विला जाता है (महयार उवन पे मुक्ति मिलं) इसी आनन्दके प्रकाशरूपी पदसे मुक्ति मिल जाती है (संजम सुइ जयो जयो जय रमनं) उत्तम संयम यही है जो इन्द्रियोंपर व मनपर विजय करे। जितेन्द्रिय होकर जय स्वरूप श्री वीतराग भावके भीतर रमण करें (जाता उववन्न सु मुक्ति जय) मङ्गलरूप श्री अरहन्त यहां प्रकाश होकर फिर मुक्तिको जीत लेते हैं (उवमम षिम रमन सु ममल पयं) वे प्रभु शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए शुद्ध पदके धारी हैं ॥ ८ ॥

(तव तत्काल उवन सुइ उवनं) उत्तम तप अरहंतमें यही है जो हर समय अपने प्रकाशमें प्रकाशित होरहे हैं। आपमें ही तप रहे हैं, (उव उवन न्यान सुइ विष विलयं) उस तपसे केवलज्ञान प्रगट है जिससे सब विषयभोगका विष दूर होगया है (उव उवन परम पय पर्म उवन जे) यहीं परमात्माका परम पद प्रकाशित है

उस पदकी जय हो (तं कम्मु विलय सुइ मुक्ति जयं) इसी तपसे सर्व कर्म क्षय होजाते हैं और आत्मा मुक्तिको पहुंच जाता है (उवसम षिम रमन सु ममल पयं) शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करना सो ही शुद्ध पद है ॥९॥

(त्यागं तं तिक्त तिक्ति पर पर्जायं) उत्तम त्याग धर्म छोड़नेको कहते हैं, श्री अरहन्तने पर जो पुद्गलकी या पुद्गल कृत अपनी पर्यायको छोड़ दिया है (भय सल्य संक विलयन्तु सुयं) उनके भीतर स्वयं ही सर्व भय, शल्य व शङ्काएं विला गई हैं (दानं तं नन्त नंत जिन रमनं) त्यागका अर्थ दान भी है, प्रभुमें अनन्त दान है, वे वीतराग जिन अपने स्वभावमें रमण करते हुए आपको आनन्दका दान कर रहे हैं (त्याग न्यान सुइ सिद्धि जयं) अथवा त्याग नाम सम्यग्ज्ञानका है जिसमें सर्व अज्ञानका अभाव है ऐसे ज्ञानधारी अरहन्त सिद्ध भावको जीत लेते हैं (उवसम षम रमन सु ममल पयं) वे शांतभाव क्षमाभावमें रमण करते हुए शुद्ध पदके धारी हैं ॥ १० ॥

(आकिंचन आयरन जिनय जिनु) श्री वीतराग जिनेन्द्र उत्तम आकिंचन्य धर्मके धारी हैं, परसे ममत्व रहित हैं (अर्थति अर्थ सु ममल पय) परको त्याग करके निश्चय रत्नत्रयमई अपना जो शुद्ध पद है उसमें लीन हैं (षट् कमलह तइ अंगदि अंगह) पूर्ण प्रकाशित कमलके समान छः गुण अर्थात् अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त वीर्य, अनन्त सुख, क्षायिक सम्यक्त, क्षायिक चारित्र उनके प्रदेश प्रदेशमें व्याप्त हैं (आयरन धम्मु तं मुक्ति पयं) परसे रहित अपने स्वभावमें आचरण करते हुए श्री अरहन्त मुक्तिपदको पाते हैं (उवसम षम रमन सु ममल पयं) उपशमभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए वे अरहन्त शुद्ध पदके धारी हैं ॥ ११ ॥

(बंभ चरन आयरन अरुह रुई) श्री अरहन्त उत्तम ब्रह्मचर्य धर्मके धारी हैं। वे पूजने योग्य निर्मल सम्यक्तभावमें आचरण कर रहे हैं या शुद्धात्मरमी हैं (षट रमन रयन सुइ जिनय जिनं) वे ऊपर कहे हुए अनन्त दर्शनादि छः गुणोंमें रमण कर रहे हैं, वे ही धर्मरत्न हैं, वे ही वीतराग जिन हैं (अबंभ रमनु सुइ विलय सहज जिनु) श्री अरहन्तके भावोंसे कुशीलका रमन या परभावका रमन सहज ही विला गया है, वे पूर्ण ब्रह्मचारी हैं (अन्मोय न्यान सुइ बम्भ पयं) आनन्दमई ज्ञानका होना सो ही ब्रह्मपद है (उवसम षम रमन सु ममल पयं) शांतभाव और क्षमाभावमें रमण करते हुए श्री अरहन्त शुद्ध पदके धारी हैं ॥ १२ ॥

(दह विह आयरन सुय जिन रमनं) इसतरह दश तरहके आचरणोंमें जिनेन्द्र स्वयं रमण कर रहे हैं (भय षिउनिक सुइ अमिय रसं) उनको भय रहित अभय आनन्दामृत रसका स्वाद आता है (तारन तरन सु

विंदु रमन जिनु) वे जिनेन्द्र स्वानुभवमें रमण करते हुए तारण तरण हैं (अन्मोय समय सिद्ध सिद्धि जयं) वे आनन्दमई आत्मा स्वयं सिद्ध होजाते हैं (उवसम षम रमन सु ममल पय) शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए श्री अरहन्त शुद्ध पदमें हैं ॥ १३ ॥

भावार्थ— इस छन्दमें यह बताया है कि दशलाक्षणी धर्मके निश्चय स्वरूपके धारी श्री अरहन्त परमात्मा ही हैं। ये दश धर्म आत्माहीके स्वभाव हैं सो शुद्धात्माके पूर्णपने प्रगट हैं। इन दश धर्मोंका व्यवहार स्वरूप श्री अमृतचन्द्र आचार्यने तत्वार्थसारमें इसतरह कहा है:—

क्रोधोत्पत्तिनिमित्तानामत्यन्तं सति सम्भवे । आक्रोशताडनादीनां कालुष्यो परमः क्षमा ॥ १४–६ ॥

अभावो योऽभिमानस्य परैः परिभवे कृते । जात्यादीनामनावेशान् मदानां मार्दवं हि तत् ॥ १५–६ ॥

वांमनःकाययोगानामवक्रत्वं तदार्जवम् । परिभोगोपभोगत्वं जीवितेन्द्रियभेदतः ॥ १६–६ ॥

चतुर्विधस्य लोभस्य निवृत्तिः शौचमुच्यते । ज्ञानचारित्रशिक्षादौ स धर्मः सुनिगद्यते ।
धर्मोपबृंहणार्थं यत्साधु सत्यं तदुच्यते ॥ १७–६ ॥

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यं प्राणिनां वधवर्जनम् । समितौ वर्तमानस्य मुनेर्भवति संयमः ॥ १८–६ ॥

परं कर्मक्षयार्थं यत्तप्यते तत्तपः स्मृतम् । त्यागस्तु धर्मशास्त्रादिविश्राणनमुदहृतम् ॥ १९–६ ॥

ममेदमित्युपात्तेषु शरीरादिषु केषुचित् । अभिसन्धिनिवृत्तिर्या तदाकिंचन्यमुच्यते ॥ २०–६ ॥

स्त्रीसंसक्तस्य शय्यादेरनुभूताङ्गनास्मृतेः । तत्कथायाः श्रुतेश्च स्याद ब्रह्मचर्यं हि वर्जनात ॥ २१–६ ॥

भावार्थ—उत्तम क्षमा-क्रोधकी उत्पत्तिके बाहरी निमित्तोंके अत्यन्त निकट होनेपर भी गाली सुननेपर या ताडन मारन होनेपर भी जो भावोंमें कलुषता या मलीनताका न होना सो उत्तम क्षमा है।

उत्तम मार्दव–दूसरोंके द्वारा अपमानित होनेपर भी जो अभिमानका न करना तथा जाति कुल आदि आठ मदोंका आवेश या वेग न होना सो उत्तम मार्दव है।

उत्तम आर्जव–मन वचन काय तीनों योगोंको सरल रखना उत्तम आर्जव है।

उत्तम शौच–भोगोंके मिलनेका, उपभोगोंके मिलनेका, जीते रहनेका, या इंद्रियोंके बने रहनेका। इसतरह चार प्रकारके लोभका त्याग सो उत्तम शौच है।

उत्तम सत्य—जो धर्मके बढ़ानेके हेतुसे ज्ञान व चारित्रकी शिक्षा देते हुए भलेप्रकार जो कथन किया जावे सो उत्तम सत्य धर्म है।

उत्तम संयम—जो मुनि पांच इन्द्रिय व मनसे विरक्त हो इन्द्रिय संयम तथा छः कायोंके प्राणोंकी रक्षा करते हुए प्राणि-संयम पालते हैं तथा देखकर चलते हुए, भाषा शुद्ध बोलते हुए आदि पांचों समिति पालते है उसके उत्तम संयम होता है।

उत्तम तप—जो कर्मोंके क्षय होनेके लिये उत्तम प्रकारसे ध्यानमें तपा जावे वह उत्तम तप है।

उत्तम त्याग—धर्म शास्त्रका व शिक्षाका देना सो उत्तम त्याग है।

उत्तम आकिंचन्य—प्राप्त शरीरादिमें मेरे पनेके सम्बन्धका त्याग सो उत्तम आकिंचन्य है।

उत्तम ब्रह्मचर्य—स्त्री संसर्ग की हुई शय्यादिके व अनुभव की हुई स्त्रीके स्मरणका व स्त्री सम्बन्धी कथाका व सुननेका त्याग सो उत्तम ब्रह्मचर्य है।

इस तरह इन दश धर्मोंको साधु पूर्णपने पालते हैं। गृहस्थ श्रावक एक देश अपनी स्थितिके अनुसार पालता है। श्री अरहन्त परमात्मामें इन धर्मोंका निश्चय स्वरूप घटता है। अर्थात् वे अरहन्त क्रोध रहित उत्तम क्षमामें ऐसे रमण कर रहे हैं कि वे कर्मोंपर कुछ भी क्रोध नहीं करते हैं तौभी उन कर्मोंका नाश होरहा है, वे प्रभु मानके अभावसे परको अपना मानना छोड़कर अपने निज ज्ञान स्वभावमें मगन होते हुए ऐसे उत्तम मार्दव गुणमें लीन हैं जिससे उनको परमानन्दका स्वाद आरहा है, किंचित् भी कठोरता नहीं है। मायाके अभावसे वे भगवान परमें न जाकर अपने शुद्ध समभावमें रमण करते हैं। यह उत्तम आर्जव धर्म है। परम ऋजुता है। स्वरूपमें ही सन्मुखता है। इस धर्मके प्रतापसे विषयोंकी इच्छा विला गई है। उत्तम सत्य धर्मसे वे अरहन्त सत्य आत्मीक स्वभावमें रत हैं, उनको सत्य केवलज्ञान है। उत्तम शौच धर्मसे वे परम पवित्र हैं उनमें कोई भी रागभाव नहीं है। कर्मवर्गणाएं योगोंसे आती हैं। उत्तम संयम यह है कि वे इंद्रिय व मनको विजय करके आत्मीक संयममें रत है। उत्तम तप यह है जो वे हर-समय शुद्धात्मीक भावमें तपते हैं जिससे कर्मोंकी विशेष निर्जरा होरही है। उत्तम त्याग धर्म यह है कि वे सर्व परभावके त्यागी हैं व अपनेको ही ज्ञानानन्दका दान करते हैं। उत्तम आकिंचन्य धर्म उनमें यह

है कि वे परसे ममता रहित होकर अपने ही गुणोंमें लीन हैं। उत्तम ब्रह्मचर्य यह है कि वे सर्व अब्रह्म या कुशील भावको छोड़े हुए अपने परम पदमें लीन हैं।

इसतरह श्री अरहन्त दशलाक्षणी धर्मके धारी परम धर्मके स्वामी वीतराग सर्वज्ञ आत्मरमी, शुद्धोपयोगी, परमानन्दीकी सदा जय हो। जो इनकी भक्ति करते हैं वे स्वयं भवसागरसे पार होजाते हैं।

---

(८८) तप फूलना गाथा १७९३ से १८२६ तक।

ऊवंकार ऊवनों विंद रमनु जिनु, रमन विंद जिन रमिजै।
जिन जिनयति जिनय विंद रे रमनं, रमन विंद सिध रमिजै ॥ १ ॥
भवियन भय षिपिय रमन जिनु रमिज, नन्द आनन्दह कमल रमन जिनु
रमन विंद सिध रमिज, भवियन भय षिपिय रमन जिनु रमिजै ॥ (आचरी) ॥२॥
विंद उवनो सुद्ध ममय जिनु, सुद्ध ममल जिन उत्तु सुयं।
तरन विवान ममय संजुत्तो, तं विंद रमनं सुइ पर्म पयं ॥ भवियन० ॥ ३ ॥
भय विनासं तव यरन परम जिनु, तव आयरन चरन जिनु उत्तु सुयं।
सहज सुभावे विंद रमन जिनु, तं तरन विवान मुक्ति मिलियं ॥ भवियन० ॥ ४ ॥
अनमन संसार सरनि सुइ विलयं, सयन विंद रम रमन सुयं।
पर्जय भय सयन नन्त सुइ गलियं, तं विंद रम सुइ भय विलयं ॥ भवि० ॥ ५ ॥
सयन सरूवे सुयं रमन जिन, अपय पर्म जिन परम पयं।
पर पर्जय सयन नन्त सुइ गलियं, विन्यान सयन तं मुक्ति पयं ॥ भवि० ॥ ६ ॥
आमोदर्ज सुयं जिन कलियं, भय मूर्ति सय ममल पयं।
विन्यान विंद रे रमन पर्म पय, पर्म न्यान सुइ दिष्टि जयं ॥ भवि० ॥ ७ ॥

अप्प सरूवे न्यान सहावे, विंद रमन रै रै जै जै।
पर पर्जय विलयंतु सहज जिनु, परम दर्स दर्सी जै ॥ भवि० ॥ ८ ॥
वस्तु संव्य सुइ षिपिय षिपक जिनु, म सरनि वस्तु तं सुयं गलियं।
पर्जय सरनि वस्तु तं वसिय. विन्यान विंद रै विलय सुयं ॥ भवि० ॥ ९ ॥
वस्तु वसिय जं पर पर्जय रै, रागु गलिय जन रंज सुयं।
भय सल्य संक गलिय जिनय जिनु, वस्तु विलय त मुक्ति पयं ॥ भवि० ॥ १० ॥
रस परित्याग तिक्त जिनऊ हं, पर्जय रय रसिय सुयं गलियं।
न्यान विन्यानह विंद रमन जिनु, पर पर्जय रसिय सुयं विलयं ॥ भवि० ॥ ११ ॥
कलरंजन दोस रसिय पर्जय रै, विन्यान विंद रस सुयं विलं।
पर्जय नन्त नन्त जं रसियं, अन्मोय तरन सुइ विलयं ॥ भवि० ॥ १२ ॥
विविक्त सैजासन विक्त सयन सुइ, विक्त रूव पर्जय विलयं।
पर पर्जय संजोय सुरं गलि, न्यान अन्मोय सु सिद्धि जयं ॥ भवि० ॥ १३ ॥
पर्जय सरनि नन्त सुइ चरियं, वय तव क्रित संसय महियं।
विक्त रूव तं विंद रमन रमि, पर पर्जय विलय सु मुक्ति पयं ॥ भवि० ॥ १४ ॥
काय कलेस कलह संजोए, व्रत चारित जं उत्तु पयं।
वय तव क्रिया अन्यान सहावे, न्यान अन्मोय सु विलय सुयं ॥ भवि० ॥ १५ ॥
कल लंकृत कम्मु काय जन उत्तह, उत्पन न्यान तं सुयं विलयं।
न्यान विन्यान सु विंद रमन रै, पर पर्जय विलयंतु सुयं ॥ भवि० ॥ १६ ॥

वाहिज तव आयरन परम जिनु, अर्थति अर्थ सु ममल पयं ।
षट् कमलह तं क्रांति कलिय जिनु, विन्यान विंद रस रमिय सुयं ॥ भवि० ॥ १७॥
षट् तव आयरन चरन सहयारह भय विनासु तं भव्वु सुयं ।
अर्थति अर्थह नो भय विलय, अन्मोय न्यान विधि पयडि सुयं ॥ भवि० ॥ १८॥
अभिंतर तव आयरन सहज सुइ, पर पर्जय तं विलय सुयं ।
परम तत्तु तं पर्म पयं जिनु, परम न्यान तं रमन पयं ॥ भवि० ॥ १९॥
पर्म सुभावह सुयं षिपक जिनु, सुइ कम्म षिपिय तं नन्त पयं ।
नन्त न्यान तं विंद रमन सुइ, तरन विवान सु मुक्ति पयं ॥ भवि० ॥ २०॥
विन्यान विंद रमन अमिय रस, वीय नन्त तं सौख्य सुयं ।
सूषम परिनाम सुयं सु अरूवी, सुयं लब्धि तं पर्म पयं ॥ भवि० ॥ २१॥
तारन तरन विवान पर्म पय, विंद रमन तं पर्म सुयं ।
तरन विवान समय संजोए, विन्यान रमन सिधि रत्तु सुयं ॥ भवि० ॥ २२॥
वैयाव्रत्य तं वृत्ति न्यान मय, न्यान रमन उववन्न सुयं ।
रिजु विपुलं च व्रिति सुइ उवनं, मन पर्यय सुइ विंद रय ॥ भवि० ॥ २३॥
न्यानावरनु सुयं सुइ विलयो, भव सल्य सक विलयन्तु सुयं ।
तरन विवान विंद सुइ रमनं, मन पर्जय अन्मोय सुयं ॥ भवि० ॥ २४॥
सुद्ध ध्याय सुयं धुव ममलं, ममल विंद तं रमन सुयं ।
तरन विवान सहाव समय सुइ, सम समय सिद्धि सुइ समय पयं ॥ भवि० ॥ २५॥

सुद्ध सरूवे सहज सनन्दे, तव आयरन सुद्ध सुइ सुद्ध पयं ।
विन्यान विंद तं रमन सुभावे, अन्मोय न्यान सम समय धुवं ॥ भवि० ॥२६॥
काउत्सर्ग चरन तव यरनं, क्रांति कमल उत्पन्न सुयं ।
विंद रमन विन्यान तरन सुइ, विन्यान न्यान केवलि उवनं ॥ भवि० ॥२७॥
कम्म वियप्प विलय पर्जय रे, भुक्त विलय सुइ सुयिन सुयं ।
विनन्द विली तं सुविन विलय सुइ, कम्मु विलय केवलि उवनं ॥ भवि० ॥२८॥
तं न्यान अन्मोय वलिय वलि उवनं, विन्यान विंद सुइ रमन पयं ।
तरन विवान अन्मोय वली सुइ, विषम विषय तं गलिय सुयं ॥ भवि० ॥२९॥
विषय गलिय तं न्यान अन्मोयह. न्यानेन न्यान सुइ मिलिय पयं ।
विंद रमन तं तरन सहावे, पर्म न्यान केवलि उवनं ॥ भवि० ॥३०॥
ध्यान स उत्तउ सुयं सहज जिनु, नन्तानन्त सु धुव रमनं ।
नन्त चतुष्टे सहज सरूवे, तरन विवान सु धुव ममलं ॥ भवि० ॥३१॥
जं केवलि दिष्टि नन्त नन्त हिउ, जोग ध्यान तं जिन उवनं ।
विन्द रमन विन्यान संजोए, त तरन विवान सु पर्म पयं ॥ भवि० ॥३२॥
हितमित महिय सु परिन कोमल, केवल भाव सु ममल पयं ।
अन्मोय सहावे समय स उत्तो, वोध ममल तं मुक्ति पयं ॥ भवि० ॥३३॥
सिद्ध सरूवे मुक्ति सहावे, न्यान विन्यान सु समय पयं ।
विंद रमन विन्यान तरन सुइ, नन्त ध्यान सुइ सिद्धि सुयं ॥ भवि० ॥३४॥

अन्वय सहित अर्थ—(ऊवंकार ऊवनो विंद रयन जिनु) ॐ मंत्रका प्रकाश हुआ है इसके द्वारा ज्ञानमें रमण कर्ता परमात्मा जिनका बोध हुआ है (रमन विंद जिनु रमि जै) हे भाई! ज्ञानमें रमणकर्ता जिन भगवानमें रमण करो (जिन जिनयति जिनय विंद रें रमनं) श्री जिनेन्द्रने घातीय कर्मोंको जीत लिया है, वे वीतरागी प्रभु ज्ञानके प्रवाहमें रमण कर रहे हैं (रमन विंद मिथ रमि जै) हे भाई! ज्ञानमें रमण कर सिद्ध स्वरूपमें रमण करो ॥ १ ॥

(भवियन भय षिपिय रमन जिन रमि जै) हे भव्यजीवो! सर्व भयोंको दूर करके आत्मरमी जिनेन्द्रमें रमण करो (नंद आनंदह कमल रयन जिनु) वे कमल समान प्रफुल्लित जिनेन्द्र आनन्दमें मगन हैं (रमन विंद मिथ रमि जै) ज्ञानमें रमण करके सिद्ध भावमें रमण करो ॥ २ ॥

(विंद ऊवनो सुद्ध ममय जिनु) शुद्धात्मा वीतरागीमें केवलज्ञानका प्रकाश है (सुद्ध ममल जिन उत्तु सुयं) स्वयं जिनेन्द्रने कहा है कि वे ही शुद्ध वीतराग जिन हैं (तरन विवान ममय मंजुनो) श्री अरहन्तकी आत्मा तारण तरण भावकी धारी है। वे आप तरते हैं व अन्य जीवोंको तारनेमें उदासीन निमित्त कारण हैं (तं विंद रमन सुइ पर्म पयं) इसी शुद्ध ज्ञानमें रमण करना है सोई परम पदका लाभ है ॥ ३ ॥

(भय विनाम तव यरन परम जिनु) श्री परमात्मा जिनदेव निर्भय भावरूपी तपका आचरण कर रहे हैं, अर्थात् निश्चय आत्मीक तपमें रमण करते हैं (तव आयरन चरन जिन उत्तु सुयं) श्री जिनेन्द्रने स्वयं कहा है कि तपका आचरण भी चारित्र है (सहज सुभावे विंद रमन जिन) श्री जिन सहज स्वभावधारी आत्माके ज्ञानमें रमण करते हैं, यही निश्चय तप है (तं तरन विवान मुक्ति मिलियं) ऐसे तपरूपी तारण तरण श्री अरहंत भगवान मुक्तिका लाभ कर लेते हैं ॥ ४ ॥

(अनमन संसार भरनि सुइ विलयं) अनशन तप पहला है, जहां विषय कषायोंका व आहारका त्याग करके उपवास किया जावे और मन व इंद्रियोंको रोककर आत्माके भीतर रमण किया जावे वही निश्चय उपवास या अनशन तप है। इस तपसे संसार-भ्रमणके कारण कर्मोंका क्षय होजाता है (मयन विंद रम रमन सुयं) ज्ञान रसके रमणमें स्वयं शमन करना अर्थात् तन्मय होजाना ही अनशन है (पर्जय भय मयन नन्त सुइ गलियं) आत्माके भीतर रमण करनेसे शरीर सम्बन्धी अनन्त भय व शरीरमें मोहरूपी नींद सब स्वयं गल जाते हैं। अज्ञानी मरनेसे डरते हैं व शरीरके स्नेहमें ऐसे फँस जाते हैं कि धर्मको भूल जाते हैं। यह सब अज्ञान-

भाव आत्म-रमणरूपी उपवाससे मिट जाता है (तं विंद रमन सुइ भय विलयं) आत्माके ज्ञानमें रमण करनेसे सर्व भय गल जाता है ॥ ५ ॥

(मयन मऌवे सुयं रमन जिन) श्री जिनेन्द्र भगवान आत्मीक ध्यानरूपी निद्राके स्वरूपमें स्वयं रमण करते रहते हैं, सर्व प्रकार विषय भोगके आहारके त्यागी हैं (अषय पर्म जिन पर्म पयं) उत्तम जिन भगवानका यह परमात्माका पद अविनाशी है-उनकी आत्मा फिर कभी संसारमें भ्रमण न करेगी (पर पर्जय मयन नंत सुइ गलिय) अनन्तकालसे यह संसारी जीव आत्मासे भिन्न नानाप्रकार शरीरोंके भीतर शयन कर-रहा था-आत्माके स्वरूपमें जागृत न था सो अरहन्तके सर्व पर्याय सम्बन्धी निद्रा गल गई है, वे सदा आत्मामें जागृत हैं ([illegible] मयन तं मुक्ति [illegible]) वे अरहन्त ज्ञानमें मगन होते हुए मोक्षको पालेते हैं। सर्व संसारके भोगका त्याग करके आत्मीक भोग करना ही परमात्माके अनशन तप है ॥ ६ ॥

(आमोदर्ज सुय जिन कलिय) श्री जिनेन्द्र भगवान आमोदर्ज या शुद्ध आत्मीक आनन्दका स्वयं अनुभव करते हैं। अवमोदर्य दूसरा बाहरी तप है जिसके अर्थ भूखसे कम आहार करना है। यहां तारण स्वामीने उसको आमोदर्ज नाम रखके निश्चय व्याख्यान किया है। आनन्दका भोग ही निश्चय अवमोदर्य तप है (मय मूर्ति [illegible]) श्री जिनेन्द्रकी आत्माकी मूर्ति ज्ञानमय है, उनका शुद्ध पद ज्ञानमय है ([illegible] विंद [illegible] रमन पर्म पय) वे अरहन्त धारावाही ज्ञानका ही स्वाद लेते हुए अपने परम पदमें रमण कर रहे हैं, यही अवमोदर्य तप है (परम न्यान सुइ सिद्धि जय) वे अपने उत्कृष्ट केवलज्ञानके भीतर रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ७ ॥

([illegible] महूवे न्यान महावे विंद रमन [illegible] जै जै) वे अरहन्त भगवान आत्माके स्वरूपमें या ज्ञान स्वभावमें उसका अनुभव लेते हुए लगातार रमण करते रहते हैं, उन्होंने मोहनीय आदि कर्मोंको जीत लिया है, इससे जिन कहलाते हैं (पर पर्जय विलयन्तु महज [illegible] परम दर्म दर्सी जे) महज ही जिनेन्द्रके सर्व पर भावमें परिणमन विला गया है, वे आत्माके परम दर्शको देख रहे हैं, वे आत्मामें ही तल्लीन हैं ॥ ८ ॥

([illegible] संख्य सुइ षिपिय पियर जिनु) श्री जिनेन्द्र भगवान क्षायिक भावके धारी हैं इसलिये सर्व जगतकी अनेक संख्यावाली वस्तुओंका उनके त्याग है। तीसरा बाहरी तप वृत्तिपरिसंख्यान है। इसका स्वरूप यह है कि साधु भिक्षाको जाते हुए किसी वस्तुका नियम लेलेते हैं, यदि वह मिलती है तो भोजन करते हैं।

यहांपर निश्चयसे बताया है कि श्री अरहंतके मोह ही नहीं है इसलिये सर्व वस्तुओंका त्याग है, वे यथा-ख्यात चारित्रके धारी हैं (मं मरनि वस्तु नं मयं गलियं) संसारके भ्रमण करानेवाली वस्तु जो मोहनीय कर्म है वह स्वयं क्षय होचुका है (पर्जय मरनि वस्तु तं वसियं) नानाप्रकार शरीरोंमें भ्रमण करानेवाला कर्मरूपी पदार्थ जो उनके पास था (विन्यान विंद ने विलय सुयं) वह सर्व कर्म ज्ञानके अनुभवमें लय होनेसे स्वयं क्षय होगये हैं ॥ ९ ॥

(वस्तु नमिये जे पर पर्जय) जहां मोहनीय कर्मका वास आत्माके साथ रहना है वहांतक आत्माके स्वभावसे भिन्न पर परिणतिमें रति होती है (रागु गलिय स्नेहं सुयं) श्री अरहन्तके वह सब राग गल गया है जिस रागसे यह मूढ़ प्राणी स्वयं जनसमूहको प्रसन्न किया करता है (भय सल्य संक गलिय जिनय जिनु) श्री वीतराग प्रभुने भय, शल्य व शंका सब दूर करदी है (वस्तु विलयंन मुक्ति पयं) वे सर्व कर्मरूपी पदार्थको क्षय करके मोक्षको पाते हैं ॥ १० ॥

(रस पंच्यव तिक्त जिन मिइं) श्री जिनेन्द्र भगवान सर्व मोहके त्यागी हैं। इसलिये सर्व पुद्गलमई स्वादके त्यागी हैं (पर्जय रस रमिय सुयं गलियं) शरीरमें स्नेहरूप रसका स्वाद उनके स्वयं गल गया है। वे षट् रसोंके स्वादसे विरक्त हैं (न्यान विन्यानह विंद रमन जिन) श्री जिनेन्द्र आत्माके ज्ञानके स्वादमें रमण कर रहे हैं (पर पर्जय रमिय सुय विलयं) पर परिणतिका स्वाद उनके स्वयं गल गया है ॥ ११ ॥

(रस रंजन दोष रमिय पर्जय रैं) शरीरके सुखमें मगनताका दोष या शरीरके भीतर रति होनेका रस (विन्यान विंद रस सुयं विलं) ज्ञानके अनुभवसे प्राप्त जो आनन्द रस-उसके प्रतापसे विला गया है (पर्जय नंत नंत जं रमियं) अनन्तानन्त अशुद्ध परिणतिके भीतर मगनताका जो रस है (अन्मोय तरन तं सुयं विलयं) वह आनन्दरूपी जहाजमें बैठनेसे स्वयं विला गया है ॥ १२ ॥

(विवित्त सैजासन वित्त सयन सुइ) पर भावोंसे रहित सहज आत्मीक भावमें ठहरना सो ही प्रगट आत्म-पदार्थमें रमण करना या शयन करना है। यहां विवित्त शयनासन तपका अर्थ है कि एकांतमें सोना बैठना। साधु-तपस्वी एकांतमें ही बैठते व सोते हैं यह व्यवहार अर्थ है। निश्चयसे अपने शुद्धात्मामें आराम करना यह विवित्त शैयाशन तप है (वित्त रूव पर्जय विलयं) जब आत्माका स्वभाव प्रगट होजाता है तब शरीरकी सर्व अवस्था विला जाती है, सर्व राग क्षय होजाता है (पर पर्जय संजोयं सुयं गलि) पर

परिणति होनेका संजोग जो कर्म है वह सर्व द्रव्यकर्म ज्ञानावरणादि, भावकर्म रागादि, नोकर्म शरीर आदि ये सारे ही कर्म क्षय होजाते हैं (न्यान अन्मोय सु मुक्ति जयं) ज्ञानानन्दमें मगन होकर श्री अरहन्त भगवान मोक्षको प्राप्त कर लेते हैं ॥ १३ ॥

(पर्जय मानि नंत सुइ चरियं वय तव क्रिन संषय सहियं) इस जीवने संसारमें भ्रमते हुए अनन्त शरीरोंमें अनन्तवार व्रत, तप, क्रिया पाली हैं परन्तु संशय सहित पाली हैं, अपनी आत्माका यथार्थ श्रद्धान या अनुभव नहीं होसका (विक्त रूव नं विंद रमन गंपि) परन्तु जब यह आत्मा प्रत्यक्ष आत्माके ज्ञानमें रमण करता हुआ उसका रस पान करता है (पर पर्जय विलय सु मुक्ति पयं) तब सर्व पर परिणति क्षय होजाती है और यह मोक्षको पालेता है ॥ १४ ॥

(काय कलेष कलह संजोए कुनकारिन जं रत्तु पयं) इस शरीरके संयोगसे इस जीवने कायका क्लेश बहुत सहा है, स्वयं क्लेश पाया है व दूसरोंको क्लेश कराया है, इसको कायक्लेश तप समझा है। कायक्लेश तप यह है कि बाहरसे शरीरको कष्ट होरहा है ऐसा देखा जावे परन्तु अन्तरंगमें तप करनेवाला प्रसन्न मन हो आत्माका ध्यान करे। अन्तरङ्ग आत्मज्ञान विना कायक्लेश वास्तवमें तप नहीं है (वय तव क्रिया अन्यान सहावे) कायको कष्ट देते हुए जो अज्ञान स्वभावसे व्रत, तप व क्रियाको पाला है (न्यान अन्मोय सु विलिय सुयं) वह सब अज्ञान तप सम्यग्ज्ञानमें आनन्दका अनुभव करनेसे स्वयं विला जाता है ॥ १५ ॥

(कल लकुन कम्मु कायजन रत्तइ) शरीर सम्बन्धी कर्मको जगतके जीव कायकर्म कहते हैं। उपवास व कष्ट सहन आदिको काय कर्म कहते हैं (उत्वन्न न्यान तं सुयं विलयं) जब आत्मज्ञान होजाता है तब यह बुद्धि स्वयं चली जाती है तब वह शुद्ध परिणामको ही तप समझता है, कायकी क्रिया मात्र निमित्त कारण है (न्यान विन्दान सु विंद रमन ते पर पर्जय विलयंतु सुयं) जब आत्माके ज्ञानके अनुभवमें रमणता होती है तब सर्व पर परिणति या विभाव भाव स्वयं गल जाते हैं यही सच्चा कायक्लेश तप है ॥ १६ ॥

(बाहिज तव आयरन परम जिनु) श्री जिनेन्द्र भगवान निश्चय नयसे ऊपर प्रमाण बाहरी तपका आचरण करते हैं (अर्थति अर्थ सु ममल पयं) वे शुद्ध या निश्चय रत्नत्रयके पदमें तिष्ठते हैं (षट् कमलह तत्त कांति कलिय जिनु) कमल समान प्रफुल्लित अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य, क्षायिक सम्यग्दर्शन,

क्षायिक चारित्र इन छः गुणोंमें श्री जिनेन्द्र शोभायमान हैं (विन्यान विंद रस रमिय सुयं) वे ज्ञानानुभवके स्वादमें स्वयं रमण करते रहते हैं इसीलिये यथार्थ तपस्वी हैं ॥ १७ ॥

(षट् तव आयरन चरन सहयाइ) इन छः तपोंके निश्चय आचरणके प्रभावसे (भय विनाष तं भव्व सुयं) भव्यजीवका सर्व भय स्वयं नाश होजाता है (अर्थ ति अर्थह नौ भय विलय) रत्नत्रयमई पदार्थमें रमनेसे नवीन भय कोई नहीं रहा है (अन्मोय न्यान षिपि पयडि सुयं) आनन्दमई ज्ञानके अनुभवसे सर्व कर्म प्रकृतियोंका स्वयं क्षय होगया है ॥ १८ ॥

(आभिंतर तव आयरन सहज सुइ गइ परिनइ नं विलय सुयं) आभ्यंतर छः तपोंके आचरणसे सहज ही वह परिणति स्वयं विला जाती है (परम तत्र नं परम पयं जिनु) परमात्म तत्वमय उत्कृष्ट पदधारी श्री जिनेन्द्र (परम न्यान तं रमन पयं) केवलज्ञानमें सदा रमण करते हैं ॥ १९ ॥

(धर्म सुभाव सुयं षिपक जिनु) श्री जिनेन्द्र उत्कृष्ट स्वभावधारी स्वयं क्षायिक भावोंमें लीन हैं जिससे निश्चय प्रायश्चित्त तप विद्यमान है, क्योंकि कोई दोषकारी कर्म ही शेष नहीं है, सर्व घातीय कर्म क्षय होगये हैं (सुइ कम्म षिपिय नं नन्त पयं) उन्होंने अनन्तानन्त कर्मोंको क्षय कर डाला है (नन्त न्यान तं विंद रमन सुइ) तथा वे स्वयं अनन्तज्ञानमें रमण कर रहे हैं (तरन विवान सु मुक्ति पयं) वे तारण तरण अरहन्त मुक्तिको पाते हैं ॥ २० ॥

(विन्यान विंद तं रमन अमिय रस) वे अरहन्त ज्ञानानुभवमें रमण करते हुए आनन्दामृत रसका पान कर रहे हैं। जिससे निश्चय विनय तप साधन कर रहे हैं, अपने स्वरूपकी पूर्ण विनय है (वीर्य नन्त तं सौख्य सुयं) वे ही अनन्त वीर्यके व अनन्त सुखके धारी हैं (सुषम परिनाम सुयं सु अरुवी) उनका आत्मा सूक्ष्म अतींद्रिय भावमें परिणमन कर रहा है, वे अमूर्तीक हैं (सुयं लषिय तं परम पयं) उन्होंने अपने परमात्मपदको स्वयं प्राप्त किया है ॥ २१ ॥

(तारन तरन विवान धर्म पयं) वे अरहन्त तारनतरन जहाज हैं। परमपदमें विराजित हैं (विंद रमन तं धर्म सुयं) वे स्वयं उत्कृष्ट हैं और ज्ञानमें रमण कर रहे हैं (तरन विवान समय संजोए) अपने तारनतरन आत्मीक स्वभावके कारण (विन्यान रमन सिधि रन्नु सुयं) वे ज्ञानमें रमण करते हुए स्वयं सिद्धभावमें लीन हैं ॥ २२ ॥

(वैयावृत्य तं वृत्ति न्यान मय) वैयावृत्य तप यह है कि उनकी वृत्ति या स्वभाव ज्ञानमय होरहा है, वे

आपसे आपकी सेवा कर रहे हैं (न्यान रमन उववन्न सुयं) वे स्वयं ज्ञानकी रमणतामें प्रकाशित हैं (रिजु विपुलं च त्रिति सुइ उवनं) उनका स्वभाव स्वयं ही वक्रता रहित सरल है तथा महान अगाध है (मन पर्यय सुइ विंद न्य) यहां मनका संकल्प विकल्प नहीं है, मनका नाश है उसीमे ज्ञानमें ही भगवानका रमण है ॥२३॥

(न्यानावरन सुयं सुइ विलयो) यहां ज्ञानावरण कर्म स्वयं क्षय होगया है (भय सल्य संक विलयन्तु सुयं) सर्व भय, शल्य व शङ्काएँ स्वयं विला गई हैं (तारन विआन विंद सुइ रमनं) तारनतरन भावका अनुभव सो ही रमण है (मन पर्जय अमोय सुयं) मनके विनाशसे स्वयं आनन्द गुण प्रगट है ॥ २४ ॥

(सुद्ध ध्याय सुयं धुव ममलं) स्वाध्याय तप यह है कि यहां शुद्ध ध्रुव, कर्म मल रहित आत्माका स्वयं ध्यान विद्यमान है (ममल विंद तं रमन सुयं) शुद्ध ज्ञान है सो आपमें ही रमण कर रहा है (तरन विआन सहाव ममय सुइ) तारणतरण भावके प्रतापसे यह आत्मा (मम समय सिद्धि सुइ ममय पयं) साम्यभाव रहित सिद्धात्माके पदको चला जाता है ॥ २५ ॥

(सुद्ध सरूवे सहज सनन्दे तव आयरन सुद्ध सुइ सुद्ध पयं) सहजानन्दमय शुद्ध स्वरूपमें रमना ही स्वाध्याय तपका आचरण है। यह तपाचार है व शुद्धपदका कारण है (विन्यान विंद तं रमन सुभावे अमोय न्यान मम समय धुवं) ज्ञानके अनुभवरूपी स्वात्मानुभव स्वभावमें आनन्दमई ज्ञान है व ममभाव सहित ध्रुव आत्मा है ॥२६॥

(काउस्सग्गो चरन तव सुयं) पांचवा तप कायोत्सर्ग है अर्थात् कायका ममत्व छोड जो श्री अरहन्त निरन्तर शरीर ममत्व त्यागी होकर निश्चय कायोत्सर्गका तप आचरण कर रहे हैं (कांति कमल उवन्न सुय) उनको अनन्तज्ञानादि गुणरूपी ज्योतिधारी कमल स्वयं अपनी शोभाको विस्तारता है (विंद रमन विन्यान तरन सुइ) आत्मानुभवमें ही लीन होना सो ज्ञानरूपी जहाज है (विन्यान न्यान केवलि उवनं) उनके केवल-ज्ञानका प्रकाश है ॥ २७ ॥

(रूप विरूप विलय पर्जय ं) श्री अरहन्तके शरीर सम्बन्धी सर्व संकल्प विकल्पोंका अभाव है (भुक्ति विलय सुइ सुपिन सुयं) सर्व इंद्रिय भोग भी विला गए हैं मानों वे सब स्वप्नरूप ही थे। पिछले इंद्रिय भोगोंका सम्बन्ध स्वप्नके समान भास जाता है (विनन्द विलो तं सुपिन विलय सुइ) विषयानन्दका विला जाना ही मानो स्वप्नका रूप नष्ट होजाना है (कम्मु विलइ केवलि उवनं) उनके कर्मोंका क्षय होकर केवल-ज्ञान प्रगट है ॥ २८ ॥

(तं न्यान अन्मोय वलिय वलि उवनं) ज्ञानानन्दमई भाव बड़ा ही बलवान प्रकाश है (विन्यान विंद सुइ रमन पयं) यही ज्ञानके अनुभवमें रमण स्वरूप है (तरन विवान अन्मोय वली सुइ) तारण तरण अरहन्त आनन्दस्वरूप अनन्त बली हैं (विषम विषय तं गलिय सुयं) उनके भयानक इंद्रियविषयका राग स्वयं गलगया है ॥२९॥

(विषम गलिय तं न्यान अन्मोयह) विषयोंका राग गल जानेपर ज्ञानानन्द प्रगट है (न्यानेन न्यान सुइ मिलिय सुयं) इनके द्वारा ही केवलज्ञानका लाभ होता है (विंद रमन तं तरन सहावे) ज्ञानमें रमण करना ही अरहन्तका स्वभाव है (पर्म न्यान केवलि उवनं) वहां परम केवलज्ञान झलक रहा है ॥ ३० ॥

(ध्यान स उत्तउ सुयं सहज जिनु) श्री जिनेन्द्रके भीतर स्वयं सहज ही ध्यानरूपी तप कहा गया है। वे ध्यान स्वरूप ही हैं (नन्तानन्त सु धुव रमनं) वे अनन्त गुणधारी ध्रुव अविनाशी आत्मामें रमण कर रहे हैं (नन्त चतुष्टे सहज सरूवे) वे अनन्तज्ञानादि चतुष्टयमई सहज स्वरूपमें हैं (तरन विवान सु धुव ममलं) वे तारण-तरण रूप शुद्ध स्वरूपधारी हैं ॥ ३१ ॥

(जं केवल दिष्टि नन्त नन्त हिउ) जो केवलज्ञानकी दृष्टि अनन्त गुणधारी आत्मापर है (जोग ध्यान तं जिन उवनं) वही वीतराग भगवानके योग है व ध्यान है (विन्द रमन विन्यान संजोए) उस केवलज्ञानके होते हुए वे ज्ञानमें ही रमण करते हैं (तं तरन विवान सु पर्म पयं) वे ही तारणतरण भगवान परम पदमें हैं ॥३२॥

(हितमित सहिय सु परिनै कोमल) वे अरहन्त परके हितकारी अपनी मर्यादा सहित परम मृदुतासे अपने स्वभावमें ही परिणमन कर रहे हैं (केवल भाव सु ममल पयं) केवल शुद्ध भावोंमें तिष्ठना ही शुद्धपद है (अन्मोय सहावे समय स उत्तो) वे आनन्दमई स्वभावधारी आत्मा कहे गए हैं (बोध ममल तं मुक्ति पयं) वे निर्मल ज्ञानके प्रतापसे मोक्षमें जा पहुंचते हैं ॥ ३३ ॥

(सिद्ध सरूवे मुक्ति सहावे) वे जिनेन्द्र अपने सिद्ध स्वरूपमें हैं व मुक्तिके स्वभावमें हैं (न्यान विन्यान सु समय पयं) वे केवलज्ञानधारी आत्मीक पदमें हैं (विंद रमन विन्यान तरन सुइ) वे ज्ञानके रमण करनेवाले ज्ञानमई जहाज हैं (नन्त ध्यान सुइ सिद्धि सुयं) उनका ध्यान अनन्त काल चला जायगा, वे ही स्वयं सिद्ध-रूप हैं। सिद्ध सदा ही ज्ञानानन्दमें मगन रहते हैं, यही ध्यान है ॥ ३४ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें श्री अरहन्त परमात्माके भीतर बारह प्रकार तप किसतरह सिद्ध होता है

इस बातको सिद्ध किया है। व्यवहार नयसे तप बारह प्रकारका है। यह तप कर्मकी निर्जराका उपाय है व इससे संवर भी होता है। श्री तत्वार्थसारमें बारह तपोंमें बाहरी छः तपोंको इसप्रकार कहा है—

मोक्षार्थं त्यज्यते यस्मिन्नाहारोऽपि चतुर्विधः। उपवासः स तद्भेदाः सन्ति षष्ठाष्टमादयः ॥ १०—७ ॥
सर्वं तदवमोदर्यमाहारं यत्र हापयेत् । एकद्वित्र्यादिभिर्ग्रासैः ग्रासं समयान्मुनिः ॥ ९—७ ॥
रसत्यागो भवेत्तैलक्षीरेक्षुदधिसर्पिषाम् । एकद्वित्रीणि चत्वारि त्यजतस्तानि पंचधा ॥ ११—७ ॥
एकवस्तुदशागारपानमुद्गादिगोचरः । संकल्पः क्रियते यत्र वृत्तिसंख्या हि तत्तपः ॥ १२—७ ॥
अनेकप्रतिमास्थानं मौनं शीतसहिष्णुना । आतपस्थानमित्यादिकायक्लेशो मतं तपः ॥ १३—७ ॥
जन्तुपीडाविमुक्तायां वसतौ शयनासनम् । सेवमानस्य विज्ञेयं विविक्तशयनासनम् ॥ १४—७ ॥

भावार्थ—मोक्षके हेतुसे जहां चार प्रकारका आहार त्यागा जावे। (खाद्य, लेह्य, पेय, स्वाद्य) वह उपवास है, उसके भेद बेला तेला आदि हैं। एक उपवासमें चार दफेका आहार छोड़ा जाता है, एक दफे पहले दिन, एक दफे तीसरे दिन, दो दफे मध्यमें। इसी तरह बेलेमें छः दफे, तेलेमें आठ दफे आहार छूटता है। एक दिनमें दो आहार प्रसिद्ध हैं। जहां एक, दो, तीन ग्रास कम करते करते एक ग्रास पर्यंत आहार दिन प्रति दिन लिया जावे वह अवमोदर्य तप है। तैल, दूध, शक्कर, घी, दही, इन पांचमेंसे एक, दो, तीन, चार रसोंका त्यागना रस परित्याग तप है। प्रवृत्तिमें लवणको भी लेकर छः रस हैं। भिक्षाको जाते हुए एक या दो वस्तु या घर आदिका प्रमाण लेकर जाना, यदि न मिले तो भोजन न करना वृत्तिपरिसंख्यान तप है। प्रतिमायोग धारना, शीत गर्मी सहते हुए तप करना कायक्लेश है। जंतुकी पीड़ा रहित एकान्तमें सोना बैठना विविक्तशयनासन तप है।

आभ्यंतर छः तप हैं—

स्वाध्यायः शोधनं चैव वैयावृत्यं तथैव च । व्युत्सर्गो विनयश्चैव ध्यानमाभ्यन्तरं तपः ॥ १५—७ ॥

भावार्थ—प्रायश्चित्त, विनय, वैय्यावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यान ये छः अन्तरंग तप हैं। लगे हुए दोषका दण्ड लेकर शुद्ध करना प्रायश्चित्त हैं। रत्नत्रय धर्म व धारकोंकी विनय करना विनय तप है। धर्मात्माओंकी सेवा करना वैय्यावृत्य है। शास्त्रोंको पढ़ना सुनना स्वाध्याय तप है। ममताको छोड़ना

व्युत्सर्ग तप है। आत्मध्यान करना ध्यान है। निश्चयसे श्री अरहन्त भगवानमें १२ तप इसतरह घटते हैं।

१-सर्व संसारके भोगोंका त्याग करके ज्ञानानन्द रसका भोगना उपवास या अनशन है। श्री अरहन्त सर्व प्रकार इंद्रिय भोगोंके त्यागी होकर आत्मानन्दका ही भोग करते हैं, यह अनशन तप है।

२-अपने आत्माके आनन्दमें रहना आमोदर्ज है। यहां स्वरूपका ही सन्तोषसे भोग है। यह अवमोदर्य तप है।

३-सर्व वस्तुओंको ग्रहणका कारण मोहनीय कर्मका प्रभुने नाश कर दिया है, किसी वस्तुका ग्रहण नहीं है, वस्तु मात्रके त्यागी हैं, स्व वस्तुके ही धारी हैं, यह वृत्तिपरिसंख्यान तप है।

४-प्रभु इंद्रिय विषय राग व सांसारिक राग आदिके पूर्ण त्यागी हैं, आत्मानन्द रसके भोगी हैं। यही रसपरित्याग तप है।

५-श्री अरहन्त परभावोंमें विश्राम न करके अपने ही शुद्धात्मीक भावमें विश्राम करते हैं। यही विविक्त शयनासन तप है।

६-प्रभु सर्व काय सम्बन्धी क्लेश या इच्छापूर्वक कामकी क्रियाके प्रपंचसे रहित होकर आत्मज्ञानमें ही रत हैं। यही कायक्लेश तप है।

७-प्रभु सर्व दोषोंसे रहित अपने क्षायिक सम्यक्त चारित्र आदि क्षायिक भावोंमें लीन हैं यही प्रायश्चित्त तप है।

८-प्रभु परसे विमुख होकर अपने स्वभावकी पूर्ण विनय कर रहे हैं, यह विनय तप है।

९-प्रभु अपने ज्ञानमई स्वभावकी सेवा कर रहे हैं, यही वैय्यावृत्य तप है।

१०-अरहन्त परमात्मा शुद्ध ध्रुव आत्मामें आत्मासे मगन हैं, यही स्वाध्याय तप है।

११-प्रभु सर्व कायादिसे ममत्व हटाकर अपने अनन्त ज्ञानादिमें मगन हैं, यही व्युसर्ग तप है।

१२-प्रभु अनन्त गुणधारी शुद्ध आत्माकी तरफ सदा ही सन्मुख हैं, यह ध्यान तप है।

इसतरह श्री अरहन्त भगवान बारह तपोंके तपते हुए आत्मानन्द विलासमें मग्न हैं।

(८९) षट् आवश्यक गुण फूलना गाथा १८२७ से १८३५ तक।

अवयास यास आयरन ममल रे, अवयास नन्त जिन उवन जिनं ।
जिन जिनयति सहज उवन आयरनं, अन्मोय न्यान आयरन पयं ॥
तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ १ ॥

उव उवन पय उव समय समं, तं विंद रमन उवसुन्न समं ।
उव उवन सरनि विष विषम रमनि, उत्पन्न षिपिय जिननाथ सुयं ॥
भवियन भय षिपिय अमिय रस मुक्ति पयं ॥ आचरी ॥ २ ॥

अस्ति संसार सरनि सुइ विलयं. तं अस्ति अमियरस ममल पयं ।
अन्मोय न्यान भय षिपक रमन जिनु, तं विंद रमन उव अस्ति समं ॥
तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव उवन० ॥ ३ ॥

वस्तुत्वं नन्त नन्त रमन रयन जिनु, बल वीय रमं जिन वस्तु वसं ।
वस्तुत्वं अर्थ जिन अर्थति अर्थह, मम अर्थ सुयं परमार्थ पयं ॥
तं ममल रमन सुइ सिद्धि जय ॥ उव उवन० ॥ ४ ॥

अप्रमेय अप्रमान रमन जिनु. अयं अयं अय पर्म पयं ॥
सुइ नन्तानन्त जिनय जिन उवनं, आयरन उवन मह सहे समं ।
तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव उवन० ॥ ५ ॥

अगुरुलघु तं नन्त नन्त जिनु, सह समय रमनु जिनु हिय रमनं ।
भय षिपनिकु संक सल्य विलय जिनु, अमिय रमन विष विलय जिनं ।
तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव उवन० ॥ ६ ॥

चेयन अवयास नन्त जिन रमनं, नन्तानन्त सुचेय जिनं।
उव उवन मिरी हिययार रमन जिनु, महयार चेय जिनु रयन रमं॥
तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं॥ उव उवन०॥ ७॥

अयं सुभाव न्यान सुइ रमनं, अन्मोय न्यान पिय पर्म पयं।
संसय संसार मरनि सुई विलयं, विक्त रूव अरूव पयं॥
तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं॥ उव उवन०॥ ८॥

षट् अवयास षट् कमल रमन जिनु, आयरन कमल गम अगम रयं।
षट् रमन हिये हिययार अरूह जिनु, अन्मोय तरन आयरन जिनं॥
त ममल रमन सुइ सिद्धि जयं॥ उव उवन०॥ ९॥

अन्वय सहित अर्थ—(अवयास यास आयरन ममल है) **प्रकाशरूप ज्ञानमें आचरण करना शुद्ध भावका परिणमन है** (अवयास नंत जिन उवन सुयं) **श्री जिनेन्द्रमें अनन्त ज्ञान स्वयं प्रकाशित है** (जिन जिनयति सहज उवन आयरनं) **श्री जिन कर्मविजयी हैं, सहज स्वाभाविक आत्मप्रकाशमें आचरण कर रहे हैं** (अन्मोय न्यान आयरन पयं) **ज्ञानमें आचरण करना सो ही आनन्दका पद है** (तं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं) **शुद्ध स्वभावमें रमण करना सो ही सिद्ध गतिकी विजय है ॥ १ ॥**

(उव उवन पयं उव समय समं) **अब शांतरूप व समताभाव रूप पद प्रगट होगया है** (तं विंद रमन उव सुन समं) **ज्ञानमें रमण है सो ही परभावोंसे शून्य एक समताभावमें रमण है** (उव उवनि सरनि विष विषय रमनि) **यह जीव संसार वासमें विषयोंके भयानक विषमें रमण करता रहा है** (उत्पन्न षिपिय जिननाथ सुयं) **उन सर्व उदय प्राप्त विषयोंको जिनेन्द्रने स्वयं उखाड़कर फेंक दिया है** (भवियन भय षिपिय अमिय रस मुक्ति पयं) **हे भव्य जीवो ! जिनका भय दूर होजाता है, वे आनन्दामृत रसको पीते हुए मुक्ति पहुँच जाते हैं ॥२॥**

(अस्ति संसार सरनि सु विलयं) **श्री जिनेन्द्रमें अस्तित्व नामका गुण है जिससे वे अपनी सत्ताको न खोकर सर्व संसारको दूर करके अपने आप बने रहते हैं** (तं अस्ति अमिय रस ममल पयं) **आत्मामें आनन्दसे**

पूर्ण शुद्ध आत्मीक पदका सदा अस्तित्व है (अन्मोय न्यान भय षिपिय रमन जिन) आनन्दसे पूर्ण ज्ञान सर्व भयको दूर कर वीतरागभावमें रमण कर रहा है (तं विंद रमन उव अस्ति सुयं) वे आत्मज्ञानमें रमण करते हैं, वहीं समभावकी सत्ता है (नं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं) शुद्ध भावमें रमण करना ही सिद्ध भावको जीत लेना है ॥ ३ ॥

(वस्तुत्वं नंत नंत न्यन रमन जिनु) श्री अरहन्त परमात्मामें वस्तुत्व स्वभाव है जिससे अनन्तानन्त गुण स्वरूप रत्नत्रय धर्ममें वे रमण करते हैं (बल वीर्य रमं जिन वस्तु यसं) श्री जिनेन्द्र भगवान वस्तुत्व गुणके कारण आत्माके अनन्त वीर्यमें रमण करते हैं (वस्तुत्व अर्थ जिन अर्थति अर्थइ) वस्तुत्व धर्म यह है कि श्री जिनेन्द्र भी एक पदार्थ है और वे रत्नत्रयमई एक भावमें रमण करते हैं (सम अर्थ सुयं परमार्थ पयं) वही स्वयं समतामई पदार्थ हैं तथा वे स्वयं परमात्म पदरूप हैं (नं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं) वे शुद्ध भावमें रमण करते हुए स्वयं सिद्धगतिको चले जाते हैं ॥ ४ ॥

(अपमेय अपमाण रमन जिनु) श्री अरहन्त भगवानमें अप्रमेय गुण है जिससे वे मर्यादा रहित अपने ज्ञानादि गुणोंमें रमण कर रहे हैं (अर्थं अयं अय पर्म पयं यहां परिणमनशील आनन्दमई परमपद है (सुइ नन्तानन्त जिनय जिन उवनं) वे अनन्तानन्त विजय स्वरूप वीतराग भावमें प्रकाशित हैं (आयरन उवन सइ सहै ममं) शुद्ध चारित्रका प्रकाश ही समभावका धारण करना है (नं ममल रमन सुइ सिद्धि जयं) वे शुद्ध आत्मरमी स्वयं सिद्ध भावको विजय कर लेते हैं ॥ ५ ॥

(अगुरुलघु नंत नंत जिन) श्री जिनेन्द्रमें अनन्त शक्तिधारी अगुरु लघु नामका गुण है जिससे वे कभी अपनी मर्यादाको कम या अधिक नहीं कर सकते हैं (सह ममय रमनु जिन हिय रमनं) उसीके साथमें आत्मामें रमण करते हैं व वीतराग हितकारी भावमें रमण करते हैं (भय षिपनिक संक सल्य विलय जिनु) वे निर्भय हैं, उनके सर्व भय, शंकाएँ व शल्य आदि नहीं हैं (अमिय रमन विष विलय जिनं) आनन्दमें रमण करनेसे वीतराग जिनेन्द्रके विषयोंका विष गल गया है (नं ममल रमन सुइ सिद्ध जयं) वे शुद्ध भावमें रमण करते हुए सिद्धिको विजय कर लेते हैं ॥ ६ ॥

(चेयन अनयाम नंत जिन रमनं) श्री जिनेन्द्र भगवान अनन्तज्ञान स्वरूप चेतना गुणमें रमण करते हैं (नंतानंत सु चेय जिनं) जिससे वे जिनेन्द्र अनन्तानन्त पदार्थोंके ज्ञाता हैं (उव उवन मिगी हिययार रमन जिनु)

वे आत्मीक सम्पदासे शोभित हैं, वे हितकारी वीतराग भावमें रमण करते हैं (सहयार चेय जिनु रमन रमं) इसी चेतना गुणकी सहायतासे वे वीतराग रत्नत्रयमें रमण करते हैं (तं ममल रमन सुद्ध सिद्धि जयं) वे शुद्ध भावमें रमण करते हुए सिद्धिको पालेते हैं ॥ ७ ॥

(अयं सुभाव न्यान सुद्ध रमनं) परिणमन स्वभावसे वे स्वयं ज्ञानमें रमण करते हैं। परमात्मामें एक प्रबल स्वभाव भी है (अन्मोय न्यान पिय पर्म पयं) जिससे वे ज्ञानानन्दका पान करते हैं। परमपदके धारी हैं (संपय संपार मगनि सु विलयं) उनका सब संशय व संसारका भ्रमण मिट गया है (विक्त रूव अरूव पय) वे स्वानुभवगोचर अमूर्तीक पदधारी हैं (तं ममल रमन सुद्ध सिद्धि जयं) वे शुद्ध भावमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जाते हैं ॥ ८ ॥

(षट् अवयाय षट् कमल रमनु जिन) ये छः गुण आवश्यक हैं, वही छः कमल हैं, उसमें वीतराग जिन रमण करते हैं (आयरन कमल गम अगम रयं) इन कमलोंके आचरणसे इंद्रिय व मनसे अगोचर व स्वानुभवगोचर भावमें रत हैं (षट् रमन हियै हितयार अरहंत जिनु) ऐसे छः गुणके रमी भव्यजीवोंके मनको हितकारी पूज्यनीय श्री अरहन्त जिनेन्द्र हैं (अन्मोय तरन अयरन जिनं) वे जिनेन्द्र आनन्दमई व चारित्रमई जहाज हैं (तं ममल रमन सुद्ध सिद्धि जयं) शुद्ध भावमें रमण करते हुए वे सिद्ध भावको जीत लेते हैं ॥ ९ ॥

भावार्थ—यहांपर श्री जिनेन्द्र अरहन्त परमात्माकी स्तुति करते हुए छः गुणोंका स्मरण किया है। अस्तित्व गुण—जिससे यह बताया है कि आत्म-द्रव्यकी सत्ता सदासे हैं व सदा रहेगी। संसारमें जो भ्रमण अवस्था थी सो मिट गई है तथापि उनका आत्मा ध्रौव्यरूप है। वस्तुत्व गुण—जिससे उनके आत्माकी उपयोगिता बताई है कि वे रत्नत्रयमई पदार्थ आत्मज्ञान रमी हैं, स्वपर ज्ञायक हैं। तीसरा अप्रमेय गुण बताया है कि वे अनन्त स्वभावोंमें अनेक कालके लिये लीन हैं। इंद्रिय व मनसे परमात्मा अगोचर हैं इसलिये अप्रमेय हैं। स्वानुभवगम्य है इससे प्रमेय हैं। स्वानुभवकी अपेक्षा यहां प्रमेय गुण है। चौथा गुण अगुरुलघु बताया है इससे वे अपने भीतर भरे हुए अनन्त गुणोंके स्वभावको न कम कर सक्ते हैं, न अधिक। वे शल्य, शङ्का व भय रहित होकर अपने ज्ञान स्वभावमें रमण करते हुए समदर्शी रहते हैं। पांचमा गुण चेतना बताया है, जिससे वे अनन्तानन्त पदार्थोंके ज्ञाता हैं। छठा गुण द्रव्यत्व बताया है। आय नाम परिणमनका या द्रव्यत्वका है। परिणमन शक्तिसे ही वे संसारके विभाव परि-

णमनसे छूटकर ज्ञानानन्द स्वभावमें परिणमन कर रहे हैं। इन छः आवश्यक गुणोंके धारी परमात्मा सिद्धगतिको चले जाते हैं। श्री देवसेन आचार्य कृत आलापपद्धतिमें जीव द्रव्यके आठ लक्षण कहे हैं—

अस्तित्वं, वस्तुत्वं, द्रव्यत्वं, प्रमेयत्वं, अगुरुलघुत्वं, चेतनत्वं, प्रदेशत्वं, अमूर्तत्वं। उनमेंसे यहां प्रथम छः जो बहुत आवश्यक हैं उनका वर्णन किया है। प्रदेशपना तथा अमूर्तीकपना जीवके अनुभवमें विशेष अन्तर नहीं डालते, इसलिये उनको उतना आवश्यक न जानकर छः का ही वर्णन किया है।

इनका लक्षण वहां कहा है:—

(१) अस्ति इति एतस्य भावः अस्तित्वं सद्रूपत्वम्=सत्ता रूप रहना अस्तित्व है।

(२) वस्तुनो भावः वस्तुत्वं सामान्यविशेषात्मकं=वस्तुका स्वभाव सामान्य विशेष रूप है।

(३) द्रव्यस्वभावो द्रव्यत्वम्-निजनिजप्रदेशसमूहैरखंडवृत्त्या स्वभावविभावपर्यायान् द्रवति द्रोष्यति अदुद्रवत् इति द्रव्यम्-द्रव्यका स्वभाव द्रव्यत्व है। जो अपने प्रदेशोंके समूहोंसे अखण्ड रूपसे वर्तता हुआ स्वभाव या विभाव पर्यायोंको प्राप्त होता है, होवेगा व होचुका है वह द्रव्य है।

(४) प्रमेयस्य भावः प्रमेयत्वं-प्रमाणेन स्वपरपरिच्छेद्यं प्रमेयम्=प्रमाण द्वारा अपना व परका स्वभाव जानने योग्य है सो प्रमेय है। प्रमेयपना प्रमेयत्व है।

(५) अगुरुलघोर्भावोऽगुरुलघुत्वम्, सूक्ष्मा वागगोचरा प्रतिक्षणं वर्तमाना आगमप्रमाणयात् अभ्युपगमा अगुरुलघुगुणाः- जो सूक्ष्म वचन अगोचर प्रतिसमय वर्तनेवाले आगम प्रमाणसे जानने योग्य अगुरु लघु गुण है उनका होना अगुरुलघुत्व है।

(६) चेतनस्य भावा चेतनत्वं-चैतन्यम् अनुभवनम्=चेतना अनुभूतिको कहते हैं।

(९०) दश सम्यग्दर्शन भेद फूलना गाथा १८३६ से १८४८ तक।

उव उवन साधु उव उवन रमन जिनु, हिय उववन षट् रमन पयं।
महयार उवन मह महज रमन जिनु. हिय उवन दिष्टि दिष्टि जिनु ॥
अन्मोय न्यान सुइ धुव रमनं ॥ १ ॥

भवियन उव उवन रंजु भय षिपक रमन जिनु, सुइ नन्द नन्द जिन नन्द सुयं।
हिय उवन रंजु तं अमिय रमन जिनु, नन्द नन्द सुइ नन्द मयं ॥
भवियन अन्मोय तरन सुइ ममल पयं ॥ (आचरी) ॥ २ ॥

न्यान विन्यान सुइ समय सु रमनं, सम समय सम्मत्त सुइ धुव रमनं।
सम दिष्टि इस्टि सुइ सब्द रमन जिनु, सम समय सम्मत्त सु सिद्ध जयं ॥
अन्मोय तरन सुइ मुक्ति पयं ॥ भवियन० ॥ ३ ॥

उव उवन उदेस उवन सुइ रमनं, उवन विंद हिय समय समं।
उत्पन विलि हिय मुक्त विली जिनु, सह गुप्ति विली विनंद विली ॥
अन्मोय उदेस स पर्म पयं ॥ भवियन० ॥ ४ ॥

अथति अर्थह अर्थ रमन जिनु, अर्थ समय सम उवन पयं।
सम समय दिगन्तह सुयं रमन जिनु, तं गम्य अगम्य अर्थांग सुयं ॥
तं अमिय रमन जिनु सिद्धि जयं ॥ भवियन० ॥ ५ ॥

विन्यान वीय तं विंद रमन जिनु, राय विलय जन रंज सुयं।
नन्तानन्त सु न्यान रमन जिनु, तं नन्त वीर्य सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन अन्मोय तरन जिन मुक्ति जयं ॥ भवियन० ॥ ६ ॥

सूषम परिनाम सु षिपक रमन जिनु, षिपि कम्मु नन्त भय विलय सुयं।
पर्जय जन कल मन अन्ध सु विलयं, अन्मोय न्यान धुव मुक्ति जयं ॥
दिपि दिष्टि अन्मोय सु ममल पयं ॥ भवि० ॥ ७ ॥

सुयं सु लषियो अलष रमन जिनु, गम्य अगम्य सुइ सूत्र जयं ।
तं इष्ट उष्ट उत्पन्न रमन जिनु, उत्पन्न गमिय सुइ सूत्र जयं ॥
अन्मोय दिष्टि सुइ सूत्र जयं ॥ भवि० ॥ ८ ॥

विन्यान न्यान विवहार रमन जिनु, पर पर्जय विलय सु ध्रुव रमनं ।
अर्थति अर्थ दिष्टि रै रमनं, भय मल्य संक विलयन्तु सुयं ॥
अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं ॥ भवि० ॥ ९ ॥

न्यानंकुर उत्पन्न रमन जिनु, लघु दीरघ नहु दिष्टि जयं ।
अन्मोय न्यान सुइ दिप्ति दिष्टि रै, आदि अनादि सु सब्द जयं ॥
अन्मोय न्यान अवगहे जिनं ॥ भवि० ॥१०॥

पर्म तत्तु परमप्प परम जिनु, पर्म पयन तं पर्म पयं ।
तं पर्म उत्तु उपदेस पर्म पय, पर्म रमन रस गम अगमं ॥
केवलि सुइ वयन सु सिद्धि जयं ॥ भवि० ॥११॥

पर्म सु पर्म पर्म जिन रमनं, पम तत्तु पद विंद रमं ।
पर्म सु लष्य अलष्य परम जिनु, पर्म विंद रै उवन समं ॥
अन्मोय अमिय रस सिद्धि जयं ॥ भवि० ॥१२॥

दर्सन दह समय समय ध्रुव रमनं, रमन विंद रस अमिय सुयं ।
भय षिपनिक तं ममल रमन जिनु, कमल रमन जिन जिनय जिनं ॥
अन्मोय तरन सुइ मुक्ति जयं ॥ भवि० ॥१३॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन साधु उव उवन रमन जिनु) आत्माको साधन करनेवाले आत्मरमी श्री जिनेन्द्रका प्रकाश हुआ है (हिय उववन षट् रमन पयं) जो हितकारी प्रकाशमान छः मुख्य गुणोंमें रमण कर रहे हैं अर्थात् अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य, क्षायिक सम्यक्त व क्षायिक चारित्र (सहधार उवन सुइ सहज रमन जिनु) वे उन्हीं गुणोंकी सहायतासे सहज वीतराग स्वभावमें रमण करते हुए प्रकाशित हैं (हिय उवन दिप्ति दिष्टि जिन) वहां हितकारी वीतरागता सहित ज्ञान दर्शन प्रगट हैं (अन्मोय न्यान सुइ धुव रमनं) आनन्दमई ज्ञानका होना ही ध्रुव आत्मामें रमण करना है ॥ १ ॥

(भवियन उव उवन रंजु भय षिपक रमन जिनु) हे भव्य जीवो ! निर्भय पदमें रमण करनेवाले आनन्दमई जिनेन्द्र प्रकाशित हैं (सुई नंद नंद जिन नंद सुयं वे आनन्द मगन हैं, वे स्वयं जिन भगवान आनन्दमय हैं (हिय उवन रंजु तं अमिय रमन जिनु) वे हितकारी आनन्दामृतमें रमण करनेवाले प्रकाशमान हैं (नंद नंद सुइ नन्द मयं) वे ही आनन्द मगन हैं व आनन्द स्वरूप हैं (भवियन अन्मोय तरन सुइ ममल पयं) हे भव्य जीवो ! वे ही आनन्दमई जहाज हैं तथा वे ही शुद्ध पदके धारी हैं ॥ २ ॥

(न्यान विन्यान सुइ समय सु रमनं) वे केवलज्ञानमई आत्मस्वभावमें रमण कर रहे हैं (सम समय सम्मत्त सुद्ध धुव रमनं) वे समभाव रूपी आत्माके ध्रुव व शुद्ध सम्यग्दर्शन गुणमें रमण कर रहे हैं (सम दिष्टि इष्टि सुइ सब्द रमन जिन) साम्यभाव रूप हितकारी सम्यग्दृष्टिको झलकानेवाले शब्दोंके भावोंमें ही वे वीतराग जिन रमण कर रहे हैं।

यहां दश प्रकार सम्यक्तमें आज्ञा सम्यक्तका संकेत है कि वे जिनेन्द्रकी दिव्यवाणीके अनुसार शुद्धात्माका अनुभव कर रहे हैं।

(सम समम सम्मत्त सु सिद्ध जयं) ऐसा समभाव रूप सम्यग्दर्शनमई आत्मीक गुण सिद्धपदको विजय कर लेता है (अन्मोय तरन सुइ मुक्ति पयं) आनन्दमई जहाजके समान अरहन्त ही मोक्षपदका लाभ करते हैं ॥३॥

(उव उवन उदेश सुइ रमनं) श्री जिनेन्द्रके प्रगट उपदेशके अनुसार वे अरहन्त आपमें रमण कर रहे हैं यही उपदेश सम्यक्त है (उवन विंद हिय समय रुमं) वे प्रकाशमान ज्ञान स्वरूप हितकारी आत्मीक स्वभावमें तिष्ठ रहे हैं (उवन विलि हिय मुक्त विली जिनु) श्री जिनेन्द्र अरहन्तके नवीन आस्रवरूप कर्म भी क्षय होरहे हैं और प्राचीन कर्म भोगे जाकर क्षय होरहे हैं (सह गुप्ति विली विनंद विली) जो स्वभावको गोप रख-

नेवाला आवरण था ज्ञानावरणादि सो क्षय होगया है, सर्व आकुलता मिट गई है (अन्मोय उदेस स पर्म पयं) श्री अरहन्तका जो अनन्त सुखका चिह्न है वही परमात्मा पद स्वरूप है ॥ ४ ॥

(अर्थति अर्थह अर्थ रमन जिनु) वे जिनेन्द्र रत्नत्रयमई पदार्थमें रमण करते हुए अर्थ सम्यक्तके धारी हैं (अर्थ समय सम उवन पयं) आत्मारूपी पदार्थमें समभावका प्रकाश है (मम ममय दिगंतह सुयं रमन जिन) उनका आत्मीक समभाव सर्व तरफ फैला हुआ है उसीमें वे जिनेन्द्र रमण कर रहे हैं (तं गम्य अगम्य अर्थांग सुयं) वे स्वयं स्वानुभव गोचर व इंद्रियों व मनसे अतीत पदार्थ हैं (तं अमिय रमनु जिन सिद्ध जयं) वे आनन्दामृतमें रमण करनेवाले जिनेन्द्र सिद्ध गतिको जीत लेते हैं ॥ ५ ॥

(विन्यान बीय तं विंद रमन जिन) केवलज्ञानके बीजभूत आत्मज्ञानमें वे जिनेन्द्र रमण कर रहे हैं, यही बीज सम्यक्त है (राय विलय जद रंजु सुयं) उनके जगके प्राणियोंको रंजायमान करनेका राग स्वयं विला गया है, वे वीतराग हैं (नंतानंत सु न्यान रमन जिनु) वे जिनेन्द्र अनन्तानन्त शक्तिधारी ज्ञानमें रमण कर रहे हैं (तं नंत वीर्य सुइ सिद्धि जयं) उन्होंने अपने अनन्त वीर्यसे सिद्धपदको जीत लिया है (भवियन अन्मोय तरन जिन मुक्ति जयं) हे भव्य जीवो ! वे आनन्दमई जहाज समान अरहन्त जिन मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ ६ ॥

(सूषिम परिनाम सु षिपक रमन जिन) वे जिनेन्द्र अपने अत्यन्त सूक्ष्म क्षायिक भावमें रमण कर रहे हैं जो भाव इंद्रिय व मनसे अगोचर हैं, केवलज्ञानगम्य हैं, यही संक्षेप सम्यक्तमें रमण है (षिपि कम्मु नंत मय विलय सुयं) इस सूक्ष्मभावसे अनन्त कर्म क्षय होगए हैं व सर्व संसारका भय स्वयं विला गया है (पर्जय जन कल मन अंत्र सु विलयं) शरीर पर्यायके द्वारा होनेवाला शरीर व मन सम्बन्धी सर्व मोहरूपी अंधकार विला गया है। न शरीरसे मोह है न मनका संकल्प विकल्प है (अन्मोय न्यान धुव मुक्ति जय) आनन्द और ज्ञानके धारी अरहन्त ध्रुव या अविनाशी मुक्तिको पालेते हैं (दिपि दिष्टि अन्मोय सु ममल पयं) इस वीतराग पदमें अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन व अनन्त सुख प्रगट हैं ॥ ७ ॥

(सुयं सु लषियो अलष रमन जिन) श्री जिनेन्द्रने अतीन्द्रिय आत्माको भलेप्रकार जानकर उसीमें रमण किया है (गम्य अगम्य सुइ सूत्र जयं) भगवानने सूक्ष्म स्थूल सर्व तत्वोंको जान लिया है, इसलिये सर्व सूत्रोंको व शास्त्रके तत्वोंको विजय कर लिया है। द्वादशांग वाणीका जो परोक्ष श्रुतज्ञान था वह उनके केवल-

ज्ञानमें गर्भित होरहा है, इस तरह वे सूत्र सम्यक्तके धारी हैं (नं इष्ट उष्ट उत्पन्न रमन जिन) वे श्री जिनेन्द्र परम इष्ट ज्ञानके प्रकाशमें रमण कर रहे हैं (उत्पन्न गमिय सुइ सूत्र जयं) जितनी पर्यायें जगतके पदार्थोंकी समय समय उत्पन्न होती हैं उन सबको वे जानते हैं, यही सूत्रोंकी विजय है (अन्मोय दिष्टि सुइ सूत्र जयं) आनन्दमई आत्म–प्रकाशमें रमण करना यही सूत्रोंपर विजय है या द्वादशांग वाणीके सूत्रोंका जो सार है उस भावको उन्होंने जीत लिया है, यह यथार्थ सूत्र सम्यक्त है ॥ ८ ॥

(विन्यान न्यान विवहार रमन जिनु) श्री जिनेन्द्र व्यवहाररूप या भेदाभेद विस्ताररूप केवलज्ञानमें रमण कर रहे हैं, यही व्यवहार या विस्तार सम्यक्तमें रमण है (पर पर्जय विलय सु ध्रुव रमनं) रागादि पर परिणति वहां विला गई है, वे ध्रुव शुद्ध स्वभावमें रमण कर रहे हैं (अर्थति अर्थ दिप्ति गै रमनं) वे प्रभु रत्नत्रयमई पदार्थके प्रकाशमें बराबर रमण कर रहे हैं (भय मल्य संक विलयंतु सुय) उनके सर्व भय, शल्य, शंकाएँ स्वयं विला गई हैं (अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) वे आनन्दमई जहाज समान अरहन्त स्वयं सिद्ध-गतिको जीत लेते हैं ॥ ९ ॥

(न्यानंकुर उत्पन्न रमन जिनु) वे जिनेन्द्र केवलज्ञानका कारण अंकुर स्वरूप जो निश्चय रत्नत्रयमई मार्ग है उसमें रमण कर रहे हैं, यही मार्ग सम्यक्त है (लघु दीघ नहु दिष्टि जयं) उस पर्याय दृष्टिको जीत लिया है जिससे छोटे व बड़े पद दिखलाई पड़ते थे, अब उनके ज्ञानमें रागद्वेषकारक भाव नहीं होते, वे पूर्ण समभावके धारी हैं। स्वात्मानुभवमें समभावका साम्राज्य है। द्रव्य दृष्टिकी मुख्यतासे यहां कथन है (अन्मोय न्यान सुइ दिप्ति दिष्टि गै) वहां अनन्त आनन्द है तथा वे अनन्तज्ञानके प्रकाशमें व अनन्तदर्शनमें परिणमन कर रहे हैं (आदि अनादि सु सर्व जयं) प्रवाह रूपसे अनादि सम्बन्ध रखनेवाले तथा आनेजानेकी अपेक्षा सादिरूप सर्व कर्म वर्गणाओंको जिन्होंने जीत लिया है (अन्मोय न्यान अवगाहै जिनं) वे श्री जिनेन्द्र ज्ञानानन्दमें मगन हैं ॥ १० ॥

(पर्म तत्तु परमप्प परम जिन) श्री अरहन्त परमात्मा श्रेष्ठ जिन हैं व परम तत्व हैं (पर्म पयन तं पर्म पयं) उनके उत्कृष्ट पदसे दिव्यवाणीका प्रकाश होता है (तं पर्म तत्तु उपदेश परम पयं) उस वाणीके अनुसार श्रुत-ज्ञान द्वारा परमपदका उत्तम उपदेश होता है। अतएव परम तत्वमें रमण करना सो ही अवगाढ़ सम्यक्त है, ऐसे सम्यक्ती (पर्म रमन रस गम अगम) वे अरहन्त परमात्मा इंद्रिय व मनसे अतीत व स्वानुभवगम्य

उत्तम आनन्द रसमें रमण कर रहे हैं (केवलि सुइ नयन सु सिद्धि जयं) ऐसी दिव्यवाणीके धारक केवली सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ११ ॥

(पर्म सु पर्म पर्म जिन रमन परमात्मा परम उत्तम वीतरागभावमें रमण करते हैं (पर्म तत्तु पद विंद रमं) वे परमतत्वके ज्ञानमें रमण करते हैं (पर्म सु लष्य अलष्य परम जिन) वे परमात्मा जिन स्वानुभवसे भलेप्रकार जाननेयोग्य हैं परन्तु इन्द्रिय व मनसे नहीं जाने जाते (परम विंद रै रवन समं) वे परम ज्ञानके द्वारा प्राप्त समभावका प्रकाश कर रहे हैं। इसलिये परमावगाढ़ सम्यक्तमें रमण करते हैं (अन्मोय अमिय रस सिद्धि जयं) वे आनन्दामृतमें मगन होकर सिद्ध भावको जीत लेते हैं ॥ १२ ॥

(दर्सन दह समय ममल धुव रमनं) इस आत्मीक दश प्रकार सम्यक्तके द्वारा आत्मा ध्रुव रूपसे आपमें रमण करता है (रमन विंद रम अमिय जिनं) तथा स्वयं आत्मानन्द रसके स्वादमें मगन रहता है (भय षिपनिक तं ममल रमन जिनु वे निर्भय जिनेन्द्र शुद्धोपयोगमें रमण करते हैं (कमल रमन जिन जिनय जिनं) वे आत्मारूपी कमलमें रमण करते हुए वीतराग जिनेन्द्रदेव हैं (अन्मोय तरन सुइ मुक्ति जयं) वे आनन्दमई जहाजके समान अरहंत मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ १३ ॥

भावार्थ— इस फूलनामें सम्यग्दर्शनके दस कारणोंको श्री अरहंत केवलीमें घटाकर परमात्माके स्वरूपका मनन किया है। श्री आत्मानुशासनमें इनका स्वरूप इस भांति है —

आज्ञासम्यक्त्वमुक्तं यदुत विरुचितं वीतरागाज्ञयैव । त्यक्तग्रन्थप्रपञ्चं शिवममृतपथं श्रद्दधन्मोहशान्तेः ॥
मार्गश्रद्धानमाहुः पुरुषवरपुराणोपदेशोपजाता । या संज्ञानागमाब्धिप्रसृतिभिरुपदेशादिरादेशि दृष्टिः ॥ १२ ॥

आकर्ण्याचारसूत्रं मुनिचरणविधेः सूचनं श्रद्दधानः । सूक्तासौ सूत्रदृष्टिर्दुरधिगमगतेरर्थसार्थस्य बीजैः ।
कैश्चिज्जातोपलब्धेरसमशमवशाद्बीजदृष्टिः पदार्थान् । संक्षेपेणैव बुद्ध्वा रुचिमुपगतवान्साधुसंक्षेपदृष्टिः ॥ १३ ॥

यः श्रुत्वा द्वादशाङ्गीं कृतरुचिरथ तं विद्धि विस्तारदृष्टिं । संजातार्थात्कुतश्चित् प्रवचनवचनान्यन्तरेणार्थदृष्टिः ।
दृष्टिः साङ्गाङ्गबाह्यप्रवचनमवगाह्योत्थिता यावगाढा । कैवल्यालोकितार्थे रुचिरिह परमावादिगाढेति रूढा ॥ १४ ॥

भावार्थ—(१) आज्ञा सम्यक्त — जो ग्रन्थोंका प्रवंचन जानकर केवल वीतराग भगवानकी आज्ञानुसार दर्शनमोहके उपशमसे अविनाशी मोक्षकी रुचि प्राप्त कर लेना।

(२) मार्ग सम्यक्त—महान् पुरुषोंके पुराणोंके उपदेशसे जो सम्यक्त पैदा हो।
(३) उपदेश सम्यक्त—शास्त्रोंके उपदेशको सुननेसे जो सम्यक्त हो।
(४) सूत्र सम्यक्त—मुनिके आचार ग्रन्थ पढ़कर मुनिके चारित्रपर श्रद्धान करनेसे जो सम्यक्त हो।
(५) बीज सम्यक्त—कठिन पदार्थोंके बीजभूत कथनसे जो सम्यक्त होना।
(६) संक्षेप सम्यक्त—संक्षेपसे तत्वको सुनकर जो सम्यक्त होजाना।
(७) विस्तार सम्यक्त—विस्तारसे द्वादशांग वाणीको जानकर सम्यक्तका होना।
(८) अर्थ सम्यक्त—शास्त्रोंके भीतरसे कुछ अर्थको जानकर सम्यक्त होना।
(९) अवगाढ सम्यक्त—श्रुतकेवलीके पूर्ण श्रुतज्ञानसे सम्यक्त होना।
(१०) परमावगाढ़—केवली भगवानके केवलज्ञानके द्वारा सम्यक्त होना।

यहां दशों सम्यक्त नीचे भांति अरहन्तमें घटाए हैं—

(१) जिनवाणीके अनुसार केवलज्ञान द्वारा शुद्धात्माका श्रद्धान व अनुभव आज्ञा सम्यक्त है।
(२) जिनेन्द्रके उपदेशानुसार केवलज्ञान द्वारा शुद्धात्माका अनुभव उपदेश सम्यक्त है।
(३) रत्नत्रयमई पदार्थ शुद्धात्मामें रमण करना अर्थ सम्यक्त है।
(४) केवलज्ञानके बीजभूत शुद्धात्माके ज्ञानमें रमण करना बीज सम्यक्त है।
(५) स्वानुभवगम्य सूक्ष्मभावसे शुद्धात्माका अनुभव करना संक्षेप सम्यक्त है।
(६) जैन सूत्रोंके अनुसार अतीन्द्रिय आत्माका श्रद्धान रखना सो सूत्र सम्यक्त है।
(७) श्री जिनेन्द्रका भेदाभेद रूप बहुत विस्तारवाले केवलज्ञानमें रमण करना सो विस्तार सम्यक्त है।
(८) रत्नत्रयमई निश्चय मोक्षपथमें रमण करना मार्ग सम्यक्त है।
(९) श्रुत द्वारा प्रकाशित-अपने परमात्म तत्वमें रमण करना अवगाढ़ सम्यक्त है।
(१०) केवलज्ञान व आनन्दमय स्वभावमें रमण करना परमावगाढ़ सम्यक्त है।

इसतरह दश सम्यक्त गुणधारी अरहन्त शीघ्र ही ध्यानके बलसे मोक्ष चले जाते हैं।

(९१) ज्ञान रमन फूलना गाथा १८४९ से १८५९ तक।

उव उवन उवन जिनु अषय रमन सुइ, सुयं रमन सुर सुइ रमनं।
विंजन विन्यान न्यान सुइ रमनं, अषिर सुर विंजन पर्म पयं॥
भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं॥ १॥

महयार रंजु वै दिप्ति रमन जिनु, तं चेय नन्द सुइ चेय जिनु।
विन्यान रंजु जिन रमन जिनय जिनु, सहज नन्द तं सहज रयं॥
भवियन ममल रमन जिननाथ सुयं॥ (आचरी)॥ २॥

पय मिलिय पयं पय अर्थ रमन जिनु, अर्थ सदर्थति अर्थ पयं।
मम ममय मंजुत्तो अर्थ सुइ रमनं, सहयार जिनय जिन अर्थ पयं॥
भवियन कमल रमन जिनु ममल पयं॥ सहयार०॥ ३॥

अवयास अर्थ सुइ नन्त पर्म जिनु, तं नन्त नन्त अन्मोय पयं।
अन्मोय अर्थ सुइ षिपक रमन जिनु, षिपि नन्त कम्मु जिन मुक्ति जयं॥
भवियन अन्मोय दिप्ति दिष्टि सिद्ध जयं॥ सहयार०॥ ४॥

अर्थ ऊवनो कमल रमन जिनु, लंकृत विन्यान न्यान रमनं।
मै मूर्ति तं नन्त रमन जिनु, अन्मोय षिपिय तं मुक्ति जयं॥
भवियन विंद रमन सुइ जिनय जिनं॥ सहयार०॥ ५॥

मै मूर्ति तं अर्थ रमन जिनु, अर्थति अर्थ सु ममल पयं।
उववनं रंजु भय षिपक रमन जिनु, नन्द रूव मति ममल जयं॥
भवियन मति ममय रमन केवल उवने॥ सहयार०॥ ६॥

सुतं सुइ अर्थ सब्द रमन जिनु, असब्द गुपित सुद्ध सब्द जिनं ।
सुतं सुइ लषिय अलष रमन जिनु. तं नन्द रमन सुत न्यान सुयं ॥
भवियन सुत अरुह रमन षट् केवल कलनं ॥ सहयार० ॥ ७ ॥

अवहि तं अवहि गुप्ति रमन जिन, गुप्ति न्यान तं अवहि पयं ।
गुप्ति लोय लोय जिनु रमनं, अवहि पर्म केवली जयं ॥
भवियन अन्मोय तरन जिन जिनय जिनं ॥ सहयार० ॥ ८ ॥

मन पर्जय तं जान जिनय जिनु, कम्मु विलय तं ममल पयं ।
रिजु विपुलं दिप्ति दिष्टि रमन अलष जिनु, मन समय न्यान केवली उवनं ॥
भवियन उत्तम मम षम रमन सु सिद्धि जयं ॥ सहयार० ॥ ९ ॥

भय षिपनिकु तं नन्त नन्त जिनु, अमिय रमन सुइ ममल पयं ।
रंज रमन आनन्द जिनय जिनु, केवल सुइ उवन सु सिद्धि जयं ॥
भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं ॥ सहयार० ॥ १० ॥

तं तरन तरन सहाइ ममल रस, भय षिपिय अमिय रस जिनय जिनं ।
तं विंद रमन सुइ कमल कलिय जिनु, अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन भय षिपिय अमिय रस मुक्ति जयं ॥ सहयार० ॥ ११ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन उवन जिनु अषय रमन सुइ) **अविनाशी आत्माके स्वभावमें रमण करनेवाले श्री जिनेन्द्र भगवान प्रकाशमान हैं** (सुयं रमन सुर सुइ रमनं) **वे स्वयं रमण करनेवाले हैं, वे ही सूर्य समान आपमें रमण करनेवाले हैं** (विंजन विन्यान न्यान सुइ रमनं) **वे प्रगट केवलज्ञानमें रमण कर रहे हैं** (अषिर सुर विंजन पर्म पयं) **उनका परमात्मपद अक्षर अविनाशी है, सूर्य समान है तथा प्रकाशमान है**

॥३१३॥

(भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्य जीव ! वे आनन्दमई जहाज हैं, वे ही सिद्धगतिको जाते हैं ॥१॥

(महयार रंजु वै दिप्ति रमन जिनु) वे जिनेन्द्र आनन्द सहित ज्ञानमें रमण करनेवाले हैं (तं चेयनंद सुइ चेय जिनु) वे ही चिदानन्द भगवान् स्वयं चेतना स्वरूप हैं (विन्यान रंजु जिन रमन जिनय जिन) वे ज्ञानमें मगन, वीतरागभावमें रमण करनेवाले जिन हैं (सहजनंद तं सहज रमं) वे सहजानन्द हैं, सहज स्वभावमें रमण करते हैं (भवियन ममल रमन जिननाथ सुयं) हे भव्य जीवो ! वे शुद्ध स्वभावमें रमण करनेवाले स्वयं जिनेन्द्र हैं ॥ २ ॥

(पय मिलिय पयंरय अर्थ रमन जिनु) वे परमात्मपदको पाकर पदपदपर अपने ही वीतरागी आत्म-पदार्थमें रमण कर रहे हैं (अर्थ सदर्थ तिअर्थ पयं) वे ही सत्य पदार्थ हैं, वे रत्नत्रय पदधारी पदार्थ हैं (मम ममय संजुत्तो अर्थ सुइ रमनं) वे समता भाव मय चारित्र सहित हो अपने ही पदार्थमें स्वयं रमण करते हैं (महयर जिनय जिन अर्थ पयं) वे ही भव्य जीवोंके लिये सहायक हैं, वे ही विजई जिन निश्चय पदमें विराजित हैं (भवियन कमल रमन जिन ममल पयं) हे भव्य जीवो ! वे प्रफुल्लित कमल समान आत्मामें रमण करनेवाले वीतरागी शुद्ध पदमें शोभायमान हैं ॥ ३ ॥

(अवयास अर्थ सुइ नंत परम जिन) वे ज्ञानमई पदार्थ अनन्त शक्ति सहित श्रेष्ठ जिन हैं (त नंत नंत अन्मोय पयं) वे अनन्त आनन्दके धारी हैं (अन्मोय अर्थ सुइ षिपक रमन जिन) वे आनन्दमई पदार्थ स्वयं क्षायिक भावमें रमण करनेवाले जिन हैं (षिपि नंत कम्मु जिन मुक्ति जयं) श्री जिनेन्द्रने अपने कर्मोंको क्षय करके मुक्ति-पदको जीत लिया है (भवियन अन्मोय दिप्ति दिष्टि सिद्ध जयं) हे भव्य जीवो ! वे आनन्दमई व दर्शन ज्ञान स्वरूप आत्मा सिद्धिपदको विजय कर लेते हैं ॥ ४ ॥

(अर्थ ऊवनो कमल रमन जिनु) आत्मारूपी कमलमें रमण करनेवाले जिनेन्द्र पदार्थ प्रगट हैं (त कुन विन्यान न्यान रमनं) वे तेजस्वी केवलज्ञानमें रमण कर रहे हैं (मै मूर्ति तं नन्त रमन जिनु) वे ज्ञान मूर्ति हैं। अनन्तज्ञानमें वे जिनेन्द्र रमण करते हैं (अन्मोय षिपिय तं मुक्ति जयं) आत्मानन्दके प्रतापसे कर्मोंका क्षय करके उन्होंने मुक्तिको जीत लिया है (भवियन विंद रमन सुइ जिनय जिनं) हे भव्यजीवो ! वे ज्ञान-रमणकर्ता वीतरागी जिन हैं ॥ ५ ॥

(मै मूर्ति तं अर्थ रमन जिनु) ज्ञानमूर्ति वे वीतरागी जिन अपने ही आत्म पदार्थमें रमण कर रहे हैं

(अर्थ ति अर्थ सु ममल पयं) रत्नत्रयमई पदार्थ स्वरूप वह आत्माका शुद्धपद है (उववन रंजु भय षिपक रमन जिनु) उनमें आनन्दका प्रकाश है, भयोंका क्षय है, वीतरागतामें रमण है (नन्द रूव मति ममल जयं) आनन्दरूपी ज्ञानसे उन्होंने शुद्धपदको पाया है (भवियन मति समय रमन केवल उवनं) हे भव्यजीवो! जो कोई आत्म-ज्ञान-रूपी मतिज्ञानमें रमण करते हैं उनहीके केवलज्ञानका लाभ होता है ॥ ६ ॥

(सुतं सुइ अर्थ सब्द रमन जिनु) श्रुतज्ञान है सो ही आत्म पदार्थ हैं। उस आत्माके वाचक शब्दके द्वारा जो आत्मा प्रगट होता है उसमें वीतरागी जिन रमण कर रहे हैं। अर्थात् आत्माका लाभ होनेपर ज्ञानमें श्रुतज्ञान भी गर्भित है (असब्द गुपित सुइ सब्द जिनं) जिन शब्द यही बताता है कि वे जिनेन्द्र शब्द रहित आत्मामें गुप्त हैं (सुतं सुइ रुषिय अरूप रमन जिनु) श्रुतज्ञानका वही भाव है, जो अतींद्रिय व वीतराग आत्मामें रमण किया जावे (तं नन्द रमन सुन न्यान सुय) आत्मानन्दमें रमण करना स्वयं श्रुतज्ञान है (भवियन सुन अरुह रमन षट् केवल करनं) हे भव्यजीवो! श्री अरहन्त भगवान श्रुतज्ञानके स्वरूपमें रमण करते हुए छः केवल गुणोंका अनुभव कर रहे हैं-अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्त वीर्य, क्षायिक सम्यक्त, क्षायिक चारित्र ॥ ७ ॥

(अवहि तं अवहि गुप्ति रमन जिन) अवधिज्ञानका अर्थ गुप्तज्ञान व भीतर होनेवाला आत्मज्ञान भी है। वे जिनेन्द्र भगवान अपने स्वरूपके भीतर गुप्त अज्ञानमें रमण कर रहे हैं (गुप्ति न्यान तं अवहि पयं) जो गुप्त आत्माका ज्ञान है सो ही अवधिपद है (गुप्ति लोय लोय जिनु रमनं) उस आत्मज्ञानमें लोकालोक गुप्त हैं व डूबे हुए हैं उसीमें श्री जिन रमण कर रहे हैं (अवहि पर्म केवली जयं) ऐसे उत्कृष्ट अवधिज्ञानको केवलज्ञानकी विजय कहते हैं (भवियन अन्मोय तरन जिन जिनय जिनं) हे भव्य जीवो! आनन्दमई जहाज समान श्री जिनेन्द्र ही वीतराग जिन हैं ॥ ८ ॥

(मन पर्जय तं जान जिनय जिनु) मनपर्ययका अर्थ मनके त्यागका भी है। वीतराग भगवानके भीतर मनके आलम्बनसे रहित जो केवलज्ञान है वही मनपर्यय ज्ञान है (कम्मु विलय तं ममल पयं) कर्मोंके नाश होनेपर वह निर्मल केवलज्ञान पद प्रगट होता है (रिजु विपुलं दिप्ति दिष्टि रमन अलष जिनु) वे वीतराग भगवान सरल अर्थात् शुद्ध व महान अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शनमें रमण करनेवाले स्वानुभवगम्य हैं। केवलज्ञान ही रिजु व विपुल मनःपर्यय ज्ञान है (मन ममय न्यान केवली उवनं) आत्माके ज्ञानके मननसे केवलज्ञान

पैदा होता है (भवियन उत्तम सम षम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! जो उत्तम क्षमामें रमण करता है वह सिद्धगतिको विजय कर लेता है ॥ ९ ॥

(भय षिउनिकु तं नंत नंत जिनु) वे अभय जिनेन्द्र अनन्तानन्त शक्तिके धारी हैं (अमिय रमन सुइ ममल पयं) वे आनन्दामृतमें रमण करते हुए शुद्ध पदके धारी हैं (रंज रमन आनंद जिनय जिनु) वे आनन्दमें रमण करनेवाले आनंदमई वीतरागी जिन हैं (केवल सुइ उवन सु सिद्धि जयं) उन्होंने केवलज्ञानको प्रकाश करके सिद्धपदको जीत लिया है (भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! आनन्दमई जहाजके समान जिनेन्द्र सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ १० ॥

(तं तारन तरन सहाइ ममल रस) वे ही तारन तरन अरहन्त भव्योंको सहायक हैं, वे शुद्ध रसमें लीन हैं (भय षिपिय अमिय रस जिनय जिनं) वे भयोंको क्षय करके वीतरागी जिन आनन्दामृत रसमें मगन हैं (तं विंद रमन रमन सुइ कमल कलिय जिनु) वे ज्ञानमें रमण करनेवाले हैं, वे ही कमल समान प्रफुल्लित आत्मामें रमण करनेवाले वीतरागी जिन हैं (अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) वे ही आनंदमई जहाज हैं, वे ही सिद्धपदको जीत लेते हैं (भवियन भय षिपिय अमिय रम मुक्ति जयं) हे भव्य जीवो ! जो भयोंको नाश करके आनंदामृत रसका पान करते हैं वे मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ ११ ॥

भावार्थ—इस ज्ञान फूलनामें मति आदि पांच ज्ञानोंका सद्भाव केवली भगवानमें अध्यात्मीक दृष्टिसे घटाया है । वास्तवमें यह अरहन्त केवलीकी स्तुति ही है । व्यवहारनयसे पांच ज्ञानोंका स्वरूप इस भांति है (१) मतिज्ञान—जो पांच इंद्रिय तथा मनके द्वारा पदार्थोंको जाने । (२) श्रुतज्ञान—मतिज्ञान द्वारा जाने हुए पदार्थसे दूसरे किसी पदार्थको जानना श्रुतज्ञान व शास्त्रज्ञान है । जैसे शास्त्रमें सम्यग्दर्शन शब्द पढ़के उस शब्दसे जीवके सम्यक्त गुणको जानना । (३) अवधिज्ञान—मर्यादा लिये हुए द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावोंको आत्मा हीसे प्रत्यक्ष देखना । यह रूपी जीव और पुद्गलको जानता है । (४) मनःपर्ययज्ञान—ढाईद्वीपके भीतर मनमें चिन्तवन करनेवालेके भीतर जो सूक्ष्म बात हो उसको जान लेना । (५) केवलज्ञान—जो एक साथ समस्त पदार्थोंको गुण पर्याय सहित जान लेता है । यहां श्री अरहन्त केवलीमें जो आत्मीक शुद्ध ज्ञान है वही मतिज्ञान है । श्रुत शब्दसे वाच्य शुद्धात्मा उसमें रमण करना श्रुतज्ञान है । गुप्त आत्मीक ज्ञानमें रमण करना अवधिज्ञान है । मनसे अगोचर शुद्धात्माका ज्ञान व अनुभव

मनःपर्यय ज्ञान है। सूर्यसम आत्माके भीतर ज्ञानका प्रकाश केवलज्ञान है। निश्चयसे पांच ज्ञान स्वरूप एक सहज आत्माका ज्ञान है। जो आत्मानन्दमें मगन होते हैं, वे पांच ज्ञानधारी श्री अरहन्त भगवान सिद्धिको पालेते हैं। आप्तस्वरूप ग्रन्थमें कहा है—

तृतीयज्ञाननेत्रेण त्रैलोक्यं दर्पणायते। यस्यानवद्यचेष्टायां स त्रिलोचन उच्यते ॥ २८ ॥

मतिश्रुतावधिज्ञानं सहजं यस्य बोधनम्। मोक्षमार्गे स्वयं बुद्धस्तेनासौ बुद्धसंज्ञितः ॥ ३८ ॥

केवलज्ञानबोधेन बुद्धवान् स जगत्त्रयम्। अनन्तज्ञानसंकीर्णं तं तु बुद्धं नमाम्यहम् ॥ ३९ ॥

भावार्थ—जिस अरहन्तके निर्विकार स्वरूपमें उनके तीसरे ज्ञानरूपी नेत्रके द्वारा तीन लोक झलकते हैं इसलिये उनको त्रिलोचन कहते हैं। जिसके स्वभावसे ही मतिश्रुतज्ञान व अवधिज्ञान व जो स्वयं मोक्षके मार्गका ज्ञाता है इसलिये वह अरहन्त बुद्ध हैं। तथा जिसने केवलज्ञान रूपी बोधसे अनन्तज्ञानमें प्राप्त तीनों जगतको जान लिया है वह बुद्ध अरहन्त है, उनको नमस्कार करता हूं।

---

(९२) साधु चारित्र फूलना गाथा १८६० से १८७६ तक।

चरन सहाइ तं चरन रमन जिनु, चरन चरिय जिननाथ सुयं।
दर्सन न्यान चरन सुइ चरियो, बीज जिन चरन सुइ मुक्ति जयं॥
भवियन तरन चरन जिन सिद्धि जयं॥ १ ॥

जिन जिनय रंजु जिननाथ रमन जिनु, पर्म नन्द तं पर्म पयं।
तं रंजु रमन आनन्द रमन जिनु, अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं॥
भवियन तं विंद रमन उव उवन समं॥ आचरी ॥ २ ॥

हिंसा सहयार रमन पर्यय रें, दिप्ति दिष्टि पर्जय रमनं।
अप्प सुभाव हिय न्यान रमन जिनु, अहिंसा व्रिति पर्जय विलयं॥
भवियन भय षिपनिक मल्य संक विलयं॥ जिन० ॥ ३ ॥

अनृत संसार मरनि सुइ विलयं, तं अमिय रमन विष विलय जिनु ।
नृतं तं नृत न्यान दिपि रमनं, नृत दिष्टि अनृत पर्यय विलयं ॥
भवियन अनृतमय षिपिय नृत भव्वु सुयं ॥ जिन० ॥ ४ ॥

स्तेय रमन जिनु वयन विरय सुइ, पर परजय रमन सुपद विरयं ।
सहकार अस्तेय सु पर्जय विलयं, भय सल्य संक गलिय पै पर्म पदं ॥
भवियन अन्मोय तरन स्तेय विलं ॥ जिन० ॥ ५ ॥

अबंभ भाव पर्जय रै रमनं, पर पर्जय विलै सु बंभ रयं ।
जन रंजन रय कल रंजु विलय जिन, मन रंजु विलय मोहंध विलं ॥
भवियन तं न्यान अन्मोय सु बंभ पयं ॥ जिन० ॥ ६ ॥

परिग्रह प्रमान सु पर्यय विलयं, याव कम्मु विलय मिथ्या विलयं ।
न्यान अन्मोय सु अमिय रमन जिनु, भय षिपिय ममल पय सिद्धि जयं ॥
भवियन अन्मोय दिप्ति पर्जय विलयं ॥ जिन० ॥ ७ ॥

मन सहाय पर पर्जय रमनं, गुप्ति न्यान पर्जय विलयं ।
गुप्ति दिष्टि तं गुप्ति मन्द जिनु, मन गुप्ति उवन सुइ न्यान मयं ॥
भवियन मन गुप्ति न्यान सुइ ममल पयं ॥ जिन० ॥ ८ ॥

वयन रमन पर्जय सहियो, गुप्ति वयन सुइ न्यान रयं ।
गुप्ति रमन तं गुप्ति वयन रै, गुप्ति वयन रै ममल पयं ॥
भवियन गुप्ति वयन जिन वयन रमं ॥ जिन० ॥ ९ ॥

काय क्रांति फल जाति रमन रै, कल मनरंजु सु विलय सुयं ।
काय गुप्ति सुइ न्यान क्रांति रै, अन्मोय न्यान क्रांति ममल रयं ॥
भवियन अन्मोय तरन क्रांति मुक्ति जयं ॥ जिन० ॥ १० ॥

ईर्जे सुभाव इर्जा पथ रमन जिनु, क्रांति ममल रै अर्थ रयं ।
भय सल्य संक पर्जय रय विलयं, ईर्जे पंथ जिन सिद्धि जयं ॥
भवियन अन्मोय ईर्जे सुइ मुक्ति जयं ॥ जिन० ॥ ११ ॥

भाषा उवन हिययार रमन जिनु, भय विलय भाषा जिनय जिनं ।
अन्मोय न्यान विन्यान रमनु जिनु, पर्जय भय सल्य संक विलयं ॥
भवियन भय षिपिय भाषा सुइ सिद्धि जयं, भवियन अन्मोय समिदि सुइ मुक्ति जयं ॥ जिन० ॥

ऐषना ऐ एय न्यान सुइ रमनं, षिपिय कम्मु तिविहे न जयं ।
ऐ ऐन सुभाव सुयं सुइ दर्सिउ, दिप्ति दिष्टि सुइ रमन जिनु ॥
भवियन ऐषना सुइ समिदिसु मुक्ति जयं ॥ जिन० ॥ १३ ॥

आदान सहावेन न्यान रै रमनं, निषिपिय कम्मु जन रंज सुयं ।
न्यान विन्यान सु ममल रमन जिनु, भय सल्य संक विलयंतु सुयं ॥
भवियन आदान निषेप जिन मुक्ति जयं ॥ जिन० ॥ १४ ॥

प्रतिस्थाप परम जिन रमनं, पर्म भाव सुइ सुयं जिनं ।
पर्म तत्तु तं अर्थ ति अर्थ रमन जिनु, भय षिपिय सिद्धि सुइ रमन जयं ॥
भवियन प्रति स्थाप पर्म जिन सिद्धि जयं ॥ जिन० ॥ १५ ॥

मूल गुन नंत नंत जिन रमनं, रमन रंजु जिननाथ सुयं ।
साधु सुइ धुव रमन परम जिनु, पर्म सुभाव सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं ॥ जिन० ॥१६॥

अन्वय सहित अर्थ—(चरन सहाइ तं चरन रमन जिनु) सम्यक्चारित्रकी सहायतासे श्री जिनेन्द्र अपने क्षायिक चारित्रमें रमण कर रहे हैं (चरन चरिय जिननाथ सुयं) श्री जिनेन्द्र स्वयं ही विना मन वचन कायकी सहायताके अपने चारित्र गुणमें परिणमन कर रहे हैं (दर्सन न्यान चरन सुइ चरियो) निश्चय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्रकी एकतामें वर्तना ही चारित्र है (वीर्ज जिन चरन सुइ मुक्ति जयं) अनन्त वीर्यके आचरणसे वे जिनेन्द्र मुक्तिको विजय कर लेते हैं ॥ १ ॥

(जिन जिनय रंजु जिननाथ रमन जिनु) श्री वीतराग जिन स्वभावमें मगन हैं। वे जिनेन्द्र जिनपनेमें रमण कर रहे हैं (पर्म नंद तं पर्म पयं) उनका परमात्मा पद परमानन्दमई है (तं रंजु रमन आनन्द रमन जिनु) वे जिनेन्द्र स्वभावमें मगन होकर आनन्दमें रमण कर रहे हैं (अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) वे आनन्दमई जहाजके समान अरहन्त भगवान सिद्धिको जीत लेते हैं ॥ २ ॥

(हिंसा सहयार रमन पर्यय रे) रागादि पर परिणतिमें रमण करना ही हिंसा है जिससे वीतराग विज्ञानमई भावकी हिंसा होती है। भाव हिंसा ही बाहरी द्रव्य हिंसाका कारण है (दिप्ति दिष्टि पर्जय रमनं) शरीररूपी पर्यायमें ज्ञान व श्रद्धाकी रमणता होरही है—शरीरके सुखके ज्ञानमें ही श्रद्धा व आसक्तता हो रही है, यही हिंसा है (रूप सुभाव हिय न्यान रमन जिनु) जब श्री जिन अपने आत्माके हितकारी ज्ञान स्वभावमें रमण करते हैं (अहिंसा व्रिति पर्जय विलयं) तब अहिंसाव्रतका उदय होता है। इस वीतराग भावमई अहिंसा व्रतसे पर परिणति हिंसाकारक विला जाती है (भवियन भय षिपनिक सल्य संक विलयं) हे भव्य जीवो ! ज्ञान अहिंसा व्रतसे सर्व भय क्षय होजाता है, सर्व शल्य व शङ्काएँ विला जाती हैं ॥ ३ ॥

(अनृत संसार सानि सुइ विलयं) अब अरहन्तोंके सत्य व्रत बताते हैं कि उनके इस असत्य संसारका भ्रमण सब विला गया है (तं अमिय रमन विष विलय जिनं) तथा आनन्दामृतमें रमण करनेसे झूठा विषयभोगका विष भी विला गया है (नृतं नं नृत न्यान दिपि रमनं) उनके सत्य यह है कि वे सत्यज्ञानके प्रकाशमें

रमण कर रहे हैं, वे सर्व पदार्थोंका यथार्थ स्वरूप झलकाते हैं (नृन दिष्टि अनृन पर्येय विलयं) सत्य आत्मदृष्टिके प्रतापसे उनकी सर्व मिथ्या रागादि परिणतियें विला गई हैं (भविषन अनृन मय विलिय नृन मत्तु सुयं) हे भव्य जीवो! असत्य पदार्थोंके सम्बन्धमें सर्व भयोंका क्षय होगया है, वे अरहन्त स्वयं सत्य व्रतधारी भव्य हैं ॥ ४ ॥

(स्तेब रमन जिन वयन निरय सुई) चोरीके पापमें रमण यह है जो जिनेन्द्रकी आज्ञाका लोप किया जावे, जिन आज्ञासे विरक्त रहा जावे (पर परनय रमन सु पद वियं) और रागादि पर परिणतिमें रमण किया जावे व अपने वीतराग पदसे उदासीन रहा जावे (सहकार अस्तेय सु पर्जय विलयं) अचौर्य व्रतकी मददसे अर्थात् पर परिणतिके ग्रहणका त्याग और स्वपदके ग्रहण करनेसे पर परिणतियें सब विला जाती हैं (भय सल्य संक गलियं परम पदं) भय शल्य व शंकाएँ सब गल जाती है। परम पद प्राप्त होजाता है (भविषन अन्मोय तरन स्तेय विल) हे भव्यजीवो ! आनन्दमई जहाजके समान अरहन्तके पर परिणति ग्रहणरूपी कोई चोरी नहीं होसक्ती ॥ ५ ॥

(अबंभ भाव परजय रमनं) अब्रह्म या कुशीलका भाव यह है, जो पर परिणति शरीरादिमें व रागादिमें व सांसारिक सुख दुःखमें रमण किया जावे (पर पर्जय विलै सु बंभ रयं) परन्तु जब ब्रह्मचर्य व्रतमें या ब्रह्मचर्य स्वरूप आत्मामें रमण किया जाता है, तब सर्व रागादि पर परिणतियें विला जाती हैं (जन रंजन रय कल रंजु विलय जिन) श्री जिनेन्द्र भगवानके न तो जनोंके भीतर कोई न रंजायमानपना है, न शरीरमें रंजायमानपना है, इनके शरीर व शरीरके बाहर चेतन व अचेतन पदार्थोंमें मोह नहीं रहा है (मन रंजु विलय मोहंध विलं) न उनके पास मनके रंजायमान करनेके विचार हैं। उनका दर्शन मोहनीय व चारित्र मोहनीय कर्म क्षय होगया है (भविषन तं न्यान अन्मोय सु बंभ पयं) हे भव्यजीवो ! आत्मज्ञानमें आनन्द मानना ही ब्रह्मचर्य है या ब्रह्म पदका लाभ है ॥ ६ ॥

(परिग्रह प्रमानु सु पर्यय विलयं) धन धान्य क्षेत्र वस्तु बाहरी व मिथ्यात्व क्रोधादि सम्बन्धी अन्तरङ्ग परिग्रहके कारण जो परिणाम या भाव होते वे सब विला गये हैं। श्री अरहन्तके किसी परिग्रहका सद्भाव नहीं है, वे अपरिग्रही व निर्ग्रंथ हैं (न्यान कम्मु विलय मिथ्या विलयं) उनके ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय चारों घातीय कर्मोंका नाश होगया है तथा इस मिथ्या संसारका भी नाश है (न्यान अन्मोय सु

अमिय रमन जिनु) वे जिनेन्द्र ज्ञानानन्द रूपी अमृतमें रमण कर रहे हैं (भय विपिय ममल पय सिद्धि जयं) सर्व परिग्रहके त्यागसे वे अरहन्त सर्व भयोंको क्षय करके शुद्ध वीतरागी होकर सिद्धगतिको पालेते हैं ॥ ७ ॥

(मन सहाय पर पज्जय रमनं) मनके संकल्प विकल्पके कारण यह प्राणी पर पर्यायमें, पर वस्तुमें, रागादि भावोंमें रमण किया करता है (गुप्ति न्यान पर्जय विलयं) तब स्वरूपमें गुप्त होनेरूप ज्ञानकी परिणति विला जाती है (गुप्त दिष्टि तं गुप्ति सब्द जिनु) श्री जिनेन्द्रको जिन इसी लिये कहते हैं कि उनके मनका विकल्प नहीं है। उन्होंने आत्मानुभवकी गुप्त दृष्टिसे मनसे अतीत अनुभवगोचर स्वरूपको पालिया है (मन गुप्ति उवन सुइ न्यान मय) मनको वश करनेसे उनके ज्ञानमई प्रकाशका उदय होगया है (भवियन मन गुप्ति न्यान सुइ ममल पयं) हे भव्य जीवो ! मनोगुप्तिके कारण ही उनका ज्ञान अपने शुद्ध पदमें रमण करता है ॥ ८ ॥

(वचन रमन पर्जय सहियो) शरीरादि व रागादि पर पर्यायके साथ यह वचन रमण कर रहा है तब वचन गुप्ति नहीं है (गुप्ति वयन सुइ न्यान मय) जब वचनोंका हलन चलन बन्द किया जाता है तब वचन गुप्ति होती है, तब ज्ञानमें रमण होता है (गुप्ति रमन तं गुप्ति वयन मैं ममल पयं) वचन गुप्तिमें लीनतासे ही शुद्ध परमात्मा पद होता है (भवियन गुप्ति वयन जिन वयन रमें) हे भव्यजीवो ! जो वचन गुप्ति पालते हैं वे जिनके वचनोंमें रमण करते हैं वे जिनकी आज्ञा मानते हैं। श्री अरहंत वचन गुप्तिसे ही स्वरूपरमी हैं ॥ ९ ॥

(काय काति कल जाति रमन मैं) शरीर सम्बन्धी भावोंमें व शरीरोंकी अनेक जातियोंमें जो रमण करना है वह कायगुप्ति नहीं है (कल मन रंजु सु विलय सुयं) जहां शरीरमें मनकी मगनता है वहां आत्म-रमणका अभाव है (काय गुप्ति सुइ न्यान कांति मैं) जब ज्ञानके प्रकाशमें लीनता होती है तब काय गुप्ति होती है (अन्मोय न्यान कांति ममल रयं) तब आनन्दमई ज्ञानके प्रकाशमें शुद्धतासे रमण होता है (भवियन अन्मोय तारन कांति मुक्ति जय) हे भव्य जीवो ! आनन्दमई जहाज समान अरहन्त ही उन्नतिको पाते हुए मुक्तिको विजय कर लेते हैं क्योंकि वे काय गुप्ति पाल रहे हैं ॥ १० ॥

(ईर्ज सुभाव इर्जापथ रमन जिनु) स्वभावमें चलना ही श्री जिनेन्द्रमें ईर्यापथ व रमन है या ईर्यासमिति है (कांति ममल मैं अर्थ रयं) वही प्रफुल्लित शोभायमान आत्मारूपी कमलमें लीनता है, वही आत्म पदार्थमें लीनता है (भय सल्य संक पर्जय रय विलयं) तब सर्व भय, शल्य व शङ्काएँ मिट जाती हैं व परिणतिमें लीनता दूर होजाती है (ईर्जपन्थ जिन सिद्धि जयं) अपने स्वभावके रमणके मार्गसे श्री जिनेन्द्र सिद्धगतिको जीत

लेते हैं (भवियन अन्मोय ईर्जे सुइ मुक्ति जयं) हे भव्य जीवो! आत्माके आनन्दमें परिणमन है सो ही मुक्तिकी विजय है ॥ ११ ॥

(भाषा उवन हिययार रमन जिनु) वीतराग भावमें रमण करनेवाले अरहन्त प्रभुके भव्य जीवोंको हितकारी ऐसी दिव्यवाणीका प्रकाश होता है (भय विलय भाषा जिनय जिनं) श्री जिनेन्द्रकी वीतराग वाणीके प्रतापसे भव्योंका सर्व संसार भय विला जाता है (अन्मोय न्यान विन्यान रमनु जिनु) परन्तु श्री जिनेन्द्र आनंद सहित केवलज्ञानमें रमण करते रहते हैं, यही उनकी भाषा समिति है (अंग भय भव्य संक विलयं) उनके भीतरसे शरीर सम्बन्धी सर्व भय व सर्व शङ्काएँ विला गई हैं (भवियन भय षिपिय भाव सुइ सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो! जिनकी वाणी भय रहित करनेवाली है वे ही सिद्धगतिको जीत लेते हैं (भवियन अन्मोय समिदि सुइ मुक्ति जयं) हे भव्यजीवो! जो स्वात्मानन्दमें भलेप्रकार रमण करते हैं वे मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ १२ ॥

(ऐषना ऐ पय न्यान सुइ रमनं) मङ्गल स्वरूप एषणा समिति यह है कि श्री जिनेन्द्र ज्ञानमें रमण कर रहे हैं, ज्ञानानन्दका शुद्ध आहार कर रहे हैं (पिपिय कम्मु तिविहेन जयं) जिस ज्ञानानुभवसे तीन प्रकार कर्मोंका अर्थात् द्रव्य कर्म, भाव कर्म व नोकर्मोंका क्षय होकर संसारपर विजय प्राप्त होती है (ऐन सुभाव सुयं सुइ दर्सिउ) कल्याण स्वरूप अपने परिणमन स्वभावके कारण वे आपसे आपका दर्शन कर रहे हैं (दिप्ति दिष्टि सुइ रमन जिनु) वे जिनेन्द्र अपने ज्ञान दर्शनमें रमण कर रहे हैं (भवियन ऐषना सुइ मुक्ति जयं) हे भव्य जीवो! एषणा समितिसे अर्थात् आत्मानन्दके भोगसे श्री अरहन्तने मुक्तिको विजय कर लिया है ॥१३॥

(आदान मद्दावेन न्यान रे रमनं) अपने आपके स्वभावको ग्रहण करनेका स्वभाव होनेसे वे जिनेन्द्र ज्ञानके भीतर रमण कर रहे हैं (निषिपिय कम्मु जन रंजु सुयं) जिससे स्वयं ही मानवोंको राग उत्पादक कर्मोंका क्षय होगया है (न्यान विन्यान सु ममल रमन जिनु) श्री जिनेन्द्र अपने केवलज्ञान स्वभावमें रमण कर रहे हैं (भय सल्य संक विलयंतु सुयं) उनके सर्व भय, शल्य व शङ्काएँ दूर होगई हैं (भवियन आदान निषेप जिन मुक्ति जयं) हे भव्यजीवो! इस आदाननिक्षेपण समितिसे श्री जिनेन्द्र मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ १४ ॥

(प्रति स्थाप परम जिन रमनं) प्रतिष्ठापना समिति यह है कि परमात्मा जिनेन्द्र आपको अपने भीतर स्थापन कर रमण कर रहे हैं (परम भाव सुइ सुयं जिनं) वे जिनेन्द्र स्वयं उत्कृष्ट भावके धारी हैं (परम तत्तु नं अर्थ तिअर्थ रमन जिनु) वे परम तत्व हैं व रत्नत्रयमई पदार्थमें रमण कर रहे हैं (भय षिपिय सिद्धि सुइ रमन जयं)

सर्व भयसे रहित होकर वे सिद्धभावमें रमण करते हुए उसे विजय कर लेते हैं (भवियन प्रतिस्थाप पर्म जिन सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! इस प्रतिष्ठापना समितिसे अर्थात् आपमें आपको स्थापन करनेसे वे जिनेन्द्र सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ १५ ॥

(मूल गुन नंत नंत जिन रमनं) श्री जिनेन्द्र अपने स्वाभाविक अनन्तानन्त गुणोंमें रमण कर रहे हैं (रमन रंजु जिनन थ सुयं) वे जिनेन्द्र स्वयं आनन्द मगन हैं (साधु सुद्ध ध्रुव रमन परम निनु) वे स्नातक निर्ग्रन्थ साधु हैं, वे शुद्ध व ध्रुव आत्मामें रमण करते हुए परमात्मा जिन हैं (धर्म सुभ व सुद्ध सिद्धि जयं) वे अपने उत्कृष्ट स्वभावसे सिद्धगतिको जीत लेते हैं (भवियन अन्मोय तरन सुद्ध सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! वे आनंदमई जहाज समान अरहन्त स्वयं सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ १६ ॥

भावार्थ—यहां साधुओंके तेरह प्रकार चारित्रको अध्यात्मदृष्टिसे श्री अरहन्त भगवानमें घटाया गया है । व्यवहार नयसे १३ प्रकार चारित्रका स्वरूप श्री अमृतचन्द्राचार्यने तत्वार्थसारमें कहा है:—

पांच महाव्रत ।

द्रव्यभावस्वभावानां प्राणानां व्यपरोपणम् । प्रमत्तयोगतो यत्स्यात् सा हिंसा संप्रकीर्त्तिता ॥ ७४–४ ॥

प्रमत्तयोगतो यत्स्यादसदर्थाभिभाषणम् । समस्तमपि विज्ञेयमनृतं तत्समासतः ॥ ७५–४ ॥

प्रमत्तयोगतो यत्स्याददत्तार्थपरिग्रहः । प्रत्येयं तत्खलु स्तेयं सर्वं संक्लेशयोगतः ॥ ७६–४ ॥

मैथुनं मदनोद्रेकादब्रह्म परिकीर्त्तितम् । ममेदमिति संकल्परूपा मूर्च्छा परिग्रहः ॥ ७७–४ ॥

भावार्थ—कषाय सहित योगोंसे ज्ञान सुख शांति आदि भाव प्राणोंका और इंद्रिय बल श्वासोच्छ्वास आयु द्रव्य प्राणोंका वियोग करना हिंसा कही गई है । प्रमाद या कषाय सहित मन वचन योगोंसे जो अप्रशस्त या कष्टदायक वचनोंका कहना सो सब संक्षेपसे असत्य जानना चाहिये। प्रमाद व कषाय सहित योगोंसे विना दिये हुए पदार्थोंका लेना सर्व चोरी है ऐसा प्रतीतिमें लाना चाहिये। कामभावके वेगसे जो परस्पर स्पर्श करना सो अब्रह्म कहा गया है । धनादिमें यह मेरा है ऐसा संकल्प सो मूर्छा है, वही परिग्रह है । इन पांचों पापोंका सर्वथा त्याग पांच–अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य व परिग्रह त्याग महाव्रत है।

तीन गुप्ति ।

योगानां निग्रहः सम्यग्गुप्तिरित्यभिधीयते । मनोगुप्तिर्वचोगुप्तिः कायगुप्तिश्च सा त्रिधा ॥ ४—६ ॥

तत्र प्रवर्तमानस्य योगानां निग्रहे सति । तन्निमित्तास्रवाभावात्सद्यो भवति संवरः ॥ ५—६ ॥

भावार्थ— भलेप्रकार योगोंको रोकना सो गुप्ति है उनके तीन भेद हैं—मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति । इन गुप्तियोंको पालनेसे योगोंको थिर किया जाता है । योगोंको रोकनेसे योगोंके द्वारा आनेवाले आस्रव रुक जाते हैं और संवरका लाभ होता है ।

पांच समिति ।

मार्गोद्योतोपयोगानामालम्ब्यस्य च शुद्धिभिः । गच्छतः सूत्रमार्गेण स्मृतेर्या समितिर्यतेः ॥ ७—६ ॥

स्थलीकादिविनिर्मुक्तं सत्यासत्यामृषाद्वयम् । वदतः सूत्रमार्गेण भाषासमितिरिष्यते ॥ ८—६ ॥

पिण्डं तथोपधिं शय्यामुद्गमोत्पादनादिना । साधोः शोधयतः शुद्धा ह्येषणा समितिर्भवेत् ॥ ९—६ ॥

सहसादृष्टदुर्मृष्टाप्रत्यवेक्षणदूषणम् । त्यजतः समितिर्ज्ञेयादाननिक्षेपगोचरा ॥ १०—६ ॥

समितिर्दर्शितानेन प्रतिष्ठापनगोचरा । त्याज्यं मूत्रादिकं द्रव्यं स्थण्डिले त्यजतो यतेः ॥ ११—६ ॥

भावार्थ—रत्नत्रय मार्गको उद्योत करनेमें उपयोगोंकी शुद्धिके साथ साथ धर्मशास्त्रके अनुसार भूमि निरखकर चलना सो ईर्या समिति है । असत्यादि वचनोंको छोड़कर सत्य तथा अनुभया दोनों प्रकारकी भाषाको सूत्रके अनुसार कहना सो भाषा समिति है । उद्गम उत्पादनादि छियालीश दोष रहित भोजन, आसन, शय्याको शुद्ध ग्रहण करना सो एषणा समिति है । सहसा, यकायक, विना देखे, दुष्टतासे जो पीछी कमंडल शरीर आदि व शास्त्रादि न रखना सो आदाननिक्षेपण समिति है । साधुका निर्जंतु उसर भूमिपर मल मूत्रादि त्यागना सो प्रतिष्ठापन समिति है ।

यहां निश्चय नयसे श्री अरहन्तमें तेरा प्रकार चारित्र इसतरह बताया है—

(१) रागादि भावोंको त्यागकर स्वरूपमें रमण करना अरहन्तके अहिंसा महाव्रत है ।

(२) संसारके असत्य रमणको व विषयभोगोंको त्यागकर सत्य ज्ञानमें रमण करना सत्य महाव्रत है।

(३) जिनेन्द्रकी आज्ञानुसार रागादि भावोंका ग्रहण त्यागकर स्वरूपमें ही रमण करना अचौर्य महाव्रत है।

(४) पर परिणतिमें रमण छोड़कर ब्रह्मस्वरूप शुद्धात्मामें रमण करना ब्रह्मचर्य महाव्रत है।
(५) घातीय कर्मोके नाशसे सर्व पर ग्रहणका ममत्व त्यागकर अपने आनन्दामृतका ही ग्रहण करना परिग्रह त्याग महाव्रत है।
(६) मनके संकल्प विकल्पोंसे रहित होकर आत्मानुभवमें लीन होना मनोगुप्ति है।
(७) वचनोंका प्रयोग छोडकर आत्माके शुद्ध स्वभावमें लीनता ही वचनगुप्ति है।
(८) शरीर सम्बन्धी चेष्टओंका रमण छोडकर ज्ञानके प्रकाशमें लीनता ही कायगुप्ति है।
(९) निर्भय होकर, निःशङ्क होकर, अपने स्वभावमें रमण करना ईर्या समिति है।
(१०) वचन विलास छोड़कर आनन्द सहित केवलज्ञानमें रमण करना भाषा समिति है।
(११) शुद्ध ज्ञानानन्दका सन्तोषसे आहार करना एषणा समिति है।
(१२) कर्मोको नाश कर अपने स्वरूपको ग्रहण किये रहना आदाननिक्षेप समिति है।
(१३) अपने शुद्ध ध्रुव आत्मामें आपसे आपको स्थापित करना प्रतिष्ठापना समिति है।

अतिशय चौतीस गाथा १८७७ से १९१४ तक।

उव उवनं उवन उवन सुइ रमनं. रमन विंद सुइ रमन जयं।
विन्यान विंद सुइ सहज रमन जिनु, अन्मोय न्यान तं ममल पयं॥
भवियन कमल रमन अन्मोय जिन जिनय जिनं॥ १॥

उव उवन पयं जिननाथ सुयं, जिन जिनयति नन्तानन्त रयं।
पर्जय भय गलिय ममल पय मिलियं, भय षिपिय अमिय रम पर्म पयं॥
भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं॥ आचरी॥ २॥

तं अर्क सु अर्क सुइ रमनं, अर्क अमिय रस रमन सुयं।
तं अर्थ समर्थ अर्थ सुइ दरमं, तं विंद रमन विन्यान पयं ॥
भवियन वै दिप्ति रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव उवन पयं० ॥ ३ ॥

नृतं तं नृत रै रमनं, अयसय तं लोयलोय भुवनं।
जं नृत नृतं नृतं पय कलियं, तं पय रमनं सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन उव सम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव उवन० ॥ ४ ॥

नृतं तं नन्त नन्त रै रमनं, उव उवन विली सुइ विपय विलं।
मुक्त विनन्द विली सुइ विलयं, अय सय सुइ नृति सिद्धि जयं ॥
भवियन रंज रमन जिन मुक्ति जयं ॥ उव० ॥ ५ ॥

निरू निश्चेन मिलिय मै रयनं, न्यान विन्यान सु उवन जिनं।
निस्टं तिअर्थ तं इस्ट ममल पय, उत्पन्न नन्त धुव सिद्धि जयं ॥
भवियन धर्म रमन तं पर्म पयं ॥ उव० ॥ ६ ॥

षिपनिक सुइ रमन रमिय उव उवनं, धीर वीर विन्यान रयं।
अयसय तं रमन नन्त नन्त हिउ, विन्यान वीर्य सुइ सिद्धि जयं॥
भवियन ममल रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ७ ॥

आदि संहरन जिनय जिन उवनं, उववन न्यान सुइ ममल पयं।
वज्रनाराच न्यान सुइ उवनं, भय सल्य संक विलयन्तु सुयं ॥
भवियन विन्यान रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ८ ॥

आदि अनादि स्थान सुइ रमनं, परिनाम नन्त सुइ ममल पयं ।
दिप्ति दिस्टि सुइ रमन जिनय जिनु, अयमय अन्मोय सु सिद्धि पयं ॥
भवियन कमल रमन सुइ सिद्धि पयं ॥ उव० ॥ ९ ॥

सुह असुहं च रमन सुइ विलयं, सुद्ध रमन सं सुद्ध पयं ।
अन्मोय विरोह सुयं सुइ गलियं, अयमय जयवंत सु ममल पयं ॥
भवियन उव उवमम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ १० ॥

सुयं स्कंध सुयं सुइ रमनं, स्थान स्थान परिनाम रयं ।
नन्तानन्त सु परिनै ममलं, अयमय सुइ नन्त सु सिद्धि पयं ॥
भवियन तं विंद रमन सुइ मुक्ति जयं ॥ उव० ॥ ११ ॥

सुइ लषिय सुइ लषिय षिपक जिनु, नन्तानन्त सु ममल पयं ।
अंग दिगंतह अर्थ अर्थ हिउ, अन्मोय तरन सुइ सिद्धि पयं ॥
भवियन अयमय सुइ नन्त सु लषिय पयं ॥ उव० ॥ १२ ॥

नन्तानन्त सु वीरज रमनं, तं न्यान रमन अन्मोय पयं ।
विन्यान वीर्य तं नन्त नन्त हिउ, भय सल्य संक विलयंतु सुयं ॥
भवियन अयसय सुइ रमन सु मुक्ति पयं ॥ उव० ॥ १३ ॥

हितमित परिनै कोमल रमनं, रमन विंद सुइ पर्म पयं ।
लघु दीरघ नहि ऊंचनीच पय, विन्यान रमन तं मुक्ति पयं ॥
भवियन अयसय षिय रमन सु सिद्धि पयं ॥ उव० ॥ १४ ॥

महजोय नीत तं सहज रमन जिनु, सहज नन्द तं नन्द सुयं ।
नन्तानन्त सु न्यान रमन जिनु. सहज अन्मोय सु सिद्धि जयं ॥
भवियन अयमय तं नन्त सुइ सहज जयं ॥ उव० ॥ १५॥

सुयं सु भीष सुयं सुइ सुषिम, सुयं षिपति सुइ न्यान रयं ।
सुयं सु गम्य अगम्य सुइ रमनं, सब्द दिस्टि तं मुक्ति पयं ॥
भवियन अयसय सुइ रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ १६॥

बाधा विलय अभय भय गलियं, भय षिपनिक सुइ भव्वु रयं ।
न्यान विन्यान सु विंद रमन जिनु, अयसय सुइ अभय सु सिद्धि जयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ १७॥

गगन स नन्तानन्त जिनय जिनु, गम्य अगम्य परिनाम धुवं ।
तं नन्त रमन सुइ न्यान गगन जिनु, गम्य अगम्य अयसय ममलं ॥
भवियन चेतन सुइ रमन सु मुक्ति पयं ॥ उव० ॥ १८॥

इन्द्री विषय आहार सु विलयं, न्यान आहार सुइ रमन पयं ।
बाधा विलय गलिय सुइ विषयं, न्यान विन्यान सु रमन पयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं॥ उव० ॥ १९॥

चेतन सुइ रमन रमिय जिन उत्तं, नन्त चतुष्टै रमन पयं ।
परिनाम परिमिस्टि इस्टि सुइ दरसं, नन्त समय तं ममल पयं ॥
भवियन कमल रमन अयसय ममलं ॥ उव० ॥ २०॥

सर्वन्य सर्व विधि अर्थति अर्थह, अंगदि अंगह रमन सुयं ।
सुयं सुभावे सुइ रमन जिन, सुयमेव स्वामी तं नन्त पयं ॥
भवियन वै दिप्ति रमन सुइ सिद्धि पयं ॥ उव० ॥२१॥

छाया रहित न्यान विन्यानह, सुइ रमन जिन सुयं रमै ।
सुयं सु लषियो सुयं पिषकु जिनु, दिपि दिप्ति दिष्टि सुइ न्यान रमं ॥
भवियन अमिय रमन विष गलिय जिनय जिन सिद्धि जयं ॥ उव० ॥२२॥

उत्पन्न न्यान तं देइ दिप्ति जिनु, देव दिष्टि तं ममल पयं ।
दिप्ति दिष्टि तं नन्त नन्त हिउ, विन्यान दिप्ति तं दिस्टि सुयं ॥
भवियन उवसम षिय रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥२३॥

न्यान विन्यान सुइ रमन परम जिनु, नष केस क्रितु तं सुइ विलयं ।
न्यान क्रांति सुइ रमन रयन जिनु, अन्मोय तरन सुइ विंद रयं ॥
भवियन उवसम पिय रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥२४॥

मन उवन सहाव सु विलय ममल जिनु, न्यान विन्यान सुमन विलयं ।
अन्मोय न्यान अध मोय जिनय जिनु, भय सल्य संक विलयन्तु सुयं ॥
भवियन अयसय अधिमोय सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥२५॥

सर्वन्य हितं तं न्यान रमन जिनु, अन्मोय न्यान सुइ समय जयं ।
न्यानेन न्यान सम समयं संजुत्तं, मे मूर्ति तं उवन सुयं ॥
भवियन उवसम पिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥२६॥

सिद्धं सुद्ध विसुद्ध रमन जिनु, सिद्धि सुयं सुइ रमन सुयं ।
तं परम न्यान उत्पन्न पुहुप रै, मुक्ति रमन फल उवनं ॥
भवियन वीर्य विन्यान सु मुक्ति पयं ॥ उव० ॥२७॥

मै मूर्ति हिय रमन परम जिन, महि आदर्स उत्पन्न मयं ।
ममल विंद तं रमन समय जिनु, ममल रमन तं मुक्ति पयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ २८ ॥

वीय विन्यान वयन रमन जिनु, सुयं स्कंध धुव रमन सुयं ।
जोयन जो जोति दिस्ति सुइ रमनं, पंचवीस विन्यान रयं ॥
भवियन परमेस्टि इस्टि सुइ सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ २९ ॥

नन्द आनन्द सुइ नन्द पर्म जिनु, चेयनन्द सहजानन्द सुयं ।
पर्म नन्द सुइ नन्द जिनय जिनु, जिन जिनयति सुइ जै जै सिद्धि जयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ३० ॥

धुव लंकृत धुव रमन जिनय जिन, धलि कंट तं सुयं विलयं ।
नन्तानन्त सु दिस्ति रमन जिनु, तिन झड़प सुयं आवर्न विलं ॥
भवियन जिन विंद रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ३१ ॥

गम्य अगम्य तं नन्त गगन रै, गन्ध रूव तं सुयं विलं ।
सुयं स्कंध सुयं धुव रमनं, दिस्ति दिष्टि सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ३२ ॥

पदम प्रभु पद पर्म रमन जिनु, पद पर्म विंद विन्यान समं ।
भय सल्य संक सक राग विलय जिनु, उत्पन पर्म पद मुक्ति जयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ३३ ॥

अवयाम तं नन्त जिनय जिन उवनं, ममल रमन तं सुइ रमनं ।
निमंक रूव तं अमिय रमन जिनु, अवयाम ममल सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ३४ ॥

अंग दिगन्त सु नन्त ममल जिन, नन्तानन्त सु ध्रुव ममलं ।
भय षिपनिकु तं अमिय रमन जिनु, तं विंद रमन सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन धम्म रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ३५ ॥

देव दिस्टि उव उवन जु दाता, अवासह संमय महियं ।
पर्म न्यान तं परम रमन जिनु, पर्म अनन्त सु पर्म रयं ॥
भवियन उवसम षिय रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ३६ ॥

धम्मं धरयति अर्थ रमन जिनु, अर्थ तिअर्थ सु रमन सुयं ।
उव उवन हियार सहाय सहज जिनु धम्म ममल रै सिद्धि जयं ॥
भवियन विंद कमल रम सिद्धि सुयं, भय पिपिय भव्वु तं मुक्ति पयं ॥ उव० ॥ ३७ ॥

अयसय जयवंत सुयं सुइ उवनं, जै जै जै सुइ सिद्धि जयं ।
दिसि दिष्टि सब्द विवान समय मयं, अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन सिद्ध समय अन्मोय सु मुक्ति पयं ॥ उव० ॥३८॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनं उवन उवन सुइ रमनं) श्री अरहन्त भगवान आत्मरमी प्रकाशित हैं (रमन विंद सुइ रमन जयं) वे ज्ञानमें रमण करते हैं, वही कर्मोंकी विजयमें रमण कर रहे हैं (विन्यान विंद सुइ सहज रमन जिनु) वे ज्ञानका अनुभव करनेवाले स्वयं अपने वीतराग सहज स्वभावमें रमण करते हैं (अन्मोय न्यान तं ममल पयं) वे ज्ञानानन्दी शुद्ध पदमें विराजित हैं (भवियन कमल रमन अन्मोय जिन जिनय जिनं) हे भव्य जीवो ! आत्मारूपी कमलमें रमण करनेवाले यह वीतरागी जिन हैं ॥ १ ॥

(उव उवन पयं जिननाथ सुयं) यह श्री जिनेन्द्र स्वयं अपने पदमें प्रकाशित हैं (जिन जिनयति नन्तानन्त रयं) जिन्होंने अनन्तानन्त कर्मरूपी रजको क्षय कर डाला है (पर्जेय भय गलिय ममल पय मिलियं) जिनका शरीर सम्बन्धी सब भय गल गया है तथा शुद्ध पद प्राप्त होगया है (भय षिपिय अमिय रस परमं पयं) वे निर्भय होकर आनन्दरस पूर्ण परम पदको पाचुके हैं (भवियन अन्मोय रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! आनन्दमई जहाज समान अरहन्त सिद्धिको विजय कर लेते हैं ॥ २ ॥

(तं अर्क सु अर्क सुइ रमनं) वे अरहन्त ही सूर्यके समान परम तेजस्वी हैं, वे अपने सूर्य स्वभावमें रमण कर रहे हैं (अर्क अमिय रस रमन सुयं) वे ज्ञान सूर्य आनन्दरसमें रमण करते हुए आनन्दमई स्वयं हो रहे हैं (तं अर्थ समर्थ अर्थ सुइ दरसं) वे बलवान पदार्थ हैं जिन्होंने अपने पदार्थको आप देख लिया है (तं विंद रमन विन्यान रयं) वे ज्ञानमें रमण करनेवाले ज्ञानमई पदधारी है (भवियन वे दिप्ति रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्य-जीवो ! वे ज्ञान प्रकाशमें रमण करते हुए सिद्धिपदको स्वयं जीत लेते हैं ॥ ३ ॥

(नृतं तं नृत रै रमनं) श्री अरहन्त परमेष्टी आर्तभावसे रहित हैं, खेद रहित हैं, वे सदा ही आकु-लता र् ्त्य स्वभावमें रमण कर रहे हैं (ससमय तं लोयलोय भवनं) यह प्रभुके जन्मका एक अतिशय है। वे लोकालोक जानते हुए किंचित् भी खेद नहीं प्राप्त करते हैं (जं नृत नृतं नृतं पय कलियं) वे प्रभु आर्त रहित सत्यार्थ पदसे विभूषित हैं (तं पय रमनं सुइ सिद्धि जयं) वे अरहन्त पदमें लीन होते हुए सिद्धपदको जीत लेते हैं (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! प्रभु उपशम व क्षमाभावमें लीन होते हुए सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ ४ ॥

(नृतं तं नन्त नन्त रै रमनं) वे सत्य प्रभु अनन्तानन्त गुणोंमें लीन हैं (उव उवन विली सुइ विषय विलं) उनमें किसी इच्छारूपी मलका उदय विला गया है। इंद्रिय विषयभोग विला गया है, वे मल रहित हैं

(भुक्त विनन्द त्रिनी मुइ विन्यं) भोगोंके सुखका नाश होगया है। सोई मलका अभाव है (मइ मइ सुइ नृति सुइ सिद्धि जयं) इस मल रहित अतिशयसे वे सत्य प्रभु सिद्धिको जीत लेते हैं (भवियन रंज रमन जिन मुक्ति जयं) वे आनन्द रमण करनेवाले जिन मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ ५ ॥

(निन्द निश्चेन मिलिय पै रमनं) वे प्रभु निश्चयसे अपने ज्ञानस्वरूपमें मिले हुए रमण कर रहे हैं (न्यान विन्यान सु उवन जिनं) उन वीतराग भगवानमें केवलज्ञानका उदय है (मिष्टं निअर्थ तं इष्ट ममल पय) परम मीठा रत्नत्रयमई पदार्थ ही जिनको इष्ट है ऐसे निर्मल पदके धारी हैं, यही अरहन्तका मिष्ट वचन नामका अतिशय है। जैसे मिष्ट वचनसे वे सबको प्रिय लगते हैं ऐसे अरहन्त रत्नत्रयमें लीन होते हुए दिव्यवाणीके प्रकाशसे सबको इष्ट होरहे हैं (उत्पन्न नन्त धुव सिद्धि जयं) अपने अनन्त ध्रुव स्वभावके प्रकाशसे वे सिद्धगतिको जीत लेते हैं (भवियन शर्म रमन तं धर्म जयं) हे भव्यजीवो ! वे रत्नत्रयमई धर्ममें रमण करते हुए परम पदको पालेते हैं ॥ ६ ॥

(षिरनिक सुइ रमन रमिय उव उवनं) वे क्षायिक भावमें रमण करनेवाले हैं। उनके गायके दूधके समान शुद्ध आनन्द रसका उदय है, यही दूध समान रुधिर नामका अतिशय है (षीरवीर विन्यान रयं) वे धीरवीर ज्ञानमें रत हैं (अयसय तं रमन नन्त नन्त हिउ) इस अतिशयमें अर्थात् शुद्ध आनन्द पानमें वे अनन्तानन्त शक्तिसे रमण कर रहे हैं (विन्यान वीर्य सुइ सिद्धि जयं) ऐसे अनन्तज्ञान व अनन्त वीर्यके धारी जिन सिद्धपदको जीत लते हैं (भवियन ममल रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो! शुद्ध भावमें रमण करनेसे वे सिद्धिको जीत लेते हैं ॥ ७ ॥

(आदि संहरन जिनय जिन उवनं) आदि संहरन अर्थात् शरीर जो आदि सहित है उसका ममत्व नाश करते हुए श्री जिनमें जिनपद प्रगट है (उववन न्यान सुइ ममल पयं) अनन्तज्ञानका प्रकाश सो ही निर्मल पद है (वज्र नाराच न्यान सुइ उवनं) उनका ज्ञान वज्रके समान थिर है व कीलेके समान थिर है (भय भव्य संक विलयन्तु सुयं) प्रभुके भय, शल्य, शङ्काएँ सब विला गई हैं (भवियन विन्यान रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! ज्ञानमें रमण करते हुए वे अरहन्त सिद्धपदको जीत लेते हैं। यहां वज्रवृषभनाराच आदि संहननके अतिशयको बताया है कि उनका ज्ञान वज्रके समान दृढ़ है, संहननको संहरन शब्द कहकर शरीर मोहका त्याग झलकाया है ॥ ८ ॥

(आदि अनादि स्थान सुइ रमनं) आदि संस्थान नाम समचतुरस्र संस्थानके अतिशयसे मतलब यह है कि जैसे भगवानका शरीर समडौल होता है वैसा अरहन्तका अनादि कालीन असंख्यात प्रदेशी आकार सदा थिर हैं, वे उसी अपने स्वक्षेत्रमें रमण कर रहे हैं (परिनाम नन्त सुइ ममल पयं) उस निर्मल पदमें अनन्त स्वाभाविक परिणतियें होती रहती हैं (दिप्ति दिस्टि सुइ रमन जिनय जिनु) ज्ञानदर्शनमई सूर्य समान वीतराग भावमें रमण करनेवाले वीतराग जिन हैं (अयमय अन्मोय सु सिद्धि जयं) इस आनन्दमई अतिशयसे वे सिद्ध-भावको जीत लेते हैं (भवियन कमल रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो! वे आत्म कमलोंमें रमण करते हुए सिद्धिको पालेते हैं ॥ ९ ॥

(सुइ असुइ च रमन सुइ विक्रयं) प्रभुके भीतर न शुभ भावोंकी रमणता है न अशुभ भावोंकी रमणता है। इसीसे शुद्धोपयोग भावको रखते हुए सुन्दर रूपके अतिशयको धरनेवाले हैं (सुद्ध रमन सं सुद्ध पयं) उनका शुद्ध ही रमण है व शुद्ध ही उनका पद है (अन्मोय विगेइ सुयं सुइ गलियं) शुद्धानन्दका विरोधी कर्म स्वयं सब गल गया है (अयसय जयवंत सु ममल पयं) इस सुन्दर रूपके अतिशयकी जय हो जो शुद्ध पद स्वरूप है (भवियन उव उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ १० ॥

(सुयं स्कंध सुयं सुइ रमनं) अरहन्तका आत्मा असंख्यात प्रदेशी कायवाला है। वे स्वयं उसीमें रमण कर रहे हैं (स्थान स्थान परिनाम रयं) प्रदेश प्रदेशमें ज्ञानानन्दका परिणाम होरहा है (नन्तानन्त सु परिनै ममलं) अरहन्त परमात्मामें अनन्तानन्त परिणाम सब शुद्ध ही होते हैं (अयपय सुइ नन्त सु सिद्धि जयं) इस सुन्दर गंधके अतिशयसे अनन्तकाल शोभित रहते हुए वे सिद्धपदको जीत लेते हैं (भवियन तं विंद रमन सुइ मुक्ति जयं) हे भव्यजीवो! वे अरहन्त ज्ञानमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ११ ॥

(सुइ लषित सुइ लषिय षिक जिनु) एक हजार आठ लक्षणसे जिनका शरीर लक्षित है, वे ही अरहन्त परमात्मा अपने क्षायिक शुद्ध ज्ञानादि गुणोंसे लक्षित हैं, प्रगट हैं (नन्तानन्त सु ममल पयं) उनमें अनन्त गुण पर्याय निर्मल स्वरूप हैं (अंगदिगंतह अर्थ अर्थ हिउ) प्रदेश प्रदेशमें रत्नत्रयमई भाव परिपूर्ण है (अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) वे आनन्दमई जहाजके समान अरहंत सिद्ध गतिको जीत लेते हैं (भवियन अयमय सुइ नन्त सु लषिय पयं) हे भव्य जीवो! इस अतिशयसे वे अनन्त गुणोंसे पूर्ण भले प्रकार जाननेयोग्य हैं ॥ १२ ॥

(नन्तानन्त सु वीर्ज रमनं) वे अनंतानंत वीर्यमें रमण कर रहे हैं। यही उनका अतुल बल रूप अतिशय है (तं न्यान रमन अन्मोय पयं) वे ज्ञानमें रमण करते हुए आनन्दमई पदमें तिष्ठ रहे हैं (विन्यान वीर्य तं नन्त नन्त हिउ) वे अनंतज्ञान व अनंतवीर्यके धारी हैं (भय सल्य संक विलयंतु सुयं) उनके सर्व भय शल्य व शंकाएँ दूर होगई हैं (भवियन अयमय सुइ रमन सु मुक्ति पयं) हे भव्य जीवो! इस अतिशयमें रमण करते हुए वे मुक्तिको पालेते हैं ॥ १३ ॥

इति दश जन्म अतिशय।

(हितमित वरिनै कोमल रमनं) केवलीका आत्मा अपने परम हितमें मर्यादारूप परिणमन कर रहा है वहां बड़ी ही कोमलता है, मार्दव भावमें रमण है। किसी जीवको उनसे कष्ट नहीं है इसीसे वहां जीव वध नहीं, जो केवलज्ञानीका पहला अतिशय है (रमन विंद सुइ पर्म पयं) वे ज्ञानमें रमण कर रहे हैं। यही एक परम पद है (लघु दीरघ नहि ऊचनीच पय) यह पद स्वाभाविक है, इसमें छोटे बड़ेकी व ऊँच नीचकी कल्पना नहीं है (विन्यान रमन तं मुक्ति पयं) वे ज्ञान भावमें रमण करते हुए मुक्तिको पाते हैं (भवियन उवसम खिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो! वे उपशम भाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धपदको पालेते हैं ॥ १४ ॥

(सहजोय नीत तं सहज रमन जिनु) वे सहज स्वभावसे प्राप्त अपने स्वाभाविक वीतराग भावमें रमण कर रहे हैं (सहज नन्द तं नन्द सुयं) वे स्वयं सहजानन्दमें मगन हैं (नन्तानन्त सु न्यान रमन जिनु) वे अनन्तज्ञानमें रमण करनेवाले जिन हैं (सहज अन्मोय सु सिद्धि जयं) वे सहज ही आनन्दमय प्रभु सिद्धगतिको जीत लेते हैं (भवियन अयमय तं नन्त सुइ सहज जयं) हे भव्यजीवो! इस जीव वध रहित अतिशयसे वे अनन्त गुणोंको सहज हीमें विजय प्राप्त कर लेते हैं ॥ १५ ॥

(सुयं सुभीष सुयं सुइ सुषिम) श्री केवली भगवानमें स्वयं सुभिक्षका अतिशय है, कभी अतृप्ति नहीं होती है, वे स्वयं अति सूक्ष्म हैं इंद्रिय अगोचर हैं, वहां कोई पर पोषणकी जरूरत नहीं है (सुइ षिपति सुइ न्यान रय) उन्होंने स्वय ही ज्ञानावरण कर्मकी रजका क्षय कर डाला है (सुय सु गम्य अगम्य सुइ रमन) वे अपने अतीन्द्रिय स्वानुभवगोचर स्वभावमें रमण कर रहे हैं (सब्द दिस्टि तं मुक्ति पयं) वे श्रुतज्ञानगोचर हैं, वे

मोक्षको पालेते हैं (भवियन अयसय सुइ रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! इस सुभिक्ष अतिशयमें रमण करते हुये वे सिद्धगतिको पालेते हैं ॥ १६ ॥

(बाधा विलय अभय भय गलियं) श्री केवलीकी आत्मामें कोई बाधा नहीं है, वे पूर्ण निर्भय हैं, सर्व संसारका भय गल गया है (भय विरनिक सुइ भव्वु रयं) वे भयको क्षय करनेवाले अपने स्वभावमें रत हैं (न्यान विन्यान सु विंद रमन जिनु) वे जिनेन्द्र अपने केवलज्ञानमें भलेप्रकार रमण कर रहे हैं (अयसय सुइ अभय सु सिद्धि जयं) यह केवली भगवानका भय रहित उपसर्गका अभाव अतिशय है। इससे वे सिद्धपदको जीत लेते हैं (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव तथा क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ १७ ॥

(गगन सु नन्तानन्त जिनय जिनु) श्री जिनेन्द्रमें अनन्तानन्त अवकाश ज्ञानका है (गम्य अगम्य परिनाम धुवं) उसमें ध्रुवरूपसे सदा ही स्थूल सूक्ष्म पदार्थोंके परिणमनकी अपेक्षा परिणमन होता रहता है, वे स्थूल सूक्ष्म सबको जानते हैं (नं नन्त रमन सुइ न्य न गगन जिनु) उस अनन्तज्ञानमें रमण करना ही श्री जिनेन्द्रका आकाशमें गमन है (गम्य अगम्य अयपयं ममलं) यही स्थूल सूक्ष्म पदार्थोंको जीतनेवाले शुद्ध ज्ञानका अतिशय है (भवियन चेतन सुइ रमन सु मुक्ति पयं) हे भव्यजीवो ! वे चेतना स्वभावमें रमण करते हुए मुक्तिको पालेते हैं ॥ १८ ॥

(इन्द्री विषय आहार सु विरयं) केवलीके जिह्वा इन्द्रियके द्वारा भोजनका भोग नहीं है, उनके कवलाहार नहीं है (न्यान आहार सुइ रमन पयं) उनके अपने ज्ञानका ही आहार है। वे स्वयं ज्ञानस्वभावका भोग रमणताके साथ करते रहते हैं (बाधा विलय गलिय सुइ विषयं) उनके न क्षुधाकी बाधा है न जिह्वा इन्द्रिय द्वारा विषयका भोग है (न्यान विन्यान सु रमन पयं) वे केवलज्ञानके पदमें भलेप्रकार रमण कर रहे हैं (उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! शांत भाव व क्षमाभावका रमण करते हुए वे सिद्धगतिको पालेते हैं ॥ १९ ॥

(चेतन सुइ रमन रमिय जिन उत्तं) अपने चेतना स्वभावमें रमण करना ही उनके रमण है (नन्त चतुष्टे रमन पय) वे अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्यमें रमण करते हुए चार चतुष्टयके धारी चार मुख सहित प्रगट है (परिनाम परिमिस्ट इस्टि सुइ दरमं) वे परम इष्ट परमेष्ठीपदमें परिणमन करते हुए अपने चार चतुष्टय या चार मुख स्वभावको प्रगट कर रहे हैं (नन्त समय तं ममल पयं) उनकी आत्मा अनन्त गुणका

धारी शुद्धपदमें है (भवियन कमल रमन अवसय ममलं) हे भव्यजीवो ! वे आत्मीक कमलमें रमण करते हुए इस शुद्ध अतिशयके धारी हैं ॥ २० ॥

(सर्वन्य सर्व विधि अर्थति अर्थह) वे सर्वज्ञ भगवान रत्नत्रयमई धर्मके स्वामी हैं । ईश्वरताके अतिशयके धारी हैं (अंगदि अंगह रमन सुयं) वे स्वयं उस धर्ममें सर्व प्रदेशोंसे रमण कर रहे हैं। सर्वांग स्वरूपमें तन्मय हैं (सुयं सुभावे सुइ रमन जिनं) वे स्वयं स्वभावसे अपने शुद्ध भावमें रमण करनेवाले जिन हैं (असुयमेव स्वामी तं नन्त पयं) वे स्वयं ईश्वर हैं, अनन्त गुणोंके धारी हैं (भवियन वै दिप्ति रमन सुइ सिद्धि पयं) हे भव्य जीवो ! वे ज्ञानमें रमण करते हुए सिद्ध गतिको पालेते हैं ॥ २१ ॥

(छाया रहित न्यान विन्यानह) श्री अरहंत भगवानके केवलज्ञानकी कहीं छाया नहीं पड़ती। यही छाया रहित अतिशय है (सुयं रमन जिन सुयं रमै) वे स्वयं वीतरागभावमें रमण करनेवाले स्वयं रमणशील हैं (सुयं सुरुचियो सुयं पिऊ जिन) वे स्वयं आपके भले प्रकार अनुभव करनेवाले हैं, वे स्वयं क्षायिक भाव-धारी जिन हैं (दिपि दिप्ति दिष्टि सुइ न्यान रमं) उनमें अनंतज्ञान व अनंतदर्शन प्रगट है। वे ज्ञानमें ही रमण करते हैं (भवियन अमिय रमन विष गलिय जिनय जिन सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! वे आनन्दमें मगन हैं, उनके विषय भोगाकांक्षा चली गई है। वे वीतराग जिन सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ २२ ॥

(उत्पन्न न्यान तं देइ दिप्ति जिन) उन जिनेन्द्रके केवलज्ञान उत्पन्न होकर सदा चमकता रहता है, कभी मंदता नहीं है। यही पलक न लगना अतिशय है (देव दिष्टि तं ममल पयं) जिनेन्द्र देवका ज्ञान शुद्ध पदमें है, उसमें कोई आवरण नहीं है (दिप्ति दिष्टि तं नृत नंत हिउ) उनमें अनन्तज्ञान व अनन्तदर्शन सदा ही प्रगट है (विन्यान दिप्ति तं दिष्टि सुयं) स्वयं ही केवलज्ञान है व स्वयं ही केवलदर्शन है (भवियन उवसम षिम रमनं सु सिद्ध जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धभावको जीत लेते हैं ॥२३॥

(न्यान विन्यान सुइ रमन परम जिन) वे परमात्मा जिन अपने केवलज्ञानमें रमण कर रहे हैं (नष केस क्रितु तं सुयं विलयं) नख केशोंको बढ़ानेवाला कर्म ही उनका क्षय होगया है इससे नख-केश बढ़ते नहीं, (न्यान क्रांति सुइ रमन रमन जिन) वे जिनेन्द्र ज्ञानके विस्तारमें रमण कर रहे हैं (अन्मोयए तरन सुइ विंद रमं) वे आनन्दमई जहाज स्वयं जगतमें रमण कर रहे हैं (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे उपशम भाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धभावको जीत लेते हैं ॥ २४ ॥

इति केवलज्ञानके दश अतिशय।

(मन उवन सहाव सु विकय ममल जिनु) **शुद्ध परमात्मा अरहन्तके मनके संकल्प विकल्प करनेका स्वभाव नाश होगया है** (न्यान विन्यान सु मन विलयं) **तथा मनसे होनेवाला मतिज्ञान व श्रुतज्ञान भी विला गया है** (अन्मोय न्यान अघिमोय जिनय जिनु) **ज्ञानानन्दके अनुभवके प्रतापसे आधि अर्थात् मनकी पीड़ा सब छूट गई है ऐसे वीतराग जिन हैं। यही अर्धमागधी भाषाका अतिशय है** (भय सल्य संक विलयन्तु सुयं) **उन अरहंतके स्वयं ही सर्व भय व शङ्काएँ व शल्य छूट गई हैं** (भवियन भयमय आघिमोय सु सिद्धि जयं) **इस सब पीड़ा निवारक अतिशयसे अरहंत सिद्धभावको जीत लेते हैं ॥ २५ ॥**

(सर्वन्य हितं तं न्यान रमन जिनु) **श्री हितोपदेशी वीतराग सर्वज्ञ भगवान अपने आपमें रमण कर रहे हैं** (अन्मोय न्यान सुइ समय जयं) **आनन्दमई ज्ञानसे उनकी आत्मा जयरूप है, उनमें वैररहितपना है, यह अतिशय है** (न्यानेन न्यान सम समय संजुत्तं) **वे ज्ञानसे ज्ञानको जानते हुए समभाव सहित आत्मा है। उनमें रागद्वेष नहीं है** (मै मूर्ति तं उवन सुयं) **वे स्वयं ज्ञानाकार मूर्तिके धारी हैं** (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) **हे भव्यजीवो! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ २६ ॥**

(सिद्ध सुद्ध विसुद्ध रमन जिनु) **श्री जिनेन्द्र शुद्ध वीतराग सिद्धभावके भीतर रमण कर रहे हैं** (सिद्ध सुयं सुइ रमन सुयं) **वे स्वयं सिद्ध स्वरूपी हैं, वे स्वयं आपमें रमण कर रहे हैं** (तं परम न्यान उत्पन्न पुहुप) **उनमें केवलज्ञानका उदय है, वे उस प्रफुल्लित हृदयमें रमण कररहे हैं** (मुक्ति रमन तं फल उवन) **मुक्तिमें रमण करना उस पुष्पका फल है** (भवियन वीर्य विन्यान सु मुक्ति जयं) **हे भव्यजीवो! वे अनन्तज्ञान व अनन्त वीर्यके धारी मुक्तिको जीत लेते हैं। यही फल फूलका होना अतिशय है ॥ २७ ॥**

(मै मूर्ति हिय रमन परम जिन) **श्री परमात्मा जिनेन्द्र ज्ञानमूर्ति हैं, अपने आत्महितमें रमण कर रहे हैं** (महि आदर्स उत्पन्न मयं) **इस जगतमें श्री भगवान आदर्शके समान प्रगट है। यहां पृथ्वी दर्पण समान अतिशय है** (ममल विंद तं रमन ममय जिनु) **शुद्ध ज्ञान स्वभावमें रमण करनेवाले परमात्मा जिन हैं** (कमल रमन तं मुक्ति पयं) **आत्मारूपी कमलमें रमण करते हुए वे मुक्तिको पालेते हैं** (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) **हे भव्यजीवो! शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए वे सिद्धिपदको जीत लेते हैं ॥ २८ ॥**

(वीर्य विन्यान वयन रमन जिनु) **श्री जिनेन्द्र अनन्त वीर्य व अनन्त ज्ञानमें रमण कर रहे हैं** (सुयं स्कंध

धुव रमन सुयं) **वे स्वयं बहुप्रदेशी हैं, वे सदा स्वयं रमण करते रहते हैं** (जोयन जो जोति दिप्ति सुइ रमनं) **वे ज्ञान ज्योति स्वरूप अपनी ज्ञानमई ज्योतिमें रमण कर रहे हैं** (पंचवीस विन्यान मयं) **उनके द्वारा जो ज्ञान प्रगट होता है वह ग्यारह अंग और १४ पूर्वमें गणधर द्वारा रचित ज्ञान है। इन २५ भेदोंसे जो ज्ञान होता है उनसे आप पहचाने जाते हैं** (मवियन परमेस्टि इस्टि सुइ सिद्धि जयं) **हे भव्यजीवो! इष्ट अरहन्त परमेष्ठी सिद्धिको जीत लेते हैं। यह सर्व धान्य फल आमका अतिशय है ॥ २९ ॥**

(नन्द आनन्द सुइ नन्द पर्म जिनु) **परमात्मा जिन आनन्दमें मगन स्वयं आनन्द स्वरूप है। यही जन मन हर्ष नामका अतिशय है** (चेयनन्द सहजानन्द सुयं) **वे स्वयं ही चिदानन्दरूप हैं, वे ही सहजानन्दरूप हैं** (पर्म नन्द सुइ नन्द जिनय जिनु) **वे ही जिन परमानन्दमई हैं। वही आनन्दमय वीतराग जिन हैं** (जिन जिनयति सुइ मैं जै सिद्धि जयं) **वे जिनेन्द्र कर्मोंको विजय करनेवाले सिद्धभावको जीत लेते हैं** (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) **हे भव्यजीवो! शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए वे सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ३० ॥**

(धुव लंकृत धुव रमन जिनय जिन) **वे जिनेन्द्र अविनाशी गुणोंसे शोभायमान अपने ध्रुव स्वभावमें रमण करते हैं** (धूलि कंट तं सुयं विलयं) **उनके कर्मकी धूल व कषायके कांटे सब विला गए हैं, यह धूल कंटक रहित भूमिकी अतिशय है** (नन्तानन्त सु दिप्ति रमन जिनु) **वे जिनेन्द्र अनन्तज्ञानमें रमण कर रहे हैं** (तिन अइव सुयं आवर्न विलं) **उनके तुर्त ही तीनों आवरण विला गए हैं, धूलके समान आवरण करनेवाले ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्म हैं** (भवियन जिन सिद्ध रमन सुइ सिद्धि जयं) **हे भव्यजीवो! श्री जिनेन्द्र भगवान ज्ञानमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ३१ ॥**

(गन्ध अगन्ध तं नन्त गगन रं) **श्री अरहंतका ज्ञान आकाशके समान अनन्त शक्तिधारी है उसमें स्थूल व सूक्ष्म सर्व ज्ञेय झलक रहे हैं** (गन्ध रूव तं सुयं विलं) **उनके आत्मामें न कोई गन्ध है न कोई वर्ण है। वह सुगन्ध पवनका अतिशय है** (सुयं स्कंध सुयं धुव रमनं) **वे स्वयं काय रूप बहुप्रदेशी आत्मा है। वे स्वयं ध्रुवरूपसे आपमें रमण कर लेते हैं** (दिप्ति दिष्टि सुइ सिद्धि जयं) **वे अनन्त ज्ञान व दर्शनधारी प्रभु सिद्धगतिको जीत लेते हैं** (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) **हे भव्यजीवो! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धभावको जीत लेते हैं ॥ ३२ ॥**

(पदम प्रभु पद पर्म परम जिनु) कमल समान श्री अरहन्तका पद वीतराग परमात्माका पद है (पद पर्म विंद विन्यान समं) वह परम पद ज्ञानमई समताभावरूप है (भय सल्य संक सक गग विलय जिनु) सर्व भय, शल्य व शङ्काएँ आदि श्री जिनेन्द्रके विला गई हैं (उत्पन परम पद मुक्ति जयं) इस परमपदको प्रकाश करके प्रभु मुक्तिको विजय कर लेते हैं। यहां कमलोंपर गमन अतिशयका संकेत है अर्थात् कमल समान आत्माके ऊपर ही उनका गमन है आचरण है (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जाते हैं ॥ ३३ ॥

(अवयास तं नन्त जिनय जिन ठवनं) श्री जिनेन्द्रके भीतर अनन्त आकाशके समान अनन्तज्ञान प्रगट है (ममल रमन तं सुइ रमनं) वह शुद्ध भावमें रमण कर रहा है, वह स्वयं स्वात्मलीनता रूप है (निसंक रूवं तं अमिय रमन जिनु) वे जिनेन्द्र शङ्का रहित हैं, आनन्दामृतमें रमण करते हैं (अवयास ममल सुइ सिद्धि जय) निर्मल आकाशके समान निर्मल ज्ञानधारी अरहंत सिद्धपदको विजय कर लेते हैं (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हैं, सिद्धिको जीत लेते हैं ॥ ३४ ॥

(अंग दिगन्त सु नन्त ममल जिन) श्री जिनेन्द्र परम शुद्ध हैं, उनकी शुद्धताका यश चारों दिशाओंमें व्याप्त है, यही मानो निर्मल यशरूप जलकी वर्षाका अतिशय है (नन्तानन्त सु धुव ममलं) श्री जिनेन्द्र अनन्त शक्तिधारी ध्रुव हैं व शुद्ध हैं (भय षिपनिकु तं अमिय रमन जिन) वे जिनेन्द्र भय रहित हैं, वे आनन्दामृतमें रमण करनेवाले हैं (तं विंद रमन सुइ सिद्धि जयं) वे ज्ञानके रमणकर्ता सिद्धभावको जीत लेते हैं (भवियन ध्रम्म रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे धर्ममें रमण करते हुए सिद्ध गतिको जीत लेते हैं ॥ ३५ ॥

(देव दिस्टि उव उवन जु दाता) श्री अरहन्त भगवान परम दिव्य ज्ञान दर्शनकी दृष्टिको रखनेवाले ज्ञानके दाता देव प्रगट हैं (अन्यासह संसय सहियं) अन्य देवकी वाणीका संसर्ग संशय पैदा करता है, सर्वज्ञ वीतराग देवका वचन सत्य है (पर्म न्यान तं परम रमन जिनु) परम ज्ञानधारी परमात्मा अपने उत्तम वीतराग भावमें रमण कर रहे हैं (पर्म अनन्त सु पर्म रयं) वे उत्कृष्ट हैं, अनन्त गुणधारी हैं, वह उत्कृष्ट स्वभावमें रत हैं (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धभावको जीत लेते हैं। यहां देवकृत मंगल द्रव्यका अतिशय है ॥ ३६ ॥

(धम्मं धरयति अर्थ रमन जिनु) धर्मचक्रका अतिशय यह है कि धर्म उसे कहते हैं जो धारण करे, यह

रत्नत्रयमई ज्ञान है जिसमें वीतराग जिन रमण कर रहे हैं (अर्थ तिअर्थ सु रमन सुयं) व्यवहारसे तीन रत्न हैं, निश्चयसे वह एक पद उत्तम पद है, उसीमें वे स्वयं रमणशील हैं, (उव उवन हियार सहाय सहज जिनु) हितकारी व सहायक सहज जिन भगवानका प्रकाश होता है (भम्म रमल रै सिद्धि जयं) इस निर्मल रत्नत्रय धर्ममें लीनता हीसे सिद्धपदका विजय होता है (भवियन विंद कमल रस सिद्धि सुयं, भय षिपिय भव्वु तं मुक्ति पयं) हे भव्यजीवो! वे ज्ञानमई कमलके रसको भोगनेवाले स्वयं सिद्ध स्वरूप है। जो भव्यजीव सर्व भय छोड़ देते हैं, वे मुक्तिका पद पालेते हैं ॥ ३७ ॥

(अयमय जयवंत सुयं सुइ उवनं) जय जय शब्द यह एक अतिशय है। श्री जिनेन्द्रने स्वयं कर्मोंको विजय करके जिन पदको प्रगट किया है (जै जै जै सुइ सिद्धि जयं) श्री अरहंतकी जय जय होती है, वे सिद्धि भावको पालेते हैं (दिपि दिप्ति सब्द दिवान समय मयं) अनन्त दर्शन व ज्ञानके धारी जहाज शब्दसे जानने योग्य आत्मस्वरूप जहाज (अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) आनन्दमई रहकर भवसे तरता हुआ सिद्धभावको जीत लेता है (भवियन सिद्ध समय अन्मोय सु मुक्ति पयं) हे भव्यजीवो! वे ही आत्मा आनन्दमई होकर मुक्ति-पदको पालेते हैं ॥ ३८ ॥

भावार्थ—यहां श्री तारणस्वामीने बड़ी विद्वत्तासे श्री अरहंत परमात्माकी, आत्मामें चौतीस अतिशयको घटाकर, स्तुति की है उसका संक्षेप यह है—

जन्मके दश अतिशय।

(१) खेदका अभाव—अरहंत परमात्मा निराकुल ज्ञानानंदमें मगन हैं, कभी खेद नहीं होता है।

(२) मलका अभाव—अरहंत परमात्मामें कोई इच्छा या राग या विषयभोगका मल नहीं है।

(३) मिष्ठ वचन—अरहंत परमात्मा रत्नत्रयमई धर्मको मिष्ठ समझकर उसीका स्वाद भोग रमण करते हैं।

(४) दूध समान रुधिर—अरहंत परमात्मा दूधके समान शुद्ध आनन्दका ही पान करते हैं।

(५) वज्रवृषभनाराच संहनन—श्री अरहंत परमात्मामें केवलज्ञान वज्रके समान दृढ़ है।

(६) समचतुरस्र संस्थान—श्री अरहन्तका ज्ञानाकार असंख्यातप्रदेशी आकार सदा एकसा बना रहता है, वे उसीमें लीन रहते हैं।

(७) सुन्दर रूप—श्री अरहंतकी आत्मा शुभ अशुभ भावोंसे रहित शुद्धोपयोगका धारी है।

(८) सुगन्धता—श्री अरहंतके असंख्यात प्रदेशोंमें ज्ञानानन्दकी गन्ध सदा रहती है।

(९) आठ लक्षण—श्री अरहंत परमात्मा अपने क्षायिक गुणोंसे लक्षित हैं।

(१०) अतुल बल—वे अनन्त वीर्य सहित अनन्त ज्ञानके धारी हैं, श्रेष्ठबली हैं।

केवलज्ञानके दश अतिशय।

(१) जीववध नहीं—श्री अरहंत परमात्मा सहज ज्ञान व आनन्दमें रमण कर रहे हैं, उनसे न उनके आत्माको बाधा है न दूसरोंको बाधा है।

(२) सुभिक्ष चहुंओर—अरहन्तमें सदा ही सुभिक्ष है, वे अतीन्द्रिय ज्ञान व आनंदमें मगन हैं।

(३) उपसर्गका अभाव—अरहंतकी आत्मा परम निर्भय है, उसे कोई कष्ट नहीं होसक्ता है।

(४) आकाशमें गमन—अरहंत भगवान आकाशसे भी महान अनंतज्ञानमें परिणमन करते रहते हैं।

(५) कवलाहार नहीं—अरहन्तके न जिह्वा इंद्रियका भोग है न क्षुधाकी बाधा है, उनकी आत्मा सदा ज्ञानका ही आहार करती है, ज्ञान चेतनामय है।

(६) चार मुख सहित पना—अरहंत भगवानकी आत्मामें अनंतज्ञानादि चार चतुष्टय प्रगट हैं, वे ही चार मुख हैं।

(७) ईश्वरपना—अरहंत भगवान स्वतंत्रतासे रत्नत्रय स्वभावके स्वामी हैं।

(८) छायारहितपना—अरहन्त भगवानके केवलज्ञानादि गुणोंकी छाया नहीं पड़ती है, उनमें विषयभोगकी छाया नहीं पड़ती है।

(९) पलक न लगना—वे सदा केवलज्ञान नेत्रसे देखते रहते हैं। उनका आवरण नाश होगया है।

(१०) नख केश बढ़ते नहीं—अरहन्तके नख केश वृद्धिकारक कर्म गल गया है, वे ज्ञानानन्दमें सदा रमण करते हैं।

देवकृत चौदह अतिशय।

(१) अर्धमागधी भाषा—अरहन्त भगवानमें कोई मन सम्बन्धी पीड़ा नहीं है। उनकी सब शङ्काएँ मिट गई हैं। अर्धमागधी भाषाकी जरूरत नहीं है। आधिमोष शब्द लेकर पीड़ारहितपना सिद्ध किया है।

(२) वैर रहित पना—अरहंत भगवान रागद्वेषसे रहित परम वीतराग हैं।

(३) फलफूल होना—अरहंतमें केवलज्ञानका उदय पुष्प है, सिद्धभाव फल है।

(४) पृथ्वी दर्पणसम—अरहंतकी आत्मा आदर्श है, जिसमें सर्वज्ञेय झलकते हैं।

(५) सर्व धान्य फलना—अरहंतका ज्ञान ही द्वादशांग रचनारूप होकर उपकार करता है, वे केवलज्ञानमें लीन हैं।

(६) जनमन हर्ष—श्री अरहंत भगवान सदा ही आनन्दमें मगन हैं।

(७) धूलकंटक रहित भूमि—अरहंतके ज्ञानावरणादि कर्मकी धूल व कषायके कांटे नहीं है।

(८) सुगंधपना—अरहंत आत्माकी गंध वर्णसे रहित हो, ज्ञानदर्शनसे पूर्ण सदा सुगंधित है।

(९) कमलोंपर गमन—अरहन्त कमल समान आत्मामें ही गमन या परिणमन करते हैं।

(१०) निर्मल आकाश—अरहन्त भगवान आकाशके समान निर्मल ज्ञानके धारी हैं।

(११) जलकी वर्षा—अरहन्त भगवानकी शुद्धताका निर्मल यश जगव्यापी है।

(१२) मंगल द्रव्य—अरहन्त भगवान मंगल स्वभाव ज्ञान दर्शन व आनन्दमें मगन हैं।

(१३) धर्मचक्र—अरहन्त भगवान शुद्ध रत्नत्रयमई धर्मपर सदा आरूढ़ हैं।

(१४) जै जै शब्द—अरहन्तकी विजयका डँका बज रहा है, वे कर्मोंको जीतकर सिद्ध होजाते हैं।

इसतरह चौतीस अतिशय दिगम्बर जैन शास्त्रोंके अनुसार बड़ी विद्वत्तासे अरहन्तकी आत्मामें सिद्ध किये गये हैं। आप्तस्वरूप ग्रन्थमें कहा है—

नष्टं छद्मस्थविज्ञानं नष्टं केशादिवर्धनम्। नष्टं देहमलं कृत्स्नं नष्टे घातिचतुष्टये ॥ ८ ॥

नष्टं मर्यादविज्ञानं नष्टं मानसगोचरम्। नष्टं कर्ममलं दुष्टं नष्टो वर्णात्मको ध्वनिः ॥ ९ ॥

नष्टाः क्षुत्तृड्भयस्वेदा नष्टं प्रत्येकबोधनम् । नष्टं भूमिगतस्पर्शी नष्टं चेन्द्रियजं सुखम् ॥ १० ॥

सर्वज्ञः सर्वदृक् सार्वो निर्मलो निष्कलोऽव्ययः । वीतरागः परान्ध्येयो योगिनां योगगोचरः ॥ ५१ ॥

भावार्थ—**अरहन्त भगवानके अल्पज्ञान नहीं है, केश–नखादिका वर्धन नहीं है, देहमल नहीं है। क्योंकि घातीय कर्मोंका नाश होगया है, सांत ज्ञान नहीं है, मन सम्बन्धी ज्ञान नहीं है, सर्व दुष्ट कर्म-मल नाश होगया है, साक्षर ध्वनि नहीं है, न क्षुधा है, न तृषा है, न भय है, न पसीना है, न प्रत्येकको समझानेका विकल्प है, न भूमिका स्पर्श है, न इंद्रियजन्य सुख है, न सर्वज्ञ सर्वदर्शी, सर्व हितैषी, निर्मल, शरीर रहित, अविनाशी, वीतराग, परम ध्येय तथा योगियोंके ध्यानगोचर हैं।**

(९४) अष्ट प्रातिहार्य गाथा १९१९ से १९२६ तक।

अयं सु भाव जिनय जिन उवनं, उवन हियार सह रमन जिनु।
पर्जय तं विलय असोय सुयं जिनु, भय विलय नन्त सुइ सिद्धि जयं॥
भवियन दिस्टि सब्द भय विलय सुयं ॥ १ ॥

उव उवन पयं जिननाथ सुयं, जिन जिनयति नन्तानन्त रयं।
पर्जय भय गलिय ममल पय मिलियं, भय षिपिय अमिय रस पर्म पयं॥
भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं ॥ (आचरी) ॥ २ ॥

सुयं रमन उत्पन्न दिष्टि जिनु, उव उवन दिप्ति उव उवन रयं।
कम्मठ गंठि भय सल्य विलय जिनु, निसंक सिद्ध दिपि मुक्ति जयं॥
भवियन ममल रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव उवन० ॥ ३ ॥

दिपि दिपि दिपि आयरन दिष्टि जिनु, धुव ममल रमन निय नृति सुयं ।
दिव्यधुनि नन्त नन्त जिन रमनं, भय विलय सिद्ध सुइ सिद्धि रयं ॥
भवियन उवसम षियं रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ४ ॥

चौसठि चमर आयरन चरन जिनु, गुप्ति गण्ठ भय विलय सुयं ।
तं गुप्ति न्यान अन्मोय चरन जिनु, तं विंद रमन सुइ सिद्धि जयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ५ ॥

भय सल्य विलय पर्जय रय विलयं, उववन न्यान हिय उवन पयं ।
सहयार समय भय विलय जिनय जिनु, भामण्डल रमन सु सिद्धि जयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ६ ॥

आसन सिंहासन रमण पर्म जिनु, न्यान अन्मोय सु गुप्ति रयं ।
गुरु गुपित विन्यान सु ममल रमन जिनु, भय षिपिय रमन जिनु सिद्धि जयं ॥
भवियन अमिय रमन विष गलउ, जिनय जिनु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ७ ॥

षट् कमल रमन तिअर्थ गमन जिनु, क्रांति वयन मन रमन पयं ।
छत्र त्रय उवन उवन हिययारह, सहयार उवन सुइ छत्र त्रयं ॥
भवियन तं सेत नील आरक्त छत्र जिनु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ८ ॥

दिप्ति दिष्टि आयरन दिष्टि जिनु, उत्पन्न दिप्ति तं देव धुनी ।
धुव उवन ममल तं ममल रमन जिनु, भय गंठि विलय तं पर्म पयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ९ ॥

प्रतिहार रमन तं नन्त परम जिनु, तं परम तत्तु तिअर्थ रमं।
माना प्रमान तं मान रमन जिनु, जन राग मान गलि जिनु रमनं॥
भवियन तं अमिय रमन विष विलय जिनय जिन सिद्धि जयं॥ उव०॥ १०॥
दुन्दुभि उत्पन्न दुन्दुहि सब्द रमन जिनु दिप्ति सब्द तं नन्त पयं।
अयइच्छ रमन आयरन रमन जिनु, नृतंति नृत आनन्द मयं।
भवियन उवसम खिम रमन सु सिद्धि जयं॥ उव०॥ ११॥
नन्द आनन्द नन्द जिन रमनं, दुं दुं सब्द सोइ जिनय जिनं।
विवान दिप्ति सोइ सब्द समय सिहु, अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं॥
भवियन नन्त विंद अमिय रस सिद्धि जयं॥ उव०॥ १२॥

अन्वय सहित अर्थ—(भयं सुभाव जिनय जिन उवनं) यह स्वभाव श्री वीतराग जिनेन्द्रका प्रगट होगया है (उवन हियार सह रमन जिनु) वे हितकारी ज्ञानमें रमण कर रहे हैं (पर्जय तं विलय अन्मोय सुयं जिनु) संसार परिणति सब विला गई है, वे वीतराग भगवान स्वयं अशोक हैं, शोक रहित हैं। यही अशोक नामका प्रातिहार्य है (भय विलय नंत सुइ सिद्धि जयं) उनके अनन्त भय क्षय होगया है। वे सिद्ध गतिको जीत लेते हैं (भविधन दिष्टि सब्द भय विलय सुयं) हे भव्यजीवो! सम्यग्दृष्टि शब्द ही बताता है कि उनका सर्व भय क्षय होगया है, वे परम सम्यग्दृष्टी हैं॥ १॥

(उव उवन पयं जिननाथ सुयं) श्री जिनेन्द्रका अरहंतपद स्वयं प्रकाशित हुआ है। वह प्रगट नहीं था सो प्रगट होगया है (जिन जिनयति नंतानंत रयं) श्री जिनेन्द्रने अनन्तानन्त कर्मरूपी रजको दूर कर दिया है (पर्जय भय गलिय ममल पय मिलियं) संसार सम्बन्धी सर्व भय गल गया है। शुद्ध पदको उन्होंने प्राप्त कर लिया है (भय विपिय अमिय रस पर्म पयं) भयोंके दूर होजानेसे आनन्द रससे पूर्ण परम पदको उन्होंने पालिया है (भविधन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो! जो आनन्दमई अरहन्त जहाजके समान हैं, वे सिद्ध-गतिको जीत लेते हैं॥ २॥

(सुयं रमन उत्पन्न दिष्टि जिनु) श्री जिनेन्द्रके भीतर स्वयं आत्माको आत्मामें रमण करानेवाली क्षायिक सम्यग्दर्शनकी दृष्टि पैदा होगई है (उव उवन दिप्ति उव उवन रमं) उस प्रगट ज्ञान दृष्टिमें वे स्वयं प्रगट रूपसे रमण कर रहे हैं (कम्मठ गंठि भय सल्य विलय जिनु) श्री जिनेन्द्रके कर्मोंकी गांठ सर्व भय व सर्व शल्यें विला गई हैं (निसंक सब्द दिठि मुक्ति जयं) निःशङ्क शब्दसे प्रगट परम गाढ़ सम्यक्तको लिये हुए वे मुक्तिको जीत लेते हैं (भवियन ममल रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! जो शुद्ध भावमें रमण करता है वही सिद्ध भावको जीत लेता है ॥ ३ ॥

(दिपि दिप्ति दिष्टि आयरन दिष्टि जिनु) श्री जिनेन्द्रमें अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, क्षायिक चारित्र, क्षायिक सम्यग्दर्शनका प्रकाश है (धुव ममल रमन निय नृपि सुयं) वे ध्रुव व शुद्ध निज आत्मामें रमण करते हैं, वे स्वयं सत्यरूप हैं (दिव्य धुनि नंत नंत जिन रमन) दिव्यध्वनि प्रातिहार्य बताता है कि वे अनन्तानन्त वीतराग स्वभावमें रमण कर रहे हैं (भय विलय सिद्धि सुइ सिद्धि रम) वे निर्भय हैं, साध्यको सिद्धकर चुके हैं, वे सिद्धभावमें रम रहे हैं (भवियन उवसम षिम रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे अरहन्त शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ४ ॥

(चौषठ चमर आयरन चरन जिनु) चौसठ चमर प्रातिहार्य यह है कि वे चौसठ प्रकार चारित्रमें रमण कर रहे हैं। अरहन्तमें ३४ अतिशय + ८ प्रातिहार्य + ४ अनन्त चतुष्टय + १८ दोष रहितपना=६४ ऐसे चौसठ गुण हैं (गुप्ति गण्ठ भय विलय सुयं) उनकी गुप्त कर्मकी गांठ व सर्व भय स्वयं विला गया है (तं गुप्त न्यान अन्मोय चरन जिनु) वे वीतराग भगवान भीतरी आत्मीक ज्ञान व आनन्दमें आचरण कर रहे हैं (तं विंद रमन सुइ सिद्धि जयं) वे ज्ञानमें रमण करते हुए स्वयं सिद्धभावको जीत लेते हैं (भवियन उवसम षिम रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धभावमें रमण कर रहे हैं ॥ ५ ॥

(भय सल्य विलय पर्जय रय विलयं) श्री अरहन्त परमात्मामें कोई भय या शल्य नहीं है व सांसारीक अवस्थामें कोई रति है (उववन न्यान हिय उवन रय) उनमें केवलज्ञानका उदय हितकारी पद है (महयार समय भय विलय जिनय जिनु) आत्मानुभवकी सहायतासे वीतराग प्रभुका सब भय चला गया है (भामण्डल रयन सु सिद्धि जयं) वे रत्नत्रय धर्ममई भामण्डलको या आत्मीक प्रकाशको झलकाते हुए सिद्धगतिको जीत लेते

हैं (भवियन उवमम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्ध भावको विजय कर लेते हैं ॥ ६ ॥

(आसन सिंहासन रमण परम जिन) वे अरहन्त आत्मीक आसनरूपी सिंहासन पर विराजित होकर स्वभावमें रमण करनेवाले परमात्मा जिन हैं (न्यान अन्मोय सु गुप्ति ययं) ज्ञानानन्दमई परम गुप्त आत्मामें रमण कर रहे हैं (गुरु गुपित विन्यान सु ममल परम जिनु) जो आत्मज्ञान परम गुरु महात्माओंको उनके भीतर अनुभवमें आता है, उस शुद्ध ज्ञानके धारी शुद्ध परमात्मा जिन हैं (भय षिपिय रमन जिनु सिद्धि जयं) वे जिनेन्द्र निर्भय भावमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं (भवियन अमिय रमन विष गलउ जिनय जिनु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे वीतराग जिन विषयोंके विषसे रहित होकर आत्मानन्दमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ७ ॥

(षट् कमक रमन निमर्थ गमन जिनु) कमल समान प्रफुल्लित अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य, क्षायिक सम्यक्त व क्षायिक चारित्र इन छः भावोंमें रमण करनेवाले जिनेन्द्र रत्नत्रय स्वभावमें परिणमन कर रहे हैं (कांति वयन मन रमन ययं) जिसपदमें मन वचन काय तीनों लीन हैं (छत्र त्रय उवन उवन हिययारह) हितकारी तीन छत्र प्रभुके प्रकाशित हैं, तीन रत्न सम्यग्दर्शन, ज्ञान चारित्र तीन छत्र हैं (सहयार उवन मुइ छत्र त्रयं) इस रत्नत्रयमई छत्रकी सहायतासे ही शुद्ध रत्नत्रयमई तीन छत्रका प्रकाश हुआ है (भवियन तं सेत नील आरक्त छत्र जिनु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! सफेद नीलम व लाल रत्नोंसे जड़ित यह छत्र हैं, उनहीके द्वारा जिनेन्द्रने सिद्धगतिको जीत लिया है। यहां सम्यग्दर्शनकी उपमा सफेद रत्नसे दी है। सम्यग्ज्ञानकी उपमा नीलम रत्नसे व सम्यक्चारित्रकी उपमा लाल रत्नसे दी है। जैसे–हीरा, नीलम, माणिक एक साथ शोभते हैं वैसे ये रत्नत्रय एक साथ शोभते हैं, अलग२ इनकी शोभा नहीं है। सम्यग्दर्शन शुद्ध भाव आत्माका है, उसके साथ नीलम स्वरूप ज्ञानकी व लाल माणिक समान चारित्रकी शोभा है ॥ ८ ॥

(दिप्ति दिष्टि आयरन दिष्टि जिनु) श्री जिनेन्द्र अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन व क्षायिक सम्यग्दर्शनधारी हैं (उत्पन्न दिप्ति तं देव धुनी) उस केवलज्ञानके प्रतापसे उनकी दिव्यध्वनि सत्य पदार्थोंको दिखलानेवाली प्रगट होती है (धुव उवन ममल तं ममल रमन जिनु) वे जिनेन्द्र ध्रुव व शुद्ध प्रकाशको धरते हुए शुद्ध भावमें

ही रमण कर रहे हैं (भय गंठि विलय तं पर्म पयं) उनके भयकी गांठ सब विला गई है, वे परम पदधारी हैं (भवियन उवसम विम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! श्री जिनेन्द्र शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धिको जीत लेते हैं ॥ ९ ॥

(प्रतिहार रमन तं नन्त परम जिनु) श्री जिनेन्द्र अनन्त गुणोंमें रमण कर रहे हैं, वही परमात्माका पुष्पवृष्टि नामका प्रातिहार्य है (तं परम तत्तु तिअर्थ रमं) वे परम आत्मतत्वमें व रत्नत्रयमई धर्ममें रमण कर रहे हैं (माना प्रमान तं मान रमन जिनु) वे जिनेन्द्र उस ज्ञानमें रमण कर रहे हैं जिसका मान प्रमाण रहित है, जो अनन्त है (जन राग मान गलि जिन रमनं) श्री जिनेन्द्रके भीतर न जनसमुदायका राग है न कोई अहङ्कार है, वे वीतराग भावमें रमण करते हैं (भवियन तं अमिय रमन विभ विलय जिनय जिन सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे वीतराग जिन इंद्रियविषयोंसे रहित होकर आत्मानन्दमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥१०॥

(दुन्दुभि उत्पन्न दुन्दुहि सब्द रमन जिनु) नगारेकी ध्वनिके समान शब्दको प्रगट करनेवाली दुन्दुभि बाजोंके समान भगवानकी दिव्यध्वनि है, उस वाणीका सार जो आत्मीक भाव उसमें श्री जिनेन्द्र रमण कर रहे हैं, यह दुन्दुभि शब्दका प्रातिहार्य है (दिप्ति सब्द तं नन्त पयं) दिप्ति शब्दसे प्रगट है कि वे अनन्तज्ञानके धारी हैं (भयइच्छ रमन आचरन रमन जिनु) वे जिनेन्द्र इच्छा रहित वीतराग चारित्रमें रमण कर रहे हैं (नृतं ति नृत आनन्द मयं) वे परम सत्य स्वरूपी हैं व आनन्दमई हैं (भवियन उवसम विम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्ध गतिको जीत लेते हैं ॥ ११ ॥

(नन्द आनन्द नन्द जिन रमनं) वे जिनेन्द्र आनन्द मगन होकर आनन्दमें रमण कर रहे हैं (दुं दु सब्द सुइ जिनय जिनं) दुंदुंभिका शब्द प्रगट करता है कि भगवान वीतराग जिन हैं (विवान दिप्ति सोइ सब्द समय सिदु) श्री अरहंत जहाजके समान हैं, ज्ञानस्वरूप हैं, समय शब्दसे जाननेयोग्य वे ही परमात्मा हैं (अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) वे ही आनन्दमई जहाज समान अरहंत सिद्ध गतिको जीत लेते हैं (भवियन तं विंद अमिय रस सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे आनन्दामृतको अनुभव करते हुए सिद्ध गतिको जीत लेते हैं ॥ १२ ॥

भावार्थ—यहां अध्यात्मदृष्टिसे श्री अरहंत परमात्मामें आठ प्रातिहार्य बताए हैं—

(१) अशोकवृक्ष—श्री अरहन्त परमात्मा शोक व भय रहित हैं, इसलिये परम अशोक हैं।

(२) दिव्यध्वनि—अनन्त शक्तिधारी वीतराग स्वभावमें श्री अरहन्त रमण कर रहे हैं, यही उनकी दिव्यध्वनिका प्रकाश है।

(३) चौसठ चमर—१८ दोषरहित ४६ गुण सहित श्री अरहन्त शोभायमान हैं।

(४) भामण्डल—श्री अरहन्त भगवानकी आत्मामें रत्नत्रय धर्मका मण्डल प्रकाशित है।

(५) सिंहासन—वे प्रभु परमात्मा आत्मीक आसनपर ही स्थिर विराजित हैं।

(६) छत्रत्रय—वे अरहन्त भगवान रत्नत्रयमई छत्रसे शोभायमान हैं।

(७) पुष्पवृष्टि—प्रभुमें अनन्त गुण चमक रहे हैं, यही पुष्पवृष्टि हैं।

(८) दुन्दुभि शब्द—आनन्द गुणका प्रकाश होना सो ही दुन्दुभि शब्दका नाद है।

आत्मस्वरूप ग्रंथमें कहा है—

रत्नसिंहासनाध्यासी नैकचामरवीजितः। महामतिर्महातेजोऽकर्मा जन्मदवान्तकः ॥ ५१ ॥

अच्युतः सुगतो ब्रह्मा लोकान्तो लोकभूषणः। देवदुन्दुभिनिर्घोषः सर्वज्ञः सर्वलोचनः ॥ ५२ ॥

अच्छेद्योऽनवमेयश्च सूक्ष्मो नित्यो निरञ्जनः। अजरो ह्यमरश्चैव शुद्धसिद्धो निरामयः ॥ ५३ ॥

भावार्थ—श्री अरहंत भगवान रत्नमई सिंहासनपर विराजित हैं। अनेक चामरोंसे शोभित हैं, महाज्ञानी हैं, महा तेजस्वी हैं, कर्मरहित हैं, संसारकी ज्वालाको शांत करनेवाले हैं, स्वरूपसे अविनाशी हैं, शुद्ध ज्ञानी हैं, धर्मोपदेशकर्ता ब्रह्मा हैं, असंख्यात प्रदेशी हैं, लोकके भूषण हैं, देव दुंदुभि नाद जिनके वहां होता है, जो सर्वज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं जिनकी आत्माका छेदन भेदन नहीं होसक्ता, जो इन्द्रियोंसे अगोचर सूक्ष्म हैं, नित्य हैं, कर्ममल रहित निरंजन हैं, जरा व मरणसे रहित हैं, शुद्ध हैं, सिद्ध हैं, रोग रहित हैं।

(९५) अरहंत सर्वज्ञ फूलना गाथा १९२७ से १९४२ तक।

उव उवन न्यान विन्यान रमन जिनु, रमन विंद उव उवन समं।
उव उवन लोक लोक सुइ उवनं, अन्मोय न्यान अनन्त धुवं ॥
भवियन तं नन्त न्यान सोइ मुक्ति जयं ॥ १ ॥

उव उवन पयं जिननाथ सुयं, जिन जिनयति नन्तानन्त रयं।
पर्जय भय गलिय ममल पय मिलियं, भय षिपिय अमिय रम पर्म पयं ॥
भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं ॥ (आचरी) ॥ २ ॥

दिपि दिप्ति दिप्ति आयरन दर्स जिनु, तं दिप्ति अनन्तानन्त सुयं।
तं दर्स नन्त जिनु मंक विलय पुनु, तं नन्त दर्स जिन रमन पयं ॥
भवियन तं दर्स नन्त जिन सिद्धि जयं ॥ उव उवन० ॥ ३ ॥

विन्यान वीर्य तं नन्त रमन जिनु, तं नन्तानन्त सु रमन पयं।
तं गुप्ति न्यान विन्यान रमन जिनु, भय विलय वीर्य तं मुक्ति पयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ४ ॥

तं नन्त सौख्य तं नन्त रमन जिनु, सुषिम परिनाम सुनन्त सुइ।
सूषिम सुइ षिपिय सु नन्त नन्त रे, नन्त सौख्य सुइ ममल पयं ॥
भवियन सुषिम सुइ रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ५ ॥

नन्त चतुष्टय सुयं रमन जिनु, गुन नन्त नन्त छायालरयं।
तं नन्तानन्त उवएम रमन जिनु, अन्मोय समय सिहु सिद्धि जयं ॥
भवियन अमिय रमन रम सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ६ ॥

इष्टं दर्संति इन्द्र रमन जिनु, इच्छ रमन आछर्य सुयं।
ऐरायति परम तत्तु आयरनं, आयरन अर्थति अर्थ सुयं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ७ ॥

सुइ समय समय सुइ समय रमन जिनु, न्यान समय सुइ समय पयं ।
गुरु लघु दृष्टि विलय सम रमनं, सम समय दिष्टि जिननाथ सुयं ॥
भवियन भय षिपिय रमन सुइ सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ८ ॥

सम समय संजुत्तु स्रेनि रमन जिनु, अन्मोय समय सुइ न्यान पयं ।
सुइ तारन तरन विवान समय सुइ, अन्मोय तरन सम सिद्धि जयं ॥
भवियन भय षिपिय अमिय रस मुक्ति जयं ॥ उव० ॥ ९ ॥

अर्क अर्क सुइ अर्क रमन जिनु, अर्क भाव सोइ अर्क धुवं ।
अर्कविंद विन्यान अर्क जिनय जिनु, अर्क अन्मोय सु पर्म पयं ॥
भवियन ममल रमन सुइ मुक्ति जयं ॥ उव० ॥ १० ॥

विन्यान विंद उव उवन विंद रै, हिययार विंद उव हिय रमनं ।
सहयार विंद हिय उवन उवन पै, तं विन्द रमन सुइ उवन समं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ ११ ॥

आगंतु रमन रै रमन पर्म जिनु, हिययार रमन सोइ सह रमनं ।
सहयार रमन तं गुप्ति उवन पौ, हिय उववन सु सून्य समं ॥
भवियन उव उवन दिप्ति सोह सब्द रमं ॥ उव० ॥ १२ ॥

हिययार रमन रस अमिय रमन जिनु, उव उवन दिप्ति उव उवन जयं ।
उव उवन दिप्ति सहयार रमन जिनु, भय षिपिय रमन जिनु समय समं ॥
भवियन उवसम षिम रमन सो सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ १३ ॥

हुवयार रमन हुव उवन सब्द जिन, हुव दिप्ति उवन हिय हुव रमनं ।
हुव दिप्ति रमन हुव सप्त रमन जिनु, हुव उवन वियं सोइ मुक्ति जयं ॥
भवियन अमिय रमन विष विलय जिनय जिन सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ १४ ॥

अर्क विंद आगंतु रमन जिनु, हिय हुवयार रस रमन जिनं ।
उवन हियार सह सहै रमन जिनु, सहयार रमन उव हिय रमनं ॥
भवियन उवसम षिम रमण मो सिद्धि जयं ॥ उव० ॥ १५ ॥

अर्हंत सर्वन्य दिप्ति सुइ उवनं, दिष्टि दिप्ति रमन तं जिनय जिनु ।
तं तारन तरन सहाइ सहज जिनु, अन्मोय समय सिहु सिद्धि जयं ॥
भवियन विंद रमन सम मुक्ति पयं ॥ उव० ॥ १६ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन न्यान विन्यान रमन जिनु) **प्रकाशमान केवलज्ञानमें रमण करनेवाले वीतराग भगवानका उदय हुआ है** (रमन विंद उव उवन समं) **जो ज्ञानमें रमण करते हुए समभावको प्रगट कर** (उव उवन लोक लोक सुइ उवनं) **उस ज्ञानमें लोक व अलोकके पदार्थ सब झलक रहे हैं** (अन्मोय न्यान अनन्त धुवं) **वह आनन्दमई ज्ञान अनन्त है और ध्रुव अविनाशी है** (भवियन तं नन्त न्यान सोइ मुक्ति जयं) **हे भव्यजीवो ! वे अरहन्त अनन्तज्ञानके धारी होकर मुक्तिको गये हैं ॥ १ ॥**

(उव उवन पयं जिननाथ सुयं) **श्री जिनेन्द्रका पद स्वयं प्रकाशमान है** (जिन जिनयति नन्तानन्त रयं) **श्री जिनने अनन्तानन्त कर्म-रजको उड़ा डाला है** (पर्जय भय गलिय ममल पय मिलियं) **शरीर सम्बन्धी सर्व भय उनका गल गया है व शुद्ध परमात्मपद उन्होंने प्राप्त कर लिया है** (भय षिपिय अमिय रस पर्म पयं) **वे सर्व भयोंको क्षय करके आनन्दामृत श्रेष्ठ रसका सदा पान करते हैं** (भवियन अन्मोय तरन सुइ सिद्धि जयं) **वे आनन्दमई जहाजके समान अरहन्त सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ २ ॥**

(दिपि दिप्ति दिप्ति आयरन दर्स जिनु) **श्री जिनेन्द्रमें ज्ञान दर्शन व चारित्रकी दीप्तिका प्रकाश होरहा है** (तं दिप्ति अनन्तानन्त सुयं) **यह दीप्ति अनन्तानन्त शक्तिको स्वयं धरनेवाली है** (तं दर्स नन्त जिनु संक विलय

पुनु) अनन्त क्षायिक सम्यग्दर्शनके प्रतापसे वीतरागकी सर्व शङ्काएँ क्षय होगई हैं (तं नन्त दर्स जिन रमन पयं) वे जिनेन्द्र अनन्त क्षायिक सम्यग्दर्शनमें रमण कर रहे हैं (भवियन तं दर्स नन्त जिन सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! वे जिनेन्द्र अनन्त क्षायिक सम्यग्दर्शनसे सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ ३ ॥

(विन्यान वीर्य तं नन्त रमन जिनु) वे जिनेन्द्र अनन्त ज्ञानके साथ अनन्त वीर्यमें सदा रमण कर रहे हैं (तं नन्तानन्त सु रमन पयं) वे अनंत शक्तिधारी पदमें रमण कर रहे हैं (तं गुप्ति न्यान विन्य न रमन जिनु) वे जिनेंद्र स्वानुभव पूर्ण गुप्तज्ञानमें रमण कर रहे हैं (भय विलय वीर्य तं मुक्ति पय) सर्व भयोंको क्षय करके अनन्त वीर्यसे वे मुक्तिपदको पालेते हैं (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ ४ ॥

(तं नन्त सौख्य तं नन्त रमन जिनु) वे जिनेन्द्र अनन्त सुखमें अनन्त कालतक रमण करनेवाले हैं (सूषिम परिनाम सुनन्त सुइं , वह अनन्त सुख आत्माका सूक्ष्म अतीन्द्रिय सुख गुणका परिणमन है (सूषिम सुइ षिपिय सु नन्त नन्त रै) इस सूक्ष्म अतीन्द्रिय सुखके अनुभवसे ही अनन्तानन्त कर्मरूपी रजको प्रभुने क्षय कर दिया है (नन्त सौख्य सुइ ममल पयं) अनन्त सुखधारी परमात्माका पद शुद्ध व निर्मल है (भवियन सूषिम सुइ रमन सु सिद्धि जयं , हे भव्यजीवो ! वे इस सूक्ष्म सुखमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ५ ॥

(नन्त चतुष्टय सुयं रमन जिनु) वे वीतराग जिनेन्द्र इस तरह अनन्तज्ञानादि चार चतुष्टयमें स्वयं रमण कर रहे हैं (गुन नन्त नन्त छायालय) वे अनन्तानन्त गुणोंमें रमण कर रहे हैं। समुदायमें वे ४६ गुणोंमें रमण कर रहे हैं। ३४ अतिशय + ८ प्रातिहार्य + ४ चतुष्टय=४६ गुण होते हैं (तं नन्त नन्त उवएस रमन जिनु) वे प्रभु अनन्त तत्वोंको प्रकाश करनेवाली जिनवाणीके सारमें रमण कर रहे हैं (अन्मोय समय सिहु सिद्धि जयं) वे आनन्दमई आत्मा स्वयं सिद्धपदको विजय कर लेते हैं (भवियन अमिय रमन रस सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे आनन्दामृतमें रमण करते हुए सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ ६ ॥

(इष्टं दर्सति इन्द्र रमन जिनु) श्री जिनेन्द्र इन्द्र समान आत्मा हैं। वे अपने इष्ट आत्मानुभूति इन्द्राणीमें रमण कर रहे हैं (इच्छ रमन आछर्य सुयं) यह बड़ा आश्चर्य है कि इन्द्र तो सदा रमण नहीं करता है, अन्य तरफ उपयोग लगाता है। परन्तु अरहंत परमात्मा सदा काल उस इष्ट रसमें स्वयं रमण करते हैं (ऐरावति परम तत्तु आयरनं) परमात्म तत्त्वमें आरूढ़ रहना ही ऐरावत हाथीपर चढ़ना है (आयरन अर्थति अर्थ सुयं)

निश्चय रत्नत्रयमई पदार्थका अनुभव करना ही हाथीपर चढ़कर चलना है (भवियन उवमम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे अरहंत निश्चय धर्मपर आरूढ़ होते हुए, चारित्ररूपी हाथीपर चढ़कर शांत क्षमाभावके साथ सिद्ध भगवानके स्थानपर पहुँच जाते हैं।

(सुइ समय ममय सुइ समय रमन जिनु) वे जिनेन्द्र हर समय स्वयं आपसे ही अपने आपमें रमण करते हैं (न्यान ममय सुइ ममय पयं) ज्ञानमई आत्मा ही आत्माका निजपद है (गुरु लघु दृष्टि विलय मम रमनं) छोटी बड़ी रागद्वेषमई दृष्टि क्षय हो जानेसे वे वीतराग भावमई समताभावमें रमण कर रहे हैं (मम ममय दिष्टि जिननाथ सुयं) वे जिनेन्द्र स्वयं समताभावके साथ आत्माका दर्शन कर रहे हैं। उनमें रागद्वेष नहीं है (भवियन भय षिपिय रमन सुइ सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे सर्व भयोंको क्षय करते हुए व आपमें रमण करते हुए सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ ८ ॥

(मम समय संजुना सेनि रमन जिनु) समताभाव सहित चारित्रके साथ वे जिनेन्द्र क्षायिक श्रेणी या मार्गमें रमण कर रहे हैं (अन्मोय समय सुइ न्यान पयं) वे आनन्दमई आत्मा हैं, वे ही ज्ञानमई पद हैं (सुइ तारन तरन विवान समय सुइ) वे तारणतरण जहाज समान परमात्मा हैं (अन्मोय तरन सम सिद्धि जयं) वह जहाज समतामई है तथा आनन्दमई है, वही जहाज सिद्धपदको पहुँच जाता है ॥ [illegible] ॥

(अर्क अर्क सुइ अर्क रमन जिनु) वे जिनेन्द्र सूर्य समान प्रकाशित हैं व सूर्य समान ज्ञानके तेजमें रमण कर रहे हैं (अर्क भव सुइ अर्क धुवं) वहां सूर्यकासा वीतराग ज्योतिमई गुण है तथा वे ध्रुव अविनाशी सदा प्रकाशित सूर्य हैं (अर्क विंद विन्यान अर्क जिनु) वे ही ज्ञान चेतनामई सूर्य हैं, वे ही वीतराग भावधारी सूर्य हैं (अर्क अन्मोय सु पर्म पयं) वे ही परमात्म पदधारी आनन्दकारी सूर्य हैं (भवियन ममल रमन सुइ मुक्ति जयं) हे भव्यजीवो ! वे शुद्ध भावमें रमण करते हुए स्वयं मुक्तिको विजय कर लेते हैं ॥ १० ॥

(विन्यान विंद उव उवन विंद रे) वे अरहन्त ज्ञानका अनुभव करते हुए उसी ज्ञान प्रकाशमें लीन हैं (हिययार विंद उव हिय रमनं) वे हितकारी ज्ञानमें बड़ी एकाग्रतासे रमण कर रहे हैं (सहयार विंद हिय उवन उवन पय) इसी ज्ञानमें रमणकी सहायतासे ही परमात्मपदका झलकाव होता है (तं विंद रमन सुइ उवन समं) उस ज्ञानकी रमणतासे ही उनमें समताभाव प्रगट है (भवियन उवनम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! वे शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्ध गतिको जीत लेते हैं ॥ ११ ॥

(आगंतु रमन रै रमन धर्म जिनु) वे परमात्मा जिन आनेवाले सिद्धपदमें रमण करते हुए मगन हैं (हिययार रमन सोइ मह रमनं) उसीमें हितकारी पदमें रमण करना है सो ही उस सिद्धपदके साथ रमण है (सहयार रमन नं गुपि उवन पौ) उस सिद्ध परमात्मामें रमणकी सहायतासे भीतरी अध्यात्म पद प्रगट है (हिय उववन सु सून्य समं) इसी एकाग्रतासे हितकारी सर्व विकल्पोंसे शून्य समभावरूपी पद प्रगट होता है (भवियन उव उवन दिप्ति नेइ मष्द रमं) हे भव्यजीवो ! ज्ञानका प्रकाश होना ही मानो श्री जिनवाणीके तत्वमें रमण करना है ॥ १२ ॥

(हिययार रमन रस अमिय रमन जिनु) वे जिनेन्द्र हितकारी आनन्दरसकी मगनतामें रमण कर रहे हैं (उव उवन दिप्ति उव उवन जयं) इसीसे ज्ञानका प्रकाश होता है, इसीसे सिद्ध पदकी विजय होती है (उव उवन दिप्ति सहयार रमन जिनु) वे जिनेन्द्र प्रकाशमान ज्ञानकी सहायतासे ही आपमें रमण कर रहे हैं (भय षिपिय रमन जिनु समय समं) वे सर्व भयोंको क्षय करके आत्माके समभावमें रमण कर रहे हैं (भवियन उवसम षिम रमन सु सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! वे शान्तभाव व क्षमाभावमें रमण करते हुए सिद्धपदको जीत लेते हैं ॥ १३ ॥

(हुवयार रमन हुव उवन मष्द जिनु) वे जिनेन्द्र अपने उपकारमें रमण कर रहे हैं, इसीसे जिन शब्दकी सार्थकता प्रगट है, वे रागद्वेष विजयी हैं (हुव दिप्ति उवन हिय हुव रमनं) वे ज्ञानको प्रगट करके स्वात्महितमें ही रमण करते हैं (हुव दिप्ति रमन हुव मष्द रमन जिनु) वे ज्ञान प्रकाशमें रमण करते हुए जिन शब्दके भावमें रमण कर रहे हैं (हुव उवन वियं मोइ मुक्ति जयं) वे हितकारी आनन्द रसका पान करते हुए मुक्तिको जीत लेते हैं (भवियन अमिय रमन विष विलय जिनय जिन सिद्धि जयं) हे भव्यजीवो ! आनन्दामृतकी रमणतासे विषयोंके विषको दूर करते हुए वे वीतरागी जिन सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ १४ ॥

(अर्क विंद आगंतु रमन जिनु) वे जिन ज्ञान सूर्य आनेवाले सिद्धपदमें रमण कर रहे हैं (हिय हुवयार रम रमन जिनं) वे जिन हितरूप उपकारी आनन्द रसमें ही रमण कर रहे हैं (उवन हियार सह सहै रमन जिनु) वे जिनेन्द्र हितकारी सिद्धपदके साथ सहनशीलतासे रमण कर रहे हैं (सहयार रमन उव हिय रमनं) इस सहकारी पदमें रमण करना ही अपने हितमें रमण करना है (भवियन उवसम षिम रमन सो सिद्धि जयं) हे भव्य जीवो ! जो कोई शांतभाव व क्षमाभावमें रमण करते हैं, वे सिद्धगतिको जीत लेते हैं ॥ १५ ॥

(अर्हंत सर्वन्य दिप्ति सुइ उवनं) श्री अरहन्त भगवानके सर्वज्ञपनेकी दीप्ति स्वयं प्रगट है (दिष्टि दिप्ति रमन तं जिनय जिनु) वे कर्मविजयी जिन दर्शन ज्ञानमें रमण कर रहे हैं (तं तारन तरन सहाइ सहज जिनु) वे ही भव्यजीवोंको सहकारी तारणतरण स्वभावमें रमण करनेवाले जिनेन्द्र हैं (अन्मोय समय सिद्धि जयं) वे आनन्दमई आत्मा स्वयं सिद्धपदको जीत लेते हैं (भवियन विंद रमन सम मुक्ति जयं) हे भव्यजीवो ! वे ज्ञानमें व समभावमें रमण करते हुए मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ १३ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें श्री अरहन्त परमात्माके अन्तर गुणोंकी स्तुति निश्चयनयके आश्रयसे की गई है। यही निश्चय स्तुतिका प्रकार है। इसमें अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्य, अनन्तसुख, क्षायिक सम्यग्दर्शन, क्षायिक चारित्र या वीतराग भाव या समभावकी अच्छी महिमा गाई गई है। स्वात्मानुभव या शुद्धोपयोगकी छटा दिखाई गई है। श्री अरहन्तको कहा गया है कि वे स्वचारित्ररूपी ऐरावत हाथीपर चढ़े हुए इन्द्रके समान सिद्धलोकको जारहे हैं। परमात्माकी तरफ आनन्दसे बढ़ रहे हैं। ऐसी स्तुतिसे भावोंकी शुद्धता होकर शुद्धोपयोगके अंश प्रगट होजाते हैं, जिन अंशोंसे प्रचुर कर्मकी निर्जरा होजाती है, भावोंका क्षय होजाता है व जितना शुभ राग अंश होता है उससे महान् पुण्य कर्मका बन्ध होता है।

समयसारमें निश्चय स्तुतिका उदाहरण दिया है—

जो मोहं तु जिणित्ता, णाणसहावाधियं मुणदि आदं। तं जिद मोहं साहुं परमट्ठवियाणिया वेंति ॥ ३७ ॥

भावार्थ—जो कोई मोहको जीतकर ज्ञान स्वभावसे पूर्ण आत्माका अनुभव करता है वह साधु जितमोह जिन हैं, ऐसा परमार्थके ज्ञाता जानते हैं।

परमात्मप्रकाशमें कहा है कि शुद्ध ज्ञानकी भावना ही निर्वाणका उपाय है—

मोह विलिज्जइ मणु मरइ, तुट्टइ सासणि सासु। केवलणाणु वि परिणवइ अंबरि जाहं णिवासु ॥ २९१ ॥

जो आयासहिं मणु धरइ, लोयालोय पमाणु। तुट्टइ मोहु तडत्ति तसु, पावइ परहं पमाणु ॥ २९२ ॥

भावार्थ—जिसकी वृत्ति परम समाधि रूपी आकाशमें लय होती है उसका मोह क्षय होजाता है, मन मर जाता है, श्वासोच्छ्वास रुक जाता है। जो आकाश समान निर्मल लोकाकाश प्रमाण ज्ञानमें मनसे लीन होजाता है उसका शीघ्र ही मोह टूट जाता है, वह लोकालोक प्रमाण ज्ञानको प्राप्त होजाता है।

(९६) सिद्ध पच्चीसी गाथा १९४२ से १९६७ तक ।

जिन जिनयति जिनय जिनेंद्र जिनय पौ जिनय मओ, जिन जिनयति कम्मु अगंतु कमल रुइ पर्म पओ।
कमल कलिय जितु उत्तु न्यान रस रमन पओ, तं विंद रमन विन्यान रमन सु मुक्ति गओ ॥१॥
उव उवनो है उवन म उत्तु, उवन मई उववन्न रई, उव उवनो न्यान विन्यान परम रस परम पई ।
पर्म नंतु दसतु परम जिन परम पऊ, पर्म विंद रम रमन कमल कलि मुक्ति गऊ ॥ (आचरी) ॥२॥
जिन उत्तु उवनु उवनु, उवनो समय मऊ, तं न्यान विन्यान संजुत्तु सो समय सऊ ।
सम समय भाव दर्संतु चतुस्टय सहियरऊ, सुइ नंतानंतु जिनुत्तु सु समय सम्मत्त पऊ ॥उव० ॥३॥
संमत्तु संमत्तु संजुत्तु सु समय स उत्ति पऊ, समय सरनि जिन उत्तु संमत्तु सु ममल पऊ।
अन्मोय न्यान सुइ मोउ विन्यान सु समय पउ, सम समय चतुष्टे संजुत्तु सुलषियो पर्म पऊ ॥उव० ॥४॥
सम समय जिनुत्तु ममत्तु उवनह उवन मऊ, उव उवन हियार संजुत्तु अरुह रुइ रमन पऊ।
तं अरुह भाव सम उत्तु उवन रै दिष्टि मऊ, सहयार भाव उव लषु सु साहय नंत पऊ ॥उव० ॥५॥
हियार विवान पौ समय मु माहिय पर्म पऊ, पद परम तत्तु दर्संतु सु समय संजुत्त पऊ ।
सम समय भाव उव लषु सु समय सु दिष्टि पऊ, अरुह भाव दर्संतु सु रमनह द्रस्टि पऊ ॥उव० ॥६॥
अरुह रमन जिन उत्तु सु नन्तानन्त पऊ, सुइ रमन अर्क जिन उत्तु सु ममलह ममल पऊ।
सु अर्क अनन्तानन्तु नन्त जिन उत्तिपउ, नन्त कम्म विलयंतु सु मुक्ति सजुत्ति पऊ ॥उव०॥७॥
विन्यान विंद जिन उत्तु सु रमनह रमन पऊ, सु सुर विंजन सु सहाउ सु रमन संजुत्ति पऊ ।
आगन्तु अनन्त जिनुत्तु सु जिनय जिनेन्द पऊ, आगन्तु उवनु उवनु सु रमनह पर्म पऊ ॥उव० ॥८॥

हियार हियार जिनुत्तु सु समय हियार मऊ, हियार उवन रमंतु सु रमनह पर्म पऊ ।
हुवयार रमन जिन उत्तु सो हुव हुवयार पऊ, हुवयार नंतु विलसंतु सु रमनह मुक्ति गऊ ॥उव० ॥९॥
तं रमनह रमन रमंतु रमन पौ रमिय सुई, रमियो न्यान विन्यान परम पै रमन पई ।
रम रमन विंद रस रमिय सु रमिय जिनुत्ति पऊ, सु रमियो लोय अवलोय कमल रुइ मुक्ति गऊ ॥उव० १०
सुइ रमन नन्द आनन्द सु रमन पयासियउ, सु रमियो न्यान महाव कम्मु मल गलिय गऊ ।
सम्मत्त सहाउ सुइट्ठु सु चेयन नन्द मऊ, चेयो विंद विन्यान विंद रस रमन रऊ ॥उव०॥११॥
सम्मत्त भाव जिन उत्तु सु ममय सचेयइऊ, चेयन नन्द सनन्द सहज रै समय मऊ ।
सु महजानन्द आनन्द सुनन्दिउ ममल पऊ, सु परमानन्द जिन उत्तु पर्म पय समय मऊ ॥उव०॥१२॥
सम्मत्त भाव जिन कहिय सो ममयह समय मऊ, सु समय सहाव संजुत्तु न्यान पौ समय मऊ ।
सु परमानन्द आनन्द सुनन्दिउ ममयमऊ, सु समल कम्मु विलयंतु सु ममलह ममल पऊ ॥उव०॥१३॥
सम्मत्त भाव सुइ लषु मो जिनय जिनुत्ति पऊ, जिनिवो कम्म सहाउ सो ममल स उत्ति पऊ।
सम्मत्त स उत्तु सो इस्टु सु समय सरनि साहियऊ, सु तरन विवान संजुत्तु समय जिनमुक्ति गऊ॥उव०॥
सम्मत्त भाउ सुइ उवनु सो उवनह उवन मऊ, उव उवन विंद दर्सतु सो समय संजुत्त पऊ।
तं नन्तानन्त सु न्यान न्यान वै न्यान मऊ, उव उवन हियार सहाउ उवनु सो न्यान पऊ॥ उव० ॥१५
सो अषिर अषय स उत्तु सु अषिर रमिय पऊ, सो सुर विंजन स सहाउ सु रमनह पर्म पऊ ।
अर्थति अर्थ संजुत्तु सो उत्तु मो रमन रई, अन्मोय न्यान सोइ षिपक सु मुक्ति सु सिद्ध रऊ ॥उव०॥१६॥
सुदर्सन दर्सिउ नन्तु सु लोयालोय मऊ, सु अर्क विंद विन्यान सुयं जिन दर्सियउ ।
सुदर्सिउ नन्तानन्तु अर्थ समर्थ पऊ, सु अंगदि अंग अनन्तु परिनामू नन्त मऊ ॥ उव० ॥१७॥

वीरिय वीर्य अनन्तु अनन्त वीर्य विन्यान मऊ, सुन्यान अन्मोय अनन्तु सु गम्य अगम्य मऊ।
सुन्यान सु चरेइ अनन्तु गुप्ति रुइ गुप्ति रुई, भव सल्य संक विलयंतु ममल रै वीर्य पऊ ॥उव०॥१८
सोइ सुद्धइ सुद्ध सहाव सुद्ध धुव रमन रई, सुयं सुभाउ सु लषु अलष पौ अगम रुई।
सम समय सहाइ संजुत्तु सुद्ध रस रमन पऊ, सर्वंग सु अंगादि अंग सर्वन्य मै दिप्ति मऊ ॥उव०॥१९
सु हेय अनन्तानन्तु सो उवत्रह उवन मऊ, सु हितमित परिनै जुत्तु सो कोमल परिनमऊ।
सो न्यान विन्यान उवनु सु दिप्तिहि दिष्टि मऊ, सु दिष्टि दिप्ति सोइ सब्द सु हेय रस मुक्ति पऊ ॥उव०॥
अवगाहिय नन्तानन्तु दिस्टि रै सब्द मऊ, सयनासन समभाउ वेमरस अमिय मऊ।
अवगाहन न्यान अन्मोय न्यान पै न्यान रऊ, सुन्यान न्यान उववन्न अवगाहन मुक्ति पऊ ॥उव०॥२१
अगुरुलघु समय स उत्तु सु समय साहियऊ, सम समय सरनि जिन उत्तु सो गुरलहु गाहि पउ।
ऊँचनीच नहु दिट्ठु सो समय सो सिद्ध मऊ, अन्मोय न्यान सुइ उत्तु ममल रस मुक्ति पऊ ॥उव०॥२२
सो अव्वावाह अनन्तु सो बाधा विलय मऊ, सो भय षिपनिकु है भव्वु अमिय रस रमन पऊ।
भय सल्य संक विलयंतु सो बाधा विलय मऊ, सो नन्त चतुष्टय जुत्तु अभय जिन मुक्ति पऊ ॥उव०॥२३
सो सिद्ध भाव उवलद्धु सो साहिय सिद्ध षऊ, सम समय संजुत्तु जिनुत्तु सु समयह समय मऊ।
सु दिप्ति दिस्टि सोइ सब्द सुहेय रस रमन रऊ, सिद्ध समय संजुत्तु स उत्तु ममल रै सिद्धि रऊ ॥उव०॥२४
सो सिद्धह सुद्ध सहाउ सुद्ध रै रमन मऊ, उव उवन हियार अनन्तु सहयार सु रमन मऊ।
सु तारन तरन सुहाउ सो साहिय पर्म पऊ, अन्मोय न्यान सोइ तरन समय सिहु सिद्धि गऊ ॥उव०॥२५

अन्वय सहित अर्थ—(जिन जिनयति जिनय जिनेन्द जिनय पौ जिनय मओ) श्री वीतराग कर्मविजयी जिनपदधारी जितेन्द्रिय स्वरूप श्री जिनेन्द्र जयवन्त हो (जिन जिनयति कम्मु अनंतु कमल रइ पर्म पओ) श्री जिनेन्द्रने अनन्त कर्मोंको जीत लिया है, वे प्रफुल्लित कमल समान आत्मामें ही मगन हैं, वे परम पदके धारी हैं

(कमल कलिय जिन उत्तु न्यान रस रमन पओ) वे जिनेन्द्र आत्मारूपी कमलमें आसक्त कहे गए हैं, वे शुद्ध ज्ञानके रसमें मगन हैं (तं विंद रमन विन्यान रमन सु मुक्ति गओ) वे ही स्वानुभवशील हैं, वे ही ज्ञानमें रमण करके मोक्षको गए हैं ॥ १ ॥

(उव उवनो है उवन स उत्तु उवन मई उववन रई) जहां प्रकाशरूप सम्यक्त भाव उत्पन्न है वहीं ज्ञानका प्रकाश कहा गया है (उव उवनो न्यान विन्यान परम रस परम पई) उस सम्यक्तभावमें रहनेसे केवलज्ञानका विकाश होता है, परमानन्द रससे पूर्ण परम पदका लाभ होता है (पर्म तत्तु दर्मन्तु परम जिन परम पऊ) वे श्रेष्ठ जिन अपने परम पदमें रहते हुए परम तत्वको साक्षात् अपने स्वरूपसे प्रगट कर रहे हैं (पर्म विंद रस रमन कमल कलि मुक्ति गऊ) परम ज्ञानके रसमें रमण करते हुए आत्मारूपी कमलमें मगन अरहन्त मुक्तिको प्राप्त करते हैं ॥ २ ॥

(जिन उत्तु उवनु उवनु उवनो समय मऊ) जिनेन्द्रने जिस प्रकाशको कहा है वही आत्मा सम्बन्धी प्रकाश वहां प्रगट है (तं न्यान विन्यान संजुत्तु सो समय सऊ) वह केवलज्ञान सहित है, वही साक्षात् आत्माका स्वभाव है (सम समय भाव दर्संतु चतुष्टय सहिय रऊ) वहां समभाव सहित आत्माका प्रकाश है, तथा वे अनन्त चतुष्टय अर्थात् अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख व अनन्त वीर्यमें रमण करते हैं (सुइ नन्तानन्तु जिनुत्तु सु समय सम्मुत्त पऊ) वे चार चतुष्टय अनन्तानन्त शक्ति सहित हैं ऐसा जिनेन्द्रने कहा है। वही क्षायिक सम्यक्त पदधारी आत्मा है ॥ ३ ॥

(संमत्तु संमत्तु संजुत्तु सु समय स उत्ति पऊ) जहां उत्तम प्रकारसे सम्यग्दर्शनका लाभ है वहीं स्वसमय या आत्मरमणताका भाव कहा गया है (समय सरानि जिन उत्तु संपत्तु सु ममल पऊ) श्री जिनेन्द्रने आत्म रमणता हीको आत्माका चारित्र कहा है तथा वही शुद्ध सम्यग्दर्शन है (अन्मोय न्यान सुइ मोउ विन्यान सु समय पउ) वही ज्ञानानन्दका भोग है, वही आत्मीक पदका ज्ञान है (सम समय चतुष्टे संजुत्तु सुकषियो पर्म पऊ) जो आत्मा समभाव सहित है व अनन्त ज्ञानादि चतुष्टय सहित है वही परम पदको भलेप्रकारका अनुभव करनेवाला है ॥ ४ ॥

(सम समय जिनुत्तु समत्तु उवनइ उवन मऊ) समताभाव सहित आत्माका होना ही सम्यक्त है ऐसा श्री जिनेन्द्रने कहा है, वह प्रकाशमई ज्योति है (उव उवन हियार संजुत्तु मरुइ रुइ रमन पऊ) वही हितकारी प्रकाश है

वह पद्की रुचि है, वही आत्मीक रमण पद है (नं अरुह भाव मम उत्तु उवन गे दिष्टि मऊ) **वही समभाव ही पूज्यनीय भाव कहा गया है, वही क्षायिक सम्यग्दर्शन है** (मइयार भाव उव लपु सु साहिय नन्त पऊ) **वही सह-कारी भाव जाना गया है जिससे अनन्त सिद्धपद्का साधन होता है ॥ ५ ॥**

(हियार विवान पौ समय सु साहिय पर्म पऊ) **अरहन्त आत्माका पद हितकारी है इसीसे सिद्धरूपी परम पद्का साधन होता है** (पद परम तत्तु दर्सतु सु समय संजुत पऊ) **अरहन्तका पद परम आत्मतत्वको साक्षात् देखनेवाला है, वह स्वसमय रूप या स्वात्मरमण रूप पद है** (मम समय भाव उवलपु सु समय सु दिष्टि पऊ) **सम-ताभाव सहित आत्माका अनुभव सम्यग्दर्शन सहित आत्मीक चारित्र भाव है** (करुह भाव दर्सतु सु रमनह इस्टि पऊ) **वे अरहन्त पूज्यनीय भाव दिखला रहे हैं तथा वे ही इष्ट सिद्धपद्में रमण कर रहे हैं ॥ ६ ॥**

(अरुह रमन जिन उत्तु सु नन्तानन्त पऊ) **श्री जिनेन्द्रने अरहन्त पद्के रमणको अनन्तानन्त शक्तिधारी पद् कहा है** (सुइ रमन अर्क जिन उत्तु सु ममलह ममल पऊ) **उसीको जिनेन्द्रने स्वात्मरमण सूर्य कहा है. उसीको परम शुद्ध सिद्धपद कहा है** (सु अर्क अनन्तानन्तु नन्त जिन उत्ति पउ) **इस आत्म सूर्यमें अनन्तानन्त पदार्थोंको जाननेकी शक्ति है ऐसा अनन्त गुण धारी जिनने कहा है** (नन्त कम्म विलयंतु सु मुक्ति संजुत्ति पऊ) **उनके अनंत कर्म क्षय होगए हैं वे मुक्तिको पाचुके हैं ॥ ७ ॥**

(विन्यान विंद जिन उत्तु सु रमनह रमन पऊ) **श्री जिनेन्द्रने कहा है कि ज्ञानका अनुभव है सो ही परम पद्में भलेप्रकार रमण है** (सु सुर विंजन स महाउ सु रमन संजुत्ति पऊ) **स्वर व्यञ्जन सहित श्रुतज्ञानकी सहाय-तासे शुक्लध्यानके द्वारा स्वात्मरमण पद् प्राप्त होता है** (आगन्तु अनन्त जिनुत्तु सु जिनय जिनेन्द पऊ) **तब आने-वाले अनन्त कर्मोंका विजय होजाता है ऐसा जिनेन्द्रका पद है, यह बात अरहन्तने कही है** (आगन्तु उवनु उवनु सु रमनः पर्म पऊ) **वे अपने परम पद्में रमण करते हुए नई नई परिणतिका प्रकाश कर रहे हैं ॥ ८ ॥**

(हियार हियार जिनुत्तु सु समय हियार मऊ) **जिनेन्द्रने कहा है कि स्वसमय या स्वात्मानुभव ही परम हित कारी है** (हियार उवन रमंतु सु रमनह पर्म पऊ) **जब हितकारी आत्मज्ञानमें रमण होता है वही परम पद्में रमण है** (हुवयार रमन जिन उत्तु सो हुवयार पऊ) **हितकारी आत्मज्ञानमें रमण करना सो ही हितकारी पद् है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है** (हुवयार नंतु विलसंतु सु रमनह मुक्ति गऊ) **हितकारी अनन्त ज्ञानका विलास लेते हुए रमन-शील अरहन्त मुक्तिको पहुंचते हैं ॥ ९ ॥**

(तं रमनह रमन रमंतु रमन पौ रसिय मुई) जो रत्नत्रय धर्मके रसिक हैं वे आत्माकी मगनतामें रमण करते हैं (रमियो न्यान विन्यान परम पै रमन पई) केवलज्ञानमें रमण करना सो ही परम पदमें रमण करना है (रम रमन विंद रस रमिय सु रमिय जिनुत्ति रऊ) श्री जिनेन्द्रने कहा है कि ज्ञान रसमें रमण करना वही आत्मामें रमण करना है (सु रमियो लोय अवलोय कमल रुइ मुक्ति गऊ) जो लोक अलोकके जाननेवाले ज्ञान स्वभावी कमल समान आत्माकी रुचिमें रमण करते हैं वे ही मुक्तिको जाते हैं ॥ १० ॥

(सुइ रमन नन्द आनन्द सु रमन पय मियउ) जो आत्मीक आनन्दमें रमण करते हैं उनका स्वात्मरमण स्वभाव प्रकाशित होजाता है (सु रमियो न्यान सहाव कम्मु मल गलिय गओ) जब भलेप्रकार ज्ञान स्वभावमें रमण होता है तब कर्मका फल या उनकी अनुभाग शक्ति सब गल जाती है (सम्मत्त सहाव सुइडु सु चेयन नन्द मऊ) सम्यग्दर्शनका स्वभाव बड़ा ही उत्तम है। इसीके प्रतापसे चेतनामय आनन्दका लाभ होता है (चेयो विन्द विन्यान विंद रस रमन गऊ) ज्ञानका अनुभव होनेसे उसी ज्ञान रसमें रमण होजाता है ॥ ११ ॥

(सम्मत्त भाव जिन उत्तु सु समय सचेयइऊ) सम्यग्दर्शनका स्वभाव जिनेन्द्रने ऐसा कहा है जहां स्व समय या स्वात्माका अनुभव हो (चेयनानन्द मनंद सहज मैं समय मऊ) जब चिदानन्दमई आत्मा अपने सहजानन्दमें लीन होजाता है (सु सहजानन्द आनन्द सुनंदिह ममल पऊ) सहजानन्दमई आनन्दमें मगनता ही शुद्ध पद है (सु परमानन्द जिनुत्तु परमं पय समय मऊ) उसीको जिनेन्द्रने परमानन्द कहा है, वही आत्मीक परम-पद है ॥ १२ ॥

(सम्मत्त भाव जिन कहिय सो समयह समय मऊ) श्री जिनेन्द्रने सम्यग्दर्शनका स्वभाव यह कहा है जहां आत्मा आत्मारूप ही रहे, पररूप न हो (सु समय सहाव मंजुत्त न्यान पौ समय मऊ) जहां स्व समय या स्वात्म-रमण स्वभाव प्रगट हो जो आत्माका ही ज्ञानमई पद है (सु परमानन्द आनंद सुनंदिह समय मऊ) तहां परमानन्दमें मगनता होती है। आत्मा आत्मामें ही मगन रहता है (सु ममल कम्मु विरयंतु सु ममलह ममल पऊ) इसीसे रागादि मल सहित सर्व कर्म गल जाते हैं, शुद्धात्मा शुद्ध पदमें ठहरता है ॥ १३ ॥

(सम्मत्त भाव सुइ लषु सो जिनय जिनुत्ति पऊ) वीतराग जिनेन्द्रने कहा है कि सम्यग्दर्शनके होते हुए शुद्धात्मा पर भलेप्रकार लक्ष्य रहता है (जिनियो कम्म सहाउ सो ममल न उत्ति पऊ) इसीसे कर्मोका स्वभाव जीत लिया जाता है, उस सम्यग्दर्शनको शुद्ध सम्यक्त कहते हैं (सम्मत्त स उत्तु सो इस्टु सु समय सरनि स हियऊ)

सम्यग्दर्शन उसे ही कहते हैं जिससे अपना इस्ट स्वात्मसिद्धिके मार्गको सिद्धि कर लीजावे (सु तारन विन्यान संजुत्त समय जिन मुक्ति मऊ) इसीसे अरहन्त वीतरागका आत्मा तारण तरण होता हुआ मोक्ष प्राप्त कर लेता है ॥ १४ ॥

(सम्मत्त भाउ सुइ उवनु सो उवन्नइ उवन मऊ) जब शुद्ध क्षायिक सम्यग्दर्शन प्रगट होजाता है तब आत्माका उदय बढ़ता जाता है (उव उवन विंद दर्सनु सो समय संजुत्त पऊ) इसीसे ज्ञानका प्रकाश दिख जाता है, वही आत्माका निज पद है (तं नन्तानन्त सु न्यान न्यान वै न्यान मऊ) वही अनन्तानन्त ज्ञानमई केवलज्ञान स्वभाव है (उव उवन डियार महाउ उवनु सो न्यान पऊ) वह ज्ञानमई प्रकाश हितकारी आत्माका स्वभाव है, वह झलक जाता है ॥ १५ ॥

(सो अषिर अषय स उत्तु सु अषिर रमिय पऊ) उस अनन्त केवलज्ञानको अक्षर कहते हैं, क्योंकि वह अविनाशी है, उस ज्ञानमें ध्रुवरूपसे रमणता रहती है (सो सुर विंजन स महाउ सु रमनइ पर्म पऊ) वही ज्ञान सूर्यसम ज्योतिरूप है, वही व्यंजन या प्रगट है, वही स्वस्वभाव है, वही परमपदमें रमणरूप है (अर्थति अर्थ संजुत्त सो उत्तु सो रमन ‑ई) उस ज्ञानके प्रकाशमें रत्नत्रयमई आत्माका सहयोग है, उसे ही रमणमय कहा गया है (अन्मोय न्यान सोइ षिपक सु मुक्ति सु सिद्ध रऊ) वही आनन्दमई ज्ञान है, वही क्षायिक ज्ञान है, वही मुक्तिमें या सिद्धपदमें लीन है ॥ १६ ॥

(सुदर्सन दर्सिउ नन्तु सु लोकालोय मऊ) उसी समय लोकालोकको देखनेवाला अनन्तदर्शन भी प्रगट होजाता है (सु अर्क विंद विन्यान सुयं जिन दर्सिउ) उसीसे जिनेन्द्र स्वयं ज्ञानमई सूर्यका दर्शन कर लेते हैं (सुदर्सिउ नंतानंतु अर्थ सवर्थ वऊ) उस अनन्त केवलंदर्शनमें अनन्तानन्त पदार्थोंको एक साथ दर्शन करनेकी सामर्थ्य या शक्ति है (सु अंगदि अंग अनंतु परिनामु नंत मऊ) वह अनन्तदर्शन, अनन्तानन्त पर्यायोंको एक काल देख लेता है ॥ १७ ॥

(वीरिय वीर्य अनंतु अनन्त वीर्य विन्यान मऊ) वहां अनन्त वीर्य अपनी अनन्त शक्तिको लिये हुए प्रगट है, यह आत्माके भीतर ज्ञानमई है (सुन्यान अन्मोय अनन्तु सु गम्य अगम्य मऊ) जिसके कारण अनन्तज्ञान व अनन्त आनन्द प्रगट रहता है, वह ज्ञान सूक्ष्म स्थूल सब ज्ञेयोंको जानता है (सुचरन सु चरेइ अनन्तु गुप्ति रुइ गुप्ति रुई) इसी अनन्त वीर्यके प्रतापसे आत्मा अनन्त चारित्र या वीतराग भावसे सदा रमण करता है

तथा अनुभवगोचर आत्माके भीतर अनुभव स्वरूप रुचि इसीसे बनी रहती है (भव सरय संक विलयंतु ममल ी बीर्य पऊ) तथा इसी वीर्यके प्रतापसे भय, शल्य, शङ्काएँ सब क्षय होगई हैं। यह शुद्ध व अविनाशी अनन्त वीर्यकी महिमा है ॥ १८ ॥

(मोइ सुद्धह सुद्ध महाव सुद्ध धुव रमन ई) यही परम शुद्ध स्वभाव है जिनके भीतर शुद्धताके साथ ध्रुव रूपसे आत्मा सदा लीन रहता है (सुयं सुभाउ सु लपु अलष पौ अगम र्लई) वहां स्वयं आपका स्वभाव आपको भलेप्रकार अनुभवमें आरहा है, वह अतीन्द्रिय पद है, मनसे भी अगोचर है। उसका स्वभाव सम्यग्दर्शन है। इनमें (मम समय सह'इ संजुत्त सुद्ध रम रमन पऊ) वही शुद्धात्मा समतामय आत्मीक स्वभावका धारी है, वही शुद्ध आत्मीक रसमें रमण करता है (सर्वंग सु अंगदि अंग सर्वन्य मै दिपि मऊ) वे ही सर्वांग पूर्ण रूपसे सर्वज्ञ हैं, स्वयं प्रकाशरूप हैं ॥ १९ ॥

(सु हेय अनन्तानन्तु मो उवनह उवनमऊ) श्री सिद्ध भगवान अनन्त शक्तिमय सूक्ष्मत्व गुणके धारी हैं। उनमें सूक्ष्मत्व गुण प्रकाश होगया है (सु हितमित परिनै जुत्त सो कोमल परिन मऊ) इस गुणके साथ शुद्धात्माकी कोमल परिणति हितमितरूप है-मर्यादारूप है व विश्व हितकारी है (सो न्यान विन्यान उवनु सु दिपिहि दिष्टि मऊ) वे सिद्ध इन्द्रियोंसे अगोचर ज्ञान स्वरूप हैं। अनन्तज्ञान व अनन्तदर्शनरूप हैं (सु दिष्टि दिपि मोह मऊद सु हेय रम मुक्ति पऊ) दर्शन ज्ञान स्वरूप आत्मा सूक्ष्म शब्दसे जानने योग्य सूक्ष्म स्वभावमें मगन होकर मोक्ष स्वभावमें लीन है ॥ २० ॥

(अवगाहिय नन्तानन्तु दिष्टि रै सऊद मऊ) सिद्धोंमें अवगाहन गुण है जिससे अनन्त सिद्ध परस्पर स्थान पालेते हैं तौभी उनकी दृष्टि आपमें ही लीन है, अवगाहन शब्द यही बताता है (सयनासन समभाउ पेमरस अमिय मऊ) वे सिद्ध समताभावके भीतर शयन व आसन करते हैं तथा आत्मानन्दमई प्रेमरससे पूर्ण हैं (अवगाहन न्यान अन्मोय न्यान पै न्यान रऊ) वे सिद्ध अपने ज्ञान व आनन्दमें अवगाहन कर रहे हैं, वे ज्ञानपद धारी ज्ञानमें ही रत हैं (सु न्यान न्यान उववन्न अवगाहन मुक्ति पऊ) सम्यग्ज्ञानके भीतर रमण करनेसे उनके भीतर अनन्त पदार्थोंको अवगाहन देनेवाला ज्ञान प्रगट है, इसीसे वे मुक्ति पालेते हैं ॥ २१ ॥

(अगुरुलघु समय म उत्तु सु समय गाहिरऊ) सिद्धोंमें अगुरुलघु गुण भी कहा गया है, जिससे आत्माने आत्मीक पदका साधन किया है, वहां ऊंच नीचकी कल्पना नहीं है (सम समय सनि जिन उत्तु मो गुरलहु गाहि-

यउ) श्री जिनेन्द्रमें समभावका परिणमन कहा गया है वहां गुरु व लघु सब समा गए हैं। समभावकी दृष्टिसे सिद्धोंमें कोई राग द्वेष नहीं है (ऊँवन'च नहु दिट्ठु मो ममय मो सिद्ध मऊ) श्री सिद्ध भगवान स्वसमय-रूप हैं, आत्मारूप हैं, उसमें ऊंच नीचकी कोई बात नहीं दिखलाई पड़ती है (अन्मोय न्यान सुइ उत्तु ममल रस मुक्ति पऊ) वहां अनन्त आनन्द व ज्ञान कहा गया है, वे शुद्ध रसके भोगी सिद्ध मुक्तिपदमें हैं ॥ २२ ॥

(मो अव्वाबाह अनन्तु मो बाधा विलय मऊ) श्री सिद्ध भगवन्तोंमें अव्याबाध गुण अनन्त शक्तिमय है जिससे सर्व बाधाएँ क्षय होगई हैं (मो भय पिगनिकु है मत्तु अमिय रस रमन पऊ) सर्व भयोंको क्षय कर चुके थे, वे सिद्ध आनन्दामृत रसमें रमण कर रहे हैं (भय मल्य संक विलयंतु मो पाहिय बाधा विलय मऊ) उनके भीतरसे सर्व शल्य व शङ्काएँ व भय चला गया है व सर्व बाधाएँ क्षय होगई हैं (सो नंत चतुष्टय जुत्तु अभय जिन मुक्ति पऊ) वे सिद्ध अनन्त ज्ञानादि चार चतुष्टयके धारी निर्भय जिन मुक्तिको पालेते हैं ॥ २३ ॥

(मो मिद्ध माव उवलद्ध मो साहिय सिद्ध पऊ) जब शुद्धोपयोगका भाव प्रगट होजाता है तब सिद्धपदका साधन पूर्ण होजाता है (सम समय संजुत्तु जिनुतु सु ममयह समय मऊ) वही आत्मा समताभाव सहित होता है, स्वसमयरूप होता है, आत्मारूप होता है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (मो दिप्ति दिष्टि सोइ सब्द मुहेय रस रमन रऊ) वे ही सिद्ध ज्ञानदर्शन स्वरूप व शब्दोंसे अगोचर परम सूक्ष्म रसमें रमण करते हैं (सिद्ध समय संजुत्तु स उत्तु ममल रै मिद्धि रऊ) वे ही स्वचारित्रके धारी व शुद्ध भावमें तन्मय सिद्धगतिमें लीन कहे गये हैं ॥२४॥

(सो सिद्धइ सुद्ध सहाउ सुद्ध रै रमन मऊ) वे ही सिद्ध भगवान शुद्ध स्वभावके धारी व शुद्ध परिणामोंमें रमण करनेवाले हैं (उव उवन हियार अनन्तु सहयार सु रमन पऊ) वे परम हितकारी व सहकारी अनन्त शक्तिधारी स्वात्मरमी प्रकाशित हैं (सु तारन तरन सुइाउ मो साहिय पर्म पऊ) तारण तरण स्वभावधारी अरहंत ही इस परम पदको साधन करते हैं (अन्मोय न्यान सोइ तरन ममय सिद्ध मिद्धि गऊ) जो ज्ञानानन्दमें मगन अरहन्त हैं वे ही सिद्धगतिको पहुंच जाते हैं ॥ २५ ॥

भावार्थ—इस पचीसीमें सिद्ध भगवानकी स्तुति की है। सबसे अधिक महिमा शुद्ध व क्षायिक सम्यग्दर्शनकी गाई है। इसीके प्रतापसे मोहका व अन्य कर्मोंका क्षय होता है व आत्मा अरहन्त होकर फिर सिद्ध होजाता है। सिद्ध स्वभाव आत्माका भिन्न स्वभाव है, आत्माके अनन्त गुण सब प्रगट होजाते हैं। आठ कर्मोंके नाशसे आठ मुख्य गुण व्यवहारमें कहे जाते हैं, उनकी महिमा इस पचीसीमें भलेप्रकार

गाई है। मोहनीयके नाशसे सम्यग्दर्शन गुण, ज्ञानावरणके नाशसे अनन्त ज्ञान, दर्शनावरणके नाशसे अनन्त दर्शन, अन्तरायके नाशसे अनन्त वीर्य, नाम कर्मके नाशसे सूक्ष्मत्व गुण, आयुकर्मके नाशसे अवगाहन गुण, गोत्रके नाशसे अगुरुलघु, तथा वेदनीय कर्मके नाशसे अव्याबाध गुण प्रगट होजाता है।

तत्वार्थसारमें अमृतचन्द्राचार्य कहते हैं—

संसारविषयातीतं सिद्धानामव्ययं सुखम्। अव्याबाधमिति प्रोक्तं परमं परमर्षिभिः ॥ ४५ ॥

कृत्स्नकर्मक्षयादूर्ध्वं निर्वाणमधिगच्छति। यथा दग्धेन्धनो वह्निर्निरुपादानसन्ततिः ॥ २६ ॥

भावार्थ—सिद्धोंको संसारकी विषयवासनाओंसे रहित, अविनाशी, बाधा रहित, श्रेष्ठ सुख है ऐसा परम ऋषियोंने कहा है। सर्व कर्मोंके क्षय होनेपर सिद्धात्मा ऊपरको जाकर निर्वाणस्थानको प्राप्त होजाता है। कर्मोंकी संतानके विना संसारका नाश होजाता है, जैसे ईंधन जल जानेपर अग्नि बुझ जाती है।

श्री नागसेन तत्वानुशासनमें कहते हैं—

न मुह्यति न संशेते न स्वार्थानध्यवस्यति। न रज्यते न च द्वेष्टि किंतु स्वस्थः प्रतिक्षणं ॥ २३७ ॥

त्रिकालविषयं ज्ञेयमात्मानं च यथास्थितं। जानन् पश्यंश्च निःशेषमुदास्ते स तदा प्रभुः ॥ २३८ ॥

अनंतज्ञानदृग्वीर्यवैतृष्ण्यमयमव्ययं। सुखं चानुभवत्येष तत्रातींद्रियमच्युतः ॥ २३९ ॥

भावार्थ—श्री सिद्ध भगवान न मोह करते हैं, न संशय करते हैं, न स्वपर पदार्थोंमें कोई विमोहरूप अध्यवसाय है, न राग करते हैं, न द्वेष करते हैं किंतु सदा ही अपने स्वभावमें तिष्ठते हैं। वे प्रभु तीन काल सम्बन्धी सर्व पदार्थोंको व अपनेको जैसाका तैसा जानते देखते हुए पूर्णपने वीतरागी रहते हैं। वे वहां उस सुखका स्वाद लेते हैं, जो अनन्त ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्यमई है, तृष्णासे रहित है, अविनाशी है, इंद्रियोंसे रहित हैं व अनन्त हैं।

जो आत्मानन्दका लाभ करना चाहे उसको सिद्धोंका स्वरूप विचारकर अपने आत्मामें रमणता प्राप्त करना चाहिये।

(९७) परमेष्ठी तीसी गाथा १९६८ से १९९७ तक ।

परमेस्टि उवन उव उत्तं, उत्तं उववन्न उवन जिन दिट्ठं ।
जिन दिष्टि इष्टि सुइ समयं, समयं सुइ उवन केवलं ममलं ॥ १ ॥
सुयं सुइ उवन स उवनं, उवनं उवन उवन मै उवनं ।
उवन कमल सुई कर्नं, उवनं अवयास कमल सुवनं च ॥ २ ॥
उवन सुयं सुइ ममलं, ममलं सुइ कर्नं हियन सह समयं ।
समय सुइ उवन अनन्तं, नन्तं सुइ उवन उवन हियं सहियं ॥ ३ ॥
उवन दिप्ति सोइ दिपियं, दिपियं सोइ दिष्टि दिपिय ममलं च ।
दिप्ति दिष्टि सोइ सब्दं, सब्दं अवयास सुवन सम कर्नं ॥ ४ ॥
उवन हियं सम सहियं, सहियं सुइ उवन उवन हिय रमनं ।
अर्क अर्क सुइ उवनं, उवन सहावेन सिद्धि सम्पत्तं ॥ ५ ॥
उवन अनष्यर रमनं, अष्यर प्रवेस अनष्यरं उवनं ।
उवन विंद सुइ अर्कं, अर्कं सुइ विंद रमन ममलं च ॥ ६ ॥
उवन सुयं सुइ रमनं, रमनं सोइ रमन विंजनं ममलं ।
सुर विंजन उव उवनं, उवनं सुइ रमन सिद्धि सम्पत्तं ॥ ७ ॥
उवन सुयं सुइ रमनं, सुर सहकारेन विंजनं उवनं ।
विंजन सुर सुइ उवनं, उवनं सुइ अर्क विंद पद रमनं ॥ ८ ॥
पद रमनं पय रमनं, सिय धुव सुइ उवन पदं पय रमनं ।
पद रमनं पय गमनं, पय गमनं अर्थ उवन उवनं च ॥ ९ ॥

उवन उवन दिपि दिष्टं, उवन सोइ सब्द प्रिये जिन जिनयं ।
सब्द कर्न सुइ समयं, समयं सुइ उवन समय उवनं च ॥ १० ॥

उवन उवन अवयासं, अवयासं सुइ उवन उवन अवयासं ।
अवयास उवन सुइ कमलं, कमलं सुइ केवलं ममलं ॥ ११ ॥

उवन पयं सुइ उवनं, आयरन उवन सब्द सुइ कर्नं ।
साहु उवन अवयासं, अर्हं सुइ उवन हिययार रमनं च ॥ १२ ॥

हिययार कर्न सभ समयं, समयं सुइ उवन दिस्टि दिप्तिं च ।
दिष्टि दिप्ति अवयासं, अवयासं सुइ उवन ममल कमलं च ॥ १३ ॥

कमल कलन सुइ उवनं, कलनं अवयास नन्त सुइ नन्तं ।
सिद्ध ध्रुव उवन सहावं, सिद्धं सुइ उवन कमल ममलं च ॥ १४ ॥

कमल सुयं सुइ उवनं, उवनं सुइ अषय रमन सुर रमनं ।
सुर विंजन पय पयऊ, अर्थं सुइ उवन कमल कलनं च ॥ १५ ॥

कमल उत्त जिन उत्तं, जिन वयनं जिन जिनय अवयासं ।
जिन अर्थ उवन हिय सहियं, कमलं सुइ उवन साहियं कन ॥ १६ ॥

कर्न समय हिय उवनं, हिय अवयास अर्थ सुइ रमनं ।
अर्थं अर्थ अनन्तं, नन्तं सुइ उवन कमल कर्नं च ॥ १७ ॥

कमलं उवन सहावं, उवनं सुइ सुवन कर्न सुइ समयं ।
समय हियार हुव उवनं, उवनं अवयास कलन कमलं च ॥ १८ ॥

कलन कमल जै जै जै, जयो जयो सज्जनं सुवनं ।
सज्जन हिय हुव जैयं, जैवन्तो अवयास कमल कलनं च ॥ १९ ॥
कमल कलन जै जैयं, दिप्तिं जय दिप्ति दिस्टि जय समयं ।
समय सब्द सुइ प्रियो, उवनं सोइ सब्द कर्न सम ममलं ॥ २० ॥
कमल उवन सुइ कलनं, सज्जन जय जयो चरन सिय जयनं ।
चरन कलन सुइ सुवनं, कलनं सुइ कमल सज्जनं सुवनं ॥ २१ ॥
कलन कमल हिय उवनं, हिय हुव सोइ गहिर गुप्ति गुहवं च ।
नो उववन्न सु कमलं, समयं सुव सुवन कर्न विंदानं ॥ २२ ॥
कमल कलन सुइ उवनं, उवनं सुइ ज्ञान विवान पद कमलं ।
षिपक हियार सु रमनं, आयरन कमल समय धुव कर्नं ॥ २३ ॥
उवन रमन सह सुवनं, केवल सुइ लब्धि अंग जिन अंगं ।
अंग अनंग जिनुत्तं, कलनं सुइ समय साहि सुव कन ॥ २४ ॥
उवन समै सहकारं, ऊर्ध्वं उववन्न ढलन अवयासं ।
इष्ट उवन जिन उवनं, उवनं सुइ कमल कर्न सुइ ममयं ॥ २५ ॥
तत्काल रमन सुइ उवनं, उवनं सोइ रमन रयन जिन जिनियं ।
जिन उवनं वय उवनं, पय उवन कमल साहि सुइ कर्नं ॥ २६ ॥
रमन रमन सु सुवनं, रमियो सुइ चरन कलन अन्मोयं ।
कलन कमल चर चरनं, चरनं सम उवन कर्न सुवन समयं च ॥ २७ ॥

रमन कमल सुइ ठवनं, ठवनं सोइ रमन मुक्ति गमनं च ।
गम अगम लषि अलष्यं, अलषं सोइ लषिय कर्न निर्वानं ॥ २८ ॥
कण्ठ कमल जिन जिनयं, जिनयं जय जयो जय रमनं ।
नन्त विसेष सु चरनं, चरनं सुइ कमल कलन निर्वानं ॥ २९ ॥
कमल कलन सुइ उवनं, कलन कमल सुवन चरनं च ।
सुवनं समय सु उवनं, उवनं सुइ कमल सुवन निर्वानं ॥ ३० ॥

अन्वय सहित अर्थ—(परमेष्टि उवन उव उत्तं) अब श्री अरहन्त परमेष्टीके प्रकाशकी महिमा कही जाती है (उत्तं उववन्न उवन जिन दिट्ठं) उनको अनन्त ज्ञानका प्रकाश है ऐसा जिनेन्द्रने देखा है (जिन दिष्टि इष्टि सुइ समयं) जहां वीतरागदृष्टि हितकारी होती है वहीं आत्मा अपने स्वरूपमें है (समयं सुइ उवन केवलं ममलं) उस आत्मामें शुद्ध केवलज्ञानका प्रकाश होता है ॥ १ ॥

(सुयं सुइ उवन म उवनं) स्वयं अपनेसे ही आपका प्रकाश जहां है उसे ही केवलज्ञानका उदय कहते हैं (उवनं उवन उवन मैं उवनं) ज्ञानका प्रकाश ज्ञानके अनुभव द्वारा ही होता है (उवन कमल सुइ कर्नं) कमल समान प्रफुल्लित आत्माका अनुभव सो ही साधन है (उवनं अवयास कमल सुवनं च) आत्मानुभवसे ही आकाशके समान अनन्तज्ञान धारी कमलवत् आत्माका विकाश होता है ॥ २ ॥

(उवन सुयं सुइ ममलं) रागादि मल रहित ज्ञानका होना ही उदय है (ममलं सुइ कर्म हियन सह समयं) यह शुद्धोपयोग साधन है जिससे आत्माका हित होता है (समयं सुइ उवन अनंतं) इसीसे आत्मामें अनन्त शक्ति प्रगट होजाती है (नन्तं सुइ उवन उवन हियं महियं) अनन्त शक्तिका विकाश ही परम हितकारी प्रकाश है ॥ ३ ॥

(उवन दिप्ति सुइ दिपियं) ज्ञानका प्रकाश होना ही आत्माका चमकना है (दिपियं सोई दिष्टि दिपिय ममलं च) यह चमकना ही शुद्ध दर्शन व शुद्ध ज्ञानका होना है (दिप दिष्टि सोइ सव्दं) ज्ञान दर्शन जो शब्द हैं (सव्दं अवयास सुवन सम कर्नं) इन्हीं शब्दोंके अनुसार जहां ज्ञान दर्शनका समताभावके साथ परिणमन है सो ही साधन है ॥ ४ ॥

(उवन हियं मम महियं) समताभावके साथ आत्महितका उदय हुआ है (सहियं सुइ उवन उवन हिय रमनं) यही समभाव सहित उदय आत्महितमें रमणरूप है (अर्क अर्क सुइ उवनं) इसीको ज्ञान सूर्यका प्रकाश कहते हैं (उवन महावेन सिद्धि सम्पत्तं इसी प्रकाशित स्वभावके साथ यह जीव सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥५॥

(उवन अनष्यर रमनं) वाणी रहित आत्मामें रमण होरहा है (अष्यर प्रवेस अनष्यरं उवनं) श्रुतके अक्षरोंके द्वारा आत्मामें प्रवेश करनेसे वचन अगोचर आत्माका अनुभव होता है। श्रुतका आलम्बन आत्मध्यानका कारण है (उवन विंद सुइ अर्क) ज्ञानका प्रकाश होना ही सूर्य है (अर्क सुइ विंद रमन ममलं च) यह सूर्य आत्मज्ञानमें रमणशील शुद्ध है ॥ ६ ॥

(उवन सुयं सुइ रमनं) आत्माका उदय ही आत्माका आत्मामें रमण है (सुर सहकारेन विंजनं उवनं) आत्मारूपी सूर्यके ध्यानसे ही ज्ञानकी प्रगटता होती है (सुइ विंजन उव उवनं) ज्ञान सूर्य प्रगट रूपसे उदय होता है (उवनं सइ रमन सिद्धि सम्पत्तं) इसी उदयके भीतर रमण करनेसे यह आत्मा सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ ७ ॥

(उवन सुयं सुइ रमनं) स्वयं आत्माका उदय सो ही आत्मामें रमण है (सुर महकारेन विंजनं उवनं) सूर्य समान आत्माके ध्यानकी मददसे आत्माका स्वभाव प्रगट होता है (विंजन सुर सुइ उवनं) प्रगट रूपसे सूर्य सम आत्मा प्रकाशमान होजाता है (उवनं सुइ अर्क विंद पद रमनं आत्माका प्रकाश सो ही सूर्य समान ज्ञानके पदमें रमण करना है ॥ ८ ॥

(पद रमनं पय रमनं) आत्मीक पदमें रमण करना सो ही स्वपरिणतिमें रमण करना है (सिय धुव सुइ उवन पदं पय रमनं) वहां ही ध्रुव शुद्धोपयोगका प्रकाश होता है वही निज पदकी परिणतिमें रमण है (पद रमनं पय गमनं) निज पदमें रमण करना है सो ही निज परिणतिमें परिणमना है (पय गमनं अर्थ उवन उवनं च) निज परिणतिमें प्राप्त होना ही आत्मपदार्थका प्रकाश है ॥ ९ ॥

(उवन उवन दिपि दिप्तं) श्री अरहन्तकी आत्मामें दर्शन ज्ञानका उदय है (उवन मोई सब्द प्रिये जिन जिनयं) इसी उदयसे ही वीतराग जिनका शब्द प्रिय भासता है। वीतराग जिनेन्द्र अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान धारी है इसीसे इष्ट है (सब्द कर्न सुइ समयं) आत्मा ही मोक्षका साधन है। यही कर्न शब्द बताता है (समयं सुइ उवन समय उवनं च) आत्मा है सो ही प्रकाश है, वही आत्माका उदय है ॥ १० ॥

(उवन उवन अवयासं) आकाश समान अनन्त ज्ञानका प्रकाश होगया है (अवयासं सुइ उवन उवन अवयासं) ज्ञान है सो ही उदय है–उदय है सो ही ज्ञान है (अवयास उवन सुइ कमलं) ज्ञानका उदय है सो ही कमल समान आत्माका विकाश है (कमलं सुइ उवन केवलं ममलं) कमल है सो ही शुद्ध केवलज्ञानका प्रकाश है ॥११॥

(उवन पयं सुइ उवनं) अरहन्तपदका प्रकाश सो ही आत्माका उदय है (आवरन उवन सहर सुइ कर्नं) ज्ञानके भीतर आचरण करना यही साधन है, यही कर्न शब्दसे प्रयोजन है (साह उवन अवयासं) जिससे केवलज्ञानका प्रकाश साध्य है (अर्ह सुइ उवन हिययार रमनं च) अरहन्तका प्रकाश सो ही हितकारी है, वही आत्मीक रमण पद है ॥ १२ ॥

(हिययार कर्नं सम समयं) हितकारी साधन समभाव सहित आत्माका प्रकाश है या स्वात्मानुभव है (ममयं सुद्ध उवन दिप्ति दिप्ति च) आत्माका अनुभव सो ही ज्ञान दर्शनका अनुभव है (दिप्ति दिप्ति अवयासं) इसीसे अनन्त दर्शन व अनन्त ज्ञानका प्रकाश होता है (अवयासं सुइ उवन कमल ममलं च) जब अनन्तज्ञानका प्रकाश होता है तब कमल समान आत्मा मल रहित शुद्ध होजाता है ॥ १३ ॥

(कमल कलन सुइ उवनं) कमल समान आत्मामें रमण करना ही प्रकाश है (कलनं अवयास नन्त सुइ नन्तं) यह आत्मामें रमण अनन्तज्ञान व अनन्तदर्शनमें रमण है (सिद्ध धुव उवन सहावं) इसीसे सिद्धका अविनाशी स्वभाव प्रगट होता है (सिद्ध सुइ उवन कमल ममलं च) सिद्धपदका प्रकाश सो ही कमल समान आत्माका पूर्ण शुद्ध प्रकाश है ॥ १४ ॥

(कमल सुयं सुइ उवनं) कमल समान आत्माका स्वयं ही प्रकाश होता है (उवनं सुइ अषय रमन सुइ रमनं) यही प्रकाश अक्षय स्वभावमें रमण है या सूर्य समान ज्ञान ज्योतिमें रमण है (सुर विंजन पय पयऊ) वहां सूर्य समान ज्ञानका प्रकाशरूप पद झलकता है (अर्थ सुइ उवन कमल कलनं च) वही आत्मीक पदार्थका उदय है, वहीं कमल समान आत्मा आप ही स्वाद लेता है ॥ १५ ॥

(कमल उत्त जिन उत्तं) इस शुद्ध कमल समान आत्माके होते हुए जो दिव्यवाणीका प्रकाश होता है वही जिनेन्द्रकी वाणी है (जिन वयनं जिन जिनय अवयासं) श्री वीतराग जिनेन्द्रकी वाणी वीतरागमई ज्ञानको झलकानेवाली है (जिन अर्थ उवन हिय सहियं) जिस वाणीसे वीतरागताके साधक हितकारी पदार्थका प्रकाश होता है (कमलं सुइ उवन साहियं कर्नं) कमल समान आत्माका प्रकाश सो ही सिद्धपदका कर्ण साधन है ॥१६॥

(कर्न समय हिय उवनं) आत्मीक साधन भावका होना अपने हितका उदय है (हिय अवयास अर्थ सुइ रमनं) हितकारी ज्ञानमई पदार्थका होना ही आत्मरमण है (अर्थ अर्थ अनंतं) आत्म पदार्थ अनन्तगुण पर्याय-मय है (नन्तं सुइ उवन कमल कर्न च) जिससे अनन्त गुणोंका उदय हो सो ही कमलके समान आत्माका साधन है ॥ १७ ॥

(कमलं उवन सहावं) कमल समान आत्माका स्वभाव ही प्रफुल्लित होता है (उवनं सुइ सुवन कर्न सुइ समयं) आत्माका उदय सो ही आत्माका परिणमन है, वही साधन है, सो सब आत्मारूप ही है (समय हियार हुव उवनं) हितकारी आत्माका प्रकाश होगया है (उवनं अवयास कलन कमलं च) यह आत्माका प्रकाश सो ही ज्ञानमें रमण करते हुए कमल समान आत्माका विकाश है ॥ १८ ॥

(कलन कमल जै जै जै) स्वात्मरमणरूप आत्मीक कमलकी जय हो जय हो जय हो (जयो जयो सज्जनं सुवनं) भव्यात्मा अरहन्तके परिणमनकी जय हो, जय हो (सज्जन हिय हुव जैयं) हितकारी भव्यात्माकी जय हो (जैवंतो अवयास कमल कलनं च) ज्ञानस्वभावी आत्मारूपी कमलकी व आत्मरमण भावकी जय हो ॥ १९ ॥

(कमल कलन जै जैयं) आत्मारूपी कमलमें रमणकी जय हो जय हो (दिप्ति जय दिप्ति दिष्टि जव समयं) केवल-ज्ञान व केवलदर्शनके प्रकाशकी जय हो, इन गुणोंके धारी आत्माकी जय हो (समय सब्द सुइ पियो) समय शब्द बड़ा ही प्यारा है (उवन सुई सब्द कर्न सम ममलं) इस समय शब्दके अर्थके अनुभवसे शुद्ध समभाव प्रगट होजाता है ॥ २० ॥

(कमल उवन सुइ कलनं) आत्मारूपी कमलका विकाश सो ही आत्माका अनुभव है (सज्जन जय जयो चरन मिय जयनं) भव्य जीवने शुद्ध चारित्रके द्वारा कर्मोंपर विजय प्राप्त करली है (चरन कमल सुइ सुवनं) आत्मारूपी कमलमें आचरण करना सो ही आत्मामें परिणमन है (कलनं सुइ कमल सज्जनं सुवनं) आत्मानु-भव है सो ही आत्मारूपी कमलमें भव्य जीवका परिणमन है ॥ २१ ॥

(कलन कमल हिय उवनं) आत्मारूपी कमलका हितकारी अनुभव प्रगट होगया है (हिय हुव सोह गहिर गुप्ति गुइवं च) आत्माकी गम्भीर और महान गुफामें रमण करना यही हितकारी बात है (नो उववन सु कमलं) यह आत्मारूपी कमल नया नहीं उत्पन्न हुआ है, अनादिकालका है (समयं सुव सुवन कर्न विंदानं) आत्माका आत्मामें परिणमन करना ही ज्ञानका साधक है ॥ २२ ॥

(कमल कलन सुइ उवनं) आत्मारूपी कमलका अनुभव लेना सो ही आत्माका उदय है (उवनं सुइ ज्ञान विज्ञान पद कमलं) इसी आत्मानुभवको आत्मारूपी कमलके पूर्ण पदकी ओर लेजानेवाला जहाज जानो (विपक हियार सु रमनं) हितकारी क्षायिक सम्यक्त आदि भावोंमें रमण करना योग्य है (आयरन कमल समय धुव कर्नं) अपने आत्मारूपी कमलमें आचरण करना सो ही ध्रुव आत्माके विकाशका साधन है ॥ २३ ॥

(उवन रमन सह सुवनं) ज्ञानके प्रकाशमें रमण करना सो ही ज्ञानमें परिणमन है (केवल सुइ लब्धि अंग जिन अंगं) तब ही केवलज्ञानकी लब्धि प्रगट होती है जो जिनेन्द्रकी आत्माका एक गुण है (अंग अनंग बिनुतं) श्री जिनेन्द्र दिव्यवाणीसे जो उपदेश देते हैं उसकी रचना श्रुतज्ञान रूप अङ्ग प्रविष्ट व अङ्ग बाह्य भेदसे दो प्रकार गणधरदेव करते हैं (कलनं सुइ समय साहि सुय कर्नं) शुद्धात्मामें अनुभवशील होना ही वह साधन है जिससे निर्वाणरूपी साध्यकी सिद्धि की जाती है ॥ २४ ॥

(उवन समय सहकारं) आत्माका प्रकाश या आत्मानुभव परम सहकारी है (ऊर्ध्वं उववन्न ढलन् अवयासं) जिससे उन्नत करते करते श्रेष्ठ ज्ञान जो केवलज्ञान है वह प्रगट होजाता है (इष्ट उवन जिन उवनं) परम प्रिय आत्मानुभूतिका उदय सो ही वीतराग जिनभावका प्रकाश है (उवनं सुइ कमल कर्नं सुइ समयं) यह प्रकाश ही आत्मारूपी कमलके विकाशका साधन है तथा वह आत्मारूप ही है ॥ २५ ॥

(तत्काल रमन सुइ उवनं) जिस समय शुद्धात्मामें रमण होता है उसी समय आत्माका प्रकाश होता है (उवनं मोई रमन रयन जिन जितयं) आत्माका प्रकाश है सो ही रत्नत्रय धर्ममें रमण है इसीसे जिनेन्द्रने कर्मोंको जीता है (जिन उवनं वय उवनं) वीतराग भावका प्रकाश सो ही अरहन्त पदका प्रकाश है (पय उवन कमल माहि सुइ कर्नं) अरहन्त पदका उदय है सो ही साधने योग्य कमल समान आत्मा है, वही मोक्षका साधन है ॥ २६ ॥

(रमन रमन सु सुवनं) स्वात्मामें रमण करना है सो ही आप आपमें परिणमना है (रमियो सुइ चरन चलन अन्मोयं) जहां आत्मामें रमण है वहीं स्वचारित्रका पालन है व वहीं आनन्द है (कलन कमल चर चरनं) स्वानुभव रूप कमल समान आत्माका होना सो ही स्वचारित्रमें चलना है (चरनं सम उवन कर्नं सुवन समयं च) यहां समभाव रूप चारित्रका उदय है, यहीं आत्माका स्वचारित्रमें परिणमन है । २७ ॥

(रमन कमल सुइ ठवन) आत्मारूपी कमलमें रमण करना है सो ही आपसे आपमें स्थिर होना है

(ठवनं सोइ रमन मुक्ति गमनं च) आत्मामें स्थिरता है सो ही आत्मामें रमण है इसीसे यह भव्य मोक्षमें जाता है (गम अगम लिपि अलष्यं) स्थूल, सूक्ष्म, इंद्रियगोचर व अतीन्द्रियगोचर सब पदार्थोंका जहां प्रकाश है (अलषं सोइ लषिय कर्न निर्वाणं) जब अतीन्द्रिय आत्माका प्रत्यक्ष साक्षात्कार होजाता है तब ही वह साधन प्रगट होता है जिससे निर्वाण होसके ॥ २८ ॥

(कण्ठ कमल जिन जिनयं) आत्मारूपी कमलके निकट ही वीतराग जिन हैं जिन्होंने कर्मोंको जीता है। अर्थात् जहां आत्माका विकाश है वहीं वीतरागपद है (जिनयं जय जयो जय रमनं) वे ही जिन हैं, उनहींकी जय जय माननी चाहिये व जिनेन्द्र स्वात्मामें रमण कर रहे हैं (नन्त विसेष सु चरनं) वे अनन्त गुणोंके भीतर आचरण कर रहे हैं (चरनं सुइ कमल कलन निर्वानं) यही चारित्र है, सो ही आत्मारूपी कमलका अनुभव है। यही निर्वाण स्वरूप है ॥ २९ ॥

(कमल कलन सुइ उवनं) आत्मारूपी कमलका विकाश सो ही उदय है (कलन कमल सुवन चरनं च) आत्मारूपी कमलका अनुभव ही चारित्रमें परिणमन है (सुवनं समय सु उवनं) परिणमन करते करते आत्माका भलेप्रकार उदय होता है (उवनं सुइ कमल सुवन निर्वानं) आत्माका उदय है सो ही कमल समान शुद्ध आत्मामें परिणमन है व वहीं निर्वाण है ॥ ३० ॥

भावार्थ—इस तीसीमें अरहन्त परमेष्ठीके आत्मीक गुणोंकी स्तुति की गई है तथा यह बताया है कि जो भव्य जीव शुद्ध निश्चयसे अपने आत्माको शुद्ध ज्ञाताद्दृष्टा वीतराग व आनन्दमई निश्चय करके ध्याता है, स्वात्मानुभव करता है, रमण करता है, आत्माका आनन्द लेता है वही अरहन्त परमात्मा होजाता है, वही समताभाव धारी केवलज्ञानी होजाता है। स्वानुभव ही मोक्षमार्ग है इसीके आचरणसे मोक्ष होती है। इसलिये स्व हितैषीको स्वानुभवका सदा अभ्यास करना योग्य है। इसीसे घातीय कर्मोंका क्षय होता है। समभाव ही परमात्मपद साधक है। परमात्मप्रकाशमें कहा है—

विण्णिवि दोस हवंति तसु, जो समभाउ करेइ। बंध जु निहणइ अप्पणउ, अणु जगु गहिलु करेइ ॥ १६९ ॥

अण्णु वि दोसु हवेइ तसु, जो समभाव करेइ। सत्तु वि मिल्लवि अप्पणऊ, परहं णिलीणु हवेइ ॥ १७० ॥

अण्णु वि दोसु हवेइ तसु, जो समभाउ करेइ। वियलु हवेविणु इक्कलउ, उप्परि जगह चडेई ॥ १७१ ॥

भावार्थ—जो साधु राग द्वेषको त्यागके समभावको करता है उसी तपस्वीके दो दोष होते हैं। एक तो वह अपने कर्मबन्धको नाश करता है, दूसरे वह जगतको बावला बना देता है अर्थात् लोग उसे बावला कहते हैं। वह दूसरोंको भी अपने समान आत्मरथी बावला बना लेता है। जो साधु समभाव करता है उसके दूसरा दोष यह होता है कि वह अपने आधीन भी ज्ञानावरणादि शत्रुको त्यागकर पर या परमात्मपदके आधीन होजाता है अर्थात् परमात्मा होजाता है। जो समभाव करता है उसके दूसरा भी दोष होता है। वह शरीरादिसे रहित होकर अकेला शुद्ध होकर तीन लोकके ऊपर चढ़कर सिद्ध होकर सिद्धालयमें जा विराजता है। यह निन्दास्तुतिरूप कथन है।

(९८) ध्रुव उवन साहसीय अर्क गाथा १९९८ से २०२६ तक।

(१) कमलसी अर्क।

उक्तं नंत जिनं जिनय जिन जिनं, जिनयं जिनं जिनपदम्।
जैवंतो जै जै जयं च जिनयं, जिनयं जयं सास्वतम्॥
जैवन्तं जै नन्त नन्त ममलं, सार्ध च भव्यात्मनम्।
उवनं कलन सकमल कर्न समयं उत्पन्न सज्जन जनम्॥ १॥

सज्जन जन उववन्न उवन उवनं उववन्न साध ध्रुवम्।
उववन्नं ध्रुव कलन कमल उवनं कन च सजनं समम्॥
दिष्टिं दिस्टि प्रवेस दिस्टि दिष्टिं, सब्दं च प्रियो जुतम्।
नंतानंत सुअर्क अर्क उवन कमलं, कर्न च सजनं जनम्॥ २॥

अर्कं अर्क उवन उवन उवनं, कलनं च कलनं ध्रुवम्।
कलनं नन्त अनन्त नन्त कलनं, कमलं च उवनं जिनम्॥

कमलं केवल उवन उवन उवनं उत्पन्न अर्क मयम् ।
कलनं कमल सुयं सुयं च रमनं कलनं कमलं ध्रुवम् ॥ ३ ॥
जं जं अर्क सुअर्क अर्क उवनं अर्कस्य अर्क मयम् ।
नन्तानन्त सु अर्क अर्क रमणं अर्क प्रवेसं ध्रुवम् ॥
तं अर्क आयरन उवन कलन, अर्क सुअर्क समम् ।
सहयारं हिय रमन कलन कलियँ कलियँ च जिनय जिनम् ॥ ४ ॥
कलनं कलन सु नंत नन्त ममलं अर्क सु अर्क समम् ।
अर्क अर्क प्रवेस अर्क समयं समयं सुयं ध्रुव पदम् ॥
सिय उवनं ध्रुव अर्क अर्क रमनं उत्पन्न कन समम् ।
कन सुवन उवन उवन कमलं च जिनयं जिनम् ॥ ५ ॥

(२) चरनसी अर्क ।

कमलं कलन सु उवन उवन चरनं चरनं सुचरनं जुतम् ।
चरनं चरन अनन्त नन्त रवनं सहयार कमलं सुयम् ॥
चर चरनं चरं चरंति चरियं चरनं चरं ध्रुव पदम् ।
चरनं चरन चरं चरं सु चरियं सहयार कमलं ध्रुवम् ॥ ६ ॥

(३) कर्नसी अर्क ।

कलनं कलन उवन कमल ममलं चरनं समं सं ध्रुवम् ।
जं कलनं जं कमल चरन उवनं नंतं च कर्न समम् ॥

नन्तानन्त सु अर्क अर्क उवनं सुवनं च समयं धुवम् ।
कलनं कमल सु चरन नन्त उवनं कर्न समं धुव पदम् ॥ ७ ॥

(४) सुवनसी अर्क ।

कलनं कमल सु चर्न कर्न समयं अर्क सु अर्क मयम् ।
जं अर्क सुइ नन्त नन्त रमनं रमनं सुरं दिनयरम् ॥
अर्क अर्क प्रवेस नन्त ममलं हुवयार सुवनं जिनम् ।
सुवनं उवन अनन्त नन्त ममलं उववन्न साहं धुवम् ॥
हुवयारं तं नन्त नन्त अर्क सुवनं अन्मोय कमलं सुयं ॥ ८ ॥

(५) हँससी अर्क ।

कमलं चरन सुअर्क सुवन सुवनं उवनं सुयं सुइ जिनं ।
अर्क नंतानंत रमन सुवनं हंसं च साहं धुवं ॥
हंसं हंस सु अर्क अर्क समयं साहं सुयं साहनं ।
हंसं हंस उवन उवन सुवनं अन्मोय कमलं जिनं ॥ ९ ॥

(६) अवयाससी अर्क ।

अन्मोयं सुइ कमल चरन कन सुवनं हंसं अनंतं हुवं ।
हुव उवनं अवयास नन्तनन्त ममलं अर्क अनंतं परं ॥
अर्क नत सुअर्क अर्क ममलं अवयास साहं सुयं ।
नन्तानन्त सुदिप्ति दिष्टि उवन समयं अन्मोय कमलं जिंनं ॥ १० ॥

(७) दिप्तिसी अर्क ।

कमलं कर्न सुवन कलन चरनं अवयास हंसं हुवं ।
दिप्तिं दिप्ति सुदिप्ति दिष्टि समयं दिप्ति प्रवेसं सुयं ॥
दिप्तिं दिप्ति उवन दिष्टि उवन ममलं नन्त अनन्तं समं ।
नन्तानन्त सुदिप्ति दिष्टि उवन समयं विन्यान कमलं कलं ॥ ११ ॥

(८) सुदिप्तिसी अर्क ।

कमल कलन सुचरन उवन कर्न, अवयास सुवनं मयं ।
दिप्ति दिप्ति प्रवेम नन्त उवन समयं दिप्तिं सुदिप्तिं सुयं ॥
सुयं बुद्ध सुबुद्ध अर्क अर्क ममलं दिष्टि सुदिप्तिं सुयं ।
दिप्तिं दिष्टि अनन्त दिप्ति दिप्ति सुसमयं अन्मोय कमलं जिनं ॥ १२ ॥

(९) अभयसी अर्क ।

कमलं कर्न सुयं सुयं सु उवनं अवयास नन्तं परं ।
अवयासं तं नन्त नन्त ममल उवन साहन्ति अभयं सियं ॥
अभयं अभय सुअर्क अर्क अभय ममलं भयविलय अभयं सुयं ।
नन्तनन्त सुअर्क दिप्ति दिष्टि सब्द उवनं कमलं च अभयं पदं ॥ १३ ॥

(१०) सुर्कसी अर्क ।

उत्त भय अर्क सुदिप्ति अर्क दिस्टि ममलं कमलं च कर्न मयं ।
उववनं उव उवन अर्क अर्क ममलं अवयास सुर्क मयं ॥

सुर्क सुर्क सुअर्क अर्क उवन ममलं अवयास सुर्क सुयं ।
उवनं सुइ सुवन सुयं सुयं च सुवनं सुर्क सु ममलं धुवं ॥ १४ ॥

(११) अर्थसी अर्क ।

अर्क अर्क सु अर्क अर्क उवन उवनं अर्थ अनन्त परं ।
लष्यं लषि अलष्य उवनं गम्यं अगम्यं सुयं ॥
दर्स दर्स सुदर्स दर्स उवन ममलं, सव्वं अनन्तं प्रियं ।
अवयासं तं नन्तनन्त उवन समयं कमलं च अर्थ जिनं ॥ १५ ॥

(१२) विंदसी अर्क ।

अर्थ अर्थ सुअर्थ अर्क अर्क ममलं कमलं च कर्न समं ।
हिययारं हिय सुवन अर्क उवनँ अवयास ममलँ समं ॥
उववन्नउ उववन्न उवन रमनँ नन्तँ अनन्तं सुयं ।
विन्यान सुइ नन्तनन्त विंद समयं विंदस्य कमलं जिनं ॥ १६ ॥

(१३) नन्दसी अर्क ।

उवनँ कमल सुकर्न चरन सुवन उवनँ उवनँ अवयास दिप्ति मयं ।
अभयँ दिप्ति सु दिप्ति सुर्क अर्थ समयँ विन्यान विंदँ जयँ ॥
हिययारँ सहयार सुयँ सुविंद रमन नन्दँ सुयँ नन्दनँ ।
ऐ अर्थ अर्थसमँ स नन्द नन्द ममलँ नन्दँ सु उवन नन्दनँ ॥ १७ ॥

(१४) आनन्दसी अर्क ।

जँ जँ अर्क सुनन्द नन्द उवन रमनँ आनन्द नन्द जयँ ।
जैवन्त जै जै जयँ च जयनँ अर्क अनन्तँ धुवँ ॥

दिप्तिं दिप्ति सुदिप्ति दिप्ति रमन दिसियँ दिस्टि च ममलँ पदँ ।
नन्तानन्त सुदिप्ति दिस्टि उवन सुवनँ आनन्द कमलँ जयँ ॥ १८ ॥

(१५) समयसी अर्क ।

जं जं अर्क अनन्त नन्त ममलँ रमनँ, तं तं सम समयत्वँ ।
सम उत्तँ सम उवन उवन समय हिययारँ हुव सास्वतँ ॥
जिन जिनयँ जिन रमन उवन वयनँ दर्सँ जिनँ दर्सितँ ।
नन्तानन्त समँ सुयँ च समयँ, कमलँ च कर्न समयम् ॥ १९ ॥

(१६) हिय रमनसी अर्क ।

जँ उवन उव उवन उवन रमनँ हिययार नन्तँ जिनँ ।
हिययारँ सुइ रमन रमन अरहँ अर्ह स उवनँ सुयम् ॥
सहयारँ सब्द रमन रयन ममलँ अर्क चहिय उवनँ जयम् ।
हिय हुव नन्त सुनन्त नन्त जयनँ हिय रमन कमलँ जयँ ॥ २० ॥

(१७) अलषसी अर्क ।

कलनँ कमल सु कर्न सुवन उवन रमनँ अवयास नन्तँ सुयम् ।
दिप्ति नन्त सुदिप्ति अभय रमनँ सुक सु अर्थ समम् ॥
विन्यानँ सुइ विंद विंद सून्य समयँ नन्दँ आनन्दँ जयम् ।
समय उवन हियँ अलष लषियँ अलषस्य कमलँ जयम् ॥ २१ ॥

(१८) अगमसी अर्क ।

उवन उवन सियं सुभाव सुयं सुयं च रमनं, अगमं अनन्तं परम् ।
हिययारं सिय अर्क अर्क ममल रमनं सुद्धं धुवं धुवपदम् ॥

हिय हुव नन्त अनन्त नन्त अगम अगमं अर्क छअर्क छयम् ।
अषयं अषयपदं अषय छ रमनं अगमं सु कमलं जयम् ॥ २२ ॥

(१९) सहकारसी अर्क ।

उवन उवन सिय अर्क अर्क साह समयं सहयार सिद्धँ धुवम् ।
हिययारँ सिय अर्क अर्क नन्त ममलँ माहँति अर्थ जिनम् ॥
साहँ साह जिन अर्क अर्क जिनय जिन समयँ अर्थं च दिप्तिं जयम् ।
जैवन्तँ जै जै अवल बलि जयं सहकार कमलँ जयम् ॥ २३ ॥

(२०) रमनसी अर्क ।

उवन उवन सिय अर्क उवन रमनं रमनं सियं सियपदम् ।
हिययारं सिय रमन अर्ह रमन ममलं रमनं छरं विंजनम् ॥
छर विंजन सह सह सहय जिन रमनं कमलं च कर्न रमम् ।
रमनं दिप्ति सु दिप्ति दिष्टि दिप्ति रमनं कमलं च सर्वं रमं ॥ २४ ॥

(२१) रंजसी अर्क ।

उवन उवन सिय रँज रँज रमन दिप्ति रँजँ हियँ हुव पदम् ।
हिययारँ सिय रँज रँज कमलँ रँजँ सियँ पद अर्थयँ ॥
सहयारँ सिय रंज रँज कलन कमलँ रँजँ जिनँ जिनपदँ ।
रँजँ रँजसि लोयलोय उवन उवनँ अनन्तँ अनन्तँ पदँ ॥ २५ ॥

(२२) उवनसी अर्क ।

उवन उवन सिय अर्क अर्क उवन उवनं पि उवनँ पदम् ।
उवनं झडप सुदिष्टि उवन सब्द उवनँ उवनँ हियँ हुवपदँ ॥

अवयासं सुइ उवन उवन कमल कलनं उवनं सु उवनं पदं ।
सहयारं सुइ उवन उवनहंसकमलं उवनं कलन जिन पदं ॥ २६ ॥

(२३) षिपनसी अर्क ।

उवनं उवन सु उवन षिपनं दिस्तिस्य अन्धं षिपं ।
हिययारं हुव मुक्त संदिष्टि झडप सु मुक्ति षिपनं सुन्यं च सब्दं षिपं ॥
सहयारं सुइ षिपन षिपिय षिपिनं सिंहं च गज गूथयं ।
षिपिनं सिय सुइ षिपन ममल उवन उवनं कुन्यानं षिपनं कम्म लयं ॥ २७ ॥

(२४) ममलसी अर्क ।

उवनं उवन सिय अर्क अर्क ममल उवनं रयनं सु रमनं सुयं ।
सहयारं सोइ ममल अर्क अर्क ममलं सूरस्य किरनि जयं ॥
सहयारं सोइ ममल अर्क अर्क ममलं नन्तं पदं जिन पदं ।
ममलं सिय सोइ सुवन उवन कमलं कमलं च जिन उक्तयं ॥ २८ ॥
उवनं सिय सुइ उवन उवन ममलं उवनं पदं सिय पदं ।
सिय उवनं धुव उवन उवन ममलं उवनं सियं धुव पदं ॥
उवनं सिय पय अर्थ सब्द सु सब्द उवनं उवन सिय जयं सुइ धुव जयं ।
धुव उवनं तं नन्त सिय कर्न उवन समयं उवनं समय मुक्ति जयं ॥ २९ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उत्तं नंत जिनं जिनय जिन जिनं जिन जिनयं जिनं जिनपदं) श्री जिनेन्द्रने कहा है कि अनन्त गुणोंके धारी वीतराग कर्म विजयी जिनका पद विजयरूप है (जैवन्तो जै जै जय च जिनय जिनयं जयं सास्वतं) उस जिनपदकी जय हो, जय हो। वह पद जयवन्त रहे जिस पदके धारी जिनेन्द्रने कर्मोंको सदाके लिये जीत लिया है। अब वह जिनपदसे कभी पतन नहीं करेंगे (जैवंतं जै नन्त नन्त ममलं स र्घ च भव्यात्मनं) यह

पद जयवन्त रहो जो पद भव्यजीवके पैदा होता है वह पद अनन्त अविनाशी है व शुद्धपद है (उवनं कलन स कमल कर्न समयं उत्पन्न सज्जन मयं) जब भव्य पुरुष अपने आत्मारूपी कमलका अनुभव करता है तब उस आत्मानुभवके साधनसे यह पद उत्पन्न होता है ॥ १ ॥

(सज्जन जन उववन्न उवन उवनं उववन्न सार्धं धुवं) यह ध्रुव अविनाशी पद तब ही उत्पन्न होता है जब भव्य पुरुष सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रमई भावका प्रकाश अपने भीतर करता है (उववन्नं धुव कलन कमल उवनं कर्न च सनन्नं जनं) भव्य पुरुष जब ध्रुवरूपसे आत्मारूपी कमलका अनुभव करता है तब उसके शुद्धोपयोगके प्रतापसे जिनपद प्रगट होता है (दिप्ति दिस्टि प्रवेस दिस्टि दिप्तं, सव्दं च प्रियो जुतं) जब भव्य पुरुष शुक्लध्यानमें इष्ट शब्दके द्वारा अपने ज्ञान दर्शन स्वभावके भीतर प्रवेश पाकर ज्ञान दर्शनकी एकताका अनुभव करता है (नन्तानन्त सु अर्क अर्क उवन कमलं कर्न च सजनं जनं) तब उस भव्य पुरुषके उस साधनसे अनन्तानन्त शक्तिका धारी ज्ञान कमलसमान आत्मामें प्रगट होजाता है ॥ २ ॥

(अर्क अर्क उवन उवन उवनं कलनं च कलनं धुवं) ज्ञान सूर्य ज्ञानावरण कर्मके परदेका नाश जैसे जैसे होता है वैसे वैसे प्रगट होता जाता है। केवलज्ञानरूप होकर फिर सदा ज्ञानमें ज्ञानका रमण होता है। केवलज्ञान ध्रुव है उसपर कभी आवरण नहीं आसक्ता (कलनं नन्त अनन्त नन्त कलनं कमलं च उवनं जिनं) यह ज्ञान अनन्तानन्त शक्तिका धारी है, कमल समान प्रफुल्लित जिनेन्द्रका आत्मा इस ज्ञानका अनुभव करता है (कमलं केवल उवन उवनं उत्पन्न अर्क मयं) कमल समान आत्मामें केवलज्ञानका उदय जब होजाता है तब ज्ञान सूर्य आप आपमें सदा चमकता रहता है (कलनं कमल सुयं च सुयं च रमनं कलनं कमलं धुवं) तब आत्मा स्वयं परकी सहायताके विना अपने ही कमल समान आत्माका अनुभव करता है, आप आपमें रमण करता है। वह प्रफुल्लित कमल समान परमात्मा सदा ध्रुव रहता है ॥ ३ ॥

(जं जं अर्क सु अर्क अर्क उवनं अर्कस्य अर्क मयं) जैसे२ ज्ञान सूर्यका प्रकाश होता जाता है वैसे२ यह ज्ञान सूर्य आप रूप ही रहता है, परम समतारसमें मग्न रहता है (नन्तानन्त सु अर्क अर्क रमनं अर्क प्रवेसं धुवं) उस ज्ञान सूर्यमें अनन्तानन्त ज्ञानकी किरणें झलक जाती हैं, इसीमें आत्माका रमण रहता है। आत्मा ध्रुवरूपसे उस ज्ञानसूर्यमें मानो प्रवेश कर जाता है (तं अर्क आयरन उवन कलनं अर्क सु अर्क समं) उस सूर्यमें आचरण करनेसे उसका प्रकाश सदा प्रकाशित रहता है। वह ज्ञान सूर्य समभावका धारी है। उसमें राग

द्वेष नहीं है (सहयारं हिय रमन कलन कलियं कलियं च जिनयं जिनं) उस ज्ञानकी सहायतासे आत्माको प्रत्यक्ष जानकर वे अरहन्त प्रभु अपने हितमें या आनन्दके अनुभवमें रमण करते हैं, वे स्वस्वरूपका अनुभव करनेवाले वीतरागी जिन हैं ॥ ४ ॥

(कलनं कलन सु नन्त नन्त ममलं अर्क सु अर्क समं) आत्माका अनुभव सो अनन्त गुणधारी, शुद्ध, सूर्यसमान व समताभावरूपी आत्माका अनुभव है (अर्क अर्क प्रवेस अर्क समयं समयं सुयं धुव पदं) आत्मारूपी सूर्यका अपने ज्ञानस्वभावमें प्रवेश करना सो ही ज्ञान सूर्यधारी आत्माका स्वरूप है। यही आत्मा स्वयं अविनाशी पदका धारी है (सिय उवनं धुव अर्क अर्क रमनं उत्पन्न कर्न ममं) आत्मामें रमणसे शुद्ध भाव झलकता है, वहीं अविनाशी सूर्य समान आत्मामें रमण है, वही समभाव मोक्षका साधक है (कर्न सुवन उवन उवन कमकं कमलं च जिनयं जिनं) इस साधनका अभ्यास करते हुए आत्मारूपी कमलका विकाश होजाता है, यही कमल वीतरागी जिन भगवान हैं ॥ ५ ॥

(२) चरनसी अर्क।

(कमलं कलन सु उवन उवन चरनं चरनं सु चरनं जुतं) आत्मारूपी कमलके सेवनसे चारित्रका प्रकाश होता है। यह चारित्र स्वरूपाचरण चारित्ररूप है (चरनं चरन अनंत नंत रवनं सहयार कमकं सुयं) अनंत गुणधारी आत्मामें परिणमन करना ही चारित्र है। इसी चारित्रकी सहायतासे आत्मारूपी कमल स्वयं प्रफुल्लित होता है (चर चरन चरं चरंति चरियं चरनं चरं ध्रुव पदं) यह चारित्र आत्माका ध्रुव अविनाशी स्वभाव है। यह अपने चारित्र स्वभावसे आपसे आपमें आपको चला रहा है। भावार्थ–चारित्र गुण अपने स्वभावमें परिणमन कर रहा है (चरनं चरन चरं चरं सु चरियं सहयार कमलं धुवं) जब यह चारित्र आपसे आपमें आचरण करता है तब उस वीतराग चारित्रके प्रतापसे आत्मारूपी कमलका ध्रुव रूपसे विकाश होता है। रत्नत्रय गर्भित स्वानुभव ही चारित्र है, जो अरहंतपदका साधक है ॥ ६ ॥

(३) कर्नसी अर्क।

(कलनं कलन उवन कमल ममलं चरनं समं मं धुवं) आत्माका अनुभव करते हुए आत्मारूपी कमलमें निर्मलता होती है तब समभावरूप वीतरागचारित्र पैदा होता है, यह स्वभावसे ध्रुव है (जं कलनं जं कमल

चरन उवनं नंतं च कर्न समं) जैसा जैसा इस वीतरागचारित्रका अभ्यास किया जाता है वैसा वैसा आत्मा-रूपी कमलमें आचरण बढ़ता जाता है तथा समभावरूपी साधन झलकता है जो अनंत गुणका विकाशक है (नंतानंत सु अर्क अर्क उवनं सुवनं च समयं धुवं) इसी साधनसे अनंत शक्तिधारी ज्ञान सूर्यका प्रकाश होता है तथा आत्मा ध्रुव रूपमें आपमें ही परिणमन करता है (कलनं कमल सु चरन नंत उवनं कर्न समं धुव पदं) आत्मानुभवसे आत्मारूपी कमलमें भलेप्रकार आचरण होनेसे अनन्त गुण प्रगट होजाते हैं। यह समभाव ही ध्रुव अविनाशी पदका साधन है ॥ ७ ॥

(४) सुवनसी अर्क ।

(कलनं कमल सु चर्न कर्न समयं अर्क सुअर्क मयं) आत्मारूपी कमलका अनुभव ही स्वचारित्र है, वही साधन है, वह आत्मारूप ही है, वही प्रभा सहित सूर्य है (जं अर्क सुइ नन्त नन्त रमनं रमनं सुरं दिनयरं) यह आत्मारूपी सूर्य अनन्त गुणोंमें रमण स्वरूप है, यही सर्व अज्ञान अन्धकारको मेटनेवाला ज्ञान प्रकाशको झलकानेवाला दिनकर सूर्य है (अर्क अर्क प्रवेस नन्त ममलं हुवयार सुरनं जिन) यह सूर्य अपनी ही प्रभामें प्रवेश रूप है। यह आत्मारूपी सूर्य अनन्त बलधारी शुद्ध है। यही स्वरूप रमणमें आप ही उपकारी है। यही जिन स्वरूप है (सुवनं उवन अनन्त नन्त ममलं उववन साहं धुवं) स्वरूपमें परिणमनसे अनन्तानन्त शक्तिधारी शुद्ध आत्माका उदय होता है। ध्रुव साधने योग्य सिद्ध स्वरूपकी सिद्धि होती है (हुवयारं तं नन्त नन्त अर्क सुवनं अन्मोय कमलं सुयं) स्वरूपमें रमणका यह उपकार है कि अनन्त बलधारी सूर्य समान आत्माका परिणमन होते हुए आनन्दका अनुभव होता है। वह स्वयं कमल समान विकसित होजाता है ॥ ८ ॥

(५) हंससी अर्क ।

(कमलं चरन सु कर्न सुवन सुवनं उवनं सुयं सुइ जिनं) आत्मारूपी कमलमें आचरण करना ही वह साधन है जिस साधनको करते करते स्वयं यह आत्मा जिन होजाता है (अर्क नन्तानन्त रमन सुवनं हंसं च साहं धुवं) अनन्त गुण धारी सूर्य समान आत्मामें रमण करनेसे हंसके समान निर्मल ध्रुव आत्माकी सिद्धि होजाती है (हंसं हंस सु अर्क अर्क समयं साहं सुयं साहनं) आत्मा ही हंस समान निर्मल है, यही उत्तम सूर्य है, यही साध्य है, यही स्वयं साधन है। आपके ध्यानसे ही आपका विकास होता है (हंसं हंस उवन उवन सुवनं

अन्मोय कमलं जिनं) हंसके समान निर्मल आत्माका प्रकाश होना ही आनन्दका प्रगट होना है। यही कमल समान प्रफुल्लित जिन स्वरूप वीतराग आत्माका स्वरूप है ॥ ९ ॥

(६) अवयाससी अर्क ।

(अन्मोयं सुइ कमल चरन कर्न सुवनं हंसं अनन्तं हुवं) आनन्दमई कमल समान प्रफुल्लित आत्मामें आचरण करना सो ही साधन है जिससे हंस समान निर्मल आत्मा अपने अनन्त स्वभावमें परिणमन करता है (उव उवनं अवयास नन्तनन्त ममलं अर्क अनन्तं परं) इसी साधनसे अनन्तानन्त ज्ञानका प्रकाश होता है, यह अनन्त व उत्कृष्ट सूर्य है (अर्क नन्त सुअर्क अर्क ममलं अवयास साहं सुयं) यही अनन्त शक्तिशाली सूर्य शुद्ध प्रभाका धारण ज्ञान है, यही स्वयं साधने योग्य है (नन्तानन्त सुदिप्ति दिष्टि उवन समयं अन्मोय कमलं जिनं) इसीसे आत्मा अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शनको प्रकाश करता हुआ आनन्दके साथ कमल समान प्रफुल्लित वीतराग जिन होता है ॥ १० ॥

(७) दिप्तिसी अर्क ।

(कमलं कर्न सुवन कलन चरनं अवयास हंसं हुवं) कमल समान आत्मामें साधन करनेसे चारित्रका अभ्यास होता है उसीसे ज्ञान हंसके समान निर्मल होजाता है (दिप्ति दिप्ति सुदिप्ति दिष्टि ममयं दिप्ति प्रवेसं सुयं) तथा आत्मा अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शनके प्रकाशको प्रकाशित करके स्वयं उसी प्रकाशमें मगन रहता है (दिप्ति दिप्ति उवन दिष्टि उवन ममलं नन्त अनन्तं ममं) ज्ञान प्रकाशके द्वारा ही शुद्ध व अनन्त ज्ञान तथा अनन्त दर्शन तथा साम्यभाव झलक जाते हैं (नन्तानन्त सुदिप्ति दिष्टि उवन समयं विन्यान कमलं कलं) आत्मा अनन्तज्ञान व अनन्त दर्शनमें रहता हुआ ज्ञानमई कमल समान आत्माका स्वाद लिया करता है ॥ ११ ॥

(८) सुदिप्तिसी अर्क ।

(कमल कलन सुचरन कर्न अवयास सुवनं मयं) आत्मारूपी कमलका सेवन ही स्वचारित्र है। यही साधन है जिससे ज्ञानका ज्ञानमें परिणमन होता है (दिप्ति दिप्ति प्रवेस नन्त उवन समयं दिप्ति सुदिप्ति सुयं) जब ज्ञान ज्ञानमें प्रवेश करता है तब अनन्त ज्ञानका सुन्दर प्रकाश स्वयं प्रगट होजाता है (सुयं बुद्ध सुबुद्ध अर्क अर्क ममलं दिष्टि सुदिप्ति सुयं) यह आत्मा स्वयं ज्ञानी होकर ज्ञानकी निर्मलता करता है, शुद्ध सूर्य समान

प्रगट होता है। इसके स्वयं शुद्ध दर्शन व ज्ञान प्रगट होते हैं (दिप्तिं दिष्टि अनन्त दिप्ति दिप्ति सुयमयं अन्मोय कमलं जिनं) तब यह आत्मा अनन्त दर्शन व अनन्त ज्ञानके प्रकाशको रखता हुआ आनन्दमें मगन होकर कमल समान विकास प्राप्त श्री वीतराग जिन होजाता है ॥ १२ ॥

(९) अभयसी अर्क।

(कमलं कर्न सुयं सुयं सु उवनं अवयास नन्तं परं) आत्मारूपी कमलका साधन करते करते वह स्वयं ही उत्कृष्ट अनन्त ज्ञान प्रगट होजाता है (अवयासं तं नन्त नन्त ममल उवन साहंति अभयसियं) जब अनन्तानन्त ज्ञान शुद्धताके साथ प्रगट होजाता है तब ही सर्व भय रहित शुद्धोपयोग साध लिया जाता है (अभयं अभय सुअर्क अर्क अभय ममलं भयविलय अभयं सुयं) भय रहित निर्भय आत्मारूपी सूर्यके अनुभवसे ही निर्मल, भयरहित आत्मारूपी सूर्य प्रगट होता है तब सर्व भय क्षय होजाता है, आत्मा स्वयं निर्भय रहता है (नन्तानन्त सुअर्क दिप्ति दिष्टि रुहर उवनं कमलं च अभयं पदं) तब आत्मामें अनन्त ज्ञान दर्शन सूर्यकी ज्योतिके समान प्रगट रहते हैं ऐसे ही अरहन्तसे दिव्य वाणीका प्रकाश होता है। यही कमल समान विकसित आत्मा निर्भय पदका धारी है ॥ १३ ॥

(१०) सुर्कसी अर्क।

(अभयं अर्क सुदिप्ति अर्क दिस्टि ममलं कमलं च कर्न मयं) भय रहित ज्ञानदर्शनमई सूर्य समान तथा शुद्ध कमल समान आत्माका अनुभव ही साधन है (उववन उव उवन अर्क अर्क ममलं अवयास सुर्क मयं) उसीसे शुद्ध ज्ञान स्वभावी सूर्यका प्रकाश होता है जो शुद्ध व शांत सूर्य है (सुर्क सुर्क सुअर्क अर्क उवन ममलं अवयास सुर्क सुयं) शुद्ध व शान्त सूर्य समान आत्मा ही सूर्य है जहां शुद्ध ज्ञान स्वयं प्रकाशित है (उवनं सुइ सुवन सुयं सुयं च सुवन सुर्क सु ममलं धुवं) ज्ञानका प्रकाश आप आपमें परिणमन करता हुआ परम शुद्ध, ध्रुव, शांत, सुन्दर सूर्य है ॥ १४ ॥

(११) अर्थसी अर्क।

(अर्क अर्क सु अर्क अर्क उवन उवनं अर्थ अनन्तं परं) ज्ञान सूर्य शांत भावसे प्रगट होता हुआ अनन्त गुण धारी श्रेष्ठ आत्मारूपी पदार्थको प्रगट करता है (लष्यं लषि अलष्य उवनं गम्यं अगम्यं सुयं) जिस आत्मामें

लक्ष्य तथा अलक्ष्य, और गम्य तथा अगम्य सर्व पदार्थोंका स्वयं ज्ञान है अर्थात् इंद्रियगोचर व अतीन्द्रिय-गोचर स्थूल सूक्ष्म सर्व पदार्थोंका ज्ञान स्वयं प्रगट है (दर्स दर्स सुदर्स दर्स उवन ममलं मध्दं अनन्तं प्रियं) तथा वहां अनुभव करने योग्य आत्मस्वरूपके अनुभव करनेवाले शुद्ध क्षायिक दर्शनका प्रकाश है जिनकी वाणी बड़ी ही प्रिय व अनन्त पदार्थोंको झलकानेवाली है (अवयासं तं नन्तनन्त उवन समयं कमलं च अर्थ जिनं) उस आत्मामें अनन्तानन्त ज्ञान प्रगट है। वही आत्मारूपी पदार्थ कमल समान प्रफुल्लित वीतराग जिन हैं ॥१५॥

(१२) विंदसी अर्क।

(अर्थ अर्थ सुअर्थ अर्थ अर्क ममलं कमलं च कर्न समं) सर्व पदार्थोंमें मुख्य पदार्थ सूर्य समान तथा कमल समान शुद्ध आत्मा है उसीमें रमनेसे जो साम्यभाव होता है वही मोक्षका साधन है (हिययारं हिय सुवन अर्क उवनं अवयास ममलं समं) वही हितकारी है, हितमें परिणमनशील है, उसीसे सूर्यका प्रकाश होता है, वहीं शुद्ध व समभाव स्वरूप ज्ञान है (उववन्न उववन्न उवन रमनं नन्तं अनन्तं सुयं) वही ज्ञान उन्नति करते करते आत्मामें रमण होनेसे स्वयं अनन्त ज्ञान होजाता है (विन्यानं सुइ नन्तनन्त विंद समयं विंदस्थ कमलं जिनं) वही अनन्त ज्ञान आत्मामें अनुभव रूप है। वही अनुभवमें लीन कमल समान प्रफुल्लित जिनराज हैं ॥१६॥

(१३) नन्दसी अर्क।

(उवनं कमल सुकर्नं चरन सुवन उवनं उवनं अवयास दिप्ति मयं) आत्मारूपी कमलमें आचरण करना है सो ही साधन है उसीमें रमण करनेसे अनन्त ज्ञान प्रगट होजाता है (अभयं दिप्ति सु दिप्ति सुर्क अर्थ समयं विन्यान विंदं जयं) उसी ज्ञानको निर्भय, प्रकाश स्वरूप, उत्तम सूर्य, उत्तम पदार्थ आत्मा तथा ज्ञान चेतनामें रमण स्वरूप कहते हैं उसकी जय हो (हिययारं सहयार सुयं सु विंद रमनं नन्दं सुयं नंदनं) वही हितकारी है, वही सहकारी है, वही आत्मानुभव रूप है, वही आनन्दमय, स्वयं आनन्द स्वरूप है (अर्थ अर्थसमं सनन्द नन्द ममकं नन्द सु उवन नन्दनं) आत्मारूप पदार्थ समभाव रूप है, आनन्दमय है, शुद्ध है, वहां सदा ही आनन्दका प्रकाश है ॥ १७ ॥

(१४) आनन्दसी अर्क।

(जं जं अर्क सुनन्द नन्द उवन रमनं आनन्द नन्दं जयं) जब आत्मारूपी सूर्य स्वाभाविक आनन्दमें मगन

होकर रमता है तब वहां आनन्द ही आनन्द रहता है ऐसे आनन्दकी जय हो (जैवनन्त जै जै जयं च जयनं अर्क अनन्त धुवं) उस अनन्त गुणधारी ध्रुव आत्मारूपी सूर्यकी जय हो, जय हो, वह सदा विजयरूप है (दिप्ति दिप्ति सुदिप्ति दिप्ति रमन दिपियं दिष्टं च ममलं पदं) उस आत्मारूपी सूर्यके प्रकाशमें भलेप्रकार रमण करनेसे शुद्ध ज्ञान व शुद्ध दर्शन धारी पद प्रगट होजाता है (नन्तानन्त सुदिप्ति दिप्टि उवन सुवनं आनन्द कमलं जयं) जहां अनन्त ज्ञान व अनन्त दर्शन प्रगट होजाता है ऐसे आनन्दमय कमलकी जय हो ॥ १८ ॥

(१५) समयमी अर्क ।

(जं जं अर्क अनन्त नन्त ममल रमनं तं तं समं समयत्वं) जैसे जैसे आत्मारूपी सूर्य अनन्तानन्त बल सहित अपने शुद्ध स्वभावमें रमण करता है तैसे तैसे समताभावमई आत्मा होता जाता है (सम उत्तं सम उवन उवन ममयं हिययारं हुव साश्वतं) जैसा समभाव कहा गया है वैसा समभाव प्रगट होता जाता है वैसे वैसे ही हितकारी अविनाशी आत्मा प्रगट होता जाता है (जिन जिनयं जिन रमन उवन वयनं दर्सं जिनं दर्सितं) श्री जिनेन्द्र कर्मविजयी हैं, वीतरागतामें रमण कर रहे हैं, उन्हींसे दिव्यवाणीका प्रकाश होता है, क्षायिक सम्यग्दर्शनसे श्री जिनेन्द्रने आपको अनुभव किया है (नन्तानन्त समं सुयं च समयं कमलं च कर्नं समम्) वहां अनन्त शक्तिधारी समभाव है इसे ही स्वयं समयरूप या कमलरूप या समभावमय साधन कहते हैं ॥ १९ ॥

(१६) हिय रमणी अर्क ।

(जं उवनं उव उवन उवन रमनं हिययार नन्तं जिनं) प्रकाशरूप सम्यग्दर्शन तथा ज्ञानमें रमण करनेवाले अनन्त गुण सहित श्री जिनेन्द्र प्रगट है (हिययारं सुइ रमन रमन अर्ह अर्ह म उवनं सुयं) वे ही हितकारी रत्नत्रय धर्ममें स्वयं रमण करते हैं, वे ही पूजने योग्य अरहन्त भगवान स्वयं उदयरूप हैं (सहयारं सब्द रमन रमन ममलं च हिय उवनं जयम्) जिन्होंने शुक्लध्यानमें शब्दकी सहायतासे शुद्ध रत्नत्रयमें रमण करके स्वात्महितको प्रगट किया है उनकी जय हो (हिय उवनं सु नन्त नन्त जयनं हिय रमन कमलं जयं) हितस्वरूप अनन्तानन्त गुणोंसे पूर्ण कर्मविजयी कमल समान आत्मा अपने हितमें रमण करते हैं उनकी जय हो ॥ २० ॥

(१७) अलषमी अर्क ।

(कमनं कमल सुकर्नं सुजन उवन रमनं अवयाम नन्तं सुयम्) आत्मारूपी कमलमें लीन होना मोक्षका सुन्दर

साधन है इसीमें परिणमन करनेसे व रमण करनेसे स्वयं अनन्त ज्ञानका उदय होजाता है (विप्ति नन्त सु-विप्ति अभय रमनं सुर्कं सु अर्थ समम्) वहां अनन्त ज्ञानका प्रकाश होते हुए निर्भय पदमें रमण होता है, वहीं शांतिमय सूर्य है, वहीं परम पदार्थ समभाव रूप है (विन्यानं सुइ विंद विंद सुन्य समयं नन्दं आनन्दं जयम्) वही विज्ञान है, वही ज्ञानचेतना है, वही परभावसे शून्य है, वही आत्मा है, वही आनन्दमें मगन है, उसीकी जय हो (ममय उवन हियं अलष कषियं अलषरय कमलं जयम्) उसी आत्मामें हितका प्रकाश है, वहीं अनुभव योग्य वस्तुका अनुभव है। अनुभव योग्यको अनुभव करनेवाले कमल समान आत्माकी जय हो ॥ २१ ॥

(१८) अगमसी अर्क।

(उवन उवन सियं सुभाव सुयं सुयं च रमनं अगमं अनन्तं परम्) जहां शुद्धोपयोगमई स्वभाव प्रगट है वहां आपसे ही आपमें रमण है, वही श्रेष्ठ अनन्त ज्ञानगोचर पद है (हिययारं सिय अर्क अर्क ममल रमनं सुद्धं धुवं धुवपदम्) वही हितकारी पद है, वही शुद्ध ज्ञानमई सूर्य है जो शुद्ध प्रकाशमें रमणरूप है, परम शुद्ध है, ध्रुवरूप है, वही अविनाशी पद है (सिय हुव नन्त अनन्त अगम अगमं अर्कं सुअर्कं सुयम्) वही हितकारी अनन्तानन्त शक्तिधारी अनुभव योग्यको अनुभव करनेवाला स्वयं ज्ञानमई सुन्दर सूर्य है (अषयं अषय पदं अषय सु रमनं अगमं सु कमलं जयम्) वही अक्षय है, अविनाशी पद है, अविनाशी स्वभावमें रमणरूप है, ज्ञान गम्य है, कमल स्वरूपमें उनकी जय हो ॥ २२ ॥

(१९) सहकारसी अर्क।

(उवन उवन सिय अर्क अर्क साह समयं सहयार सिद्धं धुवम्) शुद्ध ज्ञान सूर्यका उदय होरहा है, इसीके द्वारा आत्माका साधन होता है, उसीकी सहायतासे ध्रुव सिद्धपद प्राप्त होता है (हिययारं सिय अर्क अर्क नन्त ममलं साहंति अर्थ जिनम्) हितकारी शुद्ध ज्ञानसूर्य शुद्ध अनन्त प्रकाशका धारी है, इसीके द्वारा वीतराग पदार्थका साधन होता है (साहं साह जिन अर्क अर्क जिनय जिन समयं अयं च विर्ति जयम्) साधने योग्य वीतराग, सूर्य समान आत्मा है, जो कर्मविजयी आत्मा है व जो ज्ञान स्वरूप है उसकी जय हो (जैवन्तं जै जै अवल बलि जयं सहकार कमलं जयम्) अतुल बलधारी आत्माकी जय हो जिसके अनुभवकी सहायतासे आत्मारूपी कमल प्रफुल्लित होता है ॥ २३ ॥

(२०) रमनसी अर्क।

(उवन उवन सिय अर्क उवन रमनं रमनं सियं सिय पदम्) शुद्धोपयोगधारी सूर्यका उदय हुआ है, इसी सूर्यमें रमण करनेसे शुद्ध भावमें रमण होता है इसीसे शुद्धपद प्रगट होता है (हिययारं सिय रमन अर्हं रमन ममलं रमनं सुरं विजनम्) यही हितकारी है। शुद्ध स्वभावमें रमण करना है सो ही अरहन्त पदमें रमण है, सो ही मल रहित भावमें रमण है, वही सूर्य समान प्रगट है (सुर विंजन सह सह सहय जिन वमनं कमलं च कर्नं रमम्) सूर्य समान प्रगट भावके साथ श्री जिनेन्द्र आपमें रमण करते हैं, वे ही कमल स्वरूप हैं, उसीमें रमण करना ही मोक्षका साधक है (रमनं दिप्ति सु दिप्ति दिष्टि दिप्ति रमनं कमलं च सर्वं रमं) वही शुद्ध ज्ञानमें रमण है, वही शुद्ध दर्शनमें रमण है, वही सर्वरूपसे कमल समान प्रफुल्लित आत्मामें रमण है ॥२४॥

(२१) रंजसी अर्क।

(उवन उवन सिय रंज रंज रमन दिप्ति रंज हियं हुव पदम्) शुद्ध आनन्दमय पद प्रगट हुआ है जो रत्नत्रयमें मगन स्वरूप है, वहीं ज्ञानमें मगनता है, वही हितकारी पद है (हिययारं सिय रंज रंज कमलं रंजं मियं पद अर्थयं) वही हितकारी शुद्ध आनन्दमें मगनता है, वही आत्मारूपी कमलमें मगनता है, वही शुद्ध आत्मारूपी पदार्थ है (सहयारं सिय रंज रंज कलन कमलं रंजं जिनं जिनपदम्) वही सहकारी है, वहीं शुद्ध आनन्दमें मगनता है, वहीं कमल समान आत्माके भीतर मगनता है, वही वीतराग स्वरूप जिनपद है (रंज रंज सि लोयलोय उवन उवनं अनन्तं अनन्तं पदम्) वहीं लोकालोकके अनन्तानन्त ज्ञान प्रकाशमें मगनता है, वही अविनाशी पद है ॥ २५ ॥

(२२) उवनसी अर्क।

(उवन उवन सिय अर्क अर्क उवन उवनं उवनं पि उवनं पदम्) शुद्ध भावधारी ज्ञान सूर्यका उदय हुआ है, यही आत्माका सदा प्रकाश रूप पद है (उवनं झडप सुदिष्टि उवन सब्द उवनं उवनं हियं हुवपदम्) इसके साथ ही एक-दम अनन्त ज्ञानका प्रकाश होता है। ऐसे पद धारी अरहन्तसे वाणीका उदय होता है जिससे जीवोंका हितकारी पद प्रगट होता है (अवयासं सुइ उवन उवन कमल कलनं उवनं सु उवनं पदं) ज्ञानके प्रकाशसे ही कमल समान आत्माका विकास है, वही प्रकाश रूप पद है (सहयारं सुइ उवन उवन हंसकमलं उवनं कलन जिन पदं)

आत्मज्ञानकी सहायतासे ही हंस समान निर्मल, कमल समान प्रफुल्लित जिनपद स्वयं प्रगट होजाता है ॥२६॥

(२३) षिपनसी अर्क।

(उवनं उवन सु उवन षिपनं दिस्रिय अन्धं षिपं) जब सम्यग्ज्ञानका उदय होता है तब अज्ञानका क्षय होजाता है। सम्यग्दर्शनकी चमकसे मिथ्यादर्शनका क्षय होजाता है (हियथारं हुव मुक्त संदिष्टि झडप सु मुक्ति षिपनं सुन्यं च सब्दं षिपं) सम्यग्दर्शन व सम्यग्ज्ञान बड़े हितकारी हैं। उनके द्वारा कर्मफल साम्यभावसे भोग लिया जाता है तब शीघ्र ही भोगे हुए कर्म क्षय होजाते हैं, निर्विकल्प शून्य पद प्रगट होजाता है, जहां शब्दकी कोई पहुँच नहीं है (सहयारं सुइ षिपन लिपन षिपिय षिपिनं सिंहं च गज गूथयं) इस आत्म समाधिके द्वारा कर्म क्षय होते होते सब क्षय होने योग्य उसी तरह भाग जाते हैं जैसे सिंहके सामने अनेक हाथी भाग जाते हैं (षिपिनं सिय सुइ षिपन ममल उवन उवनं कुन्यानं षिपनं कम्म लयं) बाधक कर्मके क्षयसे क्षायिक शुद्ध भाव प्रगट होजाता है, कुज्ञान नाश होजाता है, कर्मोंका क्षय होजाता है ॥ २७ ॥

(उवनं उवन सिय अर्क अर्क ममल उवनं रमनं सु रमनं सुयं) आत्म समाधिके अभ्याससे शुद्ध सूर्य समान निर्मल आत्मा प्रगट होजाता है जो स्वयं आपसे आपमें रमण करता है (सहयारं सोइ ममल अर्क अर्क ममलं सुरस्व किरनि जयं) आत्म समाधिकी सहायतासे परम शुद्ध सूर्य समान आत्मा अनन्तज्ञानकी किरणोंके साथ प्रगट होजाता है उसीकी जय हो (सहयारं सोइ ममल अर्क अर्क ममलं नन्नं पदं जिन पदं) आत्म समाधिकी सहायतासे परम शुद्ध सूर्य समान आत्मा प्रगट होजाता है जो जिनपद है व अविनाशी है (ममलं सिय सोइ सुवन उवन कमलं कमलं च जिन उक्तयं) वही शुद्ध कमल है, वही जिनेन्द्र भगवान कथित आपमें रमणशील-कमल है ॥ २८ ॥

(उवनं सिय सुइ उवन उवन ममलं उवनं पदं सिय पदं) शुद्धोपयोग प्रगट हुआ है उसीके द्वारा कर्ममल रहित व रागादि मल रहित शुद्ध आत्मीक पद प्रगट होता है (सिय उवनं धुव उवन उवन ममलं उवनं सियं धुव-पदं) शुद्धोपयोगके द्वारा ध्रुव स्वभाव प्रगट होता है जो मल रहित है, शुद्ध है व अविनाशी पद है (उवनं सिय पय अर्थ सब्द सु सब्द उवनं उवन सिय जयं सुइ धुव जयं) शुद्ध पदधारी पदार्थका प्रकाश होता है अर्थात् जब अरहन्तपद प्रगट होता है तब उनके द्वारा दिव्य वाणीका प्रकाश होता है। ऐसे शुद्ध अरहन्तकी व उनके

ध्रुव आत्माकी जय हो (ध्रुव उवनं तं नन्त सिय कर्न उवन समयं उवनं समय मुक्ति जयं) आत्माका ध्रुव रूपसे प्रकाश होना वही अनन्त शुद्ध भाव है। वही वह साधन है जिससे आत्मा सर्व कर्म रहित परमात्मा होकर मुक्तिको जीत लेता है ॥ २९ ॥

भावार्थ—इन २९ गाथाओंमें निश्चय रत्नत्रयकी एकतारूप शुद्धोपयोगका मनन किया गया है। शुद्धोपयोग ही मोक्षमार्ग है। यह भाव सम्यग्दृष्टीके प्रगट होजाता है। इसीका अभ्यास होते होते भावोंकी उन्नति होती जाती है और निर्ग्रन्थ साधु क्षपकश्रेणी चढकर चार घातीय कर्मोंका क्षय करके अरहन्त होजाता है, फिर सर्व कर्मोंका क्षय करके सिद्ध होजाता है। ऊपरकी गाथाओंमें आत्माको सूर्य समान मानके उसीके मननके चौबीस प्रकार बताए हैं। इनके अभ्याससे उपयोग आत्माके स्वरूपमें रमण करता हुआ आत्मानुभवको प्राप्त कर लेता है।

मुमुक्षु जीवको उचित है कि सर्व चिंताको छोड़कर एक शुद्धात्माका ही अनुभव करे।

श्री योगिन्द्राचार्य योगसारमें कहते हैं—

जिण सुमिरहु जिण चिंतवहु जिण झायहु सुमणेण। सो झाइंतह परमपउ लब्भइ इक्कखणेण ॥ १९ ॥
सुद्धप्पा अरु जिणवरहं भेउ म किमपि वियाणि। मोक्खह कारण जोईया णिच्छइ एउ वियाणि ॥ २० ॥
जो जिणु सो अप्पा मुणहु इहु सिद्धंतहु सारु। इउ जाणेविण जोयइहु छण्डहु मायाचारु ॥ २१ ॥
जो परमप्पा सो जि हउं जो हउं सो परमप्पु। इउ जाणेविणु जोइआ अण्ण म करहु वियप्पु ॥ २२ ॥

भावार्थ—जिनका स्मरण करो, जिनका चिन्तवन करो, जिनको मन लगाकर ध्याओ जिसके ध्यानसे क्षण मात्रमें परमपद प्रगट होजाता है। शुद्धात्मा और जिनवरमें निश्चयसे कोई भेद नहीं जान, इसीका ध्यान मोक्षका कारण है। सिद्धांतका सार है कि जो जिन है वही आत्मा है, ऐसा जानकर मायाचारको छोड़, जो मैं हूँ सो ही परमात्मा है, जो परमात्मा है सो ही मैं हूँ, ऐसा जानकर हे योगी! दूसरा विचार मत कर।

(९९) पयोगसी अर्क गाथा २०२७ से २०३५ तक।

उवन सियं जिन रमनं, वज्र महावेन स्वेनि जिन रमनं।
विंद अर्क सोह ममयं, अर्क सोई नन्त विंद ममयं च ॥ १ ॥
ममय महाव जिनुत्तं, ममयं मिय ममै उत्त जिन उत्तं।
सो नन्द नन्द आयरनं, नन्द आनन्द नन्द जिन नन्दं ॥ २ ॥
हिययार रमन हिययारं, हिय हुव सहि समय जिन उवनं।
वज्र साह सुइ सयनं, अन्मोय जिन स्वेनि सिद्ध संपत्तं ॥ ३ ॥
जानं लोयालोयं, जयवन्तं अर्क नन्त ममलं च।
जय नन्त नन्त जिन रमनं, जैवन्तो लोय लोय भय विलयं ॥ ४ ॥
लषन लिषिय जिन उवनं, उवनं सुइ अर्क अन्मोय उव उवनं।
लीन लीन जिन अर्क, उवनं सुइ लीन विंजनं सुरयं ॥ ५ ॥
भद्रं भय विलयन्तो, न्यानं उववन्न उवन रंजेइ।
मै उवन उवन सुइ रमनं, मै मूर्ति अन्मोय उवन सुइ अर्क ॥ ६ ॥
सहजं सहाव उवनं, सहजोपनीत सहज पर्म सभावं।
पय उवन उवन पय रमनं, पर्म सभाव उवन विलसन्ति ॥ ७ ॥
विन्यान विंद सोइ समयं, सुनन्त हिययार वज्र सिय उवनं।
जानं जैवन्त जिनुत्तं, लषनं सोइ लीन जिनय जिन रमनं ॥ ८ ॥
भद्र न्यान उववन्नं, मै उववन्न मै मूर्ति जिन रमनं।
अन्मोय उवन जिन स्वेनि, कलन सहावेन मुक्ति गमनं च ॥ ९ ॥

न्वय सहित अर्थ—(उवन सियं जिन रमनं) जब शुद्ध भाव प्रगट होता है तब जिन स्वभावमें रमण होता है (वज्र सहावेन स्रेनि जिन रमनं) वज्रके समान दृढ़ स्वभावके साथ वीतराग भावोंकी सीढ़ीपर चढ़ते हुए रमण होता है (विंद अर्क मोह समयं) तब वहां आत्माको सूर्य समान ज्ञानी आत्माका अनुभव होता है (अर्क सोइ नन्त विंद ममयं च) वह सूर्य अनन्तज्ञानका धारी आत्मा है ॥ १ ॥

(समय सहाव जिनुत्तं) आत्माका स्वभाव जिनेन्द्रने कहा है (समयं सिय ममै उत्त जिन उत्तं) आत्मा स्वभावसे शुद्ध परमात्मा है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (सो नन्द नन्द आयरनं) वह आनन्दमई है। आनन्दमें ही आचरण करनेवाला है (नन्द आनन्द नन्द जिनन्दं) वही आनन्दमें मगन हैं वही वीतरागता सहित आनंदका स्वाद लेनेवाला है ॥ २ ॥

(हिययार रमन हिययारं) वह ज्ञानी हितकारी आत्मामें रमण करता हुआ अपना हित कर रहा है (हिय हुव सहि समय जिन उवनं) इसी हित स्वरूप आत्माके द्वारा जिनका स्वभाव प्रगट होता है (वज्र साह सुइ सयनं) वज्रके समान दृढ़तासे जब आत्मध्यानका साधन किया जाता है तब ही एकाग्रता या लीनता होती है (अन्मोय जिन स्रेनि सिद्ध सम्पत्तं) तब आनन्द सहित वीतरागमई क्षपकश्रेणीपर चढ़कर यह आत्मा सिद्धगतिको प्राप्त कर लेता है ॥ ३ ॥

(जानं लोयालोयं) तब यह लोक तथा अलोकको जान लेता है (जयवन्तं अर्क नन्त ममलं च) ऐसे शुद्ध अनन्त बलधारी सूर्य समान आत्माकी जय हो (जय नन्त नन्त जिन रमनं) अनन्तानन्त वीतराग स्वभावमें रमण करनेवाले प्रभुकी जय हो (जैवन्तो लोयलोय भव विलयं) सर्व भय रहित लोकालोकके ज्ञातादृष्टा भगवानकी जय हो ॥ ४ ॥

(लषन लिषिय जिन उवनं) आत्माका वीतराग विज्ञान लक्षण है उसीके अनुभवसे जिनस्वभाव प्रगट होता है (उवनं सुइ अर्क अन्मोय उव उवनं) तब आनन्दमई सूर्य समान आत्मा प्रकाशमान होजाता है (लीन लीन जिन अर्क) यह सूर्य समान आत्मा अपने ही स्वभावमें लीन रहता है (उवनं सुइ लीन विंजनं सुयं) यह आत्मलीन प्रगट सूर्य समान आत्मा प्रकाशमान रहता है ॥ ५ ॥

(भद्रं भय विलयंतो) जब आत्मामें लीनता होती है तब परम कल्याण होता है, सर्व भय विलय हो जाता है (न्यानं उववन्न उवन रंजो) सम्यग्ज्ञानका प्रकाश होता है उसी प्रकाशमें यह मगन होजाता है

(मै उवन उवन सुइ रमनं) जैसा २ ज्ञान प्रगट होता है वैसा वैसा उसमें रमण होता है (मै मूर्ति अन्मोय उवन सुइ अर्क) आत्मा तब ज्ञानाकार, आनन्दरूप, सूर्य समान प्रभावशाली प्रगट होजाता है ॥ ६ ॥

(सहजे रहाव उवनं) तब सहज स्वभाव आत्माका प्रगट होजाता है (सहजोर नीत सहज धर्म सुभावं) सहज स्वभावके द्वारा ध्यान करनेसे सहज श्रेष्ठ स्वभाव झलक जाता है (पय उवन उवन पय रमनं) तब परमात्माका पद प्रगट होजाता है, उसी पदमें वह रमण करता है (धर्म सभाव उवन विलसंति) तब यह उस प्रकाशित परमात्माके स्वभावमें आनन्द लिया करता है ॥ ७ ॥

(विन्यान विंद सोइ समयं) ज्ञानका अनुभव करना ही आत्माका स्वभाव है (सुनन्त हिययार वज्र सिध उवनं) वह स्वभाव अनन्त है, हितकारी है, वज्रके समान दृढ़ और शुद्ध उदयरूप है (जानं जैवन्त जिनुत्तं) वह जाननरूप ज्ञान जयवन्त हो ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (लषनं सोइ लीन जिनय जिन रमनं) ज्ञान ही जीवका लक्षण है, उसी ही ज्ञानमें लीन वीतराग जिन भगवान रमण करते रहते हैं ॥ ८ ॥

(भद्र न्यान उववन्नं) कल्याण रूप अनन्त ज्ञान प्रगट होगया है (मै उववन्न मै मूर्ति जिन रमनं) ज्ञानके उत्पन्न होनेसे ज्ञानाकार आत्मा वीतराग जिन स्वभावमें रमण करता है (अन्मोय उवन जिन सेनि) श्री अरहन्त भगवान तेरहवें गुणस्थानमें हैं तब अनन्त सुख प्रगट होजाता है (कलन सहावेन मुक्ति गमनं च) वे ही अरहन्त शुक्लध्यान रूप आत्मीक रमण स्वभावसे सर्व कर्म रहित हो मोक्षको प्राप्त कर लेते हैं ॥ ९ ॥

भावार्थ—इन गाथाओंमें भी श्री तारणतरणस्वामीने यही बताया है कि आत्माका लक्षण ज्ञान है। जो सूर्य समान वीतरागताके साथ लोकालोकको देखने जाननेवाला है, इसी ज्ञान स्वभावमें रागद्वेष मोह त्यागकर रमण करनेसे आत्माका मल कटता है और वह शुद्ध होजाता है। सहज स्वभावमें रमण करनेसे ही अरहन्त केवली होकर फिर सिद्ध होजाता है। मुमुक्षु जीवको निरन्तर आत्मलीनताका उद्यम करना योग्य है। इसी स्वानुभवमें आनन्दका स्वाद आता है, इसी स्वादसे अनन्त सुख प्रगट होजाता है।

परमात्मप्रकाशमें कहा है—

अप्पा णाणु मुणेहि तुहुं, जो जाणइ अप्पाणु। जीव-पएसहिं तित्तिडउ, णाणें गयणपवाणु ॥ १०५ ॥

अप्पहं जे वि विभिण्ण वढ, ते वि हवंति ण णाणु। ते तुहुं तिण्णिवि परिहरिवि, णियमिं अप्पुवियाणु ॥ १०७ ॥

अप्पा णाणहं गम्मु पर, णाणु वियाणइ जेण। तिण्णवि मिल्लिवि जाणि तुहुं, अप्पा णाणं तेण ॥ १०८ ॥

भावार्थ—हे भव्य ! तू आत्माको ही ज्ञान जान । जो कोई आत्माको ज्ञान स्वभावी जानता है वही ज्ञानी है । यह ज्ञान जीवके प्रदेशोंके समान आत्मामें व्यापक है तौभी आकाशके समान अनन्त लोकालोकको जानता है । आत्मासे जो भिन्नभाव हैं, वे हे वत्स ! ज्ञान नहीं है । तू तीनों ही धर्म, अर्थ, कामको या रागद्वेष मोहको छोड़कर निश्चयसे आत्माका अनुभव कर । आत्मा नियमसे ज्ञानगोचर है ज्ञान ही आत्माको जानता है इसलिये तू तीनोंको छोड़कर ज्ञान द्वारा अपने आत्माको ही जान ।

(१००) जाकी उवन सेज गाथा २०३६ से २०४७ तक ।

जाकी उवन सेज निमषु रति प्रलय वडे, ताके नयन कोई मति अंजनु कहे ॥ १ ॥
हम वंदे हो स्वामी तरन स नन्दे, अन्मोय अवलबलि तरन जिनन्दे ।
हम वन्दे हो स्वामी जिनय जिनन्दे (आचरी) ॥ २ ॥
जाकी उवन दृष्टि झडप भव प्रलय वडे, ताकी उवन दिष्टिको कोइ मति झडप कहै ॥हम०॥ ३ ॥
जाकी उवन रिष्टि इष्टि रे प्रलय वडे, ताकी उवन सिस्टि मति कोइ रै रिस्टि कहै ॥हम०॥ ४ ॥
जाकी उवन सिस्टि रै माहि प्रलय वडे, ताकी उवन दिस्टि कोइ मति रय दिस्टि कहै ॥हम०॥ ५ ॥
जाकी उवन माहि रै माहि प्रलय वडे, ताके अवयास उवन मति कोइ अवयासु कहै ॥हम०॥ ६ ॥
जाकी उवन अनन्तान रै प्रलय वडे, ताके अनन्त न्यान मति कोइ अन्तरु लहै ॥हम०॥ ७ ॥
जाके अन्मोय न्यान निमष रै प्रलय वडे, ताके मुक्ति रमनि जनि मति कोइ अन्तरु लहै ॥हम०॥ ८ ॥
जाके अन्मोय अवल वलि मुक्ति लहै, ताके उवन सिद्धि सुइ रमनि लहै ॥ हम० ॥ ९ ॥
जं तारन उवन जिन समय सहै, तं समय अनन्ता मोइ सिद्धि लहै ॥ हम० ॥ १० ॥
जं उवन कलन मिरि दिपि दिप्ति सरै, सुइ रमन कलन रंजु उवन लहै ॥ हम० ॥ ११ ॥
जं तरन कलन चर चरन चरै, अन्मोय कमल कलि मुक्ति लहै ॥ हम० ॥ १२ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जाकी उवन मेन निमष्यु रति प्रलय वडे) जिस भव्यजीवकी प्रीति जो अनादिकालसे संसारके कार्योंमें उलझी हुई आत्म कार्यमें सोई पड़ी थी वह प्रीति क्षण मात्रके लिये अर्थात् अन्तर्मुहूर्तके लिये हट जावे अर्थात् उपशम सम्यग्दर्शन प्राप्त होजावे (ताके नयन कोई मति अञ्जनु कहे) उसकी ज्ञानकी आंखमें कोई भी मैल नहीं कट सक्ता अर्थात् वह शुद्ध दृष्टिसे आत्माका अनुभव करता है ॥ १ ॥

(हम वन्दे हो स्वामी तरन स नन्दे) हम श्री अरहन्त भगवानको जो भवसागरसे तरनेवाले हैं आनन्द-मन होकर नमस्कार करते हैं (अन्मोय अवल बलि तरन जिनन्दे) वे जिनेन्द्र अनन्त सुखमई हैं व अनन्त बलके धारी जहाजके समान हैं (हम वन्दे हो स्वामी जिनय जिनन्दे) हम वीतराग जिनेन्द्रको वारवार नमन करते हैं ॥२॥

(जाकी उवन दृप्ति झड़प भव प्रलय वडे) जिसके भीतर सम्यग्दर्शनका प्रकाश होगया है वह शीघ्र ही संसारका नाश कर डालेगा (ताकी उवन रिष्टि कोइ मति झड़प कहे) उसको कर्म-शत्रुओंको घात करनेवाली तलवार प्राप्त होगई है । कोई यह न समझे कि वह छुट जायगी । भावार्थ—शुद्ध क्षायिक सम्यग्दर्शन कभी नहीं गिरता—अवश्य ही कर्मोंका घात कर देता है ॥ ३ ॥

(जाकी उवन रिष्टि इष्टि रै प्रलय वडे) जिसको सम्यग्दर्शनकी खड्ग प्राप्त होजाती है उसकी सांसारीक इच्छाओंकी गति नाश होजाती है (ताकी उवन सिम्टि मति कोइ रै रिम्टि कहे) उसके भीतर जिन शासनका तत्व झलक जाता है वहां कोई तेज छेद नहीं कह सक्ता अर्थात् वहां कोई तीव्र कर्मोंका आस्रव नहीं कह सक्ता (रिस्टिके अर्थ तलवार भी हैं व छेद भी हैं) ॥ ४ ॥

(जाकी उवन सिस्टि रै साहि प्रलय वडे) जिसके भीतर जिन शासनका सार झलक गया है, उसके पाससे संसार-भ्रमणका साधन या कारण दूर होजाता है (ताकी उवन दिष्टि कोइ मति रय दिष्टि कहे) उसके भीतर सम्यग्दर्शन या आत्मदर्शन प्रगट होजाता है, कोई भी इसे संसारदृष्टि या मिथ्यादृष्टि नहीं कह सक्ता ॥ ५ ॥

(जाकी उवन साहि रै साहि प्रलय वडे) जिसके भीतर मोक्षका साधन प्रगट होजाता है उसका संसार भ्रमणका कारण क्षय होजाता है (ताके अवयास उवन मति कोई अययास कहे) उसके भीतर अनन्त ज्ञान प्रगट होजाता है, उसे कोई आकाश द्रव्य नहीं कह सक्ता ॥ ६ ॥

(जाकी उवन अनंतानंत रै प्रलय वडे) जिस अनन्त ज्ञानके उदयसे अनन्तानन्त कर्म जो भवभ्रमणकारी

हैं ये क्षय होजाते हैं (ताके अनंत न्यान मति कोइ अंतरु लहे) उसके अनन्त ज्ञानमें फिर कभी अन्तराय या विघ्न नहीं पड़ सक्ता क्योंकि ज्ञानावरण कर्मका सर्वथा क्षय होगया है ॥ ७ ॥

(जाके अन्मोय न्यान निमय रे प्रलय बडे) जिसके अनन्त सुख सहित अनन्त ज्ञान प्रगट होता है उसी क्षण बाधक कर्म क्षय होजाता है (ताके मुक्ति रमनि जनि मति कोइ अन्तरु लहे) उसको मोक्षरूपी स्त्री प्राप्त होजाती है, कोई इस लाभमें अन्तराय नहीं कर सक्ता ॥ ८ ॥

(जाके अन्मोय अवल वल्लि मुक्ति लहै) जिसको अनन्त बलवाली मुक्ति परमानन्द सहित प्राप्त होजाती है (ताके उवन सिद्धि सुइ रमनि लहै) उसके सिद्ध गति प्रगट होजाती है। वह उसीमें रमण करता रहता है ॥९॥

(जं तारन उवन जिन समय सहै) जो कोई तारण तरण वीतराग जिन आत्मा प्रगट होजाता है (तं समय अनंता सोइ सिद्धि लहै) वह अनन्त गुण धारी आत्मा सिद्धिको प्राप्त कर लेता है ॥ १० ॥

(जं उवन कलन मिरि दिपि दिप्ति सरै) जहां स्वानुभवके प्रकाशसे परम ऐश्वर्य सहित ज्ञान ज्योतिका प्रकाश रहता है (सुइ रमन कलन रंजु उवन लहै) सो ही आत्मा आपमें रमण करता हुआ आनन्दका स्वाद पाता है ॥ ११ ॥

(जं तरन कलन चरचरन चरै) जो अरहन्त भगवान आप आपमें चलते हुए स्वरूपाचरणमें रमण करते हैं (अन्मोय कमल कल मुक्ति लहै) वे ही आनन्दमय कमलके समान प्रफुल्लित हो मुक्तिको पालेते हैं ॥१२॥

भावार्थ—इस छन्दमें सम्यग्दर्शनका माहात्म्य बताया है। अनन्त संसारका कारण मिथ्यात्व है। जब क्षायिक शुद्ध सम्यग्दर्शन प्रगट होजाता है तब उसके भीतर भेदविज्ञानके प्रतापसे स्वानुभवरूपी तलवार चमक जाती है। यह तलवार धीरे धीरे मोहकर्मकी प्रकृतियोंको जखमी करती हुई क्षपकश्रेणीपर दशवें गुणस्थानके अन्तमें मोहको बिलकुल नाश कर डालती है फिर बारहवें गुणस्थानमें शेष तीन घातीय कर्मोंका भी क्षय कर देती है और यह आत्मा अनन्तज्ञान व अनन्तसुख व अनन्तदर्शन व अनन्तवीर्यको प्रगट करके अरहन्त परमात्मा होजाता है। यह अरहन्त भगवान भी स्वानुभवकी खड्गसे शेष अघाती चार कर्मोंको क्षय करके सिद्ध परमात्मा होजाते हैं। मोक्षका एक मात्र उपाय स्वानुभव है। इसीका सेवन भव्यजीवको करना योग्य है। परमात्मप्रकाशमें कहा है—

दुक्खु वि सुक्खु सहंतु जिय, णाणिउ झाण णिलीणु। कम्महं णिज्जर-हेउ तउ, वुच्चइ संग विहीणु ॥ १६१ ॥

विण्णि वि जेण सहंतु मुणि, मणि समभाउ करेइ । पुण्णहं पावहं तेण जिय, संवर-हेउ हवेइ ॥ १६२ ॥
अच्छइ जित्तिउ कालु मुणि, अप्प-सरूवि णिलीणु । संवर णिज्जर जाणि तुहुं, सयल—वियप्प—विहीणु ॥ १६३ ॥

भावार्थ—**हे जीव ! दुःख व सुखको समभावसे सहता हुआ वीतराग स्वसंवेदन ज्ञानी ध्यानमें लीन होकर जब कर्मोंकी निर्जरा करता है तब ही इसको संग रहित असंग व परिग्रह रहित निर्ग्रन्थ कहते हैं। जो ज्ञानी मुनि दुःख सुख दोनोंको सहता हुआ मनमें समभाव रखता है वह अपने उस समभावसे पुण्य तथा पापका संवर करता है । मुनि जितने काल तक आत्मस्वरूपमें लीन रहता है उतने कालतक सम्पूर्ण संकल्प-विकल्पसे रहित होता हुआ नवीन कर्मोंका संवर करता है व पुराने कर्मोंकी निर्जरा करता है ।**

(१०१) जय जय छन्द गाथा २०४८ से २०७९ तक ।

जय जय जयवन्त जिनुत्त पओ, जै जै जै जयो जयो जय उवन पयं ।
जय नन्त नन्त जिन सेनि जयं, जय कलन कमल जिन मुक्ति जयं ॥ १ ॥
जै जै जै जयो जयो जय उवनं, उव उवन उवन उवन विलसन्तओ ।
जै उवन उवन जिन रमन पओ, जै उवन सुइ समय सिद्धि संपत्तओ ॥ २ ॥
जै उवन जयं जिननाथ पयं, जय कलन कमल सुइ मुक्ति जयं ।
जय हिय उवन अवयास पयं, जय कमल कर्न सम मुक्ति जयं ॥ ३ ॥
जय हिय रमन हुव उवन पयं, जय कमल सुवन जिन जिनय जिनं ।
जय गुप्ति जिनं वै दिप्ति रमं, जय जयो कमल सम कर्न जयं ॥ ४ ॥
जय जान मयं जय जिनय पयं, जय कमल उवन सम कर्न जयं ।
जय षिपक सुयं सु स्कंध जयं, जय कमल कर्न ध्रुव मुक्ति जयं ॥ ५ ॥
जय कुनय विलं हिय न्यान रमं, जय कमल कर्न सम मुक्ति जयं ॥ ६ ॥

जय पय उवनं उव उवन समं, जय चेय कमल सम कर्न जयं ।
जय हिय उवनं अस्थान रमं, आयरन कमल सम कर्न जयं ॥ ७ ॥
जय इच्छपयं गुरु गुप्ति रयं, गुरु इच्छ कमल सम कर्न जयं ।
पय पर्म पयं इष्ट उवन जयं, अर्थ उवन कमल सम कर्न जयं ॥ ८ ॥
जय ममल पयं सुइ झडप विलं, जय उवन कमल सम सुवन जयं ।
जय कलन जिनं जय पय उवनं, जय ईज कमल सम सुवन जयं ॥ ९ ॥
जय उवन पयं तत्काल जिनं, जय उवन कमल सम कर्न जयं ॥ १० ॥
जय पदम पयं सोइ जिनय जिनं, पय उवन कमल सम सुवन जिनं ।
जय अप्परयं गुरु गुप्ति जयं, सुइ गुप्ति कमल सम कर्न जयं ॥ ११ ॥
जय उवन जिनं सुइ सिद्धि रय, जय ठवन कमल सम मुक्ति वरं ।
सुइ सुयं रमन सोइ लब्धि जिनं, सोइ लब्धि कमल सम कर्न जयं ॥ १२ ॥
जय जयं जयं जय तार तरं, जय तार कमल सम कर्न जयं ॥ १३ ॥
जय उवन उवन उववन्न पयं, जय उवन कमल सम कर्न जयं ।
जय उवन जयं सुइ उवन पयं, जय उवन कमल जिननाथ सुयं ॥ १४ ॥
जय उवन रमं कल कर्न जिनं, जय रमन कमल सम जिनय जिनं ।
जय चरन चरं सुइ धुव रमनं, उव उवन धुवं सुइ कर्न समं ॥ १५ ॥
जय चरन सियं उव उवन धुवं, धुव उवन उवन सुइ मुक्ति जयं ॥ १६ ॥
सिय उवन धुवं धुव उवन सियं, उव कमल सु नन्तानन्त धुवं ।
धुव उवन सुयं उव नन्त समं, सम कर्न उवन सुइ मुक्ति जयं ॥ १७ ॥

जय चरन धुव उवन, सोइ मुक्ति सिय करन;
जय चरन सिय करन, जिन मुक्ति जय रमन।
सिय चरन धुव ममल, सोइ मुक्ति जय ममल॥ १८॥

जय कमल धुव ममल, सुइ मुक्ति जय ममल;
सुइ उवन जिन कमल, जय कर्न सम ममल।
जय कर्न जिन उवन, धुव मुक्ति जय रमन॥ १९॥

धुव कमल जिन उत्तु, सुइ कर्न जय रमतु।
धुव कमल सम कर्न, सुइ मुक्ति जिन रत्तु॥ २०॥

उव समय जय कमल, उव मुक्ति सुव ममल।
सुइ कमल सुइ सुवनु, जिन जिनय सिय ममलु॥ २१॥

उव उवन दिपि दिष्टि, सुइ कमल जिन इस्टि।
उव उवन सम सिस्टि, सुइ मुक्ति जय रिष्टि॥ २२॥

उव उवन सम उवन, अवयास जिन रमन।
अवयास सुइ कमल, सुइ मुक्ति जिन ममल॥ २३॥

जय नन्त चर चरन, जय कमल जिन रमन।
जय कमल कलि उवन, जय मुक्ति जिन रमन॥ २४॥

जिन कमल उव समय, सुइ कर्न जिन समय।
जय कमल जय कर्न, सम सिद्धि सिय रमन॥ २५॥

जय जय जयो सु उवन पओ, उव उवन उवन उव उत्तऊ ।
कलन कमल उव संपत्तऊ, सम कर्न सिद्धि संपत्तऊ ॥ २६ ॥

ममल ममल जिन उवन पऊ, ममल कमल धुव रत्तऊ ।
ममल सहावे कर्न समं, धुव समय सिद्धि सम्पत्तऊ ॥ २७ ॥

ममल उवन सुइ उवनं, उवन विवान समय जिन रमनं ।
जय समय ममल ममलत्वं, उवनं सह समय सिद्धि संपत्तं ॥ २८ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जय जय जयवन्त जिनुत्त पओ) **जिनेन्द्र भगवानने जिस शुद्ध परमात्मपदकी महिमा बताई है सो जयवन्त हो, जयवन्त हो** (जै जै जै जयो जयो जय उवन पयं) **उस प्रकाशरूप पदकी सदा जय हो, सदा जय हो** (जय नन्त नन्त जिन मेनि जयं) **अनन्तानन्त गुणोंके धारी जिनेन्द्रोंकी जय हो** (जय कलन कमल जिन मुक्ति जयं) **कमल समान प्रफुल्लित आत्माका अनुभव करनेवाले जिनेन्द्रोंकी जय हो जिन्होंने मुक्तिको प्राप्त कर लिया है ॥ १ ॥**

(जै जै जै जयो जयो जय उवनं **शुद्ध ज्ञान प्रकाशकी जय हो, जय हो** (उव उवन उवन उवन विलसंतिओ) **जो प्रकाश आपमें झलकता हुआ आनन्दको भोग रहा है** (जै उवन उवन जिन रमन पओ) **प्रकाशरूप वीत-राग जिन स्वभावमें रमण करनेवाले पदकी जय हो जय हो** (जय उवन सुइ ममय सिद्धि सम्पत्तओ) **जिस पदमें विराजित आत्मा सिद्धिको प्राप्त कर लेता है ॥ २ ॥**

(जय उवन जयं जिननाथ मयं) **प्रकाशमय जिनेन्द्रके पदकी जय हो** (जय कलन कमल सुइ मुक्ति जयं) **जिस पदमें ठहरकर आत्मा कमल समान विकसित आत्माका अनुभव करता हुआ मुक्तिको प्राप्त कर लेता है** (जय हिय उवनं अवयास पयं) **हितकारी प्रकाशरूप अनन्त ज्ञान पदकी जय हो** (जय कमल कर्न सम मुक्ति जयं) **कमल समान आत्मामें अनुभव करनेसे जो समताभाव पैदा होता है वही मोक्षका साधन है उसकी व मुक्तिकी जय हो ॥ ३ ॥**

(जय हिय रमन हुव उवन पयं) **स्वात्महितमें रमण करनेवाले प्रकाशरूप परमात्मपदकी जय हो** (जय

कमल सुवन जिन जिनय जिनं) जो परमात्मा विकसित आत्मारूपी कमलमें परिणमन करते हैं व जो वीतराग कर्मविजयी जिन हैं (जय गुप्ति जिनं वै दिप्ति रमं) तीन योगोंको रोककर अपने गुप्त आत्मस्वभावमें ठहरनेवाले व ज्ञानमें रमनेवाले जिनेन्द्रकी जय हो (जय जयो कमल मम कर्न जयं) आत्मारूपी कमलके अनुभवसे जो समताभाव होता है वही मोक्षका साधन है उसकी जय हो जय हो ॥ ४ ॥

(जय ज्ञान मयं जय जिनय पयं) ज्ञानमई पदकी जय हो, वीतराग जिनपदकी जय हो (जय कमल उवन सम कर्न जयं) मोक्षसाधक आत्मकमलके द्वारा उत्पन्न समभावकी जय हो (जय षिपक सुयं सु स्कन्ध जयं) क्षायिक भाव रूप स्वयं आत्मा नाम अस्ति-कायकी जय हो (जय कमल कर्न धुव मुक्ति जयं) आत्मारूपी कमलमें रमण करना सो ही ध्रुव मुक्तिका साधन है उसकी व ध्रुव मुक्तिकी जय हो ॥ ५ ॥

(जय कुनय विलं हिय न्यान रमं) मिथ्या नय व ज्ञानके नाशसे वह वीरात्मा हितकारी शुद्ध सम्यग्ज्ञानमें रमण करते हैं (जय कमल कर्न सम मुक्ति जयं) आत्मारूपी कमलसे उत्पन्न समभावकी, जो मोक्षका साधक है तथा मुक्तिकी जय हो ॥ ६ ॥

(जय पय उवनं उवन समं) उस परमात्मपदकी जय हो जिसके उदय होते ही समताभाव प्रगट हो जाता है (जय चेय कमल सम कर्न जयं) चिद्रूप कमलकी जय हो जिसमें समताभाव रहे जो मोक्ष साधक है, उस समभावकी जय हो (जय हिय उवनं अस्थान रमं) हितकारी प्रकाशरूप आत्म प्रदेशोंमें रमण करनेवाले भगवानकी जय हो (आयरन कमल सम कर्न जयं) आत्म कमलमें आचरणसे जो समभाव प्रगट होता है व जो मोक्षसाधक है उसकी जय हो ॥ ७ ॥

(जय इच्छ पयं गुरु गुप्ति रयं) इष्ट परमात्मपदकी जय हो जो महान् है व जो स्वानुभवमें रत है (गुरु इच्छ कमल सम कर्न जयं) महान् व इष्ट कमल समान आत्मामें विराजित समभावकी जय हो, यही मोक्ष-साधक है (जय परम पयं इष्ट उवन पयं) प्रकाशरूप अरहन्त परमेष्ठी परमात्मपदकी जय हो (अर्थ उवन कमल सम कर्न जयं) कमलसम आत्मा पदार्थसे उत्पन्न समभावकी जय हो जो मोक्षका साधन है ॥ ८ ॥

(जय ममल पयं सुइ झड़प विलं) शुद्ध पदकी जय हो जिसके द्वारा झड़नेवाले कर्म झड़ जाते हैं (जय उवन कमल सम सुवन जयं) विकसित आत्म कमलकी जय हो तथा उससे निरन्तर बहनेवाले सम रसकी जय हो (जय कलन जिनं जय पद उवनं) वीतरागमय स्वानुभवकी जय हो, उससे प्रकाशित परमात्मपदकी जय हो

(जय ईर्ज कमल सम स्रवन जयं) परिणमनशील आत्मारूपी कमलसे बहनेवाले समभावकी जय हो ॥ ९ ॥

(जय उवन पयं तत्काल जिनं) चार घातीय कर्मके नाशसे उसी समय प्रगट होनेवाले जिनपद्की जय हो (जय उवन कमल सम कर्न जयं) प्रकाशित कमलसम आत्मासे उत्पन्न स्वभावकी जय हो जो मोक्षका साधक है ॥ १० ॥

(जय पदम पयं सोइ जिनय जिनं) कमल समान विकसित पद्की जय हो, यही वीतराग जिनका पद् है (पय उवन कमल मम सुवन जिनं) इस पद्के प्रकाशसे आत्मारूपी कमलसे समरस बहता है, उसके स्वाद् लेनेवाले जिन हैं (जय अप्पयं गुरु गुप्ति जयं) आत्मामें रमण करनेवालेकी जय हो। महान आत्मारूपी गुफामें तिष्ठनेवाले भगवानकी जय हो (सुइ गुप्ति कमल सम कर्न जयं) उस गुप्त आत्मारूपी कमलसे प्रगट समभावकी जय हो जो मोक्षका साधन है ॥ ११ ॥

(जय उवन जिनं सुइ सिद्धि रयं) स्वरूपमें स्थित जिन भगवानकी जय हो। वे ही सिद्धभावमें रत हैं (जय उवन कमल मम मुक्ति वरम्) स्वरूपमें स्थित कमल समान आत्मासे प्रगट समभावको लिये हुए जो मुक्तिको वर लेते हैं (सुइ सुयं रमन सोइ लब्धि जिनं) वे जिनेन्द्र आपसे आपमें रमण करते हुए अनन्तज्ञानादि नौ केवललब्धिके धारी हैं (सोइ लब्धि कमल मम कर्न जयं) ऐसी लब्धियोंके धारी कमल समान आत्मासे प्रगट समभावकी जय हो जो मोक्षका साधन है ॥ १२ ॥

(जय जयं जयं जय तार तरं) तारणतरण अरहन्त भगवानकी जय हो, जय हो (जय तार कमल सम कर्न जयं) तारणतरण कमल समान आत्मासे प्रगट समभावकी जय हो, जो मोक्षका साधन है ॥ १३ ॥

(जय उवन उवन उववन्न पयं) परम प्रकाशित परमात्मपद्की जय हो (जय उवन कमल सम कर्न जयं) प्रफुल्लित कमलमें बिराजित मोक्षसाधक समताभावकी जय हो (जय उवन जयं सुइ उवन पयं) प्रकाशनीय पद्की जय हो (जय उवन कमल जिननाथ सुयं) प्रफुल्लित कमल समान जिनेन्द्रकी जय हो ॥ १४ ॥

(जय उवन रमं कल कर्न जिनम्) प्रकाशमान व स्वरूपमें रमण करनेवाले मोक्षसाधक समताभावधारी जिनेन्द्रकी जय हो (जय रमन कमल मम जिनय जिनं) स्वरूपमें रमणशील कमलसमान विकसित समधारी वीतराग जिनकी जय हो (जय उवन रमं कल कर्न जिनं) प्रकाशमान व स्वरूपमें रमण करनेवाले मोक्ष-

साधक समताभावधारी जिनेन्द्रकी जय हो (जय रमन कमल सम जिनय जिनं) स्वात्म–रमणशील कमल समान प्रफुल्लित समभावधारी वीतराग जिनकी जय हो ॥ १५ ॥

(जय चरन सिंय उव उवन धुवं) शुद्ध भावमें आचरण करनेवाले ध्रुव प्रकाशित परमात्माकी जय हो (धुव उवन उवन सुइ मुक्ति जयं) ध्रुवरूपसे प्रकाशित होते हुए वे मुक्तिको जीत लेते हैं ॥ १६ ॥

(सिय उवन धुवं धुव उवन सियं) शुद्धोपयोगसे ध्रुव आत्माका प्रकाश होता है । ध्रुव आत्मामें सदा शुद्ध भाव रहता है (उव कमल सु नन्तानन्त धुवं) परमात्माका स्वभाव कमल समान प्रफुल्लित अनन्तानन्त गुणधारी ध्रुव है (धुव उवन सुयं उवनन्त समं) जो ध्रुवरूपसे स्वयं प्रकाशित है, उनमें अनन्त कालतक सम भाव रहता है (सम कर्न उवन सुइ मुक्ति जयं) जिस किसीमें मोक्षसाधक समान भावका प्रकाश होता है वही मुक्तिको प्राप्त कर लेता है ॥ १७ ॥

(जय चरन धुव उवन सोइ मुक्ति सिय करन) ध्रुव आत्माका आचरण या स्वरूपाचरण चारित्रका प्रकाश होना सो ही मोक्षका साधक शुद्ध भाव है, उसकी जय हो (जय चरन सिय करन जिन मुक्ति जय रमन) शुद्ध भावमें आचरण करना है सो ही जिन स्वरूप मोक्षभावमें रमण करना है उसकी जय हो (सिय चरन धुव ममल सोइ मुक्ति जय ममल) ध्रुव व शुद्ध निर्दोष चारित्रका पालन है सो ही शुद्ध मोक्ष भावका कारण है, उसकी जय हो ॥ १८ ॥

(जय कमल धुव ममल सुइ मुक्ति जय ममल) प्रफुल्लित कमल समान शुद्ध ध्रुव आत्माकी जय हो, यही शुद्ध मुक्ति है, उसकी जय हो (सुइ उवन जिन कमल जय कर्न सम ममल) सो ही प्रकाशमान वीतराग कमल समान आत्मा है । उसके साधक शुद्ध समभावकी जय हो (जय कर्न जिन उवन धुव मुक्ति जय रमन) वीतराग भाव मोक्ष साधककी जय हो । ध्रुव मोक्षभावमें रमणकी जय हो ॥ १९ ॥

(धुव कमल जिन उत्तु, सुइ कर्न जय रमतु) जिनेन्द्रने कहा है कि आत्मा ध्रुव है व कमल समान प्रफुल्लित है, उसीमें रमण करना है सोही मोक्ष साधन है उसकी जय हो (धुव कमल सम कर्न सुइ मुक्ति जिन रत्तु) ध्रुव कमल समान आत्मामें रमणसे जो समभाव होता है वही मोक्ष साधक है, वह भाव परसे भिन्न मोक्ष भावमें या वीतराग भावमें रमणशील है ॥ २० ॥

(उव समय जय कमल, उव मुक्ति सुव ममल) आत्मारूपी कमलकी जय हो, वहां ही शुद्ध मोक्षभाव है

(सुइ कमल सुइ सुवनु, जिन जिनय सिव ममल) वही कमल है, वही स्वपरिणमन है, वही कर्मविजयी रागादि मल रहित शुद्ध भाव जिन स्वरूप है ॥ २१ ॥

(उव उवन दिपि दिष्टि, सुइ कमल जिन इस्टि) वहां ही ज्ञान दर्शनका उदय है, वही कमल समान विकसित जिन भगवान परम प्रिय हैं (उव उवन सम सिस्टि, सुइ मुक्ति जय रिष्ट) वहीं प्रकाशमान समताभाव है। जैसी जिनेन्द्रकी शिक्षा है, वही मुक्ति है, वही कर्मनाशक शस्त्र है ॥ २२ ॥

(उव उवन सम उवन, अवयास जिन रमन) जब स्पष्ट समभाव प्रगट होता है तब अनन्त ज्ञान धारी वीतराग आत्मामें रमण होता है (अवयास सुइ कमल, सुइ मुक्ति जिन ममल) अनन्त ज्ञान स्वरूप आत्मारूपी कमल है वहीं शुद्ध वीतरागभाव मोक्ष स्वरूप है ॥ २३ ॥

(जय नन्त चर चरन, जय कमल जिन रमन) अनन्त स्वचारित्रमें चलना है सो ही कमल समान वीतराग आत्मामें रमण है उसकी जय हो (जय कमल कल उवन, जय मुक्ति जिन रमन) कमल समान आत्माके अनुभव प्रकाशकी जय हो, वीतराग मोक्षभावमें रमणकी जय हो ॥ २४ ॥

(जिन कमल उव समय, सुइ कर्न जिन समय) वीतराग कमल समान आत्मा है सोई साधन है जिससे साक्षात् वीतराग जिनेन्द्र आत्मा होजाता है (जय कमल जय कर्न, सम सिद्धि सिय रमन) कमल समान मोक्ष-साधक आत्माकी जय हो जो समताभावरूप शुद्धोपयोगमें या समताभावमें रमण रूप है ॥ २५ ॥

(जय जय जयो सु उवन पओ, उव उवन उवन उव उत्तऊ) प्रकाशनीय परमात्मा पदकी जय हो जय हो जिसको सदा ही प्रफुल्लित कहा गया है (कलन कमल उव संपत्तऊ) वहां कमल समान आत्माका अनुभव विद्यमान है (सम कर्न सिद्धि संपत्तऊ) समभाव साधनसे सिद्धिका लाभ होता है ॥ २६ ॥

(ममल ममल जिन उवन पऊ) जिनेन्द्रका पद परम शुद्ध है, द्रव्यकर्म व भावकर्म व नोकर्मसे रहित है (ममल ममल धुव रत्तऊ) जो परम शुद्ध ध्रुव स्वभावमें लीन रहता है (ममल सहावे कर्न समं) शुद्ध स्वभावमें रमनेसे समभाव मोक्षसाधक पैदा होता है (धुव समय सिद्धि सम्पत्तऊ) ध्रुव आत्मा इसीसे सिद्धिका लाभ कर लेता है ॥ २७ ॥

(ममल उवन सुइ उवनं) शुद्ध भावका प्रकाश सो ही आत्माका प्रकाश है (उवन विवान समय जिन रमनं) तब ही तारणतरण अरहन्त वीतराग आत्मा स्वरूपमें रमणशील प्रगट होता है (जय समय ममल ममलत्वं)

परम शुद्ध आत्मीक भावकी जय हो (उवने सह समय सिद्धि संपत्तं) जिस शुद्ध भावके उदयसे यह आत्मा उसीके साथ सिद्धिको प्राप्त कर लेता है ॥ २८ ॥

भावार्थ—इस जय जय छन्दमें मोक्ष व मोक्षसाधक भावकी जय मनाई है। मोक्ष आत्माका शुद्ध प्रकाशित भाव है मोक्षका साधन भी आत्मामें रमणशील समभाव है जहां रत्नत्रयकी एकता होती है। शुद्धोपयोग ही मोक्ष साधक है। शुद्ध आत्मापर लक्ष्य रखनेसे शुद्धोपयोग उत्पन्न होता है। इसलिये निरन्तर आत्माके स्वभावका मनन करना आवश्यक है, यही इस स्तुतिका तात्पर्य है। स्तुतिका भाव यही होता है कि स्तुतिकर्ताका मन सर्व अन्य तरफसे हटके एक शुद्ध आत्माके स्वभावका मनन करने लग जावे। यही बात इस स्तुतिमें है। यद्यपि इसमें पुनरुक्ति बहुत है तथापि यह बात अध्यात्म चिंतनमें आवश्यक है। शुद्ध स्वरूपकी भावनामें पुनरुक्तिको गुण माना जाता है।

परमात्मप्रकाशमें कहा है—

तिहुयणि जीवहं अत्थि णवि, सोक्खहं कारणु कोई। मुक्खु मुएविणु एक्कु पर, तेणवि चिंतहि सोइ ॥ १३४ ॥
जीवहं सो पर मोक्खु मुणि, जो परमप्पय लाहु। कम्म—कलंक विमुक्काहं, णाणिय बोल्लहिं साहु ॥ १३५ ॥
पेच्छइ जाणइ अणुचरइ, अप्पिं अप्पउ जो जि। दंसणु णाणु चरित्तु जिउ, मोक्खहं कारणु सो जि ॥ १३८ ॥

भावार्थ—तीन लोकमें जीवोंको मोक्षके सिवाय कोई भी वस्तु सुखका कारण नहीं है इस कारण तू निश्चयसे एक मोक्ष हीका चिन्तवन कर। कर्मरूपी कलंकसे रहित जीवोंको जो परमात्माकी प्राप्ति है उसीको नियमसे तू मोक्ष जान, ऐसा ज्ञानी साधु कहते हैं। जो कोई अपने अपनेको देखता है, जानता है तथा आचरण करता है वही जीव दर्शन ज्ञान चारित्ररूप होता हुआ मोक्षका कारण है। आपसे ही आपकी सिद्धि है।

(१०२) श्रेणी बधाओ गाथा २०७६ से २०९२ तक।

कौन सेनि उवनु कौन सेनि वीर्य, कौन सेनि उवनु वृद्धि धुव लीह।
कौन सेनि समय कुसुम सेनि कौन, कौन सेनि अनन्त नन्त कल उवन ॥ १ ॥

उवन सेनि उवनु चरन सेनि वीर्य, उवन सेनि उवनु-वृद्धि ध्रुव लीह ।
उवन सेनि समय कुसुम सेनि सुवन, कमल सेनि कन-मुक्ति फल रमन ॥ २ ॥
कौन सिय उवनु कौन सिय जाए, कौन सिय उवनु उवनु समुवाए ।
कौन सिय उवनु कौन सिय नन्त, कौन सिय समय सिद्धि संपत्तु ॥ ३ ॥
चरन सिय उवनु कलन सिय जाए, कर्न सिय उवनु उवनु समुवाए ।
सुवने सिय उवनु कमल सिय नन्त, स्रवन सिय समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ ४ ॥
कौन सेनि हियए कौन सेनि हुव, कौन सेनि नन्त नन्त अवयास ।
कौन सेनि दिप्ति सुदिप्ति सेनि कौन, कौन सेनि अभय, भय विलय जिन उवनु ॥ ५ ॥
दिप्ति सेनि हियए सुदिप्ति सेनि हुव, अवयास सेनि अभय कमल अन्मोय ।
हियं सेनि दिप्ति सुदिप्ति हुव सेनि, अभय सेनि नन्त नन्त जिन उवन ॥ ६ ॥
कौन सेनि गहिर कौन सेनि गुप्ति, कौन सेनि जान कौन पय उवनु ।
कौन सेनि कमलु कौन सेनि कलनु, कौन सेनि समय कौन उववन्न ॥ ७ ॥
हिययार सेनि गहिर हुवन सेनि गुप्ति, कलन सेनि जान कमल पय उवनु ।
उवन सेनि कमल अवयास सेनि कलनु, सब्द सेनि समय दिप्ति सेनि उवनु ॥ ८ ॥
कौन सेनि दिप्ति कौन सेनि दिप्ति, कौन सेनि दिष्टि दिप्ति सुइ रमन ।
कौन सेनि सब्द कौन पिउ सूवन, कौन सेनि पिउ सब्द सिद्धि गमनु ॥ ९ ॥
उवन सेनि दिप्ति हियार सेनि दिस्टि, उवन सेनि दिष्टि रमन सेनि दिप्ति ।
कमल सेनि सब्द कर्न पिउ उत्तु, सुवन पिय सब्द सिद्धि सम्पत्तु ॥ १० ॥

उवन सुइ स्रेनि समय स्रेनि सुवन, उवन समय स्रेनि कलन जिन उवनु ।
अवयास स्रेनि कमल कर्न सम उत्तु, कमल कर्न समय सिद्धि संपत्तु ॥ ११ ॥
कौन स्रेनि सहनु कौन स्रेनि साह, कौन स्रेनि नन्तनन्त अवगाह ।
कौन स्रेनि अन्मोय षिपक स्रेनि कौन, कौन स्रेनि मुक्ति नन्त ध्रुव रमन ॥ १२ ॥
अभय स्रेनि सहनु अवल वली साह, अवयास स्रेनि नन्त नन्त अवगाह ।
पिये स्रेनि अन्मोय उवन स्रेनि षिपक, षिपक स्रेनि मुक्ति सिय सिद्धि रमन ॥ १३ ॥
कौन स्रेनि न्यान दर्स स्रेनि कौन, कौन स्रेनि दानु लब्धि स्रेनि कौन ।
कौन स्रेनि भोउ उव भोय स्रेनि कौन, कौन स्रेनि वीय सम्मत्त स्रेनि कौन ॥ १४ ॥
कौन स्रेनि विचरनु सुचरन स्रेनि कौन, कौन स्रेनि कमल केवल स्रेनि कौन ।
कौन स्रेनि समय मुक्ति सुइ रमनु, कौन स्रेनि निलय नन्त जिन रमनु ॥ १५ ॥
सुभाइ स्रेनि न्यान उवन स्रेनि दर्श, अनन्त स्रेनि दान सहज दिपि लब्धि ।
कलन स्रेनि भोउ हिय उवन उव भोउ, चरन स्रेनि वीर्य कमल सम्मत्तओ ॥ १६ ॥
हुवन स्रेनि चरनु सुचरन कर्न सुवन, उव उवन स्रेनि कमल केवल कलि कमल ।
सुवन कर्न समय मुक्ति सुइ उवन, उव उवन उव अगमु निलय जिन रमनु ॥ १७ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(यहां प्रश्नोंको करके उत्तर दिया है)–(कौन स्रेनि उवनु, कौन स्रेनि वीर्य) आत्म-प्रकाशका क्या मार्ग है–आत्मवीर्यका मार्ग है (कौन स्रेनि उवन वृद्धि ध्रुव लीह) वह कौनसा मार्ग है जिससे आत्मप्रकाश बढ़ते बढ़ते ध्रुव स्वभावमें प्राप्त होजाता है (कौन स्रेनि समय कुसुस स्रेनि कौन) आत्माकी उन्न-तिका क्या मार्ग है, आत्माका कमल समान विकाशका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि नन्त नन्त फल उवनु) अनन्त सुखादि फलोंकी प्राप्तिका क्या मार्ग है ॥ १ ॥

(उवन सेनि उवनु) आत्माके ध्यानसे ही आत्माका प्रकाश होता है (चरन सेनि वीर्य) आत्मामें आचरण करनेसे आत्मवीर्य प्रगट होता है (उवन सेनि उवनु वृद्धि ध्रुव लीह) आत्मध्यानके द्वारा ही आत्माका प्रकाश बढ़ते बढ़ते ध्रुव स्वभावमें प्राप्त होजाता है (उवन सेनि समय, कुसुम सेनि सुवन) आत्माका प्रकाश या आत्माका अनुभव आत्माकी उन्नतिका मार्ग है। आत्माका आत्मामें परिणमन करना ही कमल समान आत्मविकाशका मार्ग है (कमल सेनि कर्न मुक्ति कल रमन) कमल समान आत्मामें लय होना ही वह साधन है जिससे अनन्त सुखादि फल रूप मुक्तिमें रमण होता है ॥ २ ॥

(कौन सिय उवनु. कौन सिय जाए) शुद्ध भावका उदय क्या है, शुद्ध भावकी वृद्धि क्या है (कौन सिय उवनु उवनु समवाए) शुद्ध भावका उदय होकर पूर्ण शुद्ध भावका मिलना क्या है (कौन सिय उवनु कौन सिय नन्त) शुद्धोपयोगका उदय क्या है, अनन्त शुद्ध भाव क्या है (कौन सिय समय सिद्धि सम्पत्तु) कौनसा शुद्ध भावधारी आत्मा सिद्धिको पाता है ॥ ३ ॥

(चरन सिय उवनु) स्व चारित्र या आत्मामें रमण रूप भाव सो ही शुद्ध भावका उदय है (कलन सिय जाए) शुद्धात्माका अनुभव ही शुद्ध भावकी वृद्धि है (कर्न सिय उवन उवन समवाए) शुद्ध भावके साधनका पूर्ण उदय ही पूर्ण शुद्ध भावका मिलना है (सुवन सिय उवनु कमल सिय नन्तु) आत्मामें परिणमन ही शुद्धोपयोगका उदय है। आत्माका कमल समान प्रफुल्लित होना अनन्त शुद्ध भाव है (सुवन सिय समय सिद्धि संपत्तु) आप आपमें परिणमन करनेवाला शुद्ध भावका धारी आत्मा सिद्धिको पाता है ॥ ४ ॥

(कौन सेनि हियए कौन सेनि हुव) हितकारी मार्ग क्या है, होमका क्या मार्ग है (कौन सेनि नंत नंत अवयास) अनन्तानन्त ज्ञानके प्रकाशका क्या मार्ग है (कौन सेनि दिप्ति सु दिप्ति सेनि कौन) ज्ञानका क्या मार्ग है, सम्यग्ज्ञानका क्या मार्ग है (कौन सेनि अभय भय विलय जिन उवनु) अभय होनेका अर्थात् भय रहित होकर जिनपदकी प्राप्तिका क्या मार्ग है ॥ ५ ॥

(दिप्ति सेनि हियए सु दिप्ति सेनि हुव) हितकारी मार्ग ज्ञानका साधन है, सम्यग्ज्ञानमें आपको होमना, यही होमका मार्ग है (अवयास सेनि अभय कमल अन्मोय) निर्मल होकर आनन्दमय विकसित कमल समान आत्माका होना ही अनन्तानन्त ज्ञानके प्रकाशका मार्ग है (हियं सेनि दिप्ति सु दिप्ति हुव सेनि) ज्ञानका मार्ग स्वहितमें लीनता है। सम्यग्ज्ञानके प्रकाशका मार्ग ज्ञानमें ज्ञानका होम करना है अर्थात् ज्ञानका

ध्यान है (अभय सेनि नंत नंत जिन उवन) भय रहित जिनपदकी प्राप्तिका मार्ग अनन्त गुणधारी वीतराग-पदका उदय है ॥ ६ ॥

(कौन सेनि गहिर कौन सेनि गुप्ति) गुफाका क्या मार्ग है, गुप्त होनेका क्या मार्ग है (कौन सेनि ज्ञान, कौन पय उवनु) मोक्षमार्गका उपाय है, स्वपदका उदय क्या है (कौन सेनि कमलु कौन सेनि कलनु) कमलके विकासका क्या मार्ग है, स्वात्मानुभवका क्या मार्ग है (कौन सेनि समय कौन उववन) आत्माके आत्मारूप होनेका क्या मार्ग है, स्वभाव उत्पत्ति क्या है ॥ ७ ॥

(हियार सेनि गहिर, हुवन सेनि गुप्ति) हितकारी आत्मा ही गुफाका मार्ग है, उसीमें लीन होजाना गुप्त होनेका मार्ग है (कलन सेनि ज्ञान कमल मय उवनु) स्वात्मानुभव ही मोक्षमार्ग है, स्वपदका उदय कमल समान आत्माका विकाश है (उवन सेनि कमल, अवयास सेनि कलनु) कमलके विकाशका मार्ग आत्माका प्रकाश है या आत्मानुभव है, शुद्ध ज्ञानमें ज्ञानका तिष्ठना ही स्वात्मानुभवका मार्ग है (सब्द सेनि समय, दिप्ति सेनि उवनु) आत्माका आत्मारूप होनेका मार्ग शुक्लध्यान है, जहां शब्द द्वारा श्रुतज्ञानका आलम्बन है। अनन्त ज्ञानका होना ही स्वभावकी उत्पत्ति है ॥ ८ ॥

(कौन सेनि दिप्ति कौन सेनि दिष्टि) अनन्त ज्ञानका क्या मार्ग है, अनन्त दर्शनका क्या मार्ग है (कौन सेनि दिष्टि दिप्ति सु रमन) अनन्त दर्शन व अनन्त ज्ञानमें रमणका क्या मार्ग है (कौन सेनि सब्द कौन पिउ सुवन) शब्दके प्रकाशका क्या मार्ग है, प्रेमसे सुननेका क्या मार्ग है (कौन सेनि पिउ सब्द सिद्धि गमनु) प्रिय भावसे शब्दोंके विचारके द्वारा सिद्ध होनेका क्या मार्ग है ॥ ९ ॥

(उवन सेनि दिप्ति, हियार सेनि दिष्टि) अनन्त ज्ञानके प्रकाशका मार्ग ज्ञानावरणीय कर्मका क्षय होकर स्वभावका उदय है, यही हितकारी उपाय अनन्त दर्शनके प्रकाशका मार्ग है (उवन सेनि दिष्टि रमन श्रेनि दिप्ति) अनन्त दर्शन व अनन्त ज्ञानमें रमणका मार्ग आत्मीक स्वभावका रमण है (कमल सेनि सब्द कर्न पिउ उत्तु) शब्दका प्रकाश दिव्यध्वनिरूप कमल समान विकसित अरहन्त भगवानसे होता है। प्रेमसे सुननेका मार्ग अपने कानोंको भावसे वाणीके सुननेमें जोड़ना कहा गया है (सवन पिय सब्द सिद्धि संपत्तु) बहुत प्रेमसे शब्दोंको सुनकर उनके द्वारा आत्मानुभव करना ही सिद्धि प्राप्तिका उपाय है ॥ १० ॥

(उवन सुइ सेनि) आत्म प्रकाश ही आत्माकी सिद्धिका मार्ग है (समय सेनि सुवन) आत्माके विका-

शका मार्ग आत्मामें परिणमन है (उवन समय स्रेनि कलन जिन उवनु) आत्माको प्रकाश करना ही वह मार्ग है जिससे स्वानुभव होता है और जिन पदका उदय होता है (अवयास स्रेनि कमल कर्न सम उत्तु) अनन्त ज्ञानका प्रकाश होना प्रफुल्लित कमल समान आत्मा होनेका मार्ग है। समभावको मोक्षका साधक कहा गया है (कमल कर्न समय सिद्धि संपत्तु) कमल समान आत्माका साधन ही सिद्धि गतिको प्राप्त कराता है ॥११॥

(कौन स्रेनि सहनु कौन स्रेनि साहु) साधनका क्या मार्ग है। साध्यका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि नंत नंत अवगाह) अनन्तानन्त पदार्थोंके जाननेका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि अन्मोय विपक स्रेनि कौन) आनन्दका मार्ग क्या है, कर्मोंके क्षयका मार्ग क्या है (कौन स्रेनि मुक्ति नंत ध्रुव रमन) अनन्त कालतक ध्रुव आत्मामें रमण करनेवाली मुक्तिका क्या मार्ग है ॥ १२ ॥

(अभय स्रेनि महनु अबक बली साह) निर्भय होकर स्वरूपकी श्रद्धा सो साधनका मार्ग है, अनन्त बलका प्राप्त करना साध्य जो सिद्धि उसका मार्ग है (अवयास स्रेनि नन्त नन्त अवगाह) अनन्तानन्त पदार्थोंके जाननेका मार्ग अनन्त ज्ञानका प्रकाश है (पिये स्रेनि अन्मोय उवन स्रेनि विपक) आनन्दका मार्ग आत्माके स्वरूपमें प्रेम है, कर्मके क्षयका मार्ग शुद्धात्मानुभवका उदय है (विपक स्रेनि मुक्ति सिय सिद्धि रमन) कर्मोंका क्षय होना ही मुक्तिका मार्ग है, जिस मुक्तिमें शुद्ध भावोंके साथ आत्मा आत्मसिद्धिमें रमण करता रहता है ॥ १३ ॥

(कौन स्रेनि न्यान दर्स स्रेनि कौन) अनंतज्ञानका क्या मार्ग है, अनंतदर्शनका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि दानु लब्धि स्रेनि कौन) अनंत दानका क्या मार्ग है, अनंत लाभका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि भोउ उवभोय स्रेनि कौन) अनन्त भोगका क्या मार्ग है, अनन्त उपभोगका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि वीर्य सम्मत्त स्रेनि कौन) अनन्त वीर्यका क्या मार्ग है, सम्यग्दर्शनका क्या मार्ग है ॥ १४ ॥

(कौन स्रेनि चिचरनु सुचरन स्रेनि कौन) चारित्रका क्या मार्ग है, सुचारित्रका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि कमल केवल स्रेनि कौन) कमल होनेका क्या मार्ग है, केवलि होनेका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि समय मुक्ति सुइ रमनु) आत्माका मुक्तिके साथ रमनेका क्या मार्ग है (कौन स्रेनि निलय नन्त जिन रमन) सिद्ध स्थानमें अनन्त कालतक जिन स्वभावमें रमनेका क्या मार्ग है ॥ १५ ॥

(सुभाइ स्रेनि न्यान उवन स्रेनि दर्स) ज्ञानावरण कर्मके नाशसे स्वभावका प्रकाश अनन्तज्ञानका

मार्ग है, दर्शनावरण कर्मके नाशसे स्व भावका उदय अनन्तदर्शनका मार्ग है (अनन्त स्रनि दान सहज दिपि लब्धि) दान अन्तरायके नाशसे अनन्तशक्तिका होना अनन्त दानका मार्ग है। लाभांतराय कर्मके नाशसे सहज स्वभावका प्रगट होना अनन्त लाभका मार्ग है (कलन स्रेनि भोउ दिय उवन उव मोउ) भोगांतरायके नाशसे आत्मभोग होना अनन्तभोगका मार्ग है। उपभोगांतरायके नाशसे पुनः स्वहितमें प्रवर्तन अनन्त उपभोगका मार्ग है (चरन स्रेनि वीर्य कमल सम्मत्तओ) वीर्यांतरायके नाशसे स्वरूपमें आचरण करना अनन्त-वीर्यका मार्ग है, दर्शनमोहके नाशसे कमल समान शुद्ध आत्माका अनुभव सम्यग्दर्शनका मार्ग है ॥१६॥

(हुवन स्रनि चरन सु चरन कर्न सुवन) आपका आपमें होम करना चारित्रका मार्ग है । चारित्र मोहके नाशसे आपमें ही परिणमन सुचारित्रका मार्ग है (उव उवन स्रनि कमल केवल कलि कमल) शुद्धात्माका प्रकाश कमल समान होनेका मार्ग है, कमलमें कल्लोल करना केवल व असहाय वे शुद्ध होनेका मार्ग है (सुवन कर्न समय मुक्ति सुह उवन) आत्माका मुक्तिके साथ रमनेका मार्ग आत्मामें ही परिणमन है (उव अगमु निलय जिन रमन) सिद्ध स्थानमें जिन स्वभावमें रमनेका मार्ग अतीन्द्रिय आत्मामें रमण है ॥ १७ ॥

भावार्थ—इन प्रश्नोत्तरोंमें यह दर्शाया गया है कि सिद्ध होकर सदा आनन्दमय रहते हुए स्व भाव रमणका उपाय अरहन्त पद है। जहां अनन्तज्ञानादि नौ लब्धियां प्राप्त होती हैं, उनका नाश चार घातीय कर्मोंके क्षयसे होता है। यह कर्मक्षय शुक्लध्यानसे होता है जहांतक श्रुतज्ञानका तथा शब्दका आलम्बन है। यह शुक्लध्यान आत्मरमण रूप है, वीतराग भावरूप है, रत्नत्रय स्वरूप है। शुद्ध सम्यग्दृष्टी जीव क्षपकश्रेणी चढ़कर दोनों शुक्लध्यानोंसे घातीय कर्मोंका क्षय करता है। जिसको सिद्धपद पाना हो उसे निज आत्माका स्वभाव यथार्थ निश्चय करके उसीके ध्यानका अभ्यास करना योग्य है। यह सिद्धपद भी आनन्दरूप है व उसका मार्ग भी आनन्दरूप है। परमात्मप्रकाशमें कहा है—

अप्पा णियमणि णिम्मलउ, णिय में वसइ ण जासु । सत्थ-पुराणई तव-चरणु, मुक्खु वि करहिं कि तासु ॥ ९९ ॥

जोइय अप्पे जाणियण, जगु जाणियउ हवेइ । अप्पहं केरइ भावडइ बिंबिउ जेण वसेइ ॥ १०० ॥

भावार्थ—जिसके मनमें निर्मल आत्मा नियमसे नहीं रहता है उस जीवके लिये शास्त्र, पुराण, तप, चारित्र क्या मोक्ष कर सक्ते हैं ? हे योगी ! एक अपने आत्माको जाननेसे यह तीन लोक जाना जाता है, क्योंकि आत्माके भावरूप केवलज्ञानमें यह तीन लोक प्रतिबिंबित हुआ वसता है।

(१०३) तारकमल सेहरा गाथा २०९३ से २१२४ तक।

उव उवनो है उवन उवन पौ, उव उवनो है मुक्ति दातारु।
जिन जू अनादि तरन जिन सेहरो ॥ १ ॥
जिन जिनवर उत्तउ जिनय पयो, जिन जिनियो कम्मु अपारु।
जिन जू अनादि रमन जिन सेहरो ॥ २ ॥
जिन जिनवर जो यो उवन पौ, तं विंद रमन जिन उत्तु।
जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो ॥ ३ ॥
उव उवनो उवन सु समय जिनु, तं कमल रमन जिन उत्तु।
जिन जू अनादि रमन जिन सेहरो ॥ ४ ॥
उव उवनौ विंद विन्यान पौ, तं विंद अर्क संजुत्तु।
जिन जू अनादि विंद जिन सेहरो ॥ ५ ॥
उव उवनो दिष्टि सु दृष्टि पौ, तं रिस्टि रिस्टि जिन उत्तु।
जिन जू अनादि दिष्टि जिन सेहरो ॥ ६ ॥
तं सिस्टि सिस्टि जिन उवन पौ, उव उवन दिस्टि दरसन्तु।
जिन जू अनादि उवन जिन सेहरो ॥ ७ ॥
सहयार दिष्टि जिन उवन पौ, अवयास नन्त जिन उत्तु।
जिन जू अनादि अलष जिन सेहरो ॥ ८ ॥
तं नन्त नन्त जिन उवन पौ, अन्मोय न्यान जिन उत्तु।
जिन जू अनादि षिपक जिन सेहरो ॥ ९ ॥

तं षिपक इष्टि जिन उवन पौ, तं मुक्ति रमन जिन उत्तु ।
जिन जू अनादि मुक्ति जिन सेहरो ॥ १० ॥

तं मुक्ति इष्टि जिन उवन सुइ, तं सौख्य सहिय सुइ नन्तु ।
जिन जू अनादि ममल जिन सेहरो ॥ ११ ॥

जिन दिप्ति दिष्टि सुइ उवन पौ, तं सब्द सुयं पिउ उत्तु ।
जिन जू अनादि सहज जिन सेहरो ॥ १२ ॥

जिन जिनय स उत्तु कमल पौ, तं कमल अर्क संजुत्तु ।
जिन जू अनादि परम जिन सेहरो ॥ १३ ॥

जिन कमल रमन सुइ उवन पौ, जिन उत्तु वयन दमतु ।
जिन जू अनादि सुयं जिन सेहरो ॥ १४ ॥

जिन उवन जु परिनै उवन पौ, परमानु अनन्तानन्तु ।
जिन ज अनादि कमल जिन सेहरो ॥ १५ ॥

जिन समय सहावे उवन मौ, तं विंद रमन जिन उत्तु ।
जिन जू अनादि रमन जिन सेहरो ॥ १६ ॥

जिन रमन सलीन जिनुत्त पौ, तं लंकृत लीन जिनुत्तु ।
जिन जू अनादि अमियं जिन सेहरो ॥ १७ ॥

जिन उवन विन्यान सु उवन पौ, मै मूर्ति अङ्ग सर्वंग ।
जिन जू अनादि समय जिन सेहरो ॥ १८ ॥

जिन इष्ट दर्स उव उवन मौ, जिन उवन मुक्ति विलसन्तु ।
जिन ज अनादि तरन जिन सेहरो ॥ १९ ॥
भय षिपिय उवनु जिनु जिनय जिनु, जिन अमिय दिस्टि दमंतु ।
जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो ॥ २० ॥
जिन गुप्ति इष्टि जिन उवन पौ, जिन गुप्ति गुहिज उव उत्तु ।
जिन जू अनादि नन्त जिन सेहरो ॥ २१ ॥
जिन लष्य अलष्य पौ उवन मौ, जिन गुप्ति लषिय जिन उत्तु ।
जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो ॥ २२ ॥
जिन गम्य अगम्य सुइ उवन पौ, जिन गुप्ति अगम रम उत्तु ।
जिन जू अनादि लवन जिन सेहरो ॥ २३ ॥
जिन अषय रमन जिन उवन पौ, जिन सुर विंजन सुइ उत्तु ।
जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो ॥ २४ ॥
जिन उवन उवन पौ उवन मौ, उत्पन्न लब्धि जिन उत्तु ।
जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो ॥ २५ ॥
उझाय पयड़ि जिन उवन पौ, मति न्यान उवन मंजुत्तु ।
जिन जू अनादि समय जिन सेहरो ॥ २६ ॥
जिन आयरन सुदर्स मौ, जिन अन्यासमय जिन उत्तु ।
जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो ॥ २७ ॥

जिन उवन रंज सुइ रमन पौ, भय षिपिय रमन विहसंतु ।
जिन जू अनादि नन्द जिन सेहरो ॥ २८ ॥

जिन नन्द सुयं जिन नन्द मौ, विनन्द विली जिन उत्तु ।
जिन जू अनादि सिय जिन सेहरो ॥ २९ ॥

जिन तारन तरन सु समय मौ, जिन विंद रमन सिधि रत्तु ।
जिन जू अनादि महज जिन सेहरो ॥ ३० ॥

जिन कमल कलन सुइ रमन पौ, जिन अगम दिष्टि दर्संतु ।
जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो ॥ ३१ ॥

अन्मोय तरन जिन अगम मौ, जिनु अगम मुक्ति विलसंतु ।
जिन जू अनादि पर्म जिन सेहरो ॥ ३२ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवनो है उवन उवन पौ) **अब परमात्मपद्का उदय हुआ है** (उवनो है मुक्ति दातारु) **मोक्ष दाता भगवानका उदय हुआ है** (जिन जू अनादि तरन जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र भगवानका स्वरूप अनादि है, यही वीतराग तारणतरणदेव सबके सेहरा या सबके ऊपर श्रेष्ठ हैं ॥ १ ॥**

(जिन जिनवर उत्तउ जिनय पओ) **श्री जिनेन्द्रने जिस जिन अरहन्त पद्का स्वरूप कहा है** (जिन जिनियो कम्मु अपारु) **वह अरहन्त पद् उस जिनको कहते हैं, जिसने चार घातीय अपार कर्मोंको जीत लिया है** (जिन जू अनादि रमन जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादि हैं, आपमें रमते हुए श्रेष्ठ देव हैं ॥ २ ॥**

(जिन जिनवर जो यो उवन पौ) **श्री जिनेन्द्रने अपने प्रकाशनीय पद्का अनुभव किया है** (तं विंद रमन जिन उत्त) **उस पद्को ज्ञानमें रमणपद् कहते हैं** (जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादिकाल समान प्रफुल्लित जिन श्रेष्ठ हैं ॥ ३ ॥**

(उव उवनो उवन सु समय जिनु) **आत्मस्वरूपमें लीन स्वसमय जिन भगवानका उदय हुआ है** (तं कमल

रमन जिन उत्तु) उन्हींको आत्मरूपी कमलमें रमण करनेवाला जिनेन्द्र कहते हैं (जिन जू अनादि रमन जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि आपमें रमणकर्ता देवाधिदेव हैं ॥ ४ ॥

(उव उवनो विंद विन्यान पौ) ज्ञान चेतनामई पद या ज्ञानमें ज्ञानका रमण करनेवाला पद अब उदय हुआ है (तं विंद अर्क संजुत्तु) उसे ज्ञान सूर्य भी कहते हैं (जिन जू अनादि विंद जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि ज्ञानवान देवाधिदेव हैं ॥ ५ ॥

(उव उवनो दिष्टि सु इष्टि पौ) अब क्षायिक सम्यग्दर्शनके धारी अरहन्तका पद प्रगट हुआ है (तं रिस्टि रिस्टि जिन उत्तु) उसी क्षायिक सम्यक्तको जिनेन्द्र भगवानने कर्म काटनेका शस्त्र कहा है (जिन जू अनादि दिष्टि जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र भगवान अनादि व क्षायिक सम्यक्तके धारी श्रेष्ठ देव हैं ॥ ६ ॥

(तं मिस्टि मिस्टि जिन उवन पौ) श्री जिनेन्द्रका ऐसा पद है जिससे उत्तम शिक्षा प्रगट होती है (उव उवन दिस्टि दरसंतु) जिस शिक्षासे प्रगट आत्मदर्शनका मार्ग झलकाया जाता है (जिन जू अनादि उवन जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व प्रकाशमान वीतराग श्रेष्ठ देव हैं ॥ ७ ॥

(सहयार दिष्टि जिन उवन पौ) आत्माके अनुभवसे ही श्री अरहन्त जिनका पद प्रगट होता है (अवयास नन्त जिन उत्तु) जिनमें अनन्तज्ञानका प्रकाश होजाता है, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (जिन जू अनादि अलष जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व इंद्रिय व मनसे अगोचर अनुभवगम्य परमात्मादेव हैं ॥ ८ ॥

(तं नन्त नन्त जिन उवन पौ) श्री जिनेन्द्रका पद अनन्त गुणोंसे प्रकाशित है (अन्मोय न्यान जिन उत्तु) वे अनन्त सुख व अनन्त ज्ञानके धारी हैं, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (जिन जू अनादि षिपक जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व क्षायिक भावके धारी श्रेष्ठ वीतराग देव हैं ॥ ९ ॥

(तं षिपक इष्टि जिन उवन पौ) क्षायिक सम्यक्त व क्षायिक चारित्रमें रमण करनेसे जिनेन्द्रका पद प्रगट होता है (तं मुक्ति रमन जिन उत्तु , उस पदमें वे मोक्षके भावमें ही रमण करते हैं, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (जिन जू अनादि मुक्ति जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि है व मोक्ष स्वरूप वीतराग श्रेष्ठ जिन हैं ॥ १० ॥

(तं मुक्ति इष्टि जिन उवन सुइ) श्री जिनेन्द्रके भावोंमें मोक्ष ही परम प्रिय है। वे अवश्य मोक्ष होंगे (तं सौरुय सहिय सुइ नन्तु) वे अनन्त सुखके धारी हैं (जिन जू अनादि ममल जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व शुद्ध भावके धारी वीतराग श्रेष्ठ देव हैं ॥ ११ ॥

(जिन दिप्ति दिष्टि सुइ उवन पौ) **श्री जिनेन्द्रके पद्में अनन्तज्ञान व अनन्तदर्शन प्रगट हैं** (तं सब्द सुयं पिउ उत्तु) **उनकी वाणी स्वयं ही बड़ी ही प्यारी निकलती है, ऐसा कहा गया है** (जिन जू अनादि सहज जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व सहज स्वभाव धारी श्रेष्ठ वीतराग देव हैं ॥ १२ ॥**

(जं जिनय स उत्तु कमल पौ) **श्री जिनेन्द्रके पद्को प्रफुल्लित कमल समान पद कहा गया है** (तं कमल अर्क संजुत्त) **वह कमल ज्ञान-सूर्यके साथ प्रकाशित है** (जिन जू अनादि परम जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादि है और परम पद् धारी वीतराग देवाधिदेव हैं ॥ १३ ॥**

(जिन कमल रमन सुइ उवन पौ) **कमल समान जिन स्वरूपमें रमण करनेसे परमात्मा पद् प्रगट होता है** (जिन उत्त वयन दर्सेतु) **तब वहां दिव्य वचनका प्रकाश दिखता है जैसा जिनेन्द्रोंने कहा है** (जिन जू अनादि सुयं जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व स्वयं श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥ १४ ॥**

(जिन उवन जु परिनै उवन पौ, परमानु अनंतानंतु) **श्री जिन स्वरूप आत्मा जब आपमें परिणमन करता है तब अनन्त ज्ञानधारी पद् प्रगट होजाता है** (जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व कमलवत् श्रेष्ठ जिन हैं ॥ १५ ॥**

(जिन समय सहावे उवन पौ) **जब जिनेन्द्र अपने आत्माके स्वभावमें ज्ञानाकार झलकते हैं** (तं विंद रमन जिन उत्तु) **तब उनको ज्ञानमें रमण श्री जिनेन्द्रोंने कहा है** (जिन जू अनादि रमन जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व आत्मरमी श्रेष्ठ देव हैं ॥ १६ ॥**

(जिन रमन सलीन जिनुत्त पौ) **जो जिन स्वरूपमें रमण करता हुआ आपमें लीन होता है वही जिनेन्द्र कथित पद् है** (तं कंकृत लीन जिनुत्त) **उसीको जिनेन्द्रोंने स्वभावसे शोभायमान आत्मलीन कहा है** (जिन जू अनादि अमियं जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादि हैं तथा आनन्दामृतके पानकर्ता श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥ १७ ॥**

(जिन उवन विन्यान सु उवन पौ) **जहां वीतरागता सहित भेद्विज्ञान होता है वहीं परमात्मपद् प्रगट होता है** (मै मुर्ति अंग सर्वंग) **जो पूर्ण आत्म-प्रदेशोंमें ज्ञानसे शोभायमान है** (जिन जू अनादि समय जिन सेहरो) **श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व आत्मारूप श्रेष्ठपद् हैं ॥ १८ ॥**

(जिन इष्ट दर्स उवन पौ) **जब वीतरागतासे प्रेम होता है तब परमात्मपद् प्रगट होता है** (जिन

उवन मुक्ति विलसंतु) जहां वे जिनेन्द्र मुक्तिके आनन्दका भोग करते हैं (जिन जू अनादि तरन जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व भवसागरसे तरनेवाले श्रेष्ठप्रभू हैं ॥ १९ ॥

(भय षिपि उवनु जिनु जिनय जिनु) जब सर्व भय क्षय होजाता है तब ही कर्मविजयी जिनपद प्रगट होता है (जिन अमिय दिम्टि दर्मंतु) तब वे जिन आनन्दमई दृष्टिको प्रगट करते हैं अर्थात् आनन्दमग्न रहते हैं (जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व कमलवत् विकसित श्रेष्ठ प्रभु हैं ॥ २० ॥

(जिन गुपि दृष्टि जिन उवन पौ) जो वीतराग भावमें गुप्त होजाता है उसीमें प्रेमालु होजाता है, उसीके जिनपद प्रगट होता है (जिन गुप्ति गुहिम उव उत्तु) उसीको जिनेन्द्रने आत्म-गुप्तिरूपी गुफामें विराजित स्वरूप गुप्त कहा है (जिन जू अनादि तरन जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व अनन्त श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥२१॥

(जिन लष्य अलष्य पौ उवन पौ) जो कोई वीतराग अतींद्रियपदमें अपना लक्ष्य रखता है इसीके ज्ञानमई परमात्मपद प्रगट होजाता है (जिन गुप्ति लषिय जिन उत्तु) उसीको जिनेन्द्रोंने गुप्त आत्माका दर्शी कहा है (जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं, कमलवत् विकसित श्रेष्ठ जिन हैं ॥ २२ ॥

(जिन गम्य अगम्य सुइ उवन पौ) जिसने आत्मामें रमण किया है, जो अनुभवगम्य है परन्तु इंद्रिय व मनसे अगम्य है, उसीके परमात्मपद प्रगट होता है (जिन गुप्ति अगम रम उत्तु) उसीके भीतर गुप्ति आत्माका अनुभवगम्य आनन्दरसका प्रवाह बहता है ऐसा कहा गया है (जिन जू अनादि लवन जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व समुद्रवत् गम्भीर श्रेष्ठ जिन हैं ॥ २३ ॥

(जिन अषय रमन जिन उवन पौ) जो कोई वीतराग अविनाशी स्वभावमें रमण करता है, उसीको परमात्मपदका लाभ होता है (जिन सुर्य विजन सुइ उत्तु) उसीको सूर्य समान स्पष्ट प्रगट कहा गया है (जिन जू अनादि कमल जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व कमल समान विकसित श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥ २४ ॥

(जिन उवन उवन पौ उवन मौ) जो आत्मामें अनुभवशील हो आत्म प्रकाश करते हैं, वे ही परमात्माका प्रगट पद पाते हैं (उत्पन्न कलिय जिन उत्तु) उसीके ही नौ लब्धियां प्रगट होजाती हैं ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (जिन जु अनादि कमल जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व कमल समान विकसित श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥२५॥

(उउझ य पयहि जिन उवन पौ) जो स्व भावका ध्यान करते हैं, वे ही परम पदको प्रगट करते हैं (मति

ध्यान उवन संजुत्तु) तब केवलज्ञानका प्रकाश होजाता है (जिन जु अनादि समय जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व परमात्मरूप श्रेष्ठ जिन हैं ॥ २६ ॥

(जिन आचरन सुदर्म मौ जिन अन्या समय जिन उत्त) जो वीतराग भावके साथ अपने ज्ञान दर्शनमय स्वभावमें आचरण करते हैं, वे जिन आज्ञाके पालक आत्मा हैं, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (जिन जु अनादि कमल जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व कमलवत् विकसित श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥ २७ ॥

(जिन उवन रंज सुइ रमन पौ) जो वीतराग भावमें मगन रहते हैं, उनको ही आत्म-रमण पद प्राप्त होता है (भय विपिय रमन विहसंतु) जहां सर्व भय रहित होकर यह जीव रमण करता हुआ आनन्दका भोग करता है (जिन जु अनादि नन्द जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व आनन्दमई श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥ २८ ॥

(जिन नन्द सुयं जिन नन्द मौ) जो कोई स्वयं वीतराग आनन्दमें मगन होता है वही आनन्दमई जिन होता है (विनन्द विली जिन उत्तु) तब उसके सर्व दुःख विला जाते हैं, ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (जिन जु अनादि सिय जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व शुद्धोपयोगी श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥ २९ ॥

(जिन तरन तरन सु समय मौ) श्री जिनेन्द्र तारणतरण हैं व आत्मीक स्वभावमई व ज्ञानमई हैं (जिन विंद रमन सिधि रत्तु) श्री जिनेन्द्र ज्ञानमें रमण करते हैं व सिद्ध भावमें रत रहते हैं (जिन जु अनादि सहज जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व सहज स्वभावी श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥ ३० ॥

(जिन कमल वलन सुइ रमन पौ) श्री जिनेन्द्र आत्मारूपी कमलमें अनुभवशील रहते हैं, यही स्वात्म-रमण पद है (जिन अगम दिष्टि दर्संतु) श्री जिनेन्द्र अनुभवगम्य आत्मदर्शनको देखते हैं (जिन जु अनादि कमल जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व कमलवत् विकसित श्रेष्ठ प्रभू हैं ॥ ३१ ॥

(अन्मोय तरन जिन अगम मौ) श्री अरहन्त भगवान आनन्दमई हैं, अपार आनन्द ज्ञानधारी हैं, व भवसागरसे तर जाते हैं (जिन अगम मुक्ति विलसंतु) वे ही जिन अनन्त मुक्तिके आनन्दका स्वाद लेते हैं (जिन जु अनादि पर्म जिन सेहरो) श्री जिनेन्द्र अनादि हैं व परमात्मा श्रेष्ठ भगवान हैं ॥ ३२ ॥

भावार्थ—इस सेहरामें स्वामीका यह भाव झलकता है- जैसा कोई दूल्हा सेहरा सिरपर रखके किसी कन्याके वरनेको जाता है तब उस कन्याको अवश्य वर लेता है। इसी तरह श्री अरहन्त भगवानने अनन्त ज्ञानादि गुणोंका सेहरा धारण कर लिया है, वे मोक्ष-कन्याकी ही तरफ दृष्टि लगाए हुए हैं। जब-

तक चार अघातीय कर्म-आयु नाम गोत्र वेदनी शेष हैं तबतक ही मार्गमें है, उन कर्मोंके हटते ही वे मोक्ष कन्याको वर लेते हैं। अरहन्तपदमें भी वे उसीतरह मोक्षसुखको लेते हैं जैसे सेहराकारी पुरुष कन्याकी अप्राप्तिमें भी कन्याके वरनेकासा सुख अनुभव कर रहा है। अच्छी स्तुति की गई है। यहां भी आत्म स्वभावका मनन है। वास्तवमें मुमुक्षुको आत्म मनन हीसे मोक्षमार्ग साधना चाहिये।

परमात्मप्रकाशमें कहा है—

पंच वि इन्दिय अण्णु मणु, अण्णु वि सयल विभाव। जीवहं कम्मइ जणिय जिय, अण्णु वि चउगइ ताव ॥ ६३ ॥
दुक्खु वि सुक्खु वि बहुविहउ, जीवहं कम्मु जणेइ। अप्पा देक्खइ मुणइ पर, णिच्छउ एउं भणेइ ॥ ६४ ॥
बंधु वि मोक्खु वि सयलु जिय, जीवहं कम्म जणेइ। अप्पा किंपि वि कुणइ णवि, णिच्छउ एउं भणेइ ॥ ६५ ॥

भावार्थ— हे जीव! ये पांचों इंद्रियें व मन तुझसे अन्य हैं, सर्व विभाव भाव भी अन्य हैं, चारों गतियोंके दुःख भी अन्य हैं। ये सब कर्मोंके द्वारा उत्पन्न होते हैं। जीवोंके नानातरहके दुःख और सुख दोनों ही कर्म उत्पन्न करता है, ज्ञानमई आत्मा केवल उनको जानता है ऐसा निश्चयनय कहती है। इसी तरह बन्ध व मोक्ष भी जीवोंके कर्म ही करता है। आत्मा निश्चयसे न बन्ध करता है, न मोक्ष करता है ऐसा निश्चय नय कहती है। इसतरह विचारकर अपने आत्माको परमात्मारूप अनुभव करना चाहिये।

(१०४) जनगन बावलो फूलना गाथा २१२५ से २१३५ तक।

जिनु जिनय जिनय जिनुरे, जिनियो जिनय सुभाइ।
उव उवन उवन जिनुरे, उवने उवन सहाइ ॥ १ ॥
जनगन बावलो रे, न्यानी ममल सुभाइ।
जनगन पागलो रे, उवन उवन सहाइ ॥ २ ॥
जनगन आंधलो रे, न्यानी दिप्ति सुभाई।
जनगन सुनाहलो रे, न्यानी सब्द सहाइ ॥ ३ ॥

जनगन काहलो रे, न्यानी सुवन सुभाइ ।
जनगन वेकलो रे, जिनवर कलन सहाइ ॥ ४ ॥
जनगन विवर मो रे, न्यानी कमल सुभाइ ।
जनगन वादिलो रे, न्यानी धुव वयनाइ ॥ ५ ॥
जनगन असमय समय रे, न्यानी समय सहाइ ।
जनगन बन्धमें रे, न्यानी मुक्ति सुभाइ ॥ ६ ॥
जनगन अनयसे रे, न्यानी न्यान सियाइ ।
जनगन असिद्ध मै रे, न्यानी सिद्ध सुभाइ ॥ ७ ॥
जिनवरु उवन मो रे, न्यानी उवन हियाइ ।
जिनवरु हिय सहिओ रे, न्यानी सहउ वनाइ ॥ ८ ॥
जनगन हिय विली रे, न्यानी हिय उवनाइ ।
जनगन असह सै रे, न्यानी सहउ वनाइ ॥ ९ ॥
जनगन गम विली रे, न्यानी अगम सुभाइ ।
जनगन लष विली रे, न्यानी अलष लषाइ ॥ १० ॥
जनगन पै रई रे, न्यानी पर्म पयाइ ।
जनगन सरनि सुई रे, न्यानी मुक्ति रमाइ ॥ ११ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(जिन जिनय जिनय जिनु रे) **श्री वीतराग जिनेन्द्र भगवान जयवन्त हो** (जिनियो जिनय सुभाइ) **जिन्होंने अपने वीर स्वभावसे कर्मोंको जीत लिया है** (उव उवन उवन जिनु रे) **श्री जिनेन्द्र अपने गुणोंमें प्रकाशमान हैं** (उवने उवन सहाउ) **वे अपने विकसित स्वभावसे ही प्रकाशरूप हैं ॥ १ ॥**

(जनगन बावलो रे) सांसारिक जीव सब जगके दम्भ या मोहमें उन्मत्त होरहे हैं (न्यानी ममल सुभाई) सम्यग्ज्ञानी जीवोंका ही स्वभाव मदरहित निर्मल है (जनगन पागलो रे) साधारण जनता मोहके कारण पागल होरही है (उवने उवन सहाई) ज्ञानी अपने ज्ञान स्वभावमें जागृत हैं ॥ २ ॥

(जनगन आंधलो रे) जनसमूह अज्ञानसे अन्धे होरहे हैं (न्यानी दिप्त सुभाइ) परन्तु ज्ञानी ज्ञान स्वभावसे वस्तुको यथार्थ देख रहे हैं (जनगन सुनाहलो रे) जनसमूह हितकी बात सुननेमें बहरे हैं (न्यानी रुवद सुहाइ) ज्ञानियोंको जिनवाणीका शब्द सुहाता है ॥ ३ ॥

(जनगन काहलो रे) जगके प्राणी आलसी हैं (न्यानी सुवन सुभाइ) ज्ञानी उद्योग या परिणमन स्वभावको धारते हैं (जनगन वेकलो रे) जनता तृष्णाकी पूर्तिमें व्याकुल हैं (जिनवर कलन सहाइ) परन्तु श्रीजिनेन्द्र स्वानुभव स्वभावमें रत हैं निराकुल हैं ॥ ४ ॥

(जनगन विवर मौ रे) जगके जीव सदोष हैं या कर्मास्रव करनेवाले हैं (न्यानी कमल सुभाइ) ज्ञानी निर्दोष व कमल समान प्रफुल्लित स्वभाव धारी हैं (जनगन वादिलो रे) जगके प्राणी बादलके समान नाशवन्त हैं (न्यानी धुव वयनाइ) ज्ञानी अपने ध्रुव स्वभावमें स्थिर रहनेवाले हैं ॥ ५ ॥

(जनगन असम समय रे) जनसमूह पर समयमें या रागद्वेष मोह भावमें रत हैं (न्यानी समय सहाइ) ज्ञानी स्व समयमें या स्वात्माके स्वभावमें रत हैं (जनगन बधने रे) साधारण संसारी जीव कर्मबन्धके मार्गमें हैं (न्यानी मुक्ति सुभाइ) ज्ञानी बन्धको काटकर मुक्तिका स्वभाव धरते हैं- ज्ञानी मोक्षमार्गी है ॥ ६ ॥

(जनगन अनयमे रे) जनसमूह मिथ्यानय या एकांतनय या बदनमें सोरहे हैं (न्यानी न्यान मिथाइ) ज्ञानी ज्ञानकी निर्मलतामें विराजित हैं (जनगन असिद्ध मै रे) संसारी प्राणी असिद्ध भावमें हैं (न्यानी सिद्ध सुभाइ) ज्ञानी सिद्ध स्वभावका अनुभव कर रहे हैं ॥ ७ ॥

(जिनवरु उवन मौ रे) श्री जिनेन्द्र ज्योति-स्वरूप हैं (न्यानी उवन डियाइ) ज्ञानी स्वहितमें प्रकाशरूप हैं (जिनवर हिय सहिओ रे) श्री जिनेन्द्रने स्वहित साधन कर लिया है (न्यानी सहउ बनाइ) ज्ञानी अपने साधनको बना रहे हैं ॥८॥

(जनगन हिय विली रे) साधारण जनता स्वहितको भूल रही है (न्यानी हिय उवनाइ) ज्ञानी स्वहितको बना रहे हैं (जनगन असह सै रे) साधारण जनता साधनसे विरुद्ध है (न्यानी सहउ बनाइ) ज्ञानी साधन बना रहे हैं ॥९॥

(जनगन गम विली रे) जनता सम्यग्ज्ञानको भूले हुए हैं (न्यानी अगम सुभाइ) ज्ञानी अतीन्द्रिय आत्म-

स्वभावका अनुभव कर रहे हैं (जनगन भव विलो रे) जनसमूह जानने योग्य तत्वको भूले हुए हैं (न्यानी अलष लषाइ) ज्ञानी अतीन्द्रिय आत्माको जान रहे हैं ॥ १० ॥

(जनगन पै रई रे) संसारी जनता भव-भ्रमणमें जारही हैं (न्यानी पर्म पयाइ) ज्ञानी परम पदपर जारहे हैं (जनगन सगनि सुई रे) संसारी जीव संसारके मार्गमें चल रहे हैं या उसीमें निद्रित हैं या तन्मय हैं (न्यानी मुक्ति रमाइ) ज्ञानी मोक्षमें रम रहे हैं ॥ ११ ॥

भावार्थ—इस फूलनामें मिथ्यात्वी व सम्यक्तीका अच्छा मिलान किया है। मिथ्यादृष्टी संसाररत, व्याकुल, उन्मत्त, धर्मके लिये आलसी, अज्ञानी, विषयोंमें उन्मत्त, स्वहितसे दूर, संसारको ही बढ़ानेवाले होते हैं जब कि सम्यक्ती जीव मोक्षरत, निराकुल, सावधान, धर्मके लिये उद्योगी, ज्ञानी, विषयोंसे विरक्त, स्वहित साधनकर्ता व मोक्षकी तरफ जानेवाले होते हैं। जिसने आत्मतत्वको सिद्ध समान ज्ञान श्रद्धान द्वारा समझ लिया है वह आत्मज्ञानी सम्यक्ती होकर मोक्षका आनन्द सहित साधन करता है। और इस साधनसे श्री अरहन्त परमेष्ठी पदको पालेता है फिर शीघ्र ही सिद्ध परमात्मा होजाता है। अतएव मानवोंको उचित है कि बावलापन छोड़ें और स्वभावमें जागृत होकर आत्मानन्दका स्वाद लें।

श्री पूज्यपादस्वामी समाधिशतकमें कहते हैं—

> दृढात्मबुद्धिर्देहादावुत्पश्यन्नाशमात्मनः । मित्रादिभिर्वियोगं च बिभेति मरणाद्भृशम् ॥ ७६ ॥
>
> आत्मन्येवात्मधीरन्यां शरीरगतिमात्मनः । मन्यते निर्भयं त्यक्त्वा वस्त्रं वस्त्रान्तरग्रहम् ॥ ७७ ॥
>
> व्यवहारे सुषुप्तो यः स जागर्त्यात्मगोचरे । जागर्ति व्यवहारेऽस्मिन् सुषुप्तश्चात्मगोचरे ॥ ७८ ॥

भावार्थ—जिस अज्ञानीकी शरीरादिमें ही आत्मबुद्धि है वह अपना मरण निकट जानकर सदा भयभीत रहता है। कहीं स्त्री, पुत्र, मित्र आदिका वियोग न होजावे तथा कहीं मरण न होजावे। किन्तु आत्मामें आत्माको ही माननेवाला आत्मज्ञानी सम्यग्दृष्टी जीव अपने आत्माको एक शरीर छोड़ दूसरे शरीरमें जाते हुए भ्रम रहित होकर ऐसा ही मानता है जैसे एक वस्त्रको छोड़कर दूसरा वस्त्र पहन लिया गया। जो कोई व्यवहारमें सोरहा है अर्थात् व्यवहारसे आदर नहीं करता है वही आत्म कार्यमें जाग रहा है। परन्तु जो व्यवहारमें जाग रहा है, वह आत्म कार्यमें सोरहा है। अज्ञानी और ज्ञानीका विरोध है।

---

(१०९) पूर्व जय पूजा गाथा २१३६ से २१६३ तक।

उव उवन उवन सुइ उवनं, उवनं सह समय उवन नो उवनं।
उव उवन उवन मै उवनं, उवनं अन्मोय उवन नय नमियं ॥ १ ॥
उव उवन पयडि आयरनं, उवन आयरन उवन मिहि समयं।
उवन साहि सुइ ममलं, उवनं अन्मोय साहि सिय उवनं ॥ २ ॥
उवनं सिय सुद्ध सियंसि उवनं, सियं सुभावं कलनं सि उवनं।
कलनं जिनुत्तं जिन नन्त कलनं, नन्तं अनन्तं धुव नन्त कमलं॥ ३ ॥
कमलं जिनुत्तं चरनस्य चरियं, चरनस्य चरनं कलनस्य कमलं।
कलनं स चरनं कमलं अनन्तं, नन्तं सु समयं अन्मोय कर्न ॥ ४ ॥
नंतस्य उवनं अन्मोय नन्तं, नन्तं सु समयं अवयास नन्तं।
नन्तं स चरनं कमलं अनन्तं, नन्तं स कमलं अन्मोय कर्न ॥ ५ ॥
उवनं अनन्तं अन्मोय स्रवनं, अन्मोय स्रवनं उव उवन सुवनं।
सु अनन्त साहं हिययार कर्न, हिययार कर्न हुव नन्त उवनं ॥ ६ ॥
हुव नन्त नन्तं अवयास माहं, अवयास नन्तं अन्मोय कर्न।
कर्न अन्मोयं सु दिप्ति उवनं, दिप्तिं सहावं उवनं स दिप्तिं ॥ ७ ॥
सु दिप्ति सु दिप्ति अवयास उवनं, अवयास कलनं अन्मोय कमलं।
कमलं सु दिप्तिं सम साहि कर्न, अन्मोय कर्न सु दिप्ति उवनं ॥ ८ ॥

दिप्ति स नन्तं दिस्टि प्रवेसं, दिस्टि अनन्तं दिप्ति स चरनं ।
कलनस्य चरियो धुव उवन कमलं, अन्मोय कर्न सम सिद्धि सिद्धं ॥ ९ ॥
भय विलय कर्न अभयस्य उवनं, अवयास नन्तं दिप्ति स दिप्ति ।
अभय भय ओतं विलयस्य कमलं, अन्मोय कर्न अभयं जिनुत्तं ॥ १० ॥
अभयस्य उवनं अवयास नन्तं, नन्तं सुयं सुर्क सु अर्क उवनं ।
सुक सुयं सम सु अर्क कमलं, कमलं सुयं सुर्क अन्मोय कर्न ॥ ११ ॥
सुर्क सु उवनं अवयास दिप्ति, दिप्ति सु अर्क सु दिप्ति अर्क ।
सु दिप्ति कमलं अभयं जिनुत्तं, अन्मोय कर्न सुर्क सुनन्तं ॥ १२ ॥
सुर्कस्य उवनं अभयं जिनुत्तं, सुर्क सु अर्क पद अर्थ अर्थं ।
पदार्थ कमलं कलनं सु कर्न, अन्मोय सुवनं सर्वार्थ अर्थं ॥ १३ ॥
सुर्कस्य अर्थं सर्वार्थ अर्थं, अवयास कलनं चर नन्त कमलं ।
कमलस्य सुर्क अर्थं सुकर्नं, कर्नस्य सुवनं सर्वार्थ सिद्धं ॥ १४ ॥
अर्थस्य अर्थ हिय कर्न उवनं, हिय अर्थ उवनं कर्न सु समयं ।
समयं अनन्त कर्न अथाहं, गहिरस्य उवनं सुइ स्रवन साहं ॥ १५ ॥
अर्थं पदार्थं सुइ विंजनत्वं, पदं पदार्थं च चतुस्ट अर्थं ।
जानन्तु अर्थं सुइ गुप्ति गहिरं, हिय कर्न उवनं सर्वार्थ कमलं ॥ १६ ॥
कमलस्य कलनं चर अर्थ दिप्ति, दिप्ति सुयं अर्थ पदं पदार्थं ।
सर्वन्य अर्क कमलार्थ सिद्धं, अन्मोय कर्न सम समय मुक्ति ॥ १७ ॥

अर्थस्य अर्क सर्वन्य अर्थ, लौकस्य कर्न स्ववनाव्लोकं ।
नन्तं अनन्तं ध्रुव नन्त सिद्धं, अन्मोय कर्न सम मुक्ति विंदं ॥ १८ ॥
विंदस्य उवनं विंदं सु समयं, नन्त विंद उवनं स्ववन विंद समयं ।
नन्त कर्न समयं हिय उवन उवनं, उवनं स कलनं ध्रुव नन्त कमलं ॥ १९ ॥
कमल विंद उवन सर्वन्य अर्क, अर्क अनन्त हिय कर्न समयं ।
हिय उवन कमलं नन्त दिप्ति दिपियं, अन्मोय स्ववनं सम मुक्ति विंदं ॥ २० ॥
मुक्तिस्य विंदं अन्मोय नन्दं, नन्दस्य वृद्धं कलनस्य चरनं ।
कलनस्य कलियं हित गुप्ति उवनं, गुप्तस्य कमलं सम कर्न मुक्ति ॥ २१ ॥
नन्दस्य दिप्तिं दिस्टि अनन्तं, हिय उवन उवनं गुरु गुपित समयं ।
गुप्तिस्य गहरं उव उवन कमलं, कमलस्य अन्मोय सम कर्न मुक्ति ॥ २२ ॥
आनन्दं हियारं अन्मोय कर्न, कर्न सु समयं हिय उवन उवनं ।
हिय गहिर गुप्तिं सुइ स्ववन कमलं, कमलस्य कलनं सम कर्न मुक्ति ॥ २३ ॥
उववन्न इस्टि विवान दिस्टि, दिस्टि सुनन्तं तं सुवन उवनं ।
उव उवन चेयं कमलस्य कर्न, अन्मोय स्ववनं सम मुक्ति रमनं ॥ २४ ॥
हिय उवन सोहं जिननाथ रमनं, रंजं सनन्दं जिन अर्क अर्क ।
जिन जिनय उवनं जिन नन्त समयं, कर्नस्य स्ववनं हिय मुक्ति रमनं ॥ २५ ॥
अलषस्य लषियं अलषं जिनुत्तं, हिय उवन नन्तं कमलं अनन्तं ।
चरनस्य कलनं कलनस्य चरनं, अलषस्य अर्क सम कर्न मुक्ति ॥ २६ ॥

अगमस्य गमनं सुइ दिप्ति रमनं, दिप्तिं स दिस्टिं उव अगम अगमं ।
अगमस्य कलनं चरनं अनन्तं, विवान कर्नं सुइ उवन मुक्ति ॥ २७ ॥
सहयार साहं उव नन्त ग्राहं, गहिरस्य गुप्तिं उव नन्त साहं ।
उव उवन उवनं उवनं विवानं, विवान कर्नं उव मुक्ति सहजं ॥ २८ ॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन उवन सुइ उवनं) सम्यग्दर्शनके प्रतापसे आत्माका प्रकाश होते होते होगया (उवनं सह समय उवन नो उवनं) आत्मानुभवके साथ नवीन परमात्म पर्याय पैदा होगई है (उव उवन उवन मै उवनं) अनन्तज्ञान भी प्रगट होते होते प्रकाशित होगया है (उवनं अन्मोय उवन नम नन्दिय) तथा अनंत सुख भी प्रगट होगया है, ऐसे अरहन्तको वारवार नमस्कार हो ॥ १ ॥

(उव उवन पर्यइ आयरनं) स्वभावमें आचरणरूप यथाख्यात या क्षायिक चारित्र भी प्रगट होगया है (उवन आयरन उवन निहि समयं) स्वरूपमें आचरण करनेसे ही आत्माका गुप्त गुण-भण्डार प्रकाशमें आगया है (उवन साहि सुइ ममलं) शुद्ध साध्य भाव या शुद्ध भाव प्रगट होगया है (उवनं अन्मोय साहि सिय उवनं) शुद्धोपयोगके साथ अनन्त सुख भी साध लिया गया है सो प्रगट है ॥ २ ॥

(उवनं सिय सुद्ध सियं सि उवनं) वीतराग शुद्ध शांतभाव प्रगट होगया है (सियं सुभावं कलनं सि उवनं) शुद्ध स्वभावका रमण भी प्रगट होगया है (कलनं जिनुत्त जिन नन्त कलनं) इस रमणको जिनेन्द्रने वीतरागताके साथ अनन्त कालके लिये रमण कहा है । अरहन्त सदाके लिये ज्ञानका स्वाद लेते रहते हैं (नन्त अनन्तं धुव नन्त कलनं) यह स्वात्मानुभव अनन्त शक्तिधारी है, अविनाशी है व अनन्त कालतक ध्रुव रूपसे चला जायगा ॥ ३ ॥

(कमल जिनुत्त चरनस्य चरियं) चारित्र गुणका आत्मामें ही चलना सो ही कमल समान आत्माके विकाशका उपाय है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (चरनस्य चरनं कलनस्य कलनं) स्वरूपाचरणका आचरण है सो ही स्वानुभवका विकास है (कलनं स चरनं कमलं अनन्तं) स्व स्वरूपमें चलनरूप स्वानुभवसे आत्मारूपी कमल अनन्त कालके लिये विकसित होजाता है (नन्तं सु समयं अन्मोय कर्नं) अनन्त कालतक निज आत्मामें रमण करना सो ही सदा ही आनन्द भोगका साधन है ॥ ४ ॥

(नन्तस्य उवनं अन्मोय नन्तं) अनन्तगुणी आत्माके प्रकाशसे अनन्तसुख झलकता ही है (नन्तं सु समयं अवयास नन्तं) अनन्त कालतक स्वरूपमें आचरण करनेवाले परमात्मामें अनन्त ज्ञान भी प्रगट रहता है (नन्तं स चरनं कमलं नन्तं) स्वरूपाचरण अनन्त कालतक रहता है तब ही कमल समान आत्माका विकास भी अनन्त कालतक रहता है (नन्तं स कमल अन्मोय कर्नं) अनन्त कालतक कमल समान आत्माका विकास ही अनन्त सुखके भोगका उपाय है ॥ ५ ॥

(उवन अनन्तं अन्मोय सवनं) परमात्माके अनन्त सुखका प्रवाह प्रगट रहता है (अन्मोय सवमं उव उवन सुवनं) आनन्दका प्रवाह सो ही आत्मामें परिणमनका प्रकाश है। अर्थात् आत्मा परिणमनशील है इससे समय २ आनन्दका स्वाद आता है (सु अनन्त साहं हिययार कर्न) इस अनन्त साधन योग्य स्वरूपका हितकारी उपाय स्वात्मानुभव है (हिययार कर्नं हुव नन्त उवनं) इसी हितकारी स्वात्मानुभवके साधनसे अनन्त गुणोंका प्रकाश होता है ॥ ६ ॥

(हुव नन्त नन्त अवयास साइं) इसी स्वात्मानुभवसे अनन्तानन्त ज्ञानका साधन होता है (अवयास नन्तं अन्मोय कर्नं) यह अनन्त ज्ञान ही अनन्त सुखका कारण है। जब केवलज्ञान होता है तब आत्माका प्रत्यक्ष ज्ञान होता है तब ही आत्मीक आनन्दका प्रत्यक्ष स्वाद आता है (कर्नं अन्मोय सु दिप्ति उवनं) इसी अनन्त सुख भोगके कारणसे आत्माकी ज्योति झलकती रहती है (दिप्तिं सहावं उवनं स दिप्तिं) यह आत्म-ज्योति आत्माकी प्रगट स्वाभाविक दीप्ति है ॥ ७ ॥

(सु दिप्ति सु दिप्ति अवयास उवनं) आत्माका प्रकाश होते होते अनन्त ज्ञानका प्रकाश होता है (अवयास कलनं अन्मोय कमलं) ज्ञानके स्वादसे कमल समान आत्माका आनन्द स्वादमें आता है (कमलं सु दिप्ति सम साहि वर्नं) कमलके भीतर प्रकाश या स्वात्म-प्रकाश ही समताभावरूपी साध्यका साधन है (अन्मोय वर्नं सु दिप्ति उवनं) यह भी ठीक है कि स्वात्मानन्दके द्वारा ही सम्यग्ज्ञानका प्रकाश होता है ॥ ८ ॥

(दिप्ति स नन्तं दिप्टि प्रवेसं) अनन्त ज्ञानकी ज्योति जब आत्माके दर्शनमें प्रवेश करती है, अर्थात् जब ज्ञानोपयोग आत्मस्थ होता है (दिप्टि नन्तं दिप्ति स चरनं) तब उसे अनन्त आत्मदर्शन कहते हैं तब ही ज्ञान-ज्योति स्वरूपमें आचरण करती है (कलनस्य चरियो ध्रुव उवन कमलं) स्वानुभवका चारित्र ही ध्रुव रूपसे आत्मारूपी कमलका विकास करता है ॥ ९ ॥

(भय विलिय कर्न अभयस्य उवनं) जब सर्व सांसारिक भय विला जाता है तब अभयपद भीतर झलकता है (अवयास नन्तं दिप्ति स दिप्ति) तथा अनन्तज्ञानकी ज्योति भी चमक जाती है (अभय भय ओतं विलयस्य कमलं) अभय भावमें रमनेसे जब भयका विस्तार सब विला जाता है तब आत्मारूपी कमलका विकास होता है (अन्मोय कर्न अभयं जिनुत्तं) स्वात्मानुभवमें आनन्दका स्वाद आना ही अभय भाव है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है ॥ १० ॥

(अभयस्य उवनं अवयास नन्तं) अभय भावके प्रकाशसे अनन्तज्ञानका प्रकाश होता है। भय नो कषायका क्षय हुए विना केवलज्ञान नहीं होसक्ता है (नन्तं सुयं सुर्क सु अर्क उवनं) आत्माका स्वयं अनत ज्ञान प्रकाशरूप होना ही उसमें सूर्यका प्रकाश है (सुर्क सुयं सम अर्क कमलं) इस ज्ञानमई सूर्यका समभावके साथ प्रकाश होना ही आत्मारूपी कमलका विकास है (कमल सुयं सुर्क अन्मोय कर्न) कमल है सो ही सूर्य है, वही आनन्दका कारण है ॥ ११ ॥

(सुर्क सु उवनं अवयास दिप्ति) आत्मारूपी सूर्यका उदय ज्ञान-ज्योतिका प्रकाशक है (दिप्ति सु अर्क सु दिप्ति अर्क) ज्ञान-ज्योति सो ही सूर्य है, सूर्य है सो ही ज्ञान दीप्ति है (सु दिप्ति कमलं अभयं जिनुत्तं) ज्ञान ज्योति सहित जो आत्मारूपी कमल है उसे ही जिनेन्द्रने अभय कहा है (अन्मोय कर्न सुर्क सुनन्तं) अनंत सुखका स्वाद ही वह कारण है, जिसमें सूर्य अनन्त कालतक चमकता रहता है ॥ १२ ॥

(सुर्कस्य उवनं अभयं जिनुत्तं) सूर्य समान आत्मा जब प्रगट होता है तब ही वह अभय होता है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (सुर्क सु अर्क पद अर्थ अर्थ) सूर्यवत् प्रकाश ही आत्मारूपी पदार्थका पद है (पदार्थ कमलं कलनं सु कर्न) कमल समान आत्मा पदार्थका अनुभव ही परम पदका साधन है (अन्मोय सुवनं सर्वार्थ अर्थ) आत्माके आनन्दमें परिणमन करना, सो सर्व प्रयोजनकी सिद्धिकारक है या पूर्ण परमात्मपदका द्योतक है ॥ १३ ॥

(सुर्कस्य अर्थ सर्वार्थ अर्थ) सूर्य समान आत्माका होना ही सर्व अर्थ पूर्ण पदार्थका होना है (अवयास कलनं चर नन्त कमलं) आत्माके ज्ञानका अनुभव ही अनन्तज्ञानी आत्मारूपी कमलका आचरण है (कमलस्य सुर्क अर्थ सुकर्न) कमलका सूर्यवत् प्रकाश ही मोक्षसाधनरूप पदार्थ है (कर्नस्य सुवन सर्वार्थ सिद्धि) इस साधनका प्रवाह रहनेसे सर्व अर्थकी सिद्धि होती है अर्थात् शुद्धात्माके प्रत्यक्ष अनुभवसे ही मोक्ष प्राप्त होती है ॥ १४ ॥

(अर्थस्य अर्थ हिय कर्न उवनं) आत्मा पदार्थका आत्मारूप ही श्रद्धान, ज्ञान तथा आचरण हितकारी मोक्षका साधन है (हिय अर्थ उवनं कर्न सु समयं) हितकारी आत्मारूपी पदार्थके अनुभवका प्रकाश ही स्वसमय अर्थात् शुद्धात्मीक पद प्रकाशका साधन है (सम्य अनन्त कर्न अथाहं) अनन्त गुणधारी आत्मा ही गम्भीर अथाह साधन है (गहिरस्य उवनं हुइ सवन साइं) इस अथाह गम्भीर गुप्त आत्मानुभवका प्रकाश होना ही मोक्षका साधन है ॥ १५ ॥

(अर्थ पदार्थं सुइ विन्नत्व) आत्मारूपी पदार्थ परमात्मात्मावस्थामें प्रगट होजाता है (पदं पदार्थं च चतुरट अर्थ) यह परमात्मा पदार्थ अनन्तज्ञानादि चार चतुष्टयसे विभूषित है (ज्ञान जु अर्थं हुइ गुपित गहिर) उस आत्म पदार्थका जानपना तब ही होता है जब साधक आत्माकी गुफामें बैठकर गुप्त या लीन होजाता है (हिय कर्न उवनं सर्वार्थ कमलं) जब हितकारी स्वात्मानुभव रूपी साधन प्रगट होता है तब सर्व गुणोंसे पूर्ण कमल समान आत्मा विकसित होजाता है ॥ १६ ॥

(कमलस्य कलनं चर अर्थ दिप्ति) कमल समान आत्माका अनुभव होना सो ही आत्मपदार्थके ज्ञानमें आचरण करना है (दिप्ति सुयं अर्क पदं पदार्थ) ज्ञान है सो स्वयं सूर्य है उसीका धारी परमात्मा पदार्थ है (सर्वन्य अर्क कमलार्थ सिद्धि) सर्वज्ञ ही सूर्य है, वही कमल समान आत्माके प्रयोजनकी सिद्धि प्रगट करता है (अन्मोय कर्न सम समय मुक्ति) आत्मानन्दमें रमण ही साधन है जिससे समताभाव सहित आत्मा मोक्षको पहुंच जाता है ॥ १७ ॥

(अर्थस्य अर्क सर्वन्य अर्थ) सर्वज्ञ पदार्थ ही आत्मा पदार्थका सूर्य सम प्रकाश है (लोकस्य कर्न रुवनावलोकं) भ्रमणशील संसारकी ओर दृष्टि सो इस संसार भ्रमणका साधन है (नन्त नन्तं ध्रुव नन्त सिद्धि) आत्माकी ओर दृष्टि रखना सो अनन्त गुण सहित ध्रुव आत्माकी अनन्तकालके लिये सिद्धि करनेवाला है (अन्मोय कर्न सम मुक्ति विंदं) आत्मानन्दमें मगनता ही वह साधन है जिससे समभाव सहित मुक्तिका अनुभव होता है ॥ १८ ॥

(विंदस्य उवनं विंद सु समय) ज्ञानका उदय ही स्वात्माका अनुभव है (नन्त विंद उवनं हुवन विंदं समयं) जब आत्माके अनुभवका प्रवाह बहता है तब अनन्त ज्ञान प्रगट होजाता है (नन्त कर्न समयं हिय उवन उवनं) तब अनन्तकालके लिये इस साधनसे आत्माका हित प्रगट होजाता है (उवनं स कलनं ध्रुव

नन्त कमलं) स्वात्मानुभवके अभ्याससे ही ध्रुव व अनन्त कमल समान आत्माका प्रकाश होता है ॥१९॥

(कमल विंद उवनं सर्वन्य अर्क) आत्मारूपी कमलका ज्ञान प्रगट होना ही सर्वज्ञपना है व सूर्यका प्रकाश है (अर्क अन त हिय कर्न समयं) यह ज्ञान सूर्य अनन्तकाल तक रहता है, यही आत्माका हितकारी साधन है जिससे मोक्ष होती है (हिय उवन कमलं नन्त दिप्ति दिप्तिय) जब आत्मारूपी कमलका हित प्रगट प्रगट होता है तब अनन्त ज्ञान झलक जाता है (अन्मोय सवनं सम मुक्ति विंद) तब आनन्दके प्रवाह सहित समभावको लिये हुए आत्मा मोक्षका अनुभव कर लेता है ॥ २० ॥

(मुक्तिस्य विंदं अन्मोय नन्दं) जब मुक्तिका अनुभव होता है तब स्वात्मानन्दमें मगनता होती है (नंदस्य वृद्धं कमलस्य चरनं) आत्मारूपी कमलमें आचरण करनेसे ही स्वात्मानन्दकी वृद्धि होती है (कलनस्य कलियं हिय गुप्ति उवनं) स्वात्मानुभवका स्वाद ही अपने छिपे हुए हितका प्रकाश है (गुप्तस्य कमलं सम कर्न मुक्ति) स्वरूपमें गुप्त, कमल समान आत्मा समभाव सहित मुक्तिका लाभ करता है ॥ २१ ॥

(नंदस्य दिप्ति दिस्टि अनन्तं) आत्मानन्दके साथ अनन्त ज्ञान व अनन्तदर्शन प्रगट होजाते है (हिय उवन उवनं गुरु गुपित समयं) तब आत्माका भारी हित जो अनादिकालसे गुप्त था सो प्रगट होजाता है (गुप्तिस्य गहरं उव उवन कमलं) आत्माकी गुफामें गुप्त होनेसे आत्मा कमलका विकास होता है (कमलस्य अन्मोय सम कर्न मुक्ति) आत्मारूपी कमलके आनन्दमें मगन आत्मा स्वभावसे मुक्तिको साधन कर लेता है ॥ २२ ॥

(आनन्द हियारं अन्मोय कर्नं) हितकारी आनन्दमें मगनता सो ही मोक्षका साधन है (कनं सु समयं हिय उवन उवनं) स्वात्मामें रमण होनेके साधनसे ही आत्महितका प्रकाश होता है (हिय गहिर गुप्ति सुइ सुवन कमलं) हितकारी आत्मीक गुफामें गुप्त होना सो ही आत्मारूपी कमलका परिणमन है (कमलस्य कलनं सम कर्न मुक्ति) आत्मारूपी कमलका स्वाद लेनेसे जो समभाव होता है वही मुक्तिका साधन है॥२३॥

(उववन्न इस्टि विवान दिस्टि) तारण तरण आत्माका प्रगट होना सो ही इष्टपदका उत्पन्न होना है (दिस्टि अनन्त तं सुवन उवनं) अनन्त दर्शनका होना सो ही आत्माकी शुद्ध परिणतिका होना है (उव उवन चेयं कमलस्य कर्नं) चिदानन्द भावका झलकना ही आत्मारूपी कमलके विकासका साधन है (अन्मोय सवनं सम मुक्ति रमनं) आनन्दका प्रवाह बहना सो ही समभाव सहित मुक्तिमें रमण करना है ॥ २४ ॥

(हिय उवन साहं जिननाथ रमनं) जब स्वात्मानुभवके साधनसे हितकारी साध्यपद प्रगट होता है तब उस पदके धारी जिनेन्द्र उस पदमें रमण करते रहते हैं (रंजं सनन्द जिन अर्क अर्क) श्री जिनेन्द्र आनन्दमें मगन परम सूर्यसम ज्योतिस्वरूप हैं (जिन जिनय उवन जिन नन्त समयं) कर्मोंको जीतकर आत्मा अनन्त कालके लिये प्रगट होजाता है (कर्नस्य सवनं हिय मुक्ति रमनं) स्वात्मानुभवरूप साधनका धारावाही बहना ही हितकारी मुक्तिमें रमण करना है ॥ २५ ॥

(अलषस्य लषियं अलषं जिनुत्तं) अतीन्द्रिय आत्माका अनुभव करना ही स्वात्मानुभव है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (हिय उवन नन्तं कमलं अनन्तं) इसीसे अनन्त कालके लिये अनन्त गुण पर्याय धारी आत्मारूपी कमलका हित प्रगट होजाता है (चरनस्य कलनं कलनस्य चरनं) तब स्वरूपाचरणका अनुभव या स्वात्मानुभवका आचरण होता है (अलषस्य अर्क सम कर्नं मुक्ति) स्वात्मानुभवके द्वारा समभाव सहित आत्मारूपी सूर्य मुक्ति पालेता है ॥ २६ ॥

(अगमस्य गमनं सुइ दिष्टि रमनं) इंद्रिय अगोचर आत्माका अनुभव सो ही आत्मज्ञानमें रमण है (दिष्टि स दिष्टि उव अगम अगमं) वहीं ज्ञान तथा दर्शन दोनों अगम स्वरूप हैं–इंद्रियातीत हैं, अनन्त व अतीन्द्रिय हैं (अगमस्य कलनं चरनं अनन्तं) अगम आत्माका अनुभव सो ही अनन्त चारित्र है (विवान कर्नं सुइ उवन मुक्ति) जब अहरन्तपद जहाजके समान प्रगट होजाता है तब मुक्ति होजाती है ॥ २७ ॥

(सहयार साहं उव नन्त ग्राहं) आत्मानुभवकी सहायतासे अनन्त कालतक ग्रहण योग्य पद साध लिया जाता है (गहिरस्य गुप्ति उव नन्त साहं) जब आत्मीक गुफामें गुप्त हुआ जाता है तब अनन्तगुणी आत्मा साध लिया जाता है (उव उवन उवनं उवनं विवान) इसी तरह प्रगट होते होते जहाजके समान अरहन्त पद प्रगट होजाता है (विवान कर्नं उव मुक्ति महनं) अरहन्त पद ही साधन है जिससे मुक्तिका लाभ होता है ॥ २८ ॥

भावार्थ—इस अरहन्त पूजामें अरहन्त पदकी निश्चय भक्ति झलकाई गई है। स्वात्मानुभव ही निश्चय मोक्षमार्ग है जहां सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान व सम्यक्चारित्रकी एकता होती है। इसीके द्वारा अभ्यास करते करते पहले मोहनीय कर्मका नाश होना है फिर शेष घातीय कर्मोंका नाश होता है तब अरहन्तपद प्रगट होजाता है। अरहन्त भगवान अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य परम समता-

भावमें सदा मगन रहते हैं। वे अपने स्वरूपमें गुप्त रहते हुए सर्वज्ञ व सर्वदर्शी हैं। वे परम वीतराग हैं। ये स्वात्मरमणरूप हैं। इसी भावसे वे सर्व कर्म रहित सिद्ध होजाते हैं। अरहन्तकी पूजा सो आत्माकी पूजा है। आत्मानुभवमें लीन होना यथार्थ पूजा है, अथवा आत्मानुभवके लिये अरहन्त परमात्माके आत्मीक गुण गाना भी अरहन्त या आत्मा पूजा है। जो सुख शांति भोगना चाहें व कर्मोंसे अपने आत्माकी मुक्ति चाहें उसे निरन्तर इस पूजाका अभ्यास करना योग्य है। आत्माके मननसे ही सब कार्यकी सिद्धि होती है। परमात्मप्रकाशमें कहा है—

अप्प सहावि परिट्ठियइं, एहउ होइ विसेसु। दीसइ अप्प-सहावि लहु लोयलोउ असेसु ॥ १०० ॥

अप्पु पयासइ अप्पु परु, जिम अंबरि रवि-राउ। जोइय एत्थु म भंति करि, एहउ वत्थु सहाउ ॥ १०१ ॥

तारायणु जलि बिंबियउ णिम्मलि दीसइ जेम अप्पए णिम्मलि बिंबियउ, लोयालोउ वि तेम ॥ १०२ ॥

भावार्थ— जो आत्माके स्वभावमें तिष्ठनेवाले हैं उनमें यह विशेषता होजाती है कि उनके आत्माके स्वभावमें लोक अलोक सर्व शीघ्र ही दीख जाता है। जैसे आकाशमें सूर्य अपने और पर दोनोंको प्रकाश करता है वैसे ही यह आत्मा अपनेको तथा परको प्रकाश करता है। हे योगी! इसमें भ्रमण कर। ऐसा वस्तुका स्वभाव है। जैसे निर्मल जलमें तारागण झलकते हैं वैसे निर्मल आत्मामें लोकालोक झलकता है। आत्माके ध्यानसे आत्मा निर्मल होता है तब वह अनन्तज्ञानी होजाता है।

(१०६) मुक्ति पैतालो गाथा २१६४ से २२०९ तक।

उव उवन उवन उव उव अनन्तु, उव उवन समय सुइ मुक्ति जंतु ॥ १ ॥

जै जैन उवन जै जै विवाणु, जै जयो जयो जिन मुक्ति वाणु (आखरी) ॥ २ ॥

पय पयन उवन पय पय अनन्तु, पय उवन पयं सुइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥ ३ ॥

जै जैन जयो जय जय अनन्तु, जै रमन उवन सोइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥ ४ ॥

मै मै उवनं मै उव अनन्तु, मै सुयं मयं जिन मुक्ति रत्तु ॥ जै० ॥ ५ ॥

सुइ सुयं उवन सोई जिनुत्तु, सुइ उवन समय सोइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥ ६ ॥
रे रमन उवन सुइ रमन नन्तु, उव रमन सुयं सुइ मुक्ति जन्तु ॥ जै० ॥ ७ ॥
सह सहन उवन सुइ सह निवासु, सुइ उवन सहन सह सिद्धि वासु ॥ जै० ॥ ८ ॥
गम गमन उवन गम गम अनन्तु, उव उवन गमन सुइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥ ९ ॥
अग अगम उवन अग अगम नन्तु, अग अगम उवन सुइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥१०॥
लष लषन उवन लष लष अनन्तु, लष लषन उवन सुइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥११॥
लष अलष उवन सुइ अलष जन्तु, जै उवन अलष जै मुक्ति जन्तु ॥ जै० ॥१२॥
ढल ढलन उवन ढल ढल अनन्तु, जिन ढलन उवन सुइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥१३॥
गह गहन उवन गह गह जिनुत्तु, जय गहन उवन गह मुक्ति जन्तु ॥ जै० ॥१४॥
रह रहन उवन रह रह निवासु रह उवन सुयं जे सिद्धि वासु ॥ जै० ॥१५॥
लह लहन उवन लह लह अनंतु, लह उवन लहन सुइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥१६॥
घर घरन उवन घर घर समस्थु, घर उवन समय सुई मुक्ति जंतु ॥ जै० ॥१७॥
षिपि षिपिन उवन षिपि षिपि जिनुत्तु, षिपि उवन समय सुई मुक्ति रत्तु ॥ जै० ॥१८॥
कलि कलन उवन कलि कलन रिद्धि, सुइ कलन कमल जिन उवन सिद्धि ॥ जै० ॥१९॥
कलि कलन उवन सोइ कलन सुद्धु, जै कमल उवन जै सिद्धि सुद्धु ॥ जै० ॥२०॥
चर चरन उवन चर चरन नन्तु, चर चरन उवन सुइ मुक्ति रत्तु ॥ जै० ॥२१॥
कलि कमल उवन उव कर्न समय, सुइ कर्न उवन जिन मुक्ति रमय ॥ जै० ॥२२॥

सुव सुवन उवन षिय उवन हंसु, उव उवन कमल सुइ मुक्ति वासु ॥ जै० ॥२३॥
हंस हंस उवन सिय हंस वासु, हंस उवन समय सिय सुइ निवासु ॥ जै० ॥२४॥
अवयास उवन सिय उव अवयासु, अवयास उवन उव सुइ विलासु ॥ जै० ॥२५॥
दिपि दिप्ति उवन सोइ दिपि अनंतु, दिपि उवन समय सुइ मुक्ति रत्तु ॥ जै० ॥२६॥
सोइ दिप्ति उवन सिय दिप्ति रत्तु, सोइ दिप्ति उवन सिय सिद्ध रत्तु ॥ जै० ॥२७॥
अभय अभय रंजु भय विलय रमनु, जिनु अभय नन्दु सोइ सिद्धि गमनु ॥ जै० ॥२८॥
सुर सुयं अर्क सोइ ममल रमनु, सुइ उवन सुयं सिय मुक्ति गमनु ॥ जै० ॥२९॥
अयं अर्थ उवन सर्वार्थ रमनु, सर्वार्थ सियं उव सिद्धि गमनु ॥ जै० ॥३०॥
विंद विंद अर्क सुइ विंद रमनु, विंद उवन विंद विंद मुक्ति गमनु ॥ जै० ॥३१॥
नन्द नन्द सियं सोइ नन्द रमनु, नन्द उवन नन्द नन्द मुक्ति गमनु ॥ जै० ॥३२॥
आनन्द नन्द उवनन्द जयनु, आनन्द सियं उव मुक्ति गमनु ॥ जै० ॥३३॥
सम समय सियं सुइ समय रमनु, सुइ समय उवन सोइ सिद्धि गमनु ॥ जै० ॥३४॥
हिय उवन हियं हिय रंज रमनु, हिय उवन सिय उव सिद्धि गमनु ॥ जै० ॥३५॥
लष अलष सियं सुइ उवन जयनु, उव उवन अलष लषि मुक्ति गमनु ॥ जै० ॥३६॥
गम अगम उवन सिय उवन रमनु, उव रमन अगम सम सिद्धि गमनु ॥ जै० ॥३७॥
सहयार उवन सिय उवन साहि, सहयार उवन सम सिद्धि लाहु ॥ जै० ॥३८॥
रम रमन उवन उव रमनु उवनु, सोइ रमन उवन सोइ मुक्ति गमनु ॥ जै० ॥३९॥
रंज रंज उवन सिय उवन उवनु, उव उवन रंज सम सिद्धि गमनु ॥ जै० ॥४०॥

उव उवन सियं उव उवन उवनु, उव उवन रमन सोइ मुक्ति गमनु ॥ जै० ॥४१॥

षिप षिपन सियं उव षिपन रमनु, षिपि रमन उवन सोइ मुक्ति गमनु ॥ जै० ॥४२॥

मौ ममल उवनु सिय ममल रत्तु, घुव ममल उवन सुइ सिद्धि रत्तु ॥ जै० ॥४३॥

उव उवन सेनि जिन सेनि कलनु, तर तार कमल सोइ सिद्धि गमनु ॥ जै० ॥४४॥

उव उवन स उत्तो सिय सुभाउ, सिय अर्क उवन सोइ मुक्ति राउ ॥ जै० ॥४५॥

जिन सेनि उवन कल कलन रिद्धि, तर तार कमल उव समय सिद्धि ॥ जै० ॥४६॥

अन्वय सहित अर्थ—(उव उवन उवन उव उव अनन्तु) अब अनन्त प्रकाशका उदय होगया है (उव उवन समय सुइ मुक्ति नंतु) इस अनन्त प्रकाशका धारी आत्मा स्वयं मुक्ति प्राप्त कर लेता है ॥ १ ॥

(जै जैन उवनु जै जै निवासु) कर्म विजयी जिन अपने वीतराग भावमें बिराजते हैं (जै जयो जयो जिन मुक्ति वासु) वे ही जिन मुक्तिके भीतर वास करते हैं उनकी जय हो, जय हो ॥ २ ॥

(पय पयन उवन पय पय अनन्तु) गुणस्थान क्रमसे चढ़ते चढ़ते अनन्त केवलीपद प्रगट होजाता है (पय उवन पयं सुइ सिद्धि रत्तु) इस पदको प्रकाश करनेवाले स्वयं सिद्धभावमें रत रहते हैं ॥ ३ ॥

(जै जैन जयो जय जय अनन्तु) वीतरागी कर्मविजयी अनन्त गुणधारी अरहन्तकी जय हो (जै रमन उवन सोइ सिद्धि रत्तु) वे स्वात्मरमणसे प्रकाशमान हैं, वे ही सिद्धभावमें रत हैं ॥ ४ ॥

(मै मै उवनं मै उव अनन्तु) ज्ञानसे ज्ञानका प्रकाश होते होते अनन्तज्ञान होजाता है (मै सुयं मयं जिन मुक्ति रत्तु) जो स्वयं ज्ञानमई होजाता है वही वीतरागी मुक्तिमें रत होता है ॥ ५ ॥

(सुइ सुयं उवन सोईं जिनुत्तु) श्री जिनेन्द्रने कहा है कि यह आत्मा आपसे ही आपकी उन्नति करता है (सोइ उवन समय सोइ सिद्धि रत्तु) यही आत्मा आप ही स्वरूपमें प्रकाश होकर सिद्ध भावमें रत होजाता है ॥ ६ ॥

(रै रमन उवन सुइ रमन नन्तु) जो धारावाही आपमें रमण करता है उसीमें यह गुण प्रगट होजाता

है कि यह अनंत कालतक आपमें रमण करे (उव रमन सुयं सुइ मुक्ति जन्तु) जो स्वयं आपमें रमण करता है वही मोक्षमें जाता है ॥ ७ ॥

(सह सहन उवन सुइ सह निवासु) सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रका साथ ही साथ प्रकाश होता है, वे साथ साथ ही सदा रहते हैं, तीनों आत्माके स्वभाव हैं (सुइ उवन सहन सह सिद्धि वासु) इन्हींको साथ साथ प्रकाशमें लिये हुए सिद्धगतिमें भी वास होता है ॥ ८ ॥

(गम गमन उवन गम गम अनन्तु) ज्ञानमें परिणमन करनेसे या ज्ञानके ध्यानसे ही ज्ञान प्रगट होकर अनन्त ज्ञान होजाता है (उव उवन गमन सुइ सिद्धि रत्तु) इस प्रकाशमें वर्तता हुआ जीव सिद्ध स्वभावमें रत होता है ॥ ९ ॥

(अग अगम उवन अग अगम नन्तु) जहां मन व इंद्रियोंकी पहुँच नहीं है ऐसा ज्ञानसूर्य जब प्रगट होता है तब यही अगम ज्ञान अनन्त ज्ञान होजाता है (अग अगम उवन सुइ सिद्धि रत्त) जिसके भीतर यह अनन्त ज्ञानसूर्य प्रगट होजाता है वह सिद्धभावमें लीन रहता है ॥ १० ॥

(लष लषन उवन लष लष अनन्तु) जब आत्माका ज्ञानरूपी लक्षण ध्यानमें जम जाता है तब अनन्त-ज्ञान प्रगट होता है (लष लषन उवन सुइ सिद्धि रत्तु) जो ज्ञान लक्षणसे आत्माको अनुभव करता है वही सिद्ध-भावमें रत रहता है ॥ ११ ॥

(लष अलष उवन सुइ अलष जन्तु) इंद्रिय व मनसे अतीत आत्मा जिसके ज्ञानमें प्रगट होता है वही अलक्ष्य भावको या शुद्ध भावको पहुँच जाता है जिसे कोई इंद्रियसे देख नहीं सक्ता (जे उवन अलष जे मुक्ति जन्तु) जिसके भीतर अलक्ष्य आत्माका प्रकाश है उसकी जय हो, मोक्ष जानेवालेकी जय वो ॥ १२ ॥

(ढल ढलन उवन ढल ढल अनन्तु) आत्मा स्वभावमें रमण करते करते अनन्त स्वभावमें ढल जाता है अर्थात् आत्मासे परमात्मा होजाता है (जिन ढलन उवन सुइ सिद्धि रत्तु) जो जिनेन्द्र परमात्मपदमें ढल करके प्रगट होचुके हैं, वे ही सिद्धभावमें रत हैं ॥ १३ ॥

(गह गहन उवन गह गह जिनुत्तु) स्वरूपमें प्रवेश करनेसे ही दुर्गम ऐसे आत्माका प्रकाश होता है। उसीमें प्रवेश करो ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (गह गहन उवन गह मुक्ति जन्तु) जहां अगम्य या दुर्गम आत्मा प्रगट होता है वही उस आत्मामें प्रवेश किये हुए मोक्षमें जाता है ॥ १४ ॥

(रह रहन उवन रह रह निवासु) जहां त्याग भावका प्रकाश होता है वहां त्याग भावमें या वीतरा-तामें निवास होता है (रह उवन सुयं जै सिद्धि वासु) त्याग भावमें प्रकाश करता हुआ ही आत्मा स्वयं सिद्ध-गतिमें वास करता है, उसकी जय हो ॥ १५ ॥

(लह लहन उवन लह लह अनंतु) आत्मलाभकी प्राप्तिसे ही अनन्त लाभका प्रकाश होजाता है। आत्मानुभवसे ही अनन्त लाभकी शक्ति पैदा होजाती है (लह उवन लहन सुइ सिद्धि रतु) जिनके भीतर अनन्त लाभका उदय होजाता है वही सिद्धभावमें रत रहता है ॥ १६ ॥

(धर धरन उवन धर धर समत्थु) जो आपसे आपमें आपको धारण करता है वह ऐसी शक्ति उत्पन्न कर लेता है जो सदा आपको आपमें धारण किये रहे (धर उवन समय सुई मुक्ति जंतु) जो अपने आत्माको आपमें धार लेना है सो ही मोक्षको जाता है ॥ १७ ॥

(षिपि षिपिन उवन षिपि षिपि ज्निुतु) जिसके भीतर कर्मनाशक क्षायिक सम्यक्त तथा क्षायिक चारित्र भाव उत्पन्न होजाता है वही क्षायिक भाव धारी अरहन्त है ऐसा जिनेन्द्रने कहा है (षिपि उवन समय सुई मुक्ति रतु) वही आत्मा सर्व कर्म क्षय करके मोक्षभावमें रत रहता है ॥ १८ ॥

(कलि कलन उवन कलि कलन रिद्धि) जब वीर आत्मा आपमें रमण करता है तब वीर स्वभावमें रमणरूप रिद्धि प्रगट होजाती है (सुइ कलन कमल जिन उवन सिद्धि) सो ही वीतरागी आत्मारूपी कमलमें रमण करता हुआ सिद्धगतिको प्रगट कर लेता है ॥ १९ ॥

(कलि कलन उवन सोह कलन सुद्धु) जिस वीरमें स्वात्मरमण प्रगट होता है वही शुद्ध भावमें रमण करता है (जै कमल उवन जै सिद्धि सुद्धु) उसीका कमल समान आत्मा विकसित होजाता है उसकी जय हो। वही शुद्ध सिद्ध पदवीको पालेता है, सिद्ध भगवानकी जय हो ॥ २० ॥

(चर चरन उवन चर चरन नन्तु) जो स्वात्मरमण चारित्रमें चलता है उसके भीतर अनन्त यथाख्यात चारित्र प्रगट होजाता है (चर चरन उवन सुइ मुक्ति रतु) वही स्वचारित्र या क्षायिक चारित्रको प्रगट करके मुक्तिभावमें रत होता है ॥ २१ ॥

(कलि कमल उवन उव कर्न समय) वीर आत्मा कमल समान प्रफुल्लित होजाता है इसीका अनुभव

सो ही आत्माकी सिद्धिका उपाय है (सुइ कर्न उवन जिन मुक्ति रमय) स्वात्मानुभवका प्रकाश होना ही वीतरागी आत्माका मुक्तिके स्वभावमें रमण है ॥ २२ ॥

(सुव सुवन उवन सिय उवन हंसु) आत्माका परिणमन जब आपमें होता है तब हंसके समान निर्मल शुद्ध भाव प्रगट होजाता है (उव उवन कमल सुइ मुक्ति वासु) जब कमल समान आत्मा विकसित होजाता है तब उसका मुक्तिमें वास होता है ॥ २३ ॥

(हंस हंस उवन सिय हंस वासु) शुद्ध भाव प्रगट होते होते ऐसा होजाता है कि आत्मारूपी हंसका निवास शुद्धोपयोगमें जम जाता है (हंस उवन ममय छिर सुइ निवासु) जब आत्मा हंसके समान शुद्धोपयोगी होजाता है तब उसका उसी भावमें ध्रुव निवास होता है ॥ २४ ॥

(अवयास उवन मिय उव अवयास) निर्मल ज्ञानका उदय होनेसे ज्ञान और भी शुद्ध होजाता है (अवयास उवन उव सुइ विलास) जब शुद्ध ज्ञान झलक जाता है तब आत्मा आपमें आनन्दका अनुभव करता है ॥२५॥

(दिपि दिप्ति उवन सोइ दिपि अनन्तु) ज्ञान ज्योतिका प्रकाश होना सो ही अनन्तज्ञानका प्रकाश है (दिपि उवन समय सुइ मुक्ति रत्तु) आत्मामें अनन्तज्ञानके उदय होनेसे वह मोक्ष स्वभावमें रमण करता रहता है ॥ २६ ॥

(सोइ दिप्ति उवन सिय दिप्ति रत्तु) जब ज्ञानका उदय होता है तब यह शुद्ध ज्ञान स्वभावमें रमण करता है (सोइ दिप्ति उवन सिय सिद्धि रत्तु) ज्ञानका प्रकाश होते ही आत्मा शुद्ध भावके साथ सिद्धभावमें रमण करता है ॥ २७ ॥

(अभय अभय रंजु भय विलय गमनु) भय रहित आत्मामें भय रहित होकर रमण करनेसे सर्व भयोंका क्षय होकर आपमें रमण सदा बना रहता है (जिनु अभय नन्द सोइ सिद्ध गमनु) तब वीतरागी जिन निर्भय-पदमें आनन्दित होते हुए सिद्धगतिको चले जाते हैं ॥ २८ ॥

(सुइ सुयं अर्क सोइ ममल रमनु) यह आत्मा स्वयं सूर्यके समान प्रगट होकर अपने दोष रहित स्वभा-वमें रमण करता है (सुइ उवन सुयं सिय मुक्ति गमनु) यह स्वयं उदय होकर शुद्ध भाव सहित मोक्षमें चला जाता है ॥ २९ ॥

(अयं अर्थ उवन सर्वार्थ रमनु) जब यह आत्मारूपी पदार्थ प्रगट होजाता है तब यह अपने सर्वांग

स्वरूपमें रमण करता है (सर्वार्थ सियं उव सिद्धि गमनु) सर्वांग शुद्ध होकर यह आत्मा सिद्धगतिको जाता है॥३०॥

(विंद विंद अर्क सुइ विंद रमनु) ज्ञान स्वभावी सूर्यसम आत्मा स्वयं ज्ञानमें रमण करता है (विंद उवन विंद विंद मुक्ति गमनु) ज्ञानके प्रकाशसे ज्ञानमें रमण करता हुआ वह आत्मा मोक्षको जाता है ॥ ३१ ॥

(नन्द नन्द सियं सोइ नन्द रमनु) आनन्दमई शुद्धोपयोगी आत्मा अपने आनन्दमें रमण करता है (नन्द उवन नन्द नन्द मुक्ति गमनु) आनन्दका प्रकाश न होते हुए अनन्त सुखमें मगन होता हुआ यह मोक्षको जाता है ॥ ३२ ॥

(आनंद नन्द उव नन्द जयनु) आनन्दमें मगन होता हुआ यह सर्व अनन्त सुखको जीत लेता है (आनन्द सियं उव मुक्ति गमनु) शुद्धोपयोगी आत्मा परमानन्द सहित मोक्षको जाता है ॥ ३३ ॥

(सम समय सियं सुइ समय रमनु) समभाव सहित आत्मा शुद्धतासे निज आत्मामें रमण करता है (सुइ समय उवन सोइ सिद्धि गमनु) तब आत्माका प्रकाश स्वयं होजाता है । और यह सिद्धगतिको चला जाता है ॥३४॥

(हिय उवन हियं हिय रंज रमनु) स्वात्महितसे स्वात्महित बढ़ता है तब वह हितकारी आनन्दमें रमण करता है (हिय उवन सियं उव सिद्धि गमनु , जब हितकारी शुद्ध भाव झलक जाता है तब सिद्धगतिको चला जाता है ॥ ३५ ॥

(लष अलष सियं सुइ उवन जयनु) जब अलक्ष्य आत्माको शुद्ध अनुभव किया जाता है तब जिन भाव उत्पन्न होता है (उव उवन अलष लषि मुक्ति गमनु) इस प्रकाशित अनुभवगम्य आत्माका अनुभव करके भव्य जीव मुक्तिमें जाता है ॥ ३६ ॥

(गम अगम उवन सिय उवन रमनु) जब ज्ञानगम्य अगम्य अतीन्द्रिय आत्माका उदय होता है तब शुद्ध भावमें रमण होता है (उव रमन अगम सम सिद्धि गमनु) उस अनुभवगम्य आत्मामें रमण करनेसे समभाव सहित जीव सिद्ध गतिको चला जाता है ॥ ३७ ॥

(सहयार उवन सिय उवन साहि) आत्मानुभवकी मददसे ही शुद्ध भावका उदय साधा जाता है (सहयार उवन सम सिद्धि लाहु) शुद्धभावके उदयकी मददसे समभावसहित जीवको सिद्धिका लाभ होता है ॥३८॥

(रम रमन उवन उव रमनु उवनु) आत्माराममें रमण करनेसे आत्मीक रमणताका प्रकाश होता है (सोइ रमन उवन सोइ मुक्ति गमनु) आत्म रमणताके प्रकाशका होना ही जीवका मोक्षमें चला जाना है ॥३९॥

(रंज रंज उवन सिव उवन उवनु) आत्मामें मगनता होते होते शुद्ध भावका उदय होता जाता है (उव उवन रंज सम सिद्धि गमनु) जब आत्मानन्द प्रगट होता है तब समभाव सहित जीव सिद्धगतिको जाता है ॥४०॥

(उव उवन सियं उव उवन उवनु) शुद्धोपयोगमें जैसा जैसा रमण होता है, शुद्ध भावका प्रकाश होता रहता है (उव उवन रमन सोइ मुक्ति गमनु) जो शुद्ध भावमें रमण करता है वही मोक्षमें जाता है॥ ४१॥

(षिप षिपन सियं उव षिपन रमनु) नाश करने योग्य कर्मोंका जैसा जैसा क्षय होता जाता है, शुद्ध क्षायिक भावमें रमण होता जाता है (षिपि रमन उवन सोइ मुक्ति गमनु) जो क्षायिक भावोंमें रमण करता है वह मोक्षमें जाता है॥ ४२॥

(मौ ममल उवनु सिय ममल रनु) जब ज्ञान निर्मल प्रगट होता है तब शुद्ध भावमें रमण होता है (धुव ममल उवन सोइ सिद्धि रनु) जब ध्रुव रूपसे शुद्ध भाव प्रकाशमान होता है तब सिद्धभावमें रमण होता है॥४३॥

(उव उवन सेनि जिन सेनि कलनु) क्षपकश्रेणीके उदयसे ही अरहन्तका गुणस्थान प्रगट होता है (तर तार कमल सोइ सिद्धि गमनु) तब तारण तरण कमल समान आत्मा सिद्धगतिमें चला जाता है॥ ४४॥

(उव उवन स उत्तो सिय समाउ) शुद्ध स्वभावको ही आत्माका प्रकाश कहा गया है (सिय अर्क उवन सोइ मुक्ति गउ) जब शुद्ध सूर्य समान आत्मा प्रगट होता है तब वह मोक्षका स्वामी होजाता है॥ ४५॥

(जिन सेनि उवन कल कलन रिद्धि) जब श्रीजिनेन्द्रका प्रकाश तेरहवें गुणस्थानमें होता है तब वे आत्माकी रिद्धियोंको भलेप्रकार अनुभव करते हैं (तर तार कमल उव समय सिद्धि) तथा अनेक जीवोंको भवसागरसे तारकर आप कमल समान विकसित हो संसार—सागरसे तरकर अपने आत्माको सिद्धपदमें पहुँचा देते हैं॥४६॥

भावार्थ—इस मुक्ति पैतालेमें स्वामी तारणतरण महाराजने मोक्षका मार्ग एक शुद्धात्माके भीतर रमणको ही बताया है। निश्चय नयसे आत्माका स्वभाव ही सिद्ध समान है या मोक्ष स्वरूप है उसीका श्रद्धान, ज्ञान व आचरण निश्चय रत्नत्रय स्वरूप मोक्षमार्ग है। इसीको आत्माका प्रकाश कहते हैं, इसीको स्वरूपाचरण चारित्र कहते हैं, इसीको आत्मरमण कहते हैं, इसीको अध्यात्मध्यान कहते हैं। जब उपयोग शुद्धात्मामें रमण करता है तब परमानन्दका स्वाद आता है। इस आनन्दके स्वाद आनेसे ही पूर्व बांधे कर्म क्षय होजाते हैं। आत्मीक रमणको ही धर्मध्यान कहते हैं। आत्मीक रमणको ही शुक्लध्यान कहते हैं। इसीको शुद्धोपयोग कहते हैं, इसीको कमलमें रमण कहते हैं। इसीको सूर्यकी ज्योतिका प्रकाश कहते हैं,

इसी धाराबाही साधनसे यह आत्मा क्षपकश्रेणी द्वारा चढ़कर चार घातीय कर्मोंका क्षय करके अरहन्त परमात्मा होजाता है तब तारण तरण नाम पाता है क्योंकि अनेक भव्य जीव उसके उपदेशसे तर जाते हैं फिर वह शुद्धोपयोगके बलसे नामकर्म आदि चारों अघातिया कर्मोंका भी क्षय करके सिद्ध होजाता है। सिद्धगतिका कारण वीतराग भाव या शुद्ध भाव या स्वात्मरमण है अतएव मुमुक्षु जीवको निरन्तर शुद्धात्माका मनन, पूजन, ध्यान, अनुभव करना योग्य है। समयसारकलशामें कहा है—

निजमहिमरतानां भेदविज्ञानशक्त्या भवति नियतमेषां शुद्धतत्त्वोपलम्भः।
अचलितमखिलान्यद्रव्यदूरेस्थितानां भवति सति च तस्मिन्नक्षयः कर्ममोक्षः ॥४–६॥

भावार्थ—जो भेदविज्ञानकी शक्तिसे आपको भिन्न जानकर अपने आत्माकी महिमामें लीन होजाता है उनको अवश्य शुद्ध आत्मतत्वका लाभ होता है। ऐसा होते हुए जो सर्व अन्य द्रव्योंसे दूर होकर निश्चलतासे आपमें ठहर जाते हैं उनको अवश्य कर्मोंका क्षय होकर मोक्षका लाभ होता है।

एको मोक्षपथो य एष नियतो दृग्ज्ञप्तिवृत्त्यात्मकस्तत्रैव स्थितिमेति यस्तमनिशं ध्यायेच्च तं चेतति।
तस्मिन्नेव निरन्तरं विहरति द्रव्यान्तराण्यस्पृशन्, सोऽवश्यं समयस्य सारमचिरान्नित्योदयं विन्दति ॥ ४६–१० ॥

भावार्थ—एक ही मोक्षका मार्ग है वह निश्चय सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप है। जो कोई इस आत्मानुभवरूप मार्गमें ठहरता है, रातदिन उसीको ध्याता है व इसीका अनुभव करता है, व निरन्तर उसीमें ही अन्य द्रव्योंको स्पर्श न करता हुआ विहार करता है। वह अवश्य शीघ्र ही नित्य उदयरूप समयसार या शुद्धात्माका अनुभव करता है। अर्थात् मोक्ष प्राप्त करके शुद्धात्मासे उत्पन्न आनन्दामृतका पान करता है।

इसतरह ममल पाहुड़के दूसरे भागका उल्था श्री अरहन्तादि पंच परमेष्ठियोंकी भक्तिसे व श्री तारणतरणस्वामीकी कृपासे आज समाप्त हुआ। मिती आश्विन वदी तेरस मंगलवार वीर संवत् २४६२ विक्रम संवत् १९९३ ता० १३ अक्टूबर १९३६। शुभं भूयात्, शुभं भूयात्, शुभं भूयात्।

दोहा—मंगल श्री अरहन्त है, मंगल सिद्ध महान्। आचाराज उपाध्याय यति, करो सदा कल्याण॥

हिसार (पंजाब)
ता० १३–१०–१९३६।

ब्रह्मचारी सीतलप्रसाद।

लेखककी प्रशस्ति।

नगर शिरोमणि लखनऊ, अग्रवाल कुल जैन।
लाला मंगलसैनजी, धर्मी गुणी सु बैन ॥ १ ॥
जिन सुत मक्खनलालजी, तृतीय पुत्र यह दास।
प्रथम पुत्र हैं संतमल, अधुना हैं गृहवास ॥ २ ॥
बत्तिस वय अनुमानमें, सीतल कर गृह त्याग।
श्रावक व्रत साधत फिरत, इत उत वृष अनुराग ॥ ३ ॥
सम्वत् उन्निस श्रानवे, विक्रम वर्षाकाल।
नगर हिसार बिताइयो, हर्ष सहित वृष पाल ॥ ४ ॥
जैनी गृह सौसे अधिक, धन कण कंचन पूर्ण।
धर्म कर्म निज शक्ति सम, करत होत अघ चूर्ण ॥ ५ ॥
मंदिर दोय दिगम्बरी, शिखर बन्द सुखदाय।
दर्शन पूजन करत भवि, पावत पुण्य अघाय ॥ ६ ॥
पुस्तक आलय जैनका, है पबलिक हितकार।
पढ़त ज्ञान संचय करत, बहुजन मन रुचि धार ॥ ७ ॥
कन्याशाला जैनकी, शाला बालक जैन।
शिशुगण शिक्षा लेत हैं, बोलत मीठे बैन ॥ ८ ॥
मिहरचन्द कुड़ूमलं, अतरसेनजी राम।
पण्डित हैं रघुनाथजी, देवकुमार ललाम ॥ ९ ॥
महावीर परसादजी, फूलचन्दजी सार।
बांकेराय बकील हैं, और शम्भूदयाल ॥ १० ॥

उग्रसेन वकील हैं, अर कशमीरीलाल।
दास विशंभर सिंह हैं, श्री रघुवीर रसाल ॥ ११ ॥
मुंशी गुलशनरायजी, गोकुलचन्द प्रकाश।
विज्ञ बटेश्वरलालजी, शास्त्र ज्ञान है खास ॥ १२ ॥
इत्यादिक धर्मिन सह, सुखसे काल विताय।
ममलपाहुड़ ग्रंथकी, टीका लिखी बनाय ॥ १३ ॥
द्वितीय भाग पूरा किया, श्री गुरुके परसाद।
कर्ता तारणतरण हैं, बहु ज्ञानी अघवाद ॥ १४ ॥
आश्विन वद तेरस दिना, वार सु मङ्गलवार।
वीर काल चौविस शतक, बासठ है सुखकार ॥ १५ ॥
विक्रम उन्निस ब्रानवे, उन्निस छत्तिस ईस।
अकटूबर तेरस सु दिन, कियो पूर्ण नम शीस ॥ १६ ॥
मङ्गल श्री जिनराज हैं, मङ्गल सिद्ध महान।
मङ्गल आचारज परम, मङ्गल पाठक जान ॥ १७ ॥
मंगल साधु महातमा, पांचों वृष दातार।
पुनः पुनः बन्दन करूं, लखूं ज्ञान सुखकार ॥ १८ ॥
सुखसागर वर्द्धन करण, श्री जिन चन्द्र महान्।
शोक ताप अघ शमनको, हैं अनुपम सुख दान ॥ १९ ॥
पढ़ो सुनो या ग्रन्थको, पावो मग जिनराज।
मोक्ष लक्ष्मी लाभ कर, होवो जग सरताज ॥ २० ॥

ब्र० सीतलप्रसाद।

श्री ममलपाहुड या अमलपाहुड
दूसरा भाग
समाप्त।